केवलज्ञानप्रश्नचूडामणि

डॉ० नेमिचन्द्र शास्त्री

०

भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन

केवलज्ञानप्रश्नचूडामणि

सम्पादन-अनुवाद

डॉ. नेमिचन्द्र शास्त्री, ज्योतिषाचार्य

भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन

ज्ञानपीठ मूर्तिदेवी जैन ग्रन्थमाला : संस्कृत ग्रन्थांक–७

ग्रन्थमाला सम्पादक :

डॉ. हीरालाल जैन, डॉ. आ. ने. उपाध्ये

प्रधान कार्यालय

९, अलीपुर पार्क प्लेस, कलकत्ता–२७

प्रकाशन कार्यालय

दुर्गाकुण्ड मार्ग, वाराणसी–५

विक्रय केन्द्र

३६२०।२१ नेताजी सुभाष मार्ग, दिल्ली–६

द्वितीय संस्करण सन् १९६९

मूल्य सात रुपये

मुद्रक—सन्मति मुद्रणालय, वाराणसी–५

जिनसे आत्मोत्थान की प्रेरणा प्राप्त हुई, उन तपोनिधि
चारित्रमूर्ति, विद्वच्छिरोमणि पूज्य गुरुदेव
श्री १०८ देशभूषण महाराज के
कर कमलों में सविनय समर्पित ।

श्रद्धावनत
नेमिचन्द्र शास्त्री

आदिवचन

अनन्त आकाश-मण्डलमें अपने प्रोज्ज्वल प्रकाशका प्रसार करते हुए असंख्य नक्षत्र-दीपोंने अपने किरण-करोंके संकेत तथा अपनी आलोकमयी मूकभाषासे मानव मानसमें अपने इतिवृत्तकी जिज्ञासा जव जागरूक की थी तव अनेक तपोधन महर्षियों-ने उनके समस्त इतिवेद्योंको करामलक करनेकी तीव्रतपोमय दीर्घतम साधनाएँ की थीं और वे अपने योगप्रभावप्राप्त दिव्य दृष्टियोंसे उनके रहस्योंका साक्षात्कार करनेमें समर्थ हुए थे, उन महामहिम महर्षियोंके हृत्पटलमें अपार करुणा थी अतः वे किसी भी वस्तुके ज्ञानगोपनको पातक समझते थे, अतः उन्होंने अपनी नक्षत्र सम्बन्धी ज्ञानराशिका जनहित-की भावनासे बहुत ही सुन्दर संकलन और संग्रथन कर दिया था। उनके इस संग्रथित ज्ञान-कोषकी ही ज्योतिषशास्त्रके नामसे प्रसिद्धि हुई थी जो अब तक भी उसी रूप में है।

इस विषयमें किसीको किंचित् भी विप्रतिपत्ति नहीं होनी चाहिए कि सर्वप्रथम ज्योतिष विद्याका ही प्रादुर्भाव हुआ था और वह भी भारतवर्षमें ही। वादमें ही इस विद्याके प्रकाशनने सारे भूमण्डलको आलोकित किया और अन्य अनेक विद्याओंको जन्म दान किया। यह स्पष्ट है कि एक अंकका प्रकाश होनेके बाद ही "एकमेवाद्वितीयं ब्रह्म" इस अद्वैत सिद्धान्तका अवतरण हुआ था। दो संख्याका परिचय होनेके बाद ही द्वैत विचारका उन्मेष हुआ। अद्वैत द्वैत विशिष्टाद्वैत शुद्धाद्वैत द्वैताद्वैत तत्त्वोंकी संख्यामें न्याय, वैशेषिक, सांख्ययोग, पूर्व और उत्तर मीमांसाके विभिन्न मतमें इन सबोंके जन्मकी ज्योतिषविद्याकी पश्चाद्भाविता निर्विवाद रूपसे सभीको मान्य है। पंचमहाभूत, शब्द-शास्त्रके चतुर्दश सूत्र तथा साहित्यके नवरसादिकी चर्चा अंकभेदादि सम्वद्ध गुरुलघ्वादि सम्बद्ध छन्दके रचनादिने इस ज्योतिष शास्त्रसे ही स्वरूप लाभ पाया है।

ऐसे ज्योतिष शास्त्र की प्राचीनताके परीक्षणमें अन्य अनेक वातोंको छोड़कर केवल ग्रहोच्चके ज्ञानसे ही यदि वर्षकी गणना की जाय तो सूर्यके उच्चसे

"अजवृषभमृगाङ्गनाकुलीरा झषवणिजौ च दिवाकरादितुङ्गाः।
दशशिखिमनुयुक्तिथीन्द्रियांशैस्त्रिनवकविंशतिभिश्च तेऽस्तनीचाः॥"

गणना करनेपर इस व्यावहारिक ज्योतिष गणनाके प्रयत्नकी न्यूनतम सत्ता आजसे २१, ८०. २९६ वर्ष पूर्व सिद्ध होती है, इसी प्रकार मंगलके उच्चसे विचार करनेपर १,१२,२९,३९० वर्ष तथा शनैश्चरके उच्चसे विचार करनेपर १,१२,०७. ६९० वर्ष

पूर्व इस जगत्में ज्योतिषको विकसित रूपमें रहनेकी सिद्धि होती है, जो आधुनिक संसार के लोगोंके लिए और विशेष कर पाश्चात्त्य विज्ञानविशारदों के लिए बड़े आश्चर्यकी सामग्री है।

"ज्योतिषशास्त्रफलं पुराणगणकैरादेश इत्युच्यते...." आचार्योंके इस प्रकारके वचनोंके अनुसार मानव जगत्में विविध आदेश करना ही इस अपूर्व अप्रतिम ज्योतिष-शास्त्रका प्रधान लक्ष्य है।

इसी आदेशके एकांगका नाम प्रश्नावगम तन्त्र है। इस प्रश्न प्रणालीको जैन सिद्धान्तके प्रवर्तकोंने भी आवश्यक समझकर बड़ी तत्परतासे अपनाया था और उसकी सारी विचारधाराएँ 'केवलज्ञानप्रश्नचूडामणि' के रूपमें लेखबद्ध कर सुरक्षित रखी थीं, किन्तु वह ग्रन्थ अत्यन्त दुरूह होनेके कारण सर्वसाधारणका उपकार करनेमें पूर्ण रूपेण स्वयं समर्थ नहीं रहा अतः मेरे योग्यतम शिष्य श्री नेमिचन्द्र जैनजीने बहुत ही विद्वत्ता-पूर्ण रीतिसे सरल सुबोध उदाहरणादिसे सुसज्जित सपरिशिष्ट कर एक हृद्य-अनवद्य टीकाके साथ उस ग्रन्थको जनता जनार्दनके समक्ष प्रस्तुत किया है, इस टीकाको देखकर मेरे मनमें यह दृढ़ धारणा प्रादुर्भूत हुई कि अब उक्त ग्रन्थ इस विशिष्ट टीकाका सम्पर्क पाकर समस्त विद्वत्समाज तथा जन साधारणके अत्यन्त समादरणीय और संग्राह्य होगा। टीकाकी लेखनशैलीसे लेखककी प्रशंसनीय प्रतिभा और लोकोपकारकी भावना स्फुट रूपसे प्रकट होती है। हमें पूर्ण विश्वास है कि जनता इस टीकासे लाभ उठा कर लेखकको अन्य कठोर ग्रन्थोंको भी अपनी ललित लेखनीसे कोमल बनानेको उत्साहित करेगी।

संस्कृत महाविद्यालय
काशी हिन्दू विश्वविद्यालय
१७ जनवरी ५०

श्री रामव्यास ज्योतिषी
(अध्यक्ष ज्योतिष विभाग)

दो शब्द

(प्रथम संस्करण)

भारतीय साहित्यमें ज्योतिष शास्त्रका महत्त्वपूर्ण स्थान है। इसने यहाँ गणित और फलित दोनों शाखाओं द्वारा पर्याप्त उन्नति की है। जैन संस्कृतिने भी ज्योतिर्विद्या को मुख्य विद्या माना है। सर्वज्ञता सिद्ध करनेके लिए अन्य हेतुओंके साथ ही साथ, 'ज्योतिर्ज्ञानोपदेश' भी एक मुख्य हेतु अकलंकदेव[1] ने दिया है। उनने लिखा है कि यदि बुद्धि परोक्ष पदार्थोंको विषय करनेवाली न हो तो भविष्य बतानेवाला ज्योतिर्ज्ञान अविसंवादी कैसे हो सकता है। चन्द्रग्रहण, सूर्यग्रहण आदि भावी बातें ज्योतिषके द्वारा ही जानी जाती हैं। क्योंकि भावी पदार्थोंका न तो स्वभाव ही गृहीत है और न कार्य ही जिससे उनका विश्वास है कि सर्वज्ञ अपने प्रत्यक्ष ज्ञानके द्वारा भूत भविष्यत् वर्तमान त्रिकालवर्ती पदार्थोंको साक्षात् जानता है। ग्रहोंकी गति, नक्षत्रोंका परिभ्रमण, ऋतुपरिवर्तन आदि सभी उसके निर्मल ज्ञानमें प्रतिभासित होते हैं। सर्वज्ञने प्रत्यक्ष दर्शन करके ही ज्योतिष शास्त्रका उपदेश दिया है, तभी तो वह प्रमाणभूत तथा अविसंवादी निकलता है।

प्रश्नशास्त्र भी ज्योतिर्विद्यामें ही सम्मिलित है। उसमें अनेक प्रकारसे प्रश्नोंके द्वारा भविष्यत् और भूतका ज्ञान कराया जाता है। इस शास्त्रका उपदेश भी किसी प्रत्यक्षद्रष्टा व्यक्तिके द्वारा उन कार्य कारणोंका प्रत्यक्ष करके ही दिया गया है। केवलज्ञानप्रश्नचूडामणिमें इसी तरह प्रश्नोंके उत्तरकी पद्धतिका निरूपण है।

निमित्त दो प्रकारके होते हैं। एक कारक निमित्त, जैसे घड़ेके लिए कुम्हार। दूसरा सूचक निमित्त जैसे सिंगलका झुक जाना रेलगाड़ीके आनेकी सूचना देता है। ज्योतिष शास्त्रमें जो ग्रह नक्षत्रादिकी गतिविधिका अमुक भविष्यत्से कार्य कारणभाव बैठाया गया है वह सब सूचक निमित्त है। तात्पर्य यह है कि यदि मनुष्य अमुक ग्रहमें उत्पन्न हुआ है तो कुछ मोटे-मोटे भविष्यत्का अनुमान स्थूल कार्यकारणभावसे लग जाता है। किसी जीवका अच्छा या बुरा ग्रहोंने नहीं किया है किन्तु उस होनेवाले भविष्यकी सूचना ग्रहगतिसे मिल जाती है।

वस्तुतः ये सब एक प्रकारके अनुमान ज्ञान हैं जो प्रायः अव्यभिचारी होते हैं। चिरकालसे अनुभवी पुरुषों द्वारा जो कार्यकारणभाव या सूच्य-सूचकभाव स्थिर किये गये हैं उनकी निर्विवादता प्रायः सिद्ध है। कुछ भौतिक पदार्थोंके स्वाभाविक परिणमन भी होते हैं। जिनमें यदि किसी विशेष कारणसे व्याघात न आवे तो अपनी गतिसे ठीक उसी रूपमें परिणमन करते रहेंगे। प्रायः मनुष्योंका मानस एक प्रकारसे गति

---

१. "धीरत्यन्तपरोक्षेऽर्थे न चेत्पुंसां कुतः पुनः। ज्योतिर्ज्ञानाविसंवादः शास्त्राच्चेत् साधनान्तरम्॥ परोक्षज्ञानमनुमानमेवेष्यते। कथमनागतार्थविशेषेषु ग्रहणादिषु भाविषु ज्योतिर्ज्ञानाविसंवादः तत्स्वभावकार्यग्रहणाद्यसंभवात्"—सिद्धिवि० परि० ८।

करता है। इसीलिए मानस शास्त्री एक मनोभावके बाद दूसरा कौन-सा भाव अवश्यम्भावी है यह बता देते हैं बशर्ते कि उसमें कोई बुद्धि पूर्वक व्याघात न किया गया हो।

इष्ट अनिष्ट फलका मिलना बहुत कुछ संयोगोंके अधीन है। एक ही मुहूर्तमें जगत्में करोड़ों प्राणी जन्म लेते हैं पर सब की दशा एक सी नहीं होती। जैसी सामाजिक आर्थिक और राजनैतिक व्यवस्थाएँ होंगी, मनुष्यका अपनी भीतरी योग्यताके अनुसार वैसा विकास हो जायगा।

मनुष्य स्वभावतः आत्मप्रशंसा या आत्मोच्चत्वकी बात सुननेमें आनन्द और सन्तोष मानता है। इस प्रवृत्तिने भी प्रश्नादि विद्याओंका पर्याप्त प्रचार किया है। यद्यपि इसका मानसिक असर कम नहीं होता। बल्कि कभी-कभी तो इससे चित्तका क्रम ही बदल जाता है। कभी कभी ऐसी बातें सत्य घटित हो जाती हैं जिनके संयोगोंका कोई पता नहीं था और न सम्भावना ही की जाती थी। अतः कुछ निश्चित कार्यकारण भाव और मनुष्यकी इष्ट प्राप्ति की जिज्ञासाने इस विद्याका खूब विस्तार किया है।

यह तो निश्चित है कि प्रत्येक प्राणीके मानसपर उसके प्रतिक्षणके विचार और क्रियाएँ अपना संस्कार डालती हैं। संस्कारोंकी खतौनी बराबर होती रहती है। जब कोई प्रबल संस्कार आता है तो वह पूर्वके निर्बल संस्कारको समाप्त कर देता है। अन्तमें कुछ ऐसे सूक्ष्म और स्थिर संस्कार इस शरीरको छोड़नेपर भी परलोक तक जाते हैं जिनके अनुसार भावी जीवनकी रचना होती है और भौतिक जगत्का परिणमन भी वैसा ही होने लगता है। इसी रहस्यका बहुत कुछ उद्घाटन ज्योतिर्विद्या करती है।

प्रस्तुत ग्रन्थ केवलज्ञानप्रश्नचूडामणिके प्रत्येक मुद्देपर ग्रन्थके सम्पादकने पूरा-पूरा प्रकाश डाला है। साथ ही प्रश्नशास्त्रके लिए उपयोगी मुहूर्त्त आदिका विस्तृत विवेचन भी परिशिष्टोंमें कर दिया है जिससे ग्रन्थकी उपयोगिता काफ़ी बढ़ गयी है। ग्रन्थके सम्पादक प्रिय पं० नेमिचन्द्रजी ज्योतिष शास्त्रके आचार्य हैं, परिश्रमशील और अध्ययनरत कर्मठ विद्वान् हैं। ज्योतिष शास्त्रकी गुत्थियोंको इनने समझा है। इनसे आगे और भी अनेक ग्रन्थोंके सुन्दर सम्पादनकी आशा है। इन्होंने 'भारतीय ज्योतिष' नामका महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ हिन्दीमें लिखा है जो शीघ्र ही प्रकाशित होगा।

काशी विश्वविद्यालयके ज्योतिष शास्त्रके प्रधान अध्यापक पं० रामव्यास जी ज्योतिषाचार्यने इस ग्रन्थका 'आदिवचन' लिखकर हमें आभारी बनाया है।

ज्ञानपीठके संस्थापक सेठ शान्तिप्रसाद जी तथा उनकी समशीला पत्नी सौ० रमारानीजीकी उदारता, संस्कृति-उद्धारकी भावना और भद्रता इस संस्थाके प्राण हैं। इनकी स्व० पुण्यश्लोका माता मूर्तिदेवीके स्मरणार्थ मूर्तिदेवी ग्रन्थमाला प्राचीन ग्रन्थोंके उद्धारार्थ चल रही है। उसका यह सातवाँ ग्रन्थ है।

संस्थाके मन्त्री श्री अयोध्याप्रसादजी गोयलीयकी कार्यपटुता और सुरुचिसम्पन्नतासे संस्था सांस्कृतिक कार्योंको और भी बढ़ायेगी।

मैं इन सब सहयोगियोंका आभार मानता हूँ और उनके द्विगुणित सहयोगकी आशा रखता हूँ।

भारतीय ज्ञानपीठ
माघ कृष्ण २.
वीर सं० २४७६.

—महेन्द्रकुमार जैन
ग्रन्थमाला सम्पादक

विषय-सूची

प्रस्तावना

जैन ज्योतिषकी महत्ता १
जैन ज्योतिष साहित्यके भेद-प्रभेदोंका दिग्दर्शन ४
जैन पाटी गणित ६
जैन रेखागणित—परिचय ८
जैन बीजगणित ११
जैन त्रिकोणमिति गणित १२
प्रतिभा गणित और पंचांग निर्माण गणित १२
जन्मपत्र निर्माण गणित १५
जैन फलित ज्योतिष-होरा संहिता, मुहूर्त्त १६
सामुद्रिक शास्त्र १८
प्रश्नशास्त्र और स्वप्नशास्त्र १९-२०
निमित्त शास्त्र २१
जैन प्रश्नशास्त्रका मूलाधार २२
जैन प्रश्नशास्त्रका विकासक्रम २५
केवलज्ञानप्रश्नचूडामणिका जैन प्रश्नशास्त्रमें स्थान ३१
केवलज्ञानप्रश्नचूडामणिका विषय परिचय ३२
प्रश्न निकालनेकी विधि ४१
ग्रन्थका बहिरंग रूप ४२
लाभालाभ प्रश्न ४४
चोरी गयी वस्तुकी प्राप्तिका प्रश्न ४४
अन्ध-मन्दलोचनादि नक्षत्र संज्ञा बोधक चक्र ४५
प्रवासी-आगमन सम्बन्धी प्रश्न ४६
गर्भिणीको पुत्र या कन्या प्राप्तिका प्रश्न ४६
रोगी प्रश्न ४७
मुष्टि प्रश्न ४७
मूक प्रश्न ४७
मुकदमा सम्बन्धी प्रश्न ४७
ग्रन्थकार ४८
केवलज्ञानप्रश्नचूडामणिका रचना काल ५०
आत्मनिवेदन ५२

ग्रन्थ

अक्षरोंका वर्गविभाजन ५५
प्रश्नफल निकालनेका मगणादि सिद्धान्त ५७
इष्टकाल बनानेके नियम ५९
बिना घड़ी इष्टकाल बनानेकी विधि ६०
इष्टकालपरसे लग्न बनानेकी विधि ६०
प्रश्नाक्षरोंपरसे लग्न बनानेकी विधि ६१
पाँचों वर्गोंके योग और उनके फल ६३
प्रश्नलग्नानुसार फलनिरूपण ६४
संयुक्त प्रश्नाक्षर और उनका फल ६७
आरूढ़ राशि संज्ञा द्वारा प्रश्न फल ६८
असंयुक्त प्रश्नाक्षर ७०
असंयुक्त और अभिहत प्रश्नोंके फल ७१
प्रश्नलग्न द्वारा विशेष फल ७२
अनभिहत प्रश्नाक्षर और उनका फल ७३
अभिघातित प्रश्नाक्षर और उनका फल ७४
आलिंगित, अभिधूमित और दग्ध प्रश्नाक्षर ७६

उत्तर और अधर प्रश्नाक्षरोंका फल ७७
उत्तरके नौ भेद और लक्षण ७८
आलिंगित (पूर्वाह्ण) कालमें किये गये प्रश्नोंके फलको ज्ञात करनेकी विधि ७९
अभिधूमित और दग्ध (मध्याह्न एवं अपराह्ण) कालीन प्रश्नोंके फल जाननेकी विधि ८१
आदेशोत्तर और उनका फल ८२
प्रश्नफल ज्ञात करनेके अनुभूत नियम ८३
योनिविभाग (प्रश्नोंका विशेष फल जाननेके लिए) ८४
योनि निकालनेकी विधि ८६
पृच्छककी मनःस्थित चिन्ताको ज्ञात करनेके नियम ८७
जीवयोनिके भेद ८८
द्विपदयोनि और देवयोनिके भेद ८९
देवयोनि जाननेकी विधि ९१
मनुष्ययोनिका निरूपण ९१
प्रश्नलग्न द्वारा मनकी विभिन्न चिन्ताओं-को ज्ञात करनेके नियम ९२
बाल-वृद्धादि एवं आकृतिमूलक समादि अवस्थाएँ और उनके फल ९५
पक्षियोनिके भेद ९६
राक्षस योनिके भेद ९७
चतुष्पदयोनिके भेद ९८
खुरी, नखी, दन्ती आदि योनियोंके भेद और लक्षण ९९
अपद योनिके भेद और लक्षण १००
पादसंकुला योनिके भेद और लक्षण १०१
धातुयोनिके भेद १०२
धाम्य योनिके भेद १०३
घटित योनिके भेद-प्रभेद १०५
प्रश्नलग्नानुसार आभरण चिन्ता जानने-की विधि १०७
अधाम्य योनिके भेद १०७
मूल योनिके भेद-प्रभेद और पहिचाननेके नियम १०८
प्रश्नलग्नानुसार विभिन्न मानसिक चिन्ताओंके जाननेकी विधि १०९
जीव, धातु और मूलयोनिके निरूपण-का प्रयोजन ११०
चोरी गयी वस्तुको जाननेकी विधि ११२
चोरका नाम जाननेकी रीति ११३
मूक प्रश्न विचार ११३
मुष्टिका प्रश्न विचार ११४
आलिङ्गितादि मात्राओंका निवास और फल ११५
लाभालाभ प्रश्न विचार ११६
द्रव्याक्षरोंकी संज्ञाएँ और फल ११८
स्वर और व्यंजनोंकी संज्ञाएँ और उनके फल ११८
प्रश्नके फल जाननेके विशेष नियम १२०
नष्ट जन्मपत्र बनाने की विधि–मास परीक्षा १२२
पक्ष विचार १२४
तिथि विचार १२६
वर्णोंकी गव्यूति आदि संज्ञाएँ १२७
गादि शब्दोंके स्वर संयोगका विचार और उनका फल १२९
ग्रह और राशियोंका कथन १३३
नष्टजातक (जन्मपत्री) बनानेकी व्यवस्थित विधि १३४
संवत्सर बोधक सारणी १३६
नक्षत्र, योग, लग्न और ग्रहानयन विधि १३७
गमनागमन प्रश्न विचार १३९
लाभालाभ प्रश्न विचार १४१
शुभाशुभ प्रश्न विचार १४३
चवर्ग पंचाधिकार १४६

सिंहावलोकन, गजावलोकन चक्र १४७-४८
नद्यावर्त चक्र १४९
मण्डूक प्लवन और अश्वमोहित चक्र—फलाफल १५०-५१
तवर्ग चक्रका विचार—फलाफल १५२
यवर्ग, कवर्ग और टवर्ग चक्रका विचार-फल १५३
पवर्ग चक्र विचार—फलाफल १५४
शवर्ग चक्र विचार—फलाफल १५५-५७
चिन्तामणि चक्र और उसके अनुसार नाम निकालनेकी विधि १५८
सर्ववर्गांकानयन द्वारा नाम निकालनेकी विधि १५९-६०

परिशिष्ट नं० १—मुहूर्त्तप्रकरण

नक्षत्र, योग और करणोंके नाम १६३
समस्त शुभ कार्योंमें त्याज्य १६३
सीमन्तोन्नयन मुहूर्त्त १६३
पुंसवन मुहूर्त्त १६४
जातकर्म और नामकर्म मुहूर्त्त १६५
स्तनपान मुहूर्त्त १६५
सूतिकास्नान मुहूर्त्त १६५
दोलारोहण मुहूर्त्त १६६
भूम्युपवेशन मुहूर्त्त १६६
शिशुनिष्क्रमण मुहूर्त्त १६७
अन्नप्राशन मुहूर्त्त १६७
शिशुताम्बूलभक्षण मुहूर्त्त १६८
कर्णवेध मुहूर्त्त १६८
मुण्डन और अक्षरारम्भ मुहूर्त्त १६९
विद्यारम्भ, यज्ञोपवीत मुहूर्त्त १७०
वाग्दान, विवाह मुहूर्त्त १७१
विवाहमें गुरुबल, सूर्यबल और चन्द्रबल विचार १७१
विवाहमें त्याज्य अन्धादि लग्न १७१
विवाहमें लग्नशुद्धि १७२
वैवाहिक लग्नमें ग्रह-बल विचार १७२
वधूप्रवेश और द्विरागमन मुहूर्त्त १७२
यात्रा मुहूर्त्त १७३
वार शूल—नक्षत्र शूल का विचार १७३
चन्द्रवास विचार १७३
चन्द्र फल १७३-७४
गृह निर्माण, नूतन गृह प्रवेश मुहूर्त्त १७५
जीर्ण गृह प्रवेश मुहूर्त्त १७६
शान्ति और पौष्टिक कार्योंके मुहूर्त्त १७६
कुआँ खुदवानेका मुहूर्त्त १७६
दुकान करने तथा बड़े-बड़े व्यापार करने के मुहूर्त्त १७७
वस्त्र तथा आभूषण ग्रहण का मुहूर्त्त १७७
वस्त्र और भूषण धारण करनेके मुहूर्त्त १७८
जेवर बनवानेका मुहूर्त्त १७८
नमक बनानेका मुहूर्त्त १७८
राजा या मन्त्रीसे मिलनेका मुहूर्त्त १७८
बगीचा लगानेका मुहूर्त्त १७९
हथियार बनाने तथा धारण करनेके मुहूर्त्त १७९
रोगमुक्त होनेपर स्नान-मुहूर्त्त १८०
कारीगरी सीखनेका मुहूर्त्त १८०
पुल बनानेका मुहूर्त्त १८१
खटिया बनवानेका मुहूर्त्त १८१
कर्ज लेनेका मुहूर्त्त १८१
वर्षारम्भमें हल चलानेका मुहूर्त्त १८२
बीज बोनेका मुहूर्त्त १८२
फसल काटनेका मुहूर्त्त १८३
नौकरी करनेका मुहूर्त्त १८३
मुकद्दमा दायर करने का मुहूर्त्त १८३

जूता पहननेका मुहूर्त १८४
औषध बनानेका मुहूर्त १८४
मन्त्रसिद्ध करनेका मुहूर्त १८५
सर्वारम्भ मुहूर्त १८५
मन्दिर निर्माणका मुहूर्त १८५
प्रतिमा निर्माणके लिए मुहूर्त १८६
प्रतिष्ठाका मुहूर्त १८६
होमाहुतिका मुहूर्त १८६

परिशिष्ट नं २–जन्मपत्री बनानेकी विधि

इष्टकाल साधन करनेके नियम १८७
भयात और भभोग साधन १८८
जन्मनक्षत्रका चरण निकालनेकी विधि १८९
जन्मलग्न निकालने की सुगम विधि १८९
लग्नसारणी १९०
जन्मपत्री लिखनेकी विधि १९२
विंशोत्तरी दशा निकालनेकी विधि १९३
अन्तर्दशाके लिए सूर्यादि नवग्रहोंके अन्तर्दशा चक्र १९७
जन्मपत्रीमें अन्तर्दशा लिखनेकी विधि १९८
जन्मपत्रीका फल देखनेकी संक्षिप्त विधि १९९
ग्रहों का स्वरूप २००
ग्रहोंके बलाबलका विचार २०१
राशि स्वरूप २०२
द्वादश भावोंके फल २०३
ग्रह और राशियोंके स्वभाव एवं तत्त्व २०३
शारीरिक स्थिति—कद, रूप-रङ्ग ज्ञान करनेके नियम २०४
द्वितीय भाव—आर्थिक स्थिति ज्ञात करनेकी विधि २०५
धनी और दरिद्री योग २०५
तृतीय भाव—भाई-बहिनोंके सम्बन्धमें विचार २०६
चतुर्थ भाव—पिता, ग्रह, मित्र आदि-का विचार २०७
पंचम भाव—सन्तान, विद्या आदि-का विचार २०७
षष्ठ भाव—रोग आदिका विचार २०९
सप्तम भाव-वैवाहिक सुखका विचार २०९
अष्टम भाव—आयुका विचार २०९
नवम भाव—भाग्य विचार २१०
दशम भाव—पेशा एवं उन्नतिका विचार २१०
एकादश भाव—लाभालाभ विचार २१०
द्वादश भाव—व्यय विचार २१०
विंशोत्तरी दशाका फल २११
अन्तर्दशा फल २११

परिशिष्ट नं ३–विवाहमें मेलापक–वर-कन्याकी कुण्डली गणना

ग्रह मिलान २१२
गुण मिलान २१२
भकूट विचार २१३
नाड़ी विचार २१३

सहायक ग्रन्थसूची २१४

संकेत विवरण

चं० प्र०	चन्द्रोन्मीलनप्रश्न
के० प्र० र०	केरलप्रश्नरत्न
प्र० कौ०	प्रश्नकौमुदी
प्र० कु०	प्रश्नकुतूहल
ध्व० प्र०	ध्वजप्रश्न
के० प्र० सं०	केरलप्रश्नसंग्रह
दै० व०	दैवज्ञवल्लभ
बृ० पा० हो०	बृहत्पाराशरी होरा
प्र० भू०	प्रश्नभूषण
बृ० जा०	बृहज्जातक
भु० दी०	भुवनदीपक
ग्र० ला० त्रि० प्र०	ग्रहलाघवत्रिप्रश्नाधिकार
स० सा०	समरसार
शि० स्व०	शिवस्वरोदय
नरपतिज०	नरपतिजयचर्या
ज्ञा० प्र०	ज्ञानप्रदीपिका
ता० नी०	ताजिकनीलकण्ठी
ज्योतिषसं०	ज्योतिषसंग्रह
प्र० वै०	प्रश्नवैष्णव
ग० म०	गर्गमनोरमा
ष० प० भा०	षट्पञ्चाशिका भाषाटीका
प्र० सि०	प्रश्नसिद्धान्त
न० ज०	नरपतिजयचर्या

त० सू०	तत्त्वार्थसूत्र
स० सि०	सर्वार्थसिद्धि
के० हो० ह०	केवलज्ञानहोरा हस्तलिखित
आ० ति० ह०	आयज्ञानतिलक हस्तलिखित
दै० क०	दैवज्ञकल्पद्रुम
क० मू०	कन्नडलिपि की ताड़पत्रीय प्रति मूड़बिद्री
अ० चू० सा०	अर्हच्चूड़ामणिसार
श० म० नि०	शब्दमहार्णव निघण्टु
च० ज्यो०	चन्द्रार्कज्योतिपसंग्रह
वि० मा०	विद्यामाधवीय
आ० स० प्र०	आयसद्भावप्रकरण
प्र० र० सं०	प्रश्नरत्नसंग्रह
ज्यो० सं०	ज्योतिषसंग्रह हस्तलिखित
बृ० ज्यो० अ०	बृहद्ज्योतिषार्णव

■

प्रस्तावना

सूर्य, चन्द्र और तारे प्राचीनकालसे ही मनुष्यके कौतूहलके विषय रहे हैं। मानव सदा इन रहस्यमयी वस्तुओंके रहस्यको जाननेके लिए उत्सुक रहता है। वह यह जानना चाहता है कि ग्रह क्यों भ्रमण करते हैं और उनका प्रभाव प्राणियोंपर क्यों पड़ता है? उसकी इसी जिज्ञासाने उसे ज्योतिषशास्त्रके अध्ययनके लिए प्रेरित किया है।

भारतीय ऋषियोंने अपने दिव्यज्ञान और सक्रिय साधना द्वारा आधुनिक यन्त्रोंके अभावमें भी प्रागैतिहासिककालमें इस शास्त्रकी अनेक गुत्थियोंको सुलझाया था। यद्यपि आज पाश्चात्य सभ्यताके रंगमें रँगकर कुछ लोग इस विज्ञानको विदेशीय देन बतलाते हैं; पर प्राचीन शास्त्रोंका अवगाहन करनेपर उक्त धारणा भ्रान्त सिद्ध हुए बिना नहीं रह सकती है।

भारतीय विज्ञानकी उन्नति में इतर धर्मावलम्बियोंके साथ कन्धेसे कन्धा लगाकर चलनेवाले जैनाचार्योंका भी महत्त्वपूर्ण स्थान है। उनकी अमर लेखनीसे प्रसूत दिव्य रचनाएँ आज भी जैन विज्ञानकी यशःपताकाको फहरा रही हैं। ज्योतिषशास्त्रके इतिहासका आलोडन करनेपर ज्ञात होता है कि जैनाचार्यों द्वारा निर्मित ज्योतिष ग्रन्थोंसे भारतीय ज्योतिषमें अनेक नवीन बातोंका समावेश तथा प्राचीन सिद्धान्तोंमें परिमार्जन हुए हैं। जैन ग्रन्थोंकी सहायताके बिना भारतीय ज्योतिषके विकास क्रमको समझना कठिन ही नहीं, असम्भव है।

भारतीय ज्योतिषका शृंखलाबद्ध इतिहास हमें आर्यभट्टके समयसे मिलता है। इसके पूर्ववर्त्ती ग्रन्थ वेद, अंगसाहित्य, ब्राह्मण, सूर्यप्रज्ञप्ति, गर्गसंहिता, ज्योतिष्करण्डक एवं वेदांगज्योतिष प्रभृति ग्रन्थोंमें ज्योतिषशास्त्रकी अनेक महत्त्वपूर्ण बातोंका वर्णन आया है। वेदांगज्योतिषमें पञ्चवर्षीय युग परसे उत्तरायण और दक्षिणायनके तिथि, नक्षत्र एवं दिनमान आदिका साधन किया है। इसके अनुसार युगका आरम्भ माघ शुक्ल प्रतिपदाके दिन सूर्य और चन्द्रमाके धनिष्ठा नक्षत्र सहित क्रान्तिवृत्तमें पहुँचनेपर होता है। इस ग्रन्थका रचनाकाल कई शती ई० पू० माना जाता है। विद्वानोंने इसके रचनाकालका पता लगानेके लिए जैन ज्योतिषको ही पृष्ठभूमि स्वीकार किया है। वेदांगज्योतिषपर उसके पूर्ववर्ती और समकालीन ज्योतिष्करण्डक, सूर्यप्रज्ञप्ति एवं षट्खण्डागममें फुटकर उपलब्ध ज्योतिष चर्चाका प्रभाव स्पष्ट लक्षित होता है। 'हिन्दुत्व' के लेखकने जैन ज्योतिषका महत्त्व और प्राचीनता स्वीकार करते हुए लिखा है—"भारतीय ज्योतिषमें यूनानियोंकी शैलीका प्रचार विक्रमीय संवत्से तीन सौ वर्ष पीछे हुआ। पर जैनोंके मूल-

ग्रन्थ अंगोंमें यवन ज्योतिषका कुछ भी आभास नहीं है। जिस प्रकार सनातनियोंकी वेदसंहिता में पञ्चवर्षात्मक युग है और कृत्तिकासे नक्षत्र गणना है उसी प्रकार जैनोंके अंग ग्रन्थोंमें भी।"[1]

डॉ० श्यामशास्त्रीने वेदांग-ज्योतिषकी भूमिकामें बताया है—"वेदांगज्योतिषके विकासमें जैन ज्योतिषका बड़ा भारी सहयोग है, बिना जैन ज्योतिषके अध्ययन के वेदांगज्योतिषका अध्ययन अधूरा ही कहा जायगा। भारतीय प्राचीन ज्योतिषमें जैनाचार्योंके सिद्धान्त अत्यन्त ही महत्त्वपूर्ण हैं।" पञ्चवर्षात्मक युगका सर्वप्रथम उल्लेख जैन ग्रन्थोंमें ही आता है। काललोकप्रकाश, ज्योतिष्करण्डक और सूर्यप्रज्ञप्तिमें जिस पञ्चवर्षात्मक युगका निरूपण किया है, वह वेदांगज्योतिषके युगसे भिन्न और प्राचीन है। सूर्यप्रज्ञप्तिमें युगका निरूपण करते हुए लिखा है—

"सावणवहुलपडिवए बालवकरणे अभीइनक्खत्ते।
सव्वत्थ पडमसमये जुअस्स आइं वियाणाहि॥"

अर्थात् श्रावण कृष्ण प्रतिपदाके दिन अभिजित् नक्षत्रमें पञ्चवर्षीय युगका आरम्भ होता है।

जैनज्योतिषकी प्राचीनताके अनेक सवल प्रमाण मौजूद हैं। प्राचीन जैनागममें ज्योतिषीके लिए 'जोइसंगविउ' वाक्यका प्रयोग आया है। प्रश्नव्याकरणांगमें बताया है—"तिरियवासी पंचविहा जोइसीया देवा, वहस्सती, चन्द, सूर, सुक्क, सणिच्छरा, राहू धूमकेउ, बुद्धा य, अंगारगा य, तत्तवणिज्ज कणगवण्णा जेयगहा जोइसियंमि चारं चरंति, केतुय गतिरतीया। अट्ठावीसतिविहाय णक्खतरेवगणा णाणासंठ्ठाण-संठियाओ य तारगाओ ठियलेस्साचारिणो य।" इससे स्पष्ट है कि नवग्रहोंका प्रयोग ग्रहोंके रूपमें ई० पू० तीसरी शतीसे भी पहले जैनोंमें प्रचलित था। ज्योतिष्करण्डकका रचनाकाल ई० पू० तीसरी या चौथी शताब्दी निश्चित है, उसमें लग्नका जो निरूपण किया है, उससे भारतीय ज्योतिषकी कई नवीन बातोंपर प्रकाश पड़ता है।

"लग्गं च दक्खिणायविसुवे सुवि अस्स उत्तरं अयणे।
लग्गं साई विसुवेसु पंचसु वि दक्खिणे अयणे॥"

इस पद्यमें 'अस्स' यानी अश्विनी और 'साई' यानी स्वाति ये विषुवके लग्न बताये गये हैं। ज्योतिष्करण्डकमें विशिष्ट अवस्थाके नक्षत्रोंको भी लग्न कहा गया है। यवनोंके आगमनके पूर्व भारतमें यही जैन लग्नप्रणाली प्रचलित थी। वेदांगज्योतिषमें भी इस लग्नप्रणालीका आभास मिलता है—"श्रविष्ठाभ्यां गुणाभ्यस्तान् प्राग्विलग्नान् विनिर्दिशेत्" इस पद्यार्थमें वर्तमान लग्न नक्षत्रोंका निरूपण किया गया है। प्राचीन भारतमें विशिष्ट अवस्थाको राशिके समान विशिष्ट अवस्थाके नक्षत्रोंको भी लग्न कहा जाता था।

---

१. हिन्दुत्व, पृ० ५८१।

जैन ज्योतिषकी प्राचीनताका एक प्रमाण पञ्चवर्षात्मक युगमें व्यतीपात आनयनकी प्रक्रिया है। वेदांगज्योतिषसे भी पहले इस प्रक्रियाका प्रचार भारतवर्षमें था। प्रक्रिया निम्न प्रकार है—

"अयणाणं संबंधे रविसोमाणं तु वे हि य जुगम्मि।
जं हवइ भागलद्धं वइहया तत्तिया होन्ति॥"
"वावत्तपरीयमाणे फलरासी इच्छिते उ जुगभे ए।
इच्छियवइवायंपि य इच्छं काऊण आणे हि॥"[1]

इन गाथाओंकी व्याख्या करते हुए टीकाकार मलयगिरिने "इह सूर्यचन्द्रमसौ स्वकीयेऽयने वर्तमानौ यत्र परस्परं व्यतिपततः स कालो व्यतिपातः, तत्र रविसोमयोः युगे युगमध्ये यानि अयनानि तेषां परस्परं सम्बन्धे एकत्र मेलने कृते द्वाभ्यां भागो ह्रियते। हृते च भागे यद्भवति भागलब्धं तावन्तः तावत्प्रमाणा; युगे व्यतिपाता भवन्ति।" गणितक्रिया–७२ व्यतिपातमें १२४ पर्व होते हैं तो एक व्यतिपात में क्या? ऐसा अनुपात करने पर— $\frac{१२४ \times १}{७२} = १\frac{५२}{७२} \times १५ = १०\frac{६०}{७२}$ तिथि, $\frac{६०}{७२} \times \frac{३०}{१} = २५$ मुहूर्त्त। व्यतिपात ध्रुवराशिकी पट्टिका एक युगमें निम्न प्रकार आयगी :—

	पर्व	तिथि	मुहूर्त
(१) $\frac{१२४}{७२} \times १ =$	१	१०	२५
(२) $\frac{१२४}{७२} \times २ =$	३	६	२०
(३) $\frac{१२४}{७२} \times ३ =$	५	२	१५
(४) $\frac{१२४}{७२} \times ४ =$	६	१३	१०
(५) $\frac{१२४}{७२} \times ५ =$	८	९	५
(६) $\frac{१२४}{७२} \times ६ =$	१०	५	०
(७) $\frac{१२४}{७२} \times ७ =$	१२	०	२५
(८) $\frac{१२४}{७२} \times ८ =$	१३	११	२०

१. ज्योतिष्करण्डक, पृ० २००–२०५

	पर्व	तिथि	मुहूर्त
(९) $\frac{१२४}{७२} \times ९ =$	१५	७	१५
(१०) $\frac{१२४}{७२} \times १० =$	१७	३	१०

जैन ज्योतिषकी प्राचीनता उसकी नक्षत्रगणनासे भी सिद्ध होती है। प्राचीनकालमें कृत्तिकासे नक्षत्रगणना ली जाती थी, पर मेरा विचार है कि अभिजित्‌वाली नक्षत्रगणना कृत्तिकावाली नक्षत्रगणनासे प्राचीन है। जैन ग्रन्थोंमें अभिजित्‌वाली नक्षत्रगणना वर्तमान है। कृत्तिकासे नक्षत्रगणनाका प्रयोग भी प्राचीन जैन ज्योतिषग्रन्थोंमें मिलता है तथा चान्द्र नक्षत्रों की अपेक्षा सावन नक्षत्रोंका विधान अधिक है।

जैन संवत्सर प्रणालीको देखनेसे प्रतीत होता है, कि इसका प्रयोग प्राचीन भारत में ई० पू० दस शताब्दीसे भी पहले था। वेदोंमें जो संवत्सरके नाम आये हैं, जैन ग्रन्थोंमें उनसे भिन्न नाम हैं। यह संवत्सरकी प्रणाली अभिजित् नक्षत्रपर आश्रित है। नाक्षत्र संवत्सर, युगसंवत्सर, प्रमाणसंवत्सर और शनिसंवत्सर। बृहस्पति जब सभी नक्षत्रसमूहको भोग कर पुनः अभिजित् नक्षत्रपर आता है तब महानाक्षत्र संवत्सर होता है।

षट्खण्डागम धवला टीका[१] में रौद्र, श्वेत, मैत्र, सारभट, दैत्य, वैरोचन, वैश्वदेव, अभिजित्, रोहण, बल, विजय, नैॠत्य, वरुण, अर्यमन् और भाग्य ये पन्द्रह मुहूर्त्त आये हैं। मुहूर्त्तोंकी नामावली टीकाकारकी अपनी नहीं है, उन्होंने पूर्व परम्परासे प्राप्त श्लोकोंको उद्धृत किया है। अतः मुहूर्तचर्चा पर्याप्त प्राचीन प्रतीत होती है।

जैन ज्योतिष साहित्य के भेद-प्रभेदों का दिग्दर्शन

षट्खण्डागमकी धवला टीकामें प्राप्त प्राचीन उद्धरण, तिलोयपण्णत्ती, जम्बूद्वीपपण्णत्ति, सूर्यप्रज्ञप्ति, चन्द्रप्रज्ञप्ति, ज्योतिष्करण्डक तथा आगम ग्रन्थों में प्राप्त ज्योतिषचर्चाके अतिरिक्त इस विषयके सैकड़ों स्वतन्त्र ग्रन्थ हैं। नक्षत्रोंके सम्बन्धमें जितना ऊपापोह जैनाचार्योंने किया है, उतना अन्य लोगों ने नहीं। प्रश्नव्याकरणांगमें नक्षत्र योगोंका वर्णन विस्तारके साथ किया है। इसमें नक्षत्रोंके कुल, उपकुल और कुलोपकुलोंका निरूपण करते हुए बताया है[२]—"धनिष्ठा, उत्तराभाद्रपद, अश्विनी, कृत्तिका, मृगशिरा; पुष्य, मघा, उत्तराफाल्गुनी, चित्रा, विशाखा, मूल एवं उत्तराषाढ़ा ये नक्षत्र कुलसंज्ञक; श्रवण, पूर्वाभाद्रपद, रेवती, भरणी, रोहिणी, पुनर्वसु, आश्लेषा, पूर्वाफाल्गुनी, हस्त, स्वाति, ज्येष्ठा एवं पूर्वाषाढ़ा ये नक्षत्र उपकुल संज्ञक और अभिजित्, शतभिषा, आर्द्रा एवं अनुराधा कुलोपकुल संज्ञक हैं।" यह कुलोपकुलका विभाजन पूर्णमासीको होनेवाले नक्षत्रोंके आधार पर किया गया है।

१. देखें—धवला टीका, ४ जिल्द, ३१८ पृ०।

२. "ता कहते कुला उवकुला कुलावकुला आहितेति वदेज्जा? तत्थ खलु इमा बारस कुला बारस उवकुला चत्तारि कुलावकुला पण्णत्ता········।" —प्रश्न० १०१५।

इस वर्गीकरणका स्पष्टीकरण करते हुए बताया है कि श्रावणमासके धनिष्ठा, श्रवण और अभिजित्; भाद्रपद मासके उत्तराभाद्रपद, पूर्वाभाद्रपद और शतभिष, आश्विन मासके अश्विनी और रेवती; कार्त्तिक मासके कृत्तिका और भरणी, अगहन या मार्गशीर्ष मासके मृगशिरा और रोहिणी; पौष मासके पुष्य, पुनर्वसु और आर्द्रा; माघ मासके मघा और आश्लेषा; फाल्गुन मासके उत्तराफाल्गुनी और पूर्वाफाल्गुनी; चैत्र मासके चित्रा और हस्त; वैशाख मासके विशाखा और स्वाती; ज्येष्ठ मासके मूल, ज्येष्ठा और अनुराधा एवं आषाढ़ मासके उत्तराषाढ़ा और पूर्वाषाढ़ा नक्षत्र बताये गये हैं। प्रत्येक मासकी पूर्णमासीको उस मासका प्रथम नक्षत्र कुल संज्ञक, दूसरा उपकुल संज्ञक और तीसरा कुलोपकुल संज्ञक होता है। अर्थात् श्रावण मासकी पूर्णिमाको धनिष्ठा पड़े तो कुल, श्रवण हो तो उपकुल, और अभिजित् हो तो कुलोपकुल संज्ञावाला होता है। इसी प्रकार आगे-आगेके महीनोंके नक्षत्र भी बताये गये हैं।

ऋग्वेद संहितामें ज्योतिषविषयक ऋतु, अयन, मास, पक्ष, नक्षत्र, तिथि आदि की जैसी चर्चा है, उसी प्रकारकी प्राचीन परम्परासे चली आयी चर्चा इस ग्रन्थमें भी मौजूद है।

समवायांगमें आर्द्रा, चित्रा और स्वाति नक्षत्रकी एक-एक तारा, पूर्वाफाल्गुनी, उत्तराफाल्गुनी, पूर्वाभाद्रपद और उत्तराभाद्रपदकी दो-दो ताराएँ; मृगशिरा, पुष्य, ज्येष्ठा, अभिजित्, श्रवण, अश्विनी और भरणी नक्षत्रकी तीन-तीन ताराएँ; अनुराधा, पूर्वाषाढ़ा और उत्तराषाढ़ाकी चार-चार ताराएँ; रोहिणी, पुनर्वसु, हस्त, विशाखा और धनिष्ठा नक्षत्रकी पाँच-पाँच ताराएँ; कृत्तिका और आश्लेषाकी छह-छह ताराएँ; एवं मघा नक्षत्रकी सात ताराएँ बतायी गयी हैं[1]। कृत्तिका, रोहिणी, मृगशिरा, आर्द्रा, पुनर्वसु, पुष्य और आश्लेषा ये सात नक्षत्र पूर्वद्वारवाले; मघा, पूर्वाफाल्गुनी, उत्तराफाल्गुनी, हस्त, चित्रा, स्वाति, विशाखा ये सात दक्षिणद्वारवाले; अनुराधा, ज्येष्ठा, मूल, पूर्वाषाढ़ा, उत्तराषाढ़ा, अभिजित्, श्रवण ये सात पश्चिम द्वारवाले एवं धनिष्ठा, शतभिषा, पूर्वाभाद्रपद, उत्तराभाद्रपद, रेवती, अश्विनी और भरणी ये सात नक्षत्र उत्तर द्वारवाले हैं[2]। इस प्रकार प्राचीन ग्रन्थोंमें नक्षत्रोंका विस्तृत विचार किया गया है।

फुटकर ज्योतिषचर्चाके अलावा सूर्यप्रज्ञप्ति, चन्द्रप्रज्ञप्ति, ज्योतिष्करण्डक, अंगविज्जा, गणिविज्जा, मण्डलप्रवेश, गणितसारसंग्रह; गणितसूत्र, व्यवहारगणित, जैन गणितसूत्र, सिद्धान्तशिरोमणि—त्रैवेद्य मुनि, गणितशास्त्र, गणितसार, जोइसार, पञ्चाङ्गानयनविधि, इष्टतिथिसारिणी, लोकविजययन्त्र, पञ्चाङ्गतत्त्व, केवलज्ञानहोरा,

---

१. "अद्दाणक्खत्ते एगतारे। चित्ताणक्खत्ते एकतारे। सातिणक्खत्ते एगतारे। पुव्वाफग्गुणीक्खत्ते दुतारे। उत्तरा-फाग्गुणीणक्खत्ते दुतारे। पुव्वभद्दवयाणक्खत्ते दुतारे। उत्तराभद्दवयाणक्खत्ते दुतारे···" समवायाङ्ग १।६, २।४, ३।२, ४।३, ५।६, ६।७। २. "कत्तिआइया सत्तणक्खत्ता पुव्वदारिआ। महाइआ सत्तणक्खत्ता दाहिणदारिआ। अणुराइआ सत्त णक्खत्ता अवरदारिआ। धणिट्ठाइआ सत्तणक्खत्ता उत्तरदारिया।" —समवायाङ्ग ७५।

आयज्ञानतिलक, आयसद्भाव प्रकरण, रिट्ठसमुच्चय, अर्घकाण्ड, ज्योतिषप्रकाश, जातकतिलक, नक्षत्रचूड़ामणि आदि सैकड़ों ग्रन्थ हैं।

विषयविचार की दृष्टि से जैन ज्योतिष को प्रधानतः दो भागों में विभक्त किया जा सकता है। एक गणित और दूसरा फलित। गणितज्योतिष-सैद्धान्तिक दृष्टि से गणित का महत्त्वपूर्ण स्थान है, ग्रहोंकी गति, स्थिति, वक्री, मार्गी, मध्यफल, मन्दफल, सूक्ष्मफल कुज्या, त्रिज्या, बाण, चाप, व्यास, परिधिफल एवं केन्द्रफल आदिका प्रतिपादन बिना गणित ज्योतिषके नहीं हो सकता है। आकाशमण्डलमें विकीर्णित तारिकाओंका ग्रहोंके साथ कब कैसा सम्बन्ध होता है, इसका ज्ञान भी गणित प्रक्रियासे ही सम्भव है। जैनाचार्योंने गणित ज्योतिष सम्बन्धी विषयका प्रतिपादन करनेके लिए पाटीगणित, बीजगणित, रेखागणित, त्रिकोणमिति, गोलीयरेखागणित, चापीय एवं वक्रीय त्रिकोणमिति, प्रतिभागणित, शृंगोन्नतिगणित, पंचांगनिर्माणगणित, जन्मपत्रनिर्माण गणित, ग्रहयुति, उदयास्तसम्बन्धी गणित एवं यन्त्रादि साधन सम्बन्धी गणितका प्रतिपादन किया है।

जैनपाटी गणितके अन्तर्गत परिकर्माष्टकसम्बन्धी गणित–जोड़, बाकी, गुणा, भाग, वर्ग, वर्गमूल, घन एवं घनमूल आदि हैं। इसी प्रकार श्रेणीविभागसम्बन्धी गणितके भी अनेक भेद-प्रभेद बताये हैं—जैसे युगोत्तरश्रेणी, चितिघन, वर्गचितिघन, घनचितिघन आदि है। चितिघनसे किसी स्तूप, मन्दिर एवं दीवाल आदिकी ईटोंका हिसाब आसानीसे किया जा सकता है। गुणोत्तर श्रेणीके सिद्धान्तोंको भी महावीराचार्यने गणितसार नामक ग्रन्थमें विस्तारसे बताया है। गणितसारसंग्रहमें विलोमगणित या व्यस्तविधि, त्रैराशिक, स्वांशानुबन्ध, स्वांशापवाह, इष्टकर्म, द्वीष्टकर्म, एकादिभेद, क्षेत्रव्यवहार, अंकपाश एवं समय-दूरी सम्बन्धी प्रश्नोंकी क्रियाएँ विस्तारपूर्वक बतायी गयी हैं। जैनगणितके विकासका स्वर्णयुग छठवीं शताब्दीसे बारहवीं शताब्दी तक है, इसके पूर्व स्वतन्त्र रूपसे एतद्विषयक रचना प्रायः अनुपलब्ध है। हाँ, फुटकर रूपमें आगमसम्बन्धी ग्रन्थोंमें गणितके अनेक महत्त्वपूर्ण सिद्धान्त निबद्ध किये गये हैं। षट्खण्डागमके सूत्रोंमें भी गणितके बीजसूत्र मिलते हैं। चौथी शताब्दीके लगभगकी रचना तिलोयपण्णत्तिमें बीजगणित, अंकगणित एवं रेखागणित सम्बन्धी अनेक नियम हैं। संकलित धन निकालनेके लिए दिये गये निम्न सिद्धान्त गणित दृष्टिसे अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है :—

"पदवग्गं चयपहदं दुगुणिदगच्छेण गुणिदमुहजुत्तं।
वड्ढिहदपदविहीणं दलिदं जाणिज्ज संकलिदं ॥७६॥
पदवग्गं पदरहिदं चयगुणिदं पदहदादिजुगमद्धं।
मुहदलयहदपदेणं संजुत्तं होदि संकलिदं ॥८१॥

अर्थात्—पदके वर्गको चयसे गुणा करके उसमें दुगुने पदसे गुणित मुखको जोड़ देने पर जो राशि उत्पन्न हो, उसमें-से चयसे गुणित पद प्रमाणको घटाकर शेषको आधा कर देनेपर प्राप्त हुई राशिके प्रमाण संकलित धन होता है ॥७६॥ पदका वर्गकर उसमेंसे पदके प्रमाणको कम करके अवशिष्ट राशिको चयके प्रमाणसे गुणा करना चाहिए,

पश्चात् उसमें-से पदसे गुणित आदिको मिलाकर और फिर उसका आधा कर प्राप्त राशिमें मुखके अर्ध भागसे गुणित पदके मिला देने पर संकलित धनका प्रमाण निकलता है ॥ ८१ ॥

उपर्युक्त दोनों ही नियम गणितमें महत्त्वपूर्ण और नवीन हैं । तुलनात्मक दृष्टिसे आर्यभट्ट, ब्रह्मगुप्त और भास्कर जैसे गणितज्ञोंके नियम भी उक्त नियमोंकी अपेक्षा स्थूल हैं । आर्यभट्टी ग्रन्थका अवलोकन करनेसे मालूम होता है कि यह आचार्य भी जैन गणितके वर्गमूल और घनमूल सम्बन्धी सिद्धान्तोंसे अवश्य प्रभावित हुए हैं । डॉ० कर्ण साहबने आर्यभट्टीकी भूमिका एवं अंग्रेजी नोट्स्में इस बातका कुछ संकेत भी किया है । तथा आर्यभट्टने भी जैनयुगकी उत्सर्पिणी और अवसर्पिणी सम्बन्धी कालगणनाको स्वीकार किया है । आर्यभट्टीके निम्नश्लोकसे यह बात स्पष्ट है :—

"उत्सर्पिणी युगार्द्धं पश्चादवसर्पिणी युगार्द्धं च ।
मध्ये युगस्य सुषमा आदावन्ते दुःसमान्यंसात् ॥"

आर्यभट्टकी संख्यागणना भी जैनाचार्योंकी संख्यागणनाके समान ही है । सूर्य-प्रज्ञप्तिमें जिस वर्गाक्षर क्रमसे संख्याका प्रतिपादन किया है वही क्रम आर्यभट्टका भी है ।

प्राचीन जैन गणित ज्योतिषका एक और ग्रन्थ है जिसका परिचय सिंहसूरि विरचित लोकतत्त्व विभागमें निम्न प्रकार मिलता है:—

"वैश्वे स्थिते रविसुते वृषभे च जीवे राजोत्तरेषु सितपक्षमुपेत्य चन्द्रे ।
ग्रामे च पाटलिके नामनि पाण (पाण्डच) राष्ट्रे शास्त्रं पुरा लिखितवान्मुनिसर्वनन्दी ॥"

इससे स्पष्ट है कि सर्वनन्दी आचार्यका गणितज्योतिषका एक महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ रहा होगा, जिसमें लोकवर्णनके साथ-साथ गणितके भी अनेक सिद्धान्त निबद्ध किये गये होंगे । आठवीं शताब्दी में पाटीगणित सम्बन्धी कई महत्त्वपूर्ण जैन ग्रन्थ लिखे गये हैं । इस कालमें महावीराचार्यने गणितसारसंग्रह, गणितशास्त्र एवं गणितसूत्र ये तीन ग्रन्थ प्रधान रूपसे लिखे हैं । ये आचार्य गणितके बड़े भारी उद्भट विद्वान् थे । इनकी वर्ग करनेकी अनेक रीतियोंमें निम्नलिखित रीति अत्यन्त महत्त्वपूर्ण और भारतीय गणितमें उल्लेख योग्य है :—

"कृत्वान्त्यकृतिं हन्याच्छेषपदैर्द्विगुणमन्त्यमुत्सार्य ।
शेषानुत्सार्यैवं करणीयो विधिरयं वर्गे ॥"

अर्थात्—अन्त्य अंकका वर्ग करके रखना फिर जिसका वर्ग किया है, उसको दूना करके शेष अंकोंसे गुणाकर एक अंक आगे हटाकर रखना । इसी प्रकार अन्त तक वर्ग करके जोड़ देनेसे पूर्ण राशिका वर्ग होता है । इस वर्ग करनेके नियममें हम उपपत्ति (वासना) अन्तर्निहित पाते हैं । क्योंकि—

$$\text{अ}^2 = (\text{क} + \text{ग})^2 = (\text{क} + \text{ग})\ (\text{क} + \text{ग}) = \text{अ}^2$$

$$= \text{क}(\text{क} + \text{ग}) + \text{ग}(\text{क} + \text{ग}) = \text{क}^2 + \text{क.ग} + \text{क.ग} + \text{ग}^2 = \text{क}^2 + २\text{क.ग} + \text{ग}^2$$

इससे स्पष्ट है कि उक्त राशिमें अन्त्य अक्षर क का वर्ग करके वर्गित अक्षर क को दूना कर आगे वाले अक्षर ग से गुणा किया है तथा अन्त्यके अक्षर ग का वर्गकर जोड़ दिया है। इस प्रकार उक्त सूत्रमें बीजगणितगत वासना भी अन्तर्निहित है।

दशमी शताब्दीमें कविराजकुञ्जरने कन्नड़ भाषामें लीलावती नामका महत्त्वपूर्ण गणित ग्रन्थ लिखा है। त्रिलोकसार एवं गोम्मटसारमें गणित सम्बन्धी कई महत्त्वपूर्ण नियम आचार्य नेमिचन्द्र सिद्धान्तचक्रवर्त्तीने बताये हैं। वस्तुतः जीवा, चाप, बाण और क्षेत्रफल सम्बन्धी गणितमें ये आचार्य पूर्ण निष्णात थे। जैनाचार्योंने ज्योतिष सम्बन्धी गणित ग्रन्थों की रचना संस्कृत, प्राकृत, कन्नड़, तामिल एवं मलयालम आदि भाषाओं में भी की है। कवि राजकुञ्जरकी लीलावतीमें क्षेत्र-व्यवहार सम्बन्धी अनेक विशेषताएँ बतायी गयी हैं। ग्यारहवीं शताब्दीका एक जैन गणित ग्रन्थ प्राकृत भाषामें लिखा मिलता है। इसमें मिश्रित प्रश्नोंके उत्तर श्रेणी व्यवहार और कुट्टककी रीतिसे दिये गये हैं। इसी कालमें श्रीधराचार्यने गणितशास्त्र नामक एक ग्रन्थ रचा है, इसमें ग्रहगणितोपयोगी आरम्भिक गणितसिद्धान्तोंकी चर्चा की गयी है। चौदहवीं शताब्दीके आस-पासके जैनाचार्य श्रेष्ठ चन्द्रने गणितशास्त्र नामक ग्रन्थ एवं सिंहतिलक सूरिने तिलक नामक गणित ग्रन्थ तथा जैनेतर कई गणित ग्रन्थोंके ऊपर टीकाएँ लिखी हैं। इस प्रकार अठारहवीं शताब्दी तक मौलिक एवं टीका ग्रन्थ गणित सम्बन्धी लिखे जाते रहे हैं।

रेखागणित—जैनाचार्योंने गणितशास्त्रके भिन्न-भिन्न अंगोंपर लिखा है। रेखागणितके द्वारा उन्होंने विशेष-विशेष संस्थान या क्षेत्रके भिन्न-भिन्न अंशोंका परस्पर सम्बन्ध बतलाया है; इसमें कोण, रेखा, समकोण, अधिक कोण, न्यूनकोण, समतल और घनपरिमाण आदिके विषयका निरूपण किया गया है। जैनज्योतिषमें समतल और घन-रेखागणित, व्यवच्छेदक या बैजिक रेखागणित, चित्ररेखागणित और उच्चतर रेखागणित-के रूपमें मिलता है। समतल रेखागणितमें सरलरेखा, समतलक्षेत्र, घनक्षेत्र और वृत्तके सामान्य विषयका जैनज्योतिर्विदोंने निरूपण किया है। उच्चतर रेखागणितमें—सूचीछेद, वक्ररेखा और उसकी क्षेत्रावलीका आलोचन किया है। चित्ररेखागणितमें—सूर्यपरिलेख, चन्द्रपरिलेख एवं भौमादि ग्रहोंके परिलेख तथा यन्त्रों द्वारा ग्रहोंके वेधके चित्र दिखलाये गये हैं। ज्योतिषशास्त्रमें इस रेखागणितका बड़ा भारी महत्त्व है। इसके द्वारा ग्रहण आदिका साधन विना पाटीगणितकी क्रियाके सरलतापूर्वक किया जा सकता है। व्यवच्छेदक रेखागणित या बैजिक रेखागणित में—बीज सम्बन्धी क्रियाओंको रेखाओं द्वारा हल किया जाता है। जैनाचार्य श्रीधरने सरलरेखा, वृत्त, रैखिक क्षेत्र, नलाकृति, मोचाकृति, और वर्त्तुलाकृति आदि विपयोंका वर्णन बैजिकरेखागणित में किया है। यों तो जैन ज्योषिमें स्वतन्त्र रूपसे रेखागणितके सम्बन्धमें प्रायः गणित ग्रन्थ अनुपलब्ध हैं, परन्तु पाटीगणितके साथ या पञ्चांग निर्माण अथवा अन्य सैद्धान्तिक ज्योतिष ग्रन्थोंके साथमें रेखागणित मिलता है।

गणितसार संग्रहमें त्रिभुजोंके कई भेद बतलाये गये हैं तथा उनसे भुज, कोटि, कर्ण और क्षेत्रफल भी सिद्ध किये हैं। जात्य त्रिभुजके भुजकोटि, कर्ण और क्षेत्रफल लानेका निम्नप्रकार बताया है—

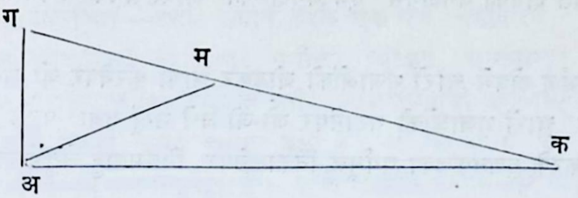

इस त्रिभुजमें अ क, अ ग, भुज और कोटि हैं, क ग, कर्ण हैं, क अ ग∠ समकोण है, असम कोण विन्दुसे क ग करणके ऊपर लम्ब किया है—

$\because$ अ क^2 = क ग $\times$ क म; अ ग = क ग $\times$ ग म $\therefore$ अ क^2 + अ ग^2 = क ग $\times$ क म + क ग $\times$ ग म = क ग (क म + ग म) = क ग $\times$ क ग = क ग^2 = अ क^2 + क ग^2 = क ग $\sqrt{\text{अ क}^2 + \text{क ग}^2}$ = $\sqrt{\text{कोटि}^2 + \text{भु}^2}$ = कर्ण; $\sqrt{\text{कर्ण}^2 - \text{भुज}^2}$ = कोटि; $\sqrt{\text{कर्ण}^2 - \text{कोटि}^2}$ = भुज

जात्य त्रिभुजका क्षेत्रफल निम्नप्रकारसे निकाला जायगा—

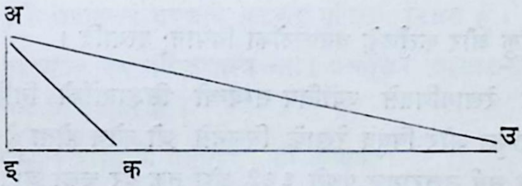

अ इ उ त्रिभुजमें लघुभुज = भु; बृहद्भुज = भुं; भूमि = भू, अ क = लम्ब;

छोटी आबाध इ क = $\frac{\text{भू} - (\text{भुं}^2 - \text{भु}^2)}{2\text{भू}}$

$$\text{लं}^2 = \text{भु}^2 \left\{ \frac{\text{भू}^2 - (\text{भूं}^2 - \text{भु}^2)}{2\text{भु}} \right\} = \left\{ \text{भु} + \frac{(\text{भू}^2 - (\text{भुं}^2 - \text{भु})}{2\text{भू}} \right\} \times \left\{ \text{भु} - \frac{(\text{भु}^2 - \text{भुं}^2 - \text{भु}^2)}{2\text{भू}} \right\}$$

इस प्रकार जैनाचार्योंने सरलरेखात्मक आकृतियोंके निर्माण क्षेत्रफलोंके जोड़ तथा आकृतियोंके स्वरूप आदि बतलाये हैं, अतः गणितसारसंग्रहके क्षेत्राध्यायपर-से रेखागणित सम्बन्धी निम्न सिद्धान्त सिद्ध होते हैं—

(१) समकोण त्रिभुजमें कर्णका वर्ग भुज और कोटिके वर्गके योगके बराबर होता है[1] ।

(२) वृत्तक्षेत्रमें क्षेत्रफलका तृतीयांश सूची होती है ।

(३) आयत क्षेत्रको वर्गक्षेत्रमें एवं वर्गक्षेत्रको आयतक्षेत्रके रूपमें बदला जा सकता है ।

(४) चतुर्भुज क्षेत्रमें चारों भुजाओंको जोड़कर आधा करनेपर जो अवशेष रहे, उसमें-से पृथक्-पृथक् चारों भुजाओंको घटानेपर जो-जो बचे उन्हें तथा पहले आधी की गयी राशिको गुणा करके गुणनफलका वर्गमूल निकालनेपर विषमबाहु चतुर्भुजका सूक्ष्मफल आता है[2] ।

(५) दो वर्गोंके योग अथवा अन्तरके समान वर्ग बनानेकी प्रक्रिया ।

(६) विषमकोण चतुर्भुजके कर्णानयनकी विधि तथा लम्ब, लघ्वाबाधा एवं बृहदाबाधा आदिका विधान ।

(७) त्रिभुज, विषमकोण, समचतुर्भुज, आयतक्षेत्र, वर्गक्षेत्र, पंचभुजक्षेत्र, षट्भुजक्षेत्र, ऋजुभुजक्षेत्र, एवं बहुभुजक्षेत्र आदिके क्षेत्रफलोंका विधान ।

(८) वृत्तक्षेत्र, जीवा, वृत्तखण्डकी ज्या, वृत्तखण्डकी चाप एवं वृत्तफल आदि निकालनेका विधान ।

(९) सूचीक्षेत्र, सूचीव्यास, सूचीफल एवं सूचीके सम्बन्धमें विविध परामर्श आदिका विधान ।

(१०) शंकु और कर्त्तुलके घनफलोंका विधान; इत्यादि ।

जैनाचार्योंने रेखागणितसे ज्योतिष सम्बन्धी सिद्धान्तोंको निश्चित करते हुए लिखा है कि क्रान्तिवृत्त और विषुव रेखाके मिलनेसे जो कोण होता है वह २३$\frac{१}{२}$ अंश परिमित है । यहाँ से सूर्य उत्तरायण पथसे ६६$\frac{१}{२}$ अंश तक दूर चला जाता है ।

इसी प्रकार दक्षिणायन पथमें भी ६६ अंश तक गमन करता है । अतएव खगोलस्थ उत्तर केन्द्रसे सूर्यकी गति ११३$\frac{१}{२}$ अंश दूर तक हुआ करती है । जैन मान्यतामें जिन वृत्तोंकी कल्पना खगोलस्थ दोनों केन्द्रोंके मध्य की गयी है उन्हें होराचक्र और प्रथम होराचक्रसे ज्योतिर्मण्डलके पूर्व भागके दूरत्वको विक्षेप बताया है । इस प्रकार विक्षेपाग्रको केन्द्र मानकर ग्राहक या छादकके व्यासार्धके समान त्रिज्यासे बना हुआ वृत्त जहाँ छाद्य बिम्बको काटता है, उतना ही ग्रहणका परम ग्रास भाग होता है । इसी प्रकार चन्द्रशर द्वारा विमण्डलीय, ध्रुवप्रोत वृत्तीय एवं क्रान्तिवृत्तीय शरोंका आनयन प्रधान रूपसे

---

१. देखें—गणितसारसंग्रहान्तर्गत क्षेत्र व्यवहाराध्यायका त्रिभुज प्रकरण ।

२. "भुजयुत्यर्धचतुष्काद् भुजहीनाद्घातितात्पदं सूक्ष्मम् ।
अथवा मुखतयुतितलमवलम्बगुणं न विषमचतुरस्रे ॥"

किया है। रेखागणितके प्रवर्त्तक यतिवृषभ, श्रीधर, श्रीपति, नेमिचन्द्र सिद्धान्त चक्रवर्ती, पद्मप्रभसूरि, देवेन्द्रसूरि, राजकुंजर, महावीराचार्य, सर्वनन्दी, उदयप्रभसूरि एवं हर्षकीर्त्ति-सूरि आदि प्रधान जैन गणक हैं।

बीजगणित—इसमें प्रधान रूपसे एक वर्ण समीकरण, अनेकवर्ण समीकरण, करणी, कल्पितराशियाँ समानान्तर, गुणोत्तर, व्युत्क्रम, समानान्तर श्रेणियाँ, क्रमसंचय, घातांकों और लघुगणकोंका सिद्धान्त आदि बीज सम्बन्धी प्रक्रियाएँ मिलती हैं। धवलामें $अ^{\frac{3}{२}}$ को अ के घनका प्रथम वर्गमूल कहा है। $अ^{९}$ को अ के घन का घन बताया है। $अ^{६}$ को अ के वर्गका घन वतलाया है। अ के उत्तरोत्तर-वर्ग और घनमूल निम्नप्रकार है—

अ का प्रथम वर्ग अर्थात् $(अ^{२}) = अ^{२}$

,, द्वितीय वर्ग ,, $(अ^{२})^{२} = अ^{४} = अ^{२^{२}}$

,, तृतीय वर्ग ,, $(अ^{२})^{3} = अ^{६} = अ^{२^{3}}$

,, चतुर्थ वर्ग ,, $(अ^{२})^{४} = अ^{८} = अ^{२^{४}}$

इसी प्रकार क वर्ग ,, ,, $(अ)^{२क} = अ^{२क}$

इन्हीं सिद्धान्तों पर से घातांक सिद्धांक निम्नप्रकार बनाया है—(१) $\frac{क}{अ} + \frac{व}{अ} = \frac{क}{अ} + व$ (२) $\frac{म}{अ}$ । $अ^{न} = \frac{म}{अ} - न$ (३) $\left(\frac{म}{अ}\right) न = \frac{म}{अ} न$, इन घातांक सिद्धान्तोंके उदाहरण धवलाके फुटकर गणितमें मिलते हैं।[1]

गणितसारसंग्रह एवं गणितशास्त्र आदि ग्रन्थोंके आधारपर-से बीजगणित सम्बन्धी कुछ सिद्धान्त नीचे दिये जाते हैं।

(१) ऋण राशि के समीकरण की कल्पना।

(२) वर्गप्रकृति, विचित्रकुट्टीकार, ज्ञाताज्ञातमूलानयन, भाटकानयन, इष्टवर्गा-नयन आदि प्रक्रियाओंके सिद्धान्त।

(३) अंकपाश, इष्टकानयन, छायानयन, खातव्यवहार एवं एकादि भेद सम्बन्धी नियम।

(४) केन्द्र फलका वर्णन, व्यक्त और अव्यक्त गणितोंका विधान एवं मापक सिद्धान्तोंकी प्रक्रियाका विधान।

(५) एक वर्ण और अनेक वर्ण समीकरण सम्बन्धी सिद्धान्त।

(६) द्वितीयादि असीमाबद्ध वर्ग एवं घनों का समीकरण।

(७) अलौकिक गणित में असंख्यात, संख्यात, अनन्त आदि राशियों को बीजाक्षर द्वारा प्रतिपादन करनेके सिद्धान्त।

---

१. छट्ठवग्गस्स उवरि सत्तमवग्गस्स हेट्ठदोत्ति तुरो अत्थवत्ती ण जादेत्ति। भाग ३, पृ० २५३ (धवला)।

त्रिकोणमिति—इस गणितके द्वारा जैनाचार्योंने त्रिभुजके भुज और कोणोंका सम्बन्ध बताया है। प्राचीन कालमें जैनाचार्योंने जिन क्रियाओंको बीजगणितके सिद्धान्तोंसे निकाला था, उन क्रियाओं को श्रीधर और विजयपने त्रिकोणमिति से निकाला है। जैनाचार्योंने त्रिकोणमिति और रेखागणितका अन्तर बतलाते हुए लिखा है कि रेखागणितके सिद्धान्तके अनुसार जब दो भिन्न रेखाएँ भिन्न-भिन्न दिशाओंसे आकर एक-दूसरेसे मिल जाती हैं तब कोण बनता है। किन्तु त्रिकोणमिति सिद्धान्तमें इससे विपरोत कोणकी उत्पत्ति होती है। दूसरा अन्तर त्रिकोणमिति और रेखागणितमें यह भी है कि रेखागणितके कोणके पहले कोई चिह्न नहीं लगता है, किन्तु त्रिकोणमितिमें विपरीत दिशामें घूमनेसे कोई-न-कोई चिह्न लग ही जाता है। इसलिए इसके कोणोंके नाम भी क्रमसे योजक और वियोजक बताये गये हैं। सरल त्रिकोणमितिके द्वारा कोण नापने में अत्यन्त सुविधा होती है तथा कोणमान भी ठीक निकलता है।

प्राचीन जैन ग्रन्थोंमें वृत्तकी परिधिमें व्यासका भाग देनेसे कोणमान निकाला गया है। पर बादके जैन गणकोंने यन्त्रोंके द्वारा भुज एवं कर्णके सम्बन्धसे कोणमान स्थिर किया है। गणितसार संग्रहमें ऐसी कई एक क्रियाएँ हैं, जिनमें भुज, कर्ण एवं कोणके सम्बन्धसे ही कोणविषयक नियम निर्धारित किये गये हैं। कुछ आचार्योंने भुज और कर्णकी निष्पत्ति सिद्ध करने के लिए अनेक नियम बताये हैं। इन्हीं नियमोंसे अक्षक्षेत्र सम्बन्धी अग्रा, क्रान्ति, लम्बांश, भुजांश एवं समशंकु आदिका प्रतिपादन किया है। चापीय त्रिकोणमिति द्वारा ग्रह, नक्षत्र आदिके अवस्थान और उनके पथका निर्णय होता है। यदि कोई समतल कोण वृत्तका केन्द्र भेद कर इसे दो खण्डोंमें विभक्त करे, तो प्रत्येक वृत्तक्षेत्र महावृत्त कहलाता है। जैनाचार्योंने ग्रहोंकी स्पर्शरेखा, छेदनरेखा, कोटिस्पर्शरेखा एवं कोटिछेदन रेखा आदि सिद्धान्तोंका प्रतिपादन त्रिकोणमितिसे किया है।

प्रतिभागणित—इसके द्वारा जैनाचार्योंने ग्रहवृत्तोंके परिणमनका कथन किया है। अर्थात् किसी महद्वृत्त वाले ग्रहका गणित करनेके लिए कल्पना द्वारा लघुवृत्तमें परिणामन कराने वाली प्रक्रियाका नाम ही प्रतिभा है। यद्यपि इस गणितके सम्बन्धमें स्वतन्त्ररूपसे ग्रन्थ नहीं मिलते, फिर भी ज्योतिश्चक्र एवं यन्त्रराजमें परिणामन सम्बन्धी कई सिद्धान्त दिये गये हैं। कदम्बप्रोतवृत्त, मेरुछिन्नप्रोतवृत्त, क्रान्तिवृत्त, एवं नाड़ीवृत्त आदि लघु और महद्वृत्तोंके परिणामनकी नाना विधियाँ बतायी गयी हैं। श्रीधराचार्य विरचित ज्योतिर्ज्ञानविधिमें भी इस परिणामन विधिका संकेत मिलता है। प्रतिभाकी प्रक्रिया द्वारा ग्रहोंकी कक्षाएँ दीर्घवृत्त, परिवलय, वलय एवं अतिपरिवलयके रूपमें सिद्ध की जाती हैं। प्राचीन सूची और वलय व्यास एवं परिधि सम्बन्धी प्रक्रियाका विकसित रूप ही यह प्रतिभागणित है। गणितसारसंग्रहके क्षेत्रसार व्यवहाराध्यायमें आधार समानान्तर भूतलसे छिन्न सूची क्षेत्रप्रदेशको वृत्तत्व स्वीकार किया गया है। उपर्युक्त सिद्धान्तके ऊपर यदि गणितदृष्टिसे विचार किया जाय, तो यह सिद्धान्त भी समसूच्या-

न्तर्गत प्रतिभागगणितका है। इसी प्रकार समतल शंकुमस्तक क्षेत्र व्यवस्था भी प्रतिभा गणितके अन्तर्गत है।

पंचांगनिर्माणगणित—जैन पंचांगको प्रणाली बहुत प्राचीन है। जिस समय भारतवर्षमें ज्योतिषके गणित ग्रन्थोंका अधिक प्रचार हुआ नहीं था, उस समय भी जैन पंचांगनिर्माण सम्बन्धी गणित पल्लवित और पुष्पित था। प्राचीन कालमें गगनखण्डात्मक ग्रहों की गति लेकर पंचांग प्रणाली शुरू हुई थी, पर उत्तरवर्त्ती आचार्योंने इस प्रणाली को स्थूल समझकर सुधार किया। प्राचीन जैन प्रणालीमें एक वीथीमें सूर्यका जो भ्रमण करना माना जाता था उसे उन्होंने अहोरात्र वृत्त मान लिया और इसोके आधारपर-से आकाशमण्डलमें नाड़ी वृत्त, क्रान्ति वृत्त, मेरुछिन्नप्रोत वृत्त एवं अयनप्रोतवृत्तादि २४ महद्वृत्त तथा कई-एक लघु वृत्त माने गये। गगनखण्डात्मक गति को भी कलात्मक गतिके रूपमें स्वीकार कर लिया गया। इस प्रकार प्राचीन जैन पंचांगकी प्रणाली विकसित हो कर नये रूपमें आ गयी। तिथि, वार, नक्षत्र, योग और करण इन पाँचों का नाम ही पंचांग है। जैन पंचांगगणितमें मेरुको केन्द्र मानकर ग्रहोंका गमन होनेसे अनेक विशेषताएँ हैं।

तिथि[1]—सूर्य और चन्द्रमाके अन्तरांशोंसे तिथि बनती है और इसका मान १२ अंशोंके बराबर होता है। सूर्यकी गति प्रति दिन लगभग १ अंश और चन्द्रमाकी १३$\frac{1}{3}$ अंश है, पर सूर्य और चन्द्रमा अपनी गतिसे गमन करते हुए ३० दिनोंमें ३६० अंशोंसे अन्तरित होते हैं। अतः मध्यम मानसे तिथिका मान १२ अंश अर्थात् ६० घटी अथवा ३० मुहूर्त हैं। कभी-कभी सूर्यकी गति मन्द और कभी-कभी तेज हो जाती है। इसी प्रकार चन्द्रमा भी कभी शीघ्रगति और कभी मन्दगति होता है। इसीलिए तिथि-क्षय और तिथिवृद्धि होती है। साधारणतः मध्यम मानके हिसाबसे तिथि ६० घटी हैं, पर कभी-कभी ६५ घटी तक हो जाती है। तिथ्योदय सर्वदा सूर्योदयसे ही लिया जाता है। तिथिक्षय और वृद्धिके कारण ही कभी पक्ष १६ दिन और कभी १३ दिनका ही होता है।

वार—नाक्षत्रमानके हिसाबसे जैन पंचांगमें वार लिया जाता है। वारोंका क्रम ग्रहोंके अनुसार न होकर उनके स्वामियोंके अनुसार है, जिस दिनका स्वामी सूर्य होता है, उसे रविवार; जिस दिनका स्वामी चन्द्र होता है, उसे सोमवार; जिस दिनका स्वामी भौम होता है, उसे मंगलवार; जिस दिनका स्वामी बुध होता है, उसे बुधवार; जिस दिन का स्वामी गुरु होता है, उसे वृहस्पतिवार; जिस दिनका स्वामी भृगु होता है, उसे शुक्रवार; एवं जिस दिनका स्वामी शनैश्चर होता है, उसे शनिवार कहते हैं। इस वार नाममें वृद्धि-ह्रास नहीं होता है क्योंकि सूर्योदयसे लेकर पुनः सूर्योदय तकके कालका नाम वार है।

---

१. विशेष जाननेके लिए देखें— "जैनपंचांग शीर्षक लेख—" जैन सिद्धान्त भास्कर भाग ८, कि० २।

नक्षत्र—सूर्य जिस मार्गसे भ्रमण करता है, उसे क्रान्तिवृत्त या मेरुछिन्न-समानान्तरप्रोतवृत्त कहते हैं, क्रान्तिवृत्तके दोनों तरफ १८० अंशमें जो कटिबन्ध प्रदेश है, उसे राशि चक्र कहते हैं। इस राशिचक्रके २८ भाग करनेपर अभिजित् आदि २८ नक्षत्र होते हैं। प्रत्येक ग्रहका नक्षत्रमान भिन्न-भिन्न होता है किन्तु पंचांगके लिए चन्द्र नक्षत्र ही लिया जाता है। इसीको दैनिक नक्षत्र भी कहते हैं। चन्द्र नक्षत्रके लानेका प्रकार यह है कि स्पष्ट चन्द्रकी कला बनाकर उनमें ८०० का भाग देनेसे लब्धि गत नक्षत्र, शेष वर्तमान नक्षत्रकी गतकलाएँ आती हैं। उनको ८०० में घटानेसे भोग्य कलाएँ होती हैं। गत और भोग्य कलाओंको ६० से गुणाकर चन्द्रगति कलाका भाग देनेसे गत और भोग्य घटी आती है। जैन सारणी ग्रन्थोंके अनुसार अहर्गण बनाकर सारणीपर केन्द्रवल्ली, फलवल्ली, शीघ्रोच्चवल्ली एवं नक्षत्रवल्ली आदिपर-से फल लाकर नक्षत्रका साधन करना चाहिए। जैन ग्रन्थ तिथि सारणीके अनुसार तिथिफल एवं तिथिकेन्द्रादि लाकर नक्षत्र मान और तिथिमान सिद्ध किया गया है।

योग—यह सूर्य और चन्द्रमाके योगसे पैदा होता है। प्राचीन जैन ग्रन्थोंमें मुहूर्त्तादिके लिए इसको प्रधान अंग माना गया है, इनकी संख्या २७ बतायी है[१]। व्यतिपात, परिघ और दण्ड इनका त्याग प्रत्येक शुभ कार्यमें कहा गया है। योगके साधन-का विधान बताते हुए लिखा है कि दैनिक स्पष्ट सूर्य एवं स्पष्ट चन्द्रके योगकी कला बना-कर उनमें ८०० का भाग देनेसे लब्धि गत योग होता है। फिर गत और भोग्य कलाको ६० से गुणाकर रवि-चन्द्रकी गति कला योगसे भाग देनेपर गत और भोग्य घटियाँ आती हैं।

करण—गत तिथिको २ से गुणाकर ७ का भाग देनेसे जो शेष रहे उसीके हिसाबसे करण होता है। जैनाचार्य श्रीधरने भी ज्योतिर्ज्ञानविधिमें करणोंका वर्णन करते हुए निम्न प्रकार लिखा है।

"बव-बालव-कौलवतैत्तिलगरजा वणिजविष्टिचरकरणाः।
शकुनिचतुष्पदनागाः किंस्तुघ्नश्चेत्यमी स्थिराः करणाः॥
कृष्णचतुर्दश्यपरार्धतो भवन्ति स्थिराणि करणानि।
शकुनिचतुष्पदनागाः किंस्तुघ्नः प्रतिपदाद्यर्धे॥"

अर्थात्—बव, बालव, कौलव, तैतिल, गर, वणिज और विष्टि ये चर करण होते हैं एवं शकुनि, चतुष्पद, नाग और किंस्तुघ्न ये स्थिर करण होते हैं। कृष्ण चतुर्दशीमें परार्द्धसे चर करण और शुक्लपक्षकी प्रतिपदाके परार्द्धसे स्थिर करण होते हैं।

---

१. "विष्कम्भः प्रीतिरायुष्मान् सौभाग्यं शोभनं तथा। अतिगण्डः सुकर्मा च धृतिः शूलं तथैव च॥ गण्डो वृद्धिर्ध्रुवश्चैव व्याघातो हर्षणस्तथा। वज्रः सिद्धिर्व्यतीपातो वरीयान् परिघः शिवः॥ सिद्धः साध्यः शुभः शुक्लो ब्रह्मेन्द्रो वैधृतिस्तथा। स्युः सप्तविंशतिर्योगाः शास्त्रे ज्योतिष्कनामनि॥"—जैनज्योतिर्ज्ञानविधिः, पत्र ३।

यन्त्रराजके गणितानुसार भिन्न-भिन्न यन्त्रोंसे करणादिकका मान सूक्ष्म लाया गया है। जैनयुगमें ६० सौर मास, ६१ सावन मास, ६२ चान्द्रमास और ६७ नक्षत्र मास होते हैं। १ नाक्षत्रवर्षमें ३२७$\frac{५१}{६७}$ दिन, १ चान्द्रवर्षमें ३५४ दिन, ११ घटी, ३६$\frac{४६}{६२}$ पल होते हैं। इसी प्रकार १ और वर्षमें ३६६ दिन और एक युगमें सौरदिन १८००, चान्द्रदिन १८६०, नक्षत्रोदय १८३०, चान्द्रसावन दिन १७६८ बताये गये हैं। इन अंकोंके साथ जैनेतर भारतीय ज्योतिषसे तुलना करनेपर चान्द्र वर्षमान और सौर वर्ष-मानमें पर्याप्त अन्तर होता है। जैनाचार्योंने यन्त्रोंके द्वारा जिस सूक्ष्म पंचांग निर्माण सम्बन्धी गणितका प्रतिपादन किया है वह प्रशंसनीय हैं। प्रत्यक्षवेधगत जो गणित मान आता है वही मान जैनाचार्योंके यन्त्रोंपर-से सिद्ध होता है।[1]

इस पंचांगगणितमें जैनाचार्योंने देशान्तर, कालान्तर एवं अक्षांश सम्बन्धी संस्कार करके ग्रहानयनकी अत्यन्त सूक्ष्म विधि बतलायी है। प्रसिद्ध ज्योतिर्विद् सुधाकर द्विवेदीने गणकतरंगिणीमें जैनाचार्योंकी प्रशंसा करते हुए लिखा है कि यन्त्रराजमें क्रमोत्क्रमज्यानयन, भुजकोटिज्यानयन, भुजफलानयन, द्विज्याफलानयन एवं क्रान्तिज्या साधन इत्यादि गणितोंके द्वारा ग्रहोंके स्पष्टीकरणका विधान किया है। इस गणितको सिद्ध करनेके लिए १४ यन्त्र यन्त्रराजमें महत्त्वपूर्ण दिये गये हैं। इनसे तात्कालिक लग्न एवं तात्कालिक सूर्य आदिका साधन अत्यन्त सूक्ष्मताके साथ होता है।

जन्मपत्रनिर्माणगणित—जन्मपत्र निर्माण करनेके लिए सर्व-प्रथम इष्टकालका साधन करना चाहिए। इष्टकाल साधनके लब्धिचन्द्रविरचित जन्मपत्रीपद्धति एवं हर्षकीर्ति विरचित जन्मपत्र-पद्धतिमें अनेक प्रकार दिये गये हैं। प्रथम नियम यह है कि सूर्योदयसे १२ बजे दिनके भीतरका जन्म समय हो तो जन्म समय और सूर्योदयकालका अन्तर कर शेष को २॥ गुना करनेसे इष्टकाल होता है अथवा सूर्योदय कालसे लेकर जन्म समय तक जितना समय हो उसीके घटचादि बनानेपर इष्टकाल हो जाता है।

दूसरा नियम—यदि १२ बजे दिनसे सूर्यास्तके अन्दरका जन्म हो तो जन्म समय तथा सूर्यास्तकालका अन्तर कर शेष २॥ गुणाकर दिनमानमें घटानेसे इष्टकाल होता है।

तीसरा नियम—यदि सूर्यास्तसे १२ बजे रात्रिके अन्दरका जन्म हो तो जन्म समय तथा सूर्यास्तकालका अन्तर कर शेषको २॥ गुना कर दिनमानमें जोड़ देनेसे इष्टकाल होता है।

चौथा नियम—यदि १२ बजे रात्रिके बाद और सूर्योदयके अन्दरका जन्म हो तो जन्म समय तथा सूर्योदय समयका अन्तर कर शेषको २॥ गुणा कर ६० घटीमें घटाने-से इष्टकाल होता है। इस इष्टकालपर-से सर्वर्क्ष और गतर्क्षका साधन भी निम्न प्रकारसे करना चाहिए—गत नक्षत्र घटीको ६० घटीमें-से घटाकर शेषमें सूर्योदयादि

---

१. यन्त्रराज गणित ग्रन्थका यन्त्रप्रकरण।

इष्टघटी जोड़नेसे गतर्क्ष होता है और उस गत नक्षत्रमें जन्म नक्षत्रके घटीपल जोड़नेसे भभोग अर्थात् सर्वर्क्ष होता है। इस सर्वर्क्षमें ४ का भाग देनेसे लब्ध घटी, पल तुल्य एक चरणका मान होता है। इसी मानके हिसाबसे गतर्क्षमें चरण निकालकर राशि एवं नक्षत्र चरणका मान होता है।

लग्न[1] साधन—लग्न साधन करनेके जैनाचार्योंने कई नियम बताये हैं। पहला नियम तो तात्कालिक सूर्यपर-से बताया है। विस्तारभयसे यहाँपर एक संक्षेप प्रक्रियाका उल्लेख किया जाता है—पंचांगमें जो लग्नसारणी लिखी हो वह यदि सायनसारणी हो तो सायनसूर्य और निरयणसारणी हो तो निरयनसूर्यके राशि और अंशके सामने जो अंक घटचादि हों उनमें इष्टकाल सम्बन्धी घटी पल जोड़ देने चाहिए। यदि घटीके स्थानमें ६० से अधिक हों तो अधिकको छोड़कर शेष तुल्य अंक उस सारणीमें जहाँ हों, उस राशि अंशको लग्न समझना चाहिए। पूर्व और उत्तर अंशवाले घटचादिका अन्तर कर अनुपातसे कला-विकलादिका साधन करना चाहिए।

जन्मपत्रके ग्रह स्पष्टीकरण—जिस ग्रहको स्पष्ट करना हो उसकी तात्कालिक गतिसे ऋण अथवा धन चालनको व्यतिरिक्ता रीति (गोमूत्रिका रीति) से गुणा करने-पर जो अंशादि हों उनको पंचांग स्थित ग्रहमें ऋण या धन कर देनेपर ग्रह स्पष्ट होता है। किन्तु, इन ग्रहोंके स्पष्टीकरणमें यह विशेषता है कि जो ग्रह वक्री हो, उसके साधनमें ऋणगत चालन होनेपर पंचांग स्थित ग्रहमें धन एवं धन चालन होनेपर पंचांग स्थित ग्रहमें ऋण कर दिया जाता है।

चन्द्रस्पष्टीकरण—जन्मपत्रके गणितमें सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण गणित चन्द्रमाके स्पष्टीकरणका है। इसकी रीति जैनाचार्योंने इस प्रकार बतायी है कि भयात और भभोगको सजातीय करके भयातको ६० से गुणा कर भभोगका भाग देनेपर जो लब्ध आये, उसमें ६० से गुणा किये हुए अश्विनी आदि गत नक्षत्रोंको जोड़ दें फिर उसमें दोसे गुणा करें, गुणनफलमें ९ का भाग दें, जो लब्ध हो उसीको अंश माने, शेषको फिर ६० से गुणा करे, ९ का भाग दें, जो लब्ध हो उसे कला जाने, शेषको फिर ६० से गुणा करके ९ का भाग दें, जो लब्ध हो उसे विकला समझें। इस प्रकार चन्द्रमाके राश्यंशादि होंगे।

लग्न ग्रहस्पष्ट एवं भयात भभोगके साधनके अनन्तर द्वादश भावोंका साधन करना चाहिए। तथा इसी भयात और भभोगपर-से विंशोत्तरी, योगिनी एवं अष्टोत्तरी आदि दशाओंका साधन करना चाहिए। जैनाचार्योंने प्रधानतया विंशोत्तरीका कथन किया है।

फलितज्योतिष—इसमें ग्रहोंके अनुसार फलाफलका निरूपण किया जाता है। प्रधानतया इसमें ग्रह एवं नक्षत्रादिकी गति या संचार आदिको देखकर प्राणियोंकी भावी

---

१. विशेष जाननेके लिए परिशिष्ट भाग देखें।

दशा, कल्याण-अकल्याण आदिका वर्णन होता है। इस शास्त्रमें होराशास्त्र, संहिताशास्त्र मुहूर्त्तशास्त्र, सामुद्रिकशास्त्र, प्रश्नशास्त्र एवं स्वप्नशास्त्र आदि हैं।

होराशास्त्र—इसका अर्थ है लग्न अर्थात् लग्नपर-से शुभ-अशुभ फलका ज्ञान कराना होराशास्त्रका काम है। इसमें जातकके उत्पत्तिके समयके नक्षत्र, तिथि, योग, करण आदिका फल अत्युत्तमता के साथ बताया जाता है। जैनाचार्योंने इसमें ग्रह एवं राशियोंके वर्ण-स्वभाव, गुण, आकार-प्रकार आदि बातोंका प्रतिपादन किया है। जन्म-कुण्डलीका फल बतलाना इस शास्त्रका मुख्य उद्देश्य है। आचार्य श्रीधरने यह भी बतलाया है कि आकाशस्थ राशि और ग्रहोंके बिम्बोंमें स्वाभाविक शुभ और अशुभपना मौजूद है; किन्तु उनमें परस्पर साहचर्यादि तात्कालिक सम्बन्धसे फल-विशेष शुभाशुभ रूपमें परिणत हो जाता है; जिसका स्वभाव पृथ्वीस्थित प्राणियोंपर भी पूर्णरूपसे पड़ता है। इस शास्त्रमें प्रधानतासे देह, द्रव्य, पराक्रम, सुख, सुत, शत्रु, कलत्र, मृत्यु, भाग्य, राज्यपद, लाभ और व्यय इन बारह भावोंका वर्णन रहता है। इस शास्त्रमें सबसे विशेष ध्यान देने लायक लग्न और लग्नेश बताये गये हैं। ये जब तक स्थितिमें सुधरे हुए हैं तब तक जातकके लिए कोई अशुभ सम्भावना नहीं होती है। जैसे—लग्न तथा लग्नेश बलवान् हैं, तो शरीरसुख, सन्ततिसुख, अधिकारसुख, सभामें सम्मान, कारोबारमें लाभ तथा साहस आदिकी कमी नहीं पड़ती। यदि लग्न अथवा लग्नेशकी स्थिति विरुद्ध है तो जातकको सब तरहसे शुभ कामोंमें विघ्न-बाधाएँ उपस्थित होती हैं। लग्नके सहायक १२ भाव हैं। क्योंकि आचार्योंने भचक्रको जातकका पूर्ण शरीर माना है। इसीलिए यदि जन्मकुण्डलीके १२ भावोंमें-से कोई भाव बिगड़ जाय तो जातकको सुखमें कमी पड़ जाती है। अतएव लग्न-लग्नेश, भाग्य-भाग्येश, पंचम-पंचमेश, सुख-सुखेश, अष्टम-अष्टमेश, बृहस्पति, चन्द्र, शुक्र, मंगल, बुध इनकी स्थिति तथा ग्रह स्फुटमें वक्री, मार्गी, भावोद्धारक चक्र, द्रेष्काणचक्र, कुण्डली एवं नवांशकुण्डली आदिका विचार इस शास्त्रमें जैनाचार्योंने विस्तार से किया है।

संहिता—इस शास्त्रमें भूशोधन, दिक्शोधन, शल्योद्धार, मेलापक, आयाद्यानयन, ग्रहोपकरण, इष्टिकाद्वार, गेहारम्भ, गृहप्रवेश, जलाशय, उल्कापात एवं ग्रहोंके उदयास्तका फल आदि अनेक बातोंका वर्णन रहता है। जैनाचार्योंने संहिता ग्रन्थोंमें प्रतिमा-निर्माण विधि एवं प्रतिष्ठा आदिका भी विधान लिखा है। यन्त्र, तन्त्र, मन्त्रादिका विधान भी इस शास्त्रमें है।

मुहूर्त्त—इस शास्त्रमें प्रत्येक मांगलिक कार्यके लिए शुभमुहूर्त्तोंका वर्णन किया गया है। बिना मूहूर्त्तके किसी भी मांगलिक कार्यका प्रारम्भ करना उचित नहीं है। क्योंकि समयका प्रभाव प्रत्येक जड़ एवं चेतन पदार्थपर पड़ता है। इसीलिए हमारे जैनाचार्योंने गर्भाधानादि अन्यान्य संस्कार एवं प्रतिष्ठा, गृहारम्भ, गृहप्रवेश, यात्रा आदि सभी मांगलिक कार्योंके लिए शुभ मूहूर्त्तका ही आश्रय लेना आवश्यक बतलाया है।

कर्मकाण्ड सम्वन्धी प्रतिष्ठापाठ एवं आराधनादि ग्रन्थोंमें भी मूहूर्त्तोंका प्रतिपादन मिलता है। मुहूर्त्त विषयका निरूपण करनेवाले सैकड़ों ग्रन्थ हैं। जैन और अजैन ज्योतिषकी मुहूर्त्त प्रक्रियामें मौलिक भेद है। जैनाचार्योंने प्रतिष्ठाके लिए उत्तराभाद्रपद, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ़ा, पुनर्वसु, पुष्य, हस्त, श्रवण और रेवती ये नक्षत्र उत्तम बतलाये हैं। चित्रा, मघा, मूल, भरणी इन नक्षत्रोंमें भी प्रतिष्ठाका विधान बतलाया है। पर मुहूर्त्तचिन्तामणि आदि ग्रन्थोंमें चित्रा, स्वाति, भरणी और मूल प्रतिष्ठामें ग्राह्य नहीं बतलाये हैं। आचार्य जयसेनने मुहूर्त्तके प्रकरणमें क्रूरासन्न, दूषित, उत्पात, लता, विद्धपात, राशिवेध, नक्षत्रवेध, युति, बाणपंचक एवं जामित्र त्याज्य बतलाये हैं। इसी प्रकार सूर्यदग्धा और चन्द्रदग्धा आदि तिथियोंका भी विस्तारसे विश्लेषण किया है। आचार्य वसुनन्दिने अमृतसिद्धि योगका लक्षण बताते हुए लिखा है कि—

"हस्तः पुनर्वसुः पुष्यो रविणा चोत्तरात्रयम्।
पुष्यर्क्षगुरुवारेण शशिना मृगरोहिणी॥
अश्विनी रेवती भौमे शुक्रे श्रवण-रेवती।
विशाखा कृत्तिका मन्दे रोहिणी श्रवणस्तथा॥
मैत्रवारुणनक्षत्रं बुधवारेण संयुतम्।
अमृताख्या इमे योगाः प्रतिष्ठादिषु शोभनाः॥"

अर्थात्—रविवारको हस्त, पुनर्वसु, पुष्य, गुरुवारको उत्तरात्रय (उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ़ा, उत्तराभाद्रपद), पुष्य; सोमवारको मृगशिर, रोहिणी; मंगलवारको अश्विनी, रेवती; शुक्रवारको श्रवण, रेवती; शनिवारको विशाखा, कृत्तिका, रोहिणी, श्रवण और बुधवारको अनुराधा, शतभिष नक्षत्र, अमृतसिद्धि योग संज्ञक हैं।

सामुद्रिकशास्त्र—जिस शास्त्रसे मनुष्यके प्रत्येक अंगके शुभाशुभका ज्ञान हो उसे सामुद्रिकशास्त्र कहते हैं। हस्तसंजीवनमें आचार्य मेघविजयगणिने बताया है कि सब अंगोंमें हाथ श्रेष्ठ है क्योंकि सभी कार्य हाथों द्वारा किये जाते हैं। इसीलिए पहले पहल हाथके लक्षणोंका ही विचार इस शास्त्रमें प्रधान रूपसे रहता है[1]। हाथमें जन्मपत्रीकी तरह ग्रहोंका अवस्थान बताया है। तर्जनीमूलमें वृहस्पतिका स्थान, मध्यमा उँगलीके मूल देशमें शनि स्थान, अनामिकाके मूलदेशमें रवि स्थान, कनिष्ठाके मूलदेशमें बुध स्थान तथा वृहद् अंगुष्ठके मूलमें शुक्रदेवका स्थान है। मंगलके दो स्थान बताये गये हैं। १—तर्जनी और बृहदंगुलिके बीचमें पितृरेखाके समाप्तिस्थानके नीचे और २—बुधके स्थानके नीचे तथा चन्द्रके स्थानके ऊपर आयुरेखा और पितृरेखाके नीचेवाले स्थानमें बताया गया है। रेखाओंके वर्णका फल बतलाते हुए जैनाचार्योंने लिखा है कि रेखाओंके रक्तवर्ण होनेसे मनुष्य आमोदप्रिय, सदाचारी और उग्र स्वभावका होता है। यदि रक्तवर्णमें काली आभा मालूम पड़े तो प्रतिहिंसापरायण, शठ और क्रोधी होता है। जिसकी

---

१. "सर्वाङ्गलक्षणप्रेक्षा व्याकुलानां नृणां मुदे। श्रीसामुद्रेण मुनिना तेन हस्तः प्रकाशितः॥"

रेखा पीली होती है, पित्तके आधिक्यवश वह क्रुद्ध स्वभावका, उच्चाभिलाषी, कार्यक्षम और प्रतिहिंसापरायण होता है। यदि उसकी रेखा पाण्डुक आभाकी हो तो वह स्त्री स्वभावका, दाता और उत्साही होता है। मेघविजयगणिने भाग्यवान्के हाथका लक्षण बतलाते हुए लिखा है कि—

"श्लाघ्य उष्णारुणोऽछिद्रोऽस्वेदः स्निग्धश्च मांसलः।
श्लक्ष्णस्ताम्रनखो दीर्घाङ्गुलिको विपुलः करः॥"

अर्थात्—गरम, लालरंग, अछिद्र अँगुलियाँ सटी हों, पसीना न हो, चिकना, मांससे भरा हो, चमकीला, ताम्रवर्णके नखवाला तथा लम्बी और पतली अंगुलियोंवाला हाथ सर्वश्रेष्ठ होता है, ऐसा मनुष्य संसारमें सर्वत्र सम्मान पाता है।

इस शास्त्रमें प्रधान रूपसे आयुरेखा, मातृरेखा, पितृरेखा एवं समयनिर्णयरेखा, ऊर्ध्वरेखा, अन्तःकरणरेखा, स्त्रीरेखा, सन्तानरेखा, समुद्रयात्रारेखा या मणिबन्धरेखा आदि रेखाओंका विचार किया जाता है। सभी ग्रहोंके पर्वतके चिह्न भी सामुद्रिक शास्त्रमें बतलाये गये हैं। इनके फलका विश्लेषण बहुत सुन्दर ढंग से जैनाचार्योंने किया है।

प्रश्नशास्त्र—इस शास्त्रमें प्रश्नकर्तासे पहले किसी फल, नदी और पहाड़का नाम पूछ कर अर्थात् प्रातःकालसे लेकर मध्याह्न काल तक फलका नाम, मध्याह्नकालसे लेकर सन्ध्याकाल तक नदीका नाम और सन्ध्याकालसे लेकर रातके १०-११ बजे तक पहाड़का नाम पूछकर तब प्रश्नका फल बताया गया है। जैनाचार्योंने प्रश्नके फलका उत्तर देनेके लिए अ ए क च ट त प य श इन अक्षरोंका प्रथम वर्ग, आ ऐ ख छ ठ थ फ र ष इन अक्षरोंका द्वितीय वर्ग, इ ओ ग ज ड द ब ल स इन अक्षरोंका तृतीय वर्ग, ई औ घ झ ढ ध भ व ह इन अक्षरोंका चतुर्थ वर्ग, और उ ऊ ङ ञ ण न म अं अः इन अक्षरोंके पंचम वर्ग बताया है। आचार्योंने इन अक्षरों के भी संयुक्त, असंयुक्त, अभिहित, अनभिहित, अभिघातित, आलिंगित, अभिधूमित और दग्ध ये आठ भेद बतलाये हैं। इन भेदों पर से जातक के जीवन-मरण, हानि-लाभ, संयोग-वियोग एवं सुख-दुःखका विवेचन किया है। दो-चार ग्रन्थोंमें प्रश्नकी प्रणाली लग्नके अनुसार मिलती है। यदि लग्न या लग्नेश बली हुए और स्वसम्बन्धी ग्रहोंकी दृष्टि हुई तो कार्यकी सिद्धि और इससे विपरीतमें असिद्धि होती हैं। भिन्न-भिन्न कार्योंके लिए भिन्न-भिन्न प्रकारकी गृहस्थितिका भिन्न-भिन्न नियमोंसे विचार किया है। केवलज्ञानप्रश्नचूडामणिमें आचार्यने लाभालाभके प्रश्नका उत्तर देते हुए लिखा है कि—"यदि दीर्घमक्षरं प्रश्ने प्रथमतृतीयपञ्चमस्थानेषु दृष्टं तदेव लाभकरं स्यात्, शेषा अलाभकराः स्युः। जीवित-मरणं लाभालाभं साधयन्तीति साधकाः।" अर्थात् —दीर्घाक्षर प्रश्नमें प्रथम, तृतीय और पंचम स्थानमें हों तो लाभ करने वाले होते हैं, शेष अलाभकर–हानि करने वाले होते हैं। साधक इन प्रश्नाक्षरों पर से जीवन, मरण, लाभ और हानि आदि को सिद्ध करते हैं। इसी प्रकार जैनाचार्योंने उत्तर, अधर, उत्तराधर एवं अधरोत्तर आदि प्रश्नके

अनेक भेद करके उत्तर देनेके नियम निकाले हैं। चन्द्रोन्मीलनप्रश्नमें चर्या, चेष्टा एवं हाव-भाव आदिसे प्रश्नोंके उत्तर दिये गये हैं। वास्तविकमें जैनप्रश्नशास्त्र बहुत उन्नत है। ज्योतिषके अंगोंमें जितना अधिक यह शास्त्र विकसित हुआ है, उतना दूसरा शास्त्र नहीं।

स्वप्नशास्त्र[1]—जैन मान्यतामें स्वप्न संचित कर्मोके अनुसार घटित होने वाले शुभाशुभ फलके द्योतक बताये गये हैं। स्वप्नशास्त्रोंके अध्ययनसे स्पष्ट अवगत हो जाता है कि कर्मबद्ध प्राणिमात्रकी क्रियाएँ सांसारिक जीवोंको उनके भूत और भावी जीवन की सूचना देती हैं। स्वप्नका अंतरंग कारण ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय और अन्तराय-के क्षयोपशमके साथ मोहनीयका उदय है। जिस व्यक्तिके जितना अधिक इन कर्मोंका क्षयोपशम होगा उस व्यक्तिके स्वप्नोंका फल भी उतना ही अधिक सत्य निकलेगा। तीव्रकर्मोंके उदयवाले व्यक्तियोंके स्वप्न निरर्थक एवं सारहीन होते हैं। इसका मुख्य कारण जैनाचार्योंने यही बताया है कि सुषुप्तावस्थामें भी आत्मा तो जागृत ही रहती है, केवल इन्द्रियों और मनकी शक्ति विश्राम करनेके लिए सुषुप्त-सी हो जाती है। जिसके उपर्युक्त कर्मोंका क्षयोपशम है, उसके क्षयोपशमजन्य इन्द्रिय और मन सम्बन्धी चेतना या ज्ञाना-वस्था अधिक रहती है। इसलिए ज्ञानकी उज्ज्वलतासे निद्रित अवस्थामें जो कुछ देखते हैं, उसका सम्बन्ध हमारे भूत, वर्त्तमान और भावी जीवनसे है। इसी कारण स्वप्न-शास्त्रियोंने स्वप्न को भूत, वर्त्तमान और भावी जीवनका द्योतक बतलाया है। पौराणिक स्वप्नसम्बन्धी जैन अनेक आख्यानोंसे भी यही सिद्ध होता है कि स्वप्न मानवको उसके भावी जीवनमें घटने वाली घटनाओंकी सूचना देते हैं।

उपलब्ध जैन ज्योतिषमें स्वप्नशास्त्र अपना विशेष स्थान रखता है। जहाँ जैनाचार्योंने जीवनमें घटने वाली अनेक घटनाओंके इष्टानिष्ट कारणोंका विश्लेषण किया है, वहाँ स्वप्नके द्वारा भावी जीवनकी उन्नति और अवनतिका विश्लेषण भी अत्यन्त महत्त्वपूर्ण ढंगसे किया है। यों तो प्राचीन वैदिक धर्मावलम्बी ज्योतिषशास्त्रियोंने भी इस विषय पर पर्याप्त लिखा है पर जैनाचार्यों द्वारा प्रतिपादित स्वप्नशास्त्रमें कई विशेषताएँ हैं। वैदिक ज्योतिषशास्त्रियोंने ईश्वरको सृष्टिकर्त्ता माना है, इसलिए स्वप्नको ईश्वरप्रेरित इच्छाओंका फल बताया है। वराहमिहिर, बृहस्पति और पौलस्त्य आदि विख्यात गणकोंने ईश्वरकी प्रेरणाको ही स्वप्नमें प्रधान कारण माना है। फलाफलके विवेचनमें भी दस-पाँच स्थलोंमें भिन्नता मिलेगी। जैन स्वप्नशास्त्रमें प्रधानतया सात प्रकारके स्वप्न बताये गये हैं। (१) दृष्ट–जो कुछ जागृति अवस्थामें देखा हो उसीको स्वप्नावस्थामें देखा जाय। (२) श्रुत–सोनेके पहले कभी किसीसे सुना हो उसीको स्वप्नावस्थामें देखा जाय। (३) अनुभूत-जिसका जागृत अवस्थामें किसी भाँति अनुभव किया हो, उसीको स्वप्नमें देखें। (४) प्रार्थित–जिसकी जागृत अवस्थामें प्रार्थना–इच्छा

---

१. विशेष जाननेके लिए देखें—"स्वप्न और उसका फल, भास्कर, भाग ११, किरण १।"

की हो उसीको स्वप्नमें देखें। (५) कल्पित–जिसकी जागृत अवस्थामें कभी भी कल्पना की गयी हो, उसीको स्वप्नमें देखें। (६) भाविक– जो कभी न देखा गया हो न सुना गया हो पर जो भविष्यमें होने वाला हो उसे स्वप्नमें देखा जाय। (७) वात, पित्त, और कफ इनके विकृत हो जानेसे देखा जाय। इन सात प्रकारके स्वप्नोंमें-से पहलेके पांच प्रकारके स्वप्न प्रायः निष्फल होते हैं, वस्तुतः भाविक स्वप्नका फल ही सत्य होता है।

निमित्तशास्त्र—इस शास्त्रमें बाह्य निमित्तोंको देखकर आगे होने वाले इष्टानिष्टका कथन किया जाता है; क्योंकि संसारमें होने वाले हानि-लाभ, सुख-दुःख, जीवन-मरण आदि सभी विषय कर्मोंकी गति पर अवलम्बित हैं। मानव जिस प्रकारके शुभाशुभ कर्मोंका संचय करता है, उन्हींके अनुसार उन्हें सुख-दुःख भोगना पड़ता है। बाह्य निमित्तोंके द्वारा घटनेवाले कर्मोंका आभास हो जाता है, इस शास्त्रमें इन बाह्य निमित्तोंका ही विस्तारके साथ विश्लेषण किया जाता है। जैनाचार्योंने निमित्तशास्त्रके तीन भेद बतलाये हैं।

"जे दिट्ठ भुविरसण्ण जे दिट्ठा कुहमेण कत्ताणं।
सदसंकुलेन दिट्ठा वउसट्ठिय ऐण णाणधिया॥"

अर्थात्—पृथ्वीपर दिखाई देने वाले निमित्तोंके द्वारा फलका कथन करनेवाला शास्त्र, आकाशमें दिखाई देनेवाले निमित्तोंके द्वारा फल प्रतिपादन करनेवाला निमित्त-शास्त्र और शब्द श्रवणमात्रसे फलका कथन करनेवाला निमित्त शास्त्र ये तीन निमित्त शास्त्रके प्रधान भेद हैं। आकाशसम्बन्धी निमित्तोंका कथन करते हुए लिखा है कि–

"सूरोदय अच्छमणे चंदमसरिक्खमग्गहचरियं।
तं पिच्छियं निमित्तं सव्वं आएसिहं कुणहं॥"

अर्थात्–सूर्योदयके पहले और अस्त होनेके पीछे चन्द्रमा, नक्षत्र एवं उल्का आदिके गमन एवं पतनको देखकर शुभाशुभ फलका ज्ञान करना चाहिए। इस शास्त्र में दिव्य, अन्तरिक्ष और भौम इन तीनों प्रकार के उत्पातों का वर्णन भी विस्तार से किया है।

फलित जैन ज्योतिषशास्त्र शक संवत्की ५वीं शताब्दीमें अत्यन्त पल्लवित और पुष्पित था। इस कालमें होनेवाले वराहमिहिर जैसे प्रसिद्ध गणकने सिद्धसेन और देवस्वामीका स्मरण किया है तथा दो-चार योगोंमें मतभेद भी दिखलाया है। तथा इसी शताब्दीके कल्याणवर्माने कनकाचार्यका उल्लेख किया है। यह कनकाचार्य भी जैन गणक प्रतीत होते हैं। इन जैनाचार्योंके ग्रन्थोंका पता अद्यावधि नहीं लग पाया है, पर इतना निस्सन्देह कहा जा सकता है कि ये जैन गणक ज्योतिषशास्त्रके महान् प्रवर्त्तकोंमें-से थे। संहिता शास्त्रके रचयिताओंमें वामदेवका नाम भी बड़े गौरवके साथ लिया गया है। यह वामदेव लोकशास्त्रके वेत्ता, गणितज्ञ एवं संहिता शास्त्रमें धुरीण कहे गये हैं। इस प्रकार फलित जैन ज्योतिष विकास करता गया है।

जैन प्रश्नशास्त्रका मूलाधार

प्रश्नशास्त्र फलित ज्योतिषका महत्त्वपूर्ण अंग है। इसमें प्रश्नकर्त्ताके प्रश्नानुसार बिना जन्मकुण्डलीके फल बताया जाता है। तात्कालिक फल बतलानेके लिए यह शास्त्र बड़े कामका है। जैन ज्योतिषके विभिन्न अंगोंमें यह एक अत्यन्त विकसित एवं विस्तृत अंग है। उपलब्ध दिगम्बर जैन ज्योतिष ग्रन्थोंमें प्रश्नग्रन्थोंकी ही बहुलता है। इस शास्त्रमें जैनाचार्योंने जितने सूक्ष्म फलका विवेचन किया है उतना जैनेतर प्रश्न ग्रन्थोंमें नहीं है। प्रश्नकर्त्ताके प्रश्नानुसार प्रश्नोंका उत्तर ज्योतिषमें तीन प्रकारसे दिया जाता है—

पहला— प्रश्नकालको जानकर उसके अनुसार फल बतलाना। इस सिद्धान्तका मूलाधार समयका शुभाशुभत्व है—प्रश्न समयानुसार तात्कालिक प्रश्नकुण्डली बनाकर उससे ग्रहोंके स्थानविशेष-द्वारा फल कहा जाता है। इस सिद्धान्तमें मूलरूपसे फलादेश सम्बन्धी समस्त कार्य समय पर ही अवलम्बित हैं।

दूसरा—स्वरसम्बन्धी सिद्धान्त है। इसमें फल बतलानेवाला अपने स्वर (श्वास) के आगमन और निर्गमनसे इष्टानिष्ट फलका प्रतिपादन करता है। इस सिद्धान्तका मूलाधार प्रश्नकर्त्ताका अदृष्ट है; क्योंकि उसके अदृष्टका प्रभाव तत्स्थानीय वातावरणपर पड़ता है, इसीसे वायु प्रकम्पित होकर प्रश्नकर्त्ताके अदृष्टानुकूल बहने लगती है और चन्द्र एवं सूर्य स्वरके रूपमें परिवर्तित हो जाती है। यह सिद्धान्त मनोविज्ञानके निकट नहीं है। केवल अनुमानपर ही आश्रित है अतः इसे अति प्राचीन कालका अविकसित सिद्धान्त कह सकते हैं। और—

तीसरा—प्रश्नकर्त्ताके प्रश्नाक्षरोंसे फल बतलाना है। इस सिद्धान्तका मूलाधार मनोविज्ञान है, क्योंकि विभिन्न मानसिक परिस्थितियोंके अनुसार प्रश्नकर्त्ता भिन्न-भिन्न प्रश्नाक्षरोंका उच्चारण करते हैं। उच्चरित प्रश्नाक्षरोंसे मानसिक स्थितिका पता लगाकर आगामी—भावी फलका निर्णय करना इस सिद्धान्तका काम है।

इन तीनों सिद्धान्तोंकी तुलना करनेपर लग्न और स्वरवाले सिद्धान्तोंकी अपेक्षा प्रश्नाक्षरवाला सिद्धान्त अधिक मनोवैज्ञानिक है। तथा पहलेवाले दोनों सिद्धान्त कभी कदाचित् व्यभिचरित भी हो सकते हैं। जैसे उदाहरणके लिए मान लिया कि सौ व्यक्ति एक साथ एक ही समयमें एक ही प्रश्नका उत्तर पूछनेके लिए आयें; इस समयका लग्न सभी व्यक्तियोंका एक ही होगा तथा उस समयका स्वर भी एक ही होगा। अतः सबका फल सदृश ही आवेगा। हाँ, एक-दो सेकिण्डका अन्तर पड़नेसे नवांश, द्वादशांशादिमें अन्तर भले ही पड़ जाय, पर इस अन्तरसे स्थूल फलमें कोई फर्क नहीं पड़ेगा। इससे सभीके प्रश्नोंका फल हाँ या ना के रूपमें आयेगा। लेकिन यह संभव नहीं कि सभी व्यक्तियोंके फल एक सदृश हों; क्योंकि किसीका कार्य सिद्ध होगा, किसीका नहीं भी। परन्तु तीसरे—प्रश्नाक्षरवाले सिद्धान्तके अनुसार सभी व्यक्तियोंके प्रश्नाक्षर एक नहीं होंगे; भिन्न-भिन्न मानसिक परिस्थितियोंके अनुसार भिन्न-भिन्न होंगे। इससे फल भी सभीका पृथक्-पृथक् आयेगा।

जैन प्रश्नशास्त्रमें प्रश्नाक्षरोंसे ही फलका प्रतिपादन किया गया है; इसमें लग्नादि का प्रपंच नहीं है। अतः इसका मूलाधार मनोविज्ञान है। बाह्य और आभ्यन्तरिक दोनों प्रकारकी विभिन्न परिस्थितियोंके आधीन मानव मनकी भीतरी तहमें जैसी भावनाएँ छिपी रहती हैं वैसे ही प्रश्नाक्षर निकलते हैं। मनोविज्ञानके पण्डितोंका कथन है—मस्तिष्कमें किसी भौतिक घटना या क्रियाका उत्तेजन पाकर प्रतिक्रिया होती है। यही प्रतिक्रिया मानवके आचरणमें प्रदर्शित हो जाती है। क्योंकि अबाधभावानुषंगसे हमारे मनके अनेक गुप्त भाव भावी शक्ति, अशक्तिके रूपमें प्रकट हो जाते हैं तथा उनसे समझदार व्यक्ति सहजमें ही मनकी धारा और उससे घटित होनेवाले फलको समझ लेता है।

आधुनिक मनोविज्ञानके सुप्रसिद्ध पण्डित फ्रॉयडके मतानुसार मनकी दो अवस्थाएँ हैं—सज्ञान और निर्ज्ञान। सज्ञान अवस्था अनेक प्रकारसे निर्ज्ञान अवस्थाके द्वारा नियन्त्रित होती रहती है। प्रश्नोंकी छान-बीन करनेपर इस सिद्धान्तके अनुसार पूछे जानेपर मानव निर्ज्ञान अवस्था विशेषके कारण ही झट उत्तर देता है और उसका प्रतिबिम्ब सज्ञान मानसिक अवस्थापर पड़ता है। अतएव प्रश्नके मूलमें प्रवेश करनेपर संज्ञात इच्छा, असंज्ञात इच्छा, अन्तर्ज्ञात इच्छा और निर्ज्ञात इच्छा ये चार प्रकारकी इच्छाएँ मिलती हैं। इन इच्छाओंमें-से संज्ञात इच्छा बाधा पानेपर नाना प्रकारसे व्यक्त होनेकी चेष्टा करती है तथा इसीके कारण रुद्ध या अवदमित इच्छा भी प्रकाश पाती है। यद्यपि हम संज्ञात इच्छाके प्रकाशकालमें रूपान्तर जान सकते हैं, किन्तु असंज्ञात या अज्ञात इच्छाके प्रकाशित होनेपर भी हठात् कार्य देखनेसे उसे नहीं जान सकते। विशेषज्ञ प्रश्नाक्षरोंके विश्लेषणसे ही असंज्ञात इच्छाका पता लगा लेते हैं तथा उससे संबद्ध भावी घटनाओंको भी जान लेते हैं।

फ्रॉयडने इसी विषयको स्पष्ट करते हुए बताया है कि मानवमनका संचालन प्रवृत्तिमूलक शक्तियोंसे होता है और ये प्रवृत्तियाँ सदैव उसके मनको प्रभावित करती हैं। मनुष्यके व्यक्तित्वका अधिकांश भाग अचेतन मनके रूपमें है जिसे प्रवृत्तियोंका अशान्त समुद्र कह सकते हैं। इन प्रवृत्तियोंमें प्रधान रूपसे काम और गौण रूपसे अन्य इच्छाओंकी तरंगें उठती रहती हैं। मनुष्यका दूसरा अंश चेतन मनके रूपमें है, जो घात-प्रतिघात करनेवाली कामनाओंसे प्रादुर्भूत है और उन्हींको प्रतिबिम्बित करता रहता है। बुद्धि मानवकी एक प्रतीक है; उसीके द्वारा वह अपनी इच्छाओंको चरितार्थ करता है। अतः सिद्ध है कि हमारे विचार, विश्वास, कार्य और आचरण जीवनमें स्थित वासनाओंकी प्रतिच्छाया मात्र हैं। सारांश यह है कि संज्ञात इच्छा प्रत्यक्षरूपसे प्रश्नाक्षरोंके रूपमें प्रकट होती है और इन प्रश्नाक्षरोंमें छिपी हुई असंज्ञात और निर्ज्ञात इच्छाओंको उनके विश्लेषणसे अवगत किया जाता है। जैनाचार्योंने प्रश्नशास्त्रमें असंज्ञात और निर्ज्ञात इच्छा सम्बन्धी सिद्धान्तोंका विवेचन किया है।

कुछ मनोवैज्ञानिकोंने बतलाया है कि हमारे मस्तिष्कके मध्य स्थित कोपके

आभ्यन्तरिक परिवर्तनके कारण मानसिक चिन्ताकी उत्पत्ति होती है। मस्तिष्कमें विभिन्न ज्ञानकोष परस्पर संयुक्त हैं। जब हम किसी व्यक्तिसे मानसिक चिन्ता सम्बन्धी प्रश्न पूछने जाते हैं तो उक्त ज्ञानकोषोंमें एक विचित्र प्रकारका प्रकम्पन होता है, जिससे सारे ज्ञानतन्तु एक साथ हिल उठते हैं। इन तन्तुओंमें-से कुछ तन्तुओंका प्रतिबिम्ब अज्ञात रहता है। प्रश्नशास्त्रके विभिन्न पहलुओंमें चर्या, चेष्टा आदिके द्वारा असंज्ञात या निर्ज्ञात इच्छा सम्बन्धी प्रतिबिम्बका ज्ञान किया जाता है। यह स्वयं सिद्ध बात है कि जितना असंज्ञात इच्छा सम्बन्धी प्रतिविम्बित अंश, जो छिपा हुआ है, केवल अनुमानगम्य है, स्वयं प्रश्नकर्त्ता भी जिसका अनुभव नहीं कर पाया है; प्रश्नकर्त्ताकी चर्या और चेष्टासे प्रकट हो जाता है। जो सफल गणक चर्या—प्रश्नकर्त्ताके उठने, बैठने, आसन, गमन आदिका ढंग एवं चेष्टा, बातचीतका ढंग, अंगस्पर्श, हावभाव, आकृति-विशेष आदिका मर्मज्ञ होता है, वह मनोवैज्ञानिक विश्लेषण-द्वारा भूत और भविष्यकाल सम्बन्धी प्रश्नोंका उत्तर बड़े सुन्दर ढंगसे दे सकता है। आधुनिक पाश्चात्त्य फलित ज्योतिषके सिद्धान्तोंके साथ प्रश्नाक्षर सम्बन्धी ज्योतिषसिद्धान्तकी बहुत कुछ समानता है। पाश्चात्त्य फलित ज्योतिषका प्रत्येक अंग मनोविज्ञानकी कसौटी पर कस कर रखा गया है, इसमें ग्रहोंके सम्बन्धसे जो फल बतलाया है वह जातक और गणक दोनोंको असंज्ञात और संज्ञात इच्छाओंका विश्लेषण ही है।

जैनाचार्योंने प्रश्नकर्त्ताके मनके अनेक रहस्य प्रकट करने वाले प्रश्नशास्त्रकी पृष्ठ-भूमि मनोविज्ञानको ही रखा है। उन्होंने प्रातःकालसे लेकर मध्याह्नकाल तक फलका नाम, मध्याह्नकालसे लेकर सन्ध्याकाल तक नदीका नाम और सन्ध्याकालसे लेकर रातके १२ वजे तक पहाड़का नाम पूछ कर मनोविज्ञानके आधार पर विश्लेषण कर प्रश्नोंके उत्तर दिये हैं। केवलज्ञानप्रश्नचूड़ामणिमें पृच्छकके प्रश्नानुसार अक्षरोंसे अथवा पाँच वर्गोंके अक्षर स्थापित कर उनका स्पर्श कराके प्रश्नोंका फल बताया है। फल ज्ञात करनेके लिए अ ए क च ट त प य श अक्षरोंका प्रथम वर्ग; आ ऐ ख छ ठ थ फ र ष अक्षरोंका द्वितीय वर्ग; इ ओ ग ज ड द ब ल स अक्षरोंका तृतीय वर्ग; ई औ घ झ ढ ध भ व ह अक्षरोंका चतुर्थ वर्ग; और उ ऊ ङ ञ ण न म अं अः अक्षरोंका पंचम वर्ग वताया है। इन पाँचों वर्गोंको स्थापित करके आलिंगित, असंयुक्तादि आठ भेदों द्वारा पृच्छकके जीवन-मरण, हानि-लाभ, संयोग-वियोग और सुख-दुःखका विवेचन किया गया है। सूक्ष्म फल जाननेके लिए अधरोत्तर और वर्गोत्तर वाला नियम निम्न प्रकार वताया है—

अधरोत्तर, वर्गोत्तर और वर्गसंयुक्त अधरोत्तर इन वर्गत्रयके संयोगी नौ भंगों—उत्तरोत्तर, उत्तराधर, अधरोत्तर, अधराधर, वर्गोत्तर, अक्षरोत्तर, स्वरोत्तर, गुणोत्तर और आदेशोत्तरके द्वारा अज्ञात और निर्ज्ञात इच्छाओंका विश्लेषण किया है।

जैन प्रश्नशास्त्रमें प्रश्नोंके प्रधानतः दो भेद वताये हैं—वाचिक और मानसिक। वाचिक प्रश्नोंके उत्तरके देनेकी विधि उपर्युक्त है तथा मानसिक प्रश्नोंके उत्तर प्रश्नाक्षरों

पर-से जीव, धातु और मूल ये तीन प्रकारकी योनियाँ निकालकर बताये हैं। अ आ इ ए ओ अः क ख ग घ च छ ज झ ट ठ ड ढ य श ह ये इक्कीस वर्ण जीवाक्षर; उ ऊ अं त थ द ध प फ ब भ व स ये तेरह वर्ण धात्वक्षर और ई ऐ ओ ङ ञ ण न म र ल ष ये ग्यारह वर्ण मूलाक्षर संज्ञक कहे हैं। प्रश्नाक्षरोंमें जीवाक्षरोंकी अधिकता होने पर जीवसम्बन्धिनी, धात्वक्षरों की अधिकता होने पर धातुसम्बन्धिनी और मूलाक्षरोंकी अधिकता होने पर मूलाक्षरसम्बन्धिनी चिन्ता होती है। सूक्ष्मताके लिए जीवाक्षरोंके भी द्विपद, चतुष्पद, अपद, पादसंकुल ये चार भेद बताये हैं अर्थात् आ ए क च ट त प य श ये अक्षर द्विपद, आ ऐ ख छ ठ थ फ र ष ये अक्षर चतुष्पद; इ ओ ग ज ड द ब ल स ये अक्षर अपद और ई औ घ झ ढ ध भ व ह ये अक्षर पादसंकुल संज्ञक हैं। इस प्रकार योनियोंके अनेक भेद-प्रभेदों-द्वारा प्रश्नोंकी सूक्ष्मताका वर्णन किया है।

जैन प्रश्नशास्त्रका मूलाधार मनोविज्ञान है। वर्गविभाजनमें जो स्वर और व्यंजन रखे हैं वे अत्यन्त सार्थक और मनकी अव्यक्त भावनाओंको·प्रकाशित करने वाले हैं।

जैन प्रश्नशास्त्रका विकासक्रम

व्यंजन, अंग, स्वर, भौम, छिन्न, अन्तरिक्ष, लक्षण और स्वप्न ये आठ अंग निमित्तज्ञानके माने गये हैं। इनका विद्यानुवादपूर्वमें विस्तारसे वर्णन आया है। परिकर्म में चन्द्र, सूर्य एवं नक्षत्रोंके स्वरूप, संचार, परिभ्रमण आये हैं। कल्याणवादमें चान्द्र नक्षत्र, सौर नक्षत्र, ग्रहण, ग्रहोंकी स्थिति, मांगलिक कार्योंके मुहूर्त्त आदि बातोंका निरूपण किया गया है। प्रश्नव्याकरणांगमें प्रश्नशास्त्रकी अनेक बातों पर प्रकाश डाला गया है। इसमें मुष्टिप्रश्न एवं मूकप्रश्नोंका विचार प्रधानतया आया है। इस कल्पके अन्तिम तीर्थंकर भगवान् महावीर स्वामीके मुखसे निकली दिव्यध्वनिको ग्रहण करने वाले गौतम गोत्रीय इन्द्रभूतिने द्वादशांगकी रचना एक मुहूर्त्तमें की। इन्होंने दोनों प्रकारका श्रुतज्ञान—भाव और द्रव्य श्रुत लोहाचार्यको दिया, लोहाचार्यने जम्बूस्वामीको दिया। इनके निर्वाणके पश्चात् विष्णु, नन्दिमित्र, अपराजित, गोवर्धन और भद्रबाहु ये पाँचों ही आचार्य चौदह पूर्वके धारी हुए। इनके पश्चात् विशाखाचार्य, प्रोष्ठिल, क्षत्रिय, जयाचार्य, नागाचार्य, सिद्धार्थदेव, धृतिसेन, विजयाचार्य, बुद्धिल, गंगदेव और धर्मसेन ये ग्यारह आचार्य ग्यारह अंग और उत्पादपूर्व आदि दस पूर्वोंके ज्ञाता तथा शेष चार पूर्वोंके एक-देशके ज्ञाता हुए। इनके बाद नक्षत्राचार्य, जयपाल, पाण्डुस्वामी, ध्रुवसेन और कंसाचार्य ये पाँचों ही आचार्य ग्यारह अंग और चौदह पूर्वोंके एकदेशके ज्ञाता हुए। इस प्रकार प्रश्नशास्त्रका ज्ञान परम्परा रूपमें कई शतियों तक चलता रहा।

प्रश्नशास्त्रका सर्वप्रथम स्वतन्त्र ग्रन्थ 'अर्हच्चूडामणिसार' मिलता है। इसके रचयिता भद्रबाहु स्वामी बताये जाते हैं। उपलब्ध अर्हच्चूडामणिसारमें ७४ गाथाएँ हैं। इसमें ग्रन्थकर्त्ताका नाम, प्रशस्ति आदि कुछ भी नहीं है। हाँ, उपलब्ध ग्रन्थकी भाषा

और विषयविवेचनको देखने से उसकी प्राचीनतामें सन्देह नहीं रहता। प्रारम्भमें मंगलाचरण करते हुए लिखा है—

"नमिऊण जिणसुरअणचूडामणिकिरणसोहि पयजुयलं।
इय चूडामणिसारं कहिय मए जाणदीवक्खं॥ १॥
पढमं तईयसत्तम रघसर पढमतईयवग्गवण्णाइं।
आलिंगियाहिं सुहया उत्तरसंकडअ णामाइं॥ २॥"

अर्थ—देवोंके मुकुटमें जटित मणियोंकी किरणसे जिनके चरणयुगल शोभित हैं, ऐसे जिनेन्द्र भगवान्को नमस्कार कर इस चूड़ामणिसार ज्ञानदीपकको बनाता हूँ। प्रथम, तृतीय, सप्तम और नवम स्वर—अ इ ए ओ, प्रथम और तृतीय व्यंजन—क च ट त प य श, ग ज ड द ब ल स इन १८ वर्णोंकी आलिंगित, सुभग, उत्तर और संकट संज्ञा है। इस प्रकार अक्षरोंकी नाना संज्ञाएँ बतला कर फलाफलका विवेचन किया है।

अर्हच्चूड़ामणिसारके पश्चात् प्रश्न ग्रन्थोंकी परम्परा जैनोंमें बहुत जोरोंसे चली। दक्षिण भारतमें प्रश्न-निरूपण करनेकी प्रणाली अक्षरों पर ही आश्रित थी। ५वीं, ६ठीं शतीमें चन्द्रोन्मीलन नामक प्रश्न-ग्रन्थ बनाया गया है। इस ग्रन्थका प्रमाण चार हजार श्लोक है। अब तक मुझे इसकी सात प्रतियाँ देखनेको मिली हैं, पर सभी अधूरी हैं। यह प्रश्नग्रन्थ अत्यधिक लोकप्रिय हुआ है, इसकी एक प्रति मुझे श्रीमान् पं० सुन्दरलाल जी शास्त्री सागरसे मिली है, जिसमें प्रधान श्लोकोंकी केवल संस्कृत टीका है। ज्योतिष-महार्णव नामक संग्रहग्रन्थमें चन्द्रोन्मीलन मुद्रित भी किया गया है। मुद्रित श्लोकोंकी संख्या एक हजारसे भी अधिक है। श्री जैन-सिद्धान्त भवनमें चन्द्रोन्मीलनकी जो प्रति है, उसकी श्लोक-संख्या तीन सौ है। श्री पं० सुन्दरलाल जी के पास चन्द्रोन्मीलन की दो प्रतियाँ और भी हैं, पर उनको उन्होंने अभी मुझे दिखलाया नहीं है। इसकी एक प्रति गवर्नमेण्ट संस्कृत पुस्तकालय बनारसमें है, जिसकी श्लोकसंख्या तेरह सौ के लगभग है। यह प्रति सबसे अधिक शुद्ध मालूम होती है। चन्द्रोन्मीलनके नामसे मेरा अनुमान है कि पाँच-सात ग्रन्थ और भी लिखे गये हैं। जैनोंकी ५वीं ६वीं शताब्दीकी यह प्रणाली बहुत प्रसिद्ध थी, इसलिए इस प्रणालीको ही लोग चन्द्रोन्मीलन प्रश्नप्रणाली कहने लगे थे। 'चन्द्रोन्मीलन' के व्यापक प्रचारके कारण घबड़ा कर दक्षिण भारतमें 'केरल' नामक प्रश्न प्रणाली निकाली गयी है। केरलप्रश्नसंग्रह, केरलप्रश्नरत्न, केरलप्रश्नतत्त्व संग्रह आदि केरलीय प्रश्न ग्रन्थोंमें चन्द्रोन्मीलनके व्यापक प्रचारका खण्डन किया है—

"प्रोक्तं चन्द्रोन्मीलनं दिक्वस्त्रैस्तच्चाशुद्धम्"।

केरलीयप्रश्नसंग्रहमें 'दिक्वस्त्रैः' के स्थानमें 'शुक्लवस्त्रैः' पाठ भी है। शेष श्लोक ज्योंका त्यों है। केरल प्रश्न संग्रहकी एक प्रति हस्तलिखित ताड़पत्रीय जैन सिद्धान्त-भवनमें है। इसमें 'दिक्वस्त्रैः' पाठ है, जो कि दिगम्बर जैनाचार्योंके लिए

व्यवहृत हुआ है। प्रश्नशास्त्रका विकास वस्तुतः द्राविड़ नियमोंके आधार पर हुआ प्रतीत होता है, अतः 'शुक्लवस्त्रैः' के स्थान में 'दिक्वस्त्रैः' ज्यादा उपयुक्त प्रतीत होता है।

आठवीं, नौवीं और दसवीं शताब्दीमें चन्द्रोन्मीलन प्रश्नप्रणालीके साथ-साथ 'आय' प्रश्नप्रणालीका जैनोंमें प्रचार हुआ। इस प्रणाली पर कई ग्रन्थ लिखे गये हैं। दामनन्दीके शिष्य भट्ट वोसरिने आयज्ञानतिलक, मल्लिषेणाचार्यने आयसद्भाव प्रकरण लिखे हैं। इनके अलावा आयप्रदीपिका, आयप्रश्नतिलक, प्रश्नज्ञानप्रदीप, आयसिद्धि, आयस्वरूप आदि अनेक ग्रन्थ रचयिताओंके नामोंसे रहित भी मिलते हैं। चन्द्रोन्मीलन और आय-प्रश्नप्रणालीमें मौलिक अन्तर संज्ञाओंका है। चन्द्रोन्मीलन प्रणालीमें अक्षरोंकी संयुक्त, असंयुक्त, अभिहत, अनभिहत, अभिघातित, आलिंगित, अभिधूमित और दग्ध ये आठ संज्ञाएँ हैं तथा आयप्रणालीमें अक्षरोंकी ध्वज, धूम, सिंह, श्वान, वृष, खर, गज और वायस ये संज्ञाएँ बतायी हैं। फलनिरूपणमें भी थोड़ा-सा अन्तर है। चन्द्रोन्मीलनमें चर्या-चेष्टाको भी स्थान दिया गया है, तथा चर्या-चेष्टाके आधार पर भी फलोंका प्रतिपादन किया गया है। आयज्ञानतिलकके प्रारम्भमें मंगलाचरण करते हुए आबप्रणालीको स्वतन्त्रताकी ओर संकेत किया है—

"नमिऊण नमियनमियं दुत्तरसंसारसायरुत्तिन्नं।
सव्वन्नं वीरजिणं पुलिंदिणिं सिद्धसंघं च ॥१॥
जं दामनन्दिगुरुणो मणयं आयाण जाणि गुह्यं।
तं आयनाणतिलए वोसिरिणा सन्नए पयडं ॥२॥"

आयप्रश्नप्रणालीका आदि आविष्कर्त्ता सुग्रीव मुनिको बताया गया है। सुग्रीव मुनिके प्रश्नशास्त्रपर तीन ग्रन्थ बताये जाते हैं, पर मुझे देखनेको एक भी नहीं मिला है। आयप्रश्नतिलक, प्रश्नरत्न, आयसद्भावके नाम सूचियोंमें मिलते हैं। शकुन पर भी 'सुग्रीवशकुन' नामका महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ बताया जाता है। पुलिन्दिनी आयकी अधिष्ठात्री देवीकी स्तुति करते हुए भट्टवोसरिने सुग्रीवमुनिका नामोल्लेख करते हुए लिखा है—

"सुग्रीवपूर्वमुनिसूचितमन्त्रबीजैः तेषां वचांसि न कदापि मुधा भवन्ति ॥"

आयसद्भावप्रकरणमें भी सुग्रीवमुनिके सम्बन्धमें बताया गया है—

"सुग्रीवादिमुनीन्द्रैः रचितं शास्त्रं यदायसद्भावम्।
तत्संप्रत्यार्याभिर्विरच्यते मल्लिषेणेन ॥"

इससे सिद्ध है कि आयप्रणालीके प्रवर्त्तक सुग्रीव आदि प्राचीन मुनि थे। आय-प्रणालीका प्रचार चन्द्रोन्मीलन प्रणालीसे अधिक हुआ है। आयप्रणालीमें प्रश्नोंके उत्तरों-के साथ-साथ चमत्कारी मन्त्र, यन्त्र, सुभिक्ष, दुर्भिक्ष आदि बातोंका विचार-विनिमय भी गर्भित किया है।

एक तीसरी प्रश्नप्रणाली १४वीं, १५वीं और १६वीं शतीमें प्रश्नलग्नको भी

जैनोंमें प्रचलित हुई है। उत्तर भारतमें श्वेताम्बर जैनाचार्यों द्वारा इस प्रणालीमें बहुत काम हुआ है। इतर आचार्योंकी तुलनामें जैनाचार्योंने प्रश्नविषयक रचनाएँ इस प्रणालीके आधार पर बहुत की हैं। पद्मप्रभ-सूरिका भुवनदीपक, हेमप्रभ सूरिका त्रैलोक्यप्रकाश, नरचन्द्रके प्रश्नशतक, प्रश्नचतुर्विंशिका आदि लग्नाधारित प्रश्नग्रन्थ प्रसिद्ध हैं। इन प्रश्नग्रन्थोंमें प्रश्नकालीन लग्न बनाकर फल बताया गया है। त्रैलोक्य-प्रकाशमें कहा गया है कि लग्नज्ञानका प्रचार म्लेच्छोंमें है, पर प्रभुप्रसादसे जैनोंमें भी इसका पूर्ण प्रचार विद्यमान है। लग्नके गूढ़ रहस्यको जैनाचार्योंने अच्छी तरह जान लिया है—

"म्लेच्छेषु विस्तृतं लग्नं कलिकालप्रभावतः।
प्रभुप्रसादमासाद्य जैने धर्मेऽवतिष्ठते ॥६॥"

लग्नकी प्रशंसा हेमप्रभ सूरिने अत्यधिक की है, उन्होंने प्रश्नोंका उत्तर निकालनेके लिए इस प्रणालीको उत्तम माना है। उनके मतसे लग्न ही देवता, लग्न ही स्वामी, लग्न ही माता, लग्न ही पिता, लग्न ही लक्ष्मी, लग्न ही सरस्वती, लग्न ही नवग्रह, लग्न ही पृथ्वी, लग्न ही जल, लग्न ही अग्नि, लग्न ही वायु, लग्न ही आकाश और लग्न ही परमानन्द है[1]। यह लग्नप्रणाली दिव्यज्ञानके तुल्य जीवके सुख, दुःख, हर्ष, विषाद, लाभ, हानि, जय, पराजय, जीवन, मरणका साक्षात् निरूपण करनेवाली है। इसमें ग्रहोंका रहस्य, भावों—द्वादश स्थानोंका रहस्य, ग्रहोंका द्वादश भावोंसे सम्बन्ध आदि विभिन्न दृष्टिकोणों द्वारा फलादेशका निरूपण किया गया है।

लग्नप्रणालीमें उत्तर भारतमें चार-पाँच सौ वर्षों तक कोई संशोधन नहीं हुआ है। एक ही प्रणालीके आधारसे फल प्रतिपादनकी प्रक्रिया चलती रही। हाँ, इस प्रणालीमें परिवर्धन उत्तरोत्तर होता गया है। इस प्रणालीका सर्वांगपूर्ण और व्यवस्थित ग्रन्थ ११६० श्लोक प्रमाणमें त्रैलोक्यप्रकाश नामका मिलता है। इस ग्रन्थके प्रणयनके पश्चात् लग्नप्रणाली पर कोई सुन्दर और सर्वांगपूर्ण ग्रन्थ लिखा ही नहीं गया। यों तो १७वीं और १८वीं शतीमें भी लग्नप्रणाली पर दो-एक ग्रन्थ लिखे गये हैं, पर उनमें कोई नयी बात नहीं बतायी गयी है।

---

१. "लग्नं देवः प्रभुः स्वामी लग्नं ज्योतिः परं मतम्।
लग्नं दीपो महान् लोके लग्नं तत्त्वं दिशन् गुरुः॥
लग्नं माता पिता लग्नं लग्नं बन्धुर्निजः स्मृतम्।
लग्नं बुद्धिर्महालक्ष्मीर्लग्नं देवी सरस्वती॥
लग्नं सूर्यो विधुर्लग्नं लग्नं भौमो बुधोऽपि च।
लग्नं गुरुः कविर्मन्दो लग्नं राहुः सकेतुकः॥
लग्नं पृथ्वी जलं लग्नं लग्नं तेजस्तथानिलः।
लग्नं व्योम परानन्दो लग्नं विश्वमयात्मकम्॥"
—त्रैलोक्यप्रकाश, श्लो० २-५।

दसवीं, ग्यारहवीं, वारहवीं और तेरहवीं शताब्दीमें दक्षिण भारतमें लग्न सम्बन्धिनी प्रश्नप्रणाली जैनोंमें उत्तरकी अपेक्षा भिन्न रूपमें मिलती है। दक्षिणमें लग्न, द्वादश भाव और उनमें स्थित रहनेवाले ग्रहोंपर-से सीधे-सादे ढंगसे फल नहीं बताया गया है, वल्कि कुछ विशेष संज्ञाएँ निर्धारित कर फल कहा है। ज्ञानप्रदीपिकाके प्रारम्भमें बताया गया है—

"भूतं भव्यं वर्तमानं शुभाशुभनिरीक्षणम्।
पञ्चप्रकारमार्गं च चतुष्केन्द्रबलाबलम्॥
आरूढछत्रवर्गं चाभ्युदयादिबलाबलम्।
क्षेत्रं दृष्टिं नरं नारीं युग्मरूपं च वर्णकम्॥
मृगादिनररूपाणि किरणान्योजनानि च।
आयूरसोदयाद्यं च परीक्ष्य कथयेद् बुधः॥"

अर्थात्—भूत, भविष्य, वर्तमान, शुभाशुभ दृष्टि, पाँच मार्ग, चार केन्द्र, बलावल, आरूढ़, छत्र, वर्ग, उदयबल, अस्तवल, क्षेत्र, दृष्टि, नर, नारी, नपुंसक, वर्ण, मृग तथा नर आदिका रूप, किरण, योजन, आयु, रस, उदय आदिकी परीक्षा करके बुद्धिमान्को फल कहना चातिए।

धातु, मूल, जीव, नष्ट, मुष्टि, लाभ, हानि, रोग, मृत्यु, भोजन, शयन, शकुन, जन्म, कर्म, अस्त्र, शल्य—मकानमें-से हड्डी आदिका निकालना, कोष, सेनाका आगमन, नदियोंकी बाढ़, अवृष्टि, वृष्टि, अतिवृष्टि, नौका-सिद्धि आदि प्रश्नोंके उत्तरोंका निरूपण किया गया है। इस प्रणालीमें द्वादश राशियोंकी संज्ञाएँ, उनकी भ्रमणवीथियों, उनकी विशेष अवस्थाएँ, उनकी किरणें, उनका भोजन, उनका वाहन, उनका आकार-प्रकार, उनकी योजनसंख्या, उनकी आयु, उनका उदय, उनकी धातु, उनका रस, उनका स्थान आदि सैकड़ों संज्ञाओंके आधार पर नाना विचारविनिमयों द्वारा फलादेशका कथन किया गया है। यद्यपि उस लग्नप्रणालीका मूलाधार भी समयका शुभाशुभत्व ही है, किन्तु इसमें विचार-विमर्श करनेकी विधि त्रैलोक्यप्रकाश, भुवनदीपक, प्रश्नचतुर्विंशिका आदि ग्रन्थोंसे भिन्न है।

दक्षिण भारतमें जैनाचार्योंमें इस प्रणालीका प्रचार दसवीं सदीसे पन्द्रहवीं सदी तक पाया जाता है। इस प्रणालीके प्रश्नसम्बन्धी दस-बारह ग्रन्थ मिलते हैं। प्रश्नदीपक, प्रश्नप्रदीप, ज्ञानप्रदीप, रत्नदीपक, प्रश्नरत्न आदि ग्रन्थ महत्त्वपूर्ण प्रतीत होते हैं। यदि अन्वेषण किया जाय तो इसी प्रणालीके और भी ग्रन्थ मिल सकते हैं। सोलहवीं सदीमें दक्षिणमें भी उत्तरवाली लग्नप्रणाली मिलती है। ज्योतिषसंग्रह, ज्योतिपरत्न ग्रन्थोंके देखनेसे मालूम होता है, कि चौदहवीं और पन्द्रहवीं शतीमें ही उत्तर दक्षिणकी लग्न-प्रक्रिया एक हो गयी थी। उपर्युक्त दोनों ग्रन्थोंके मंगलाचरण जैन हैं, रचनाशैली द्राविड़ है। कहीं-कहीं आरूढ़ क्षत्र आदि संज्ञाएँ भी मिलती हैं; पर ग्रहों और भावोंके सम्बन्धमें कोई अन्तर नहीं है। इन प्रश्नप्रणालियोंके साथ-साथ रमल प्रश्नप्रणाली भी जैनाचार्योंमें

प्रचलित थी। कालकाचार्य रमलशास्त्रके बड़े भारी ज्ञाता थे, इन्होंने रमल प्रक्रियामें कई नवीन संशोधन किये थे। कुछ विद्वान् तो यहाँ तक मानते हैं कि रमलप्रणालीके भारतमें मूल प्रचारक कालकाचार्य ही थे। इन्होंने ही इस प्रणालीका प्रचार संस्कृत भाषामें निबद्ध कर आर्योंमें किया।

रमलशास्त्रपर मेघविजय, भोजसागर, विजयदानसूरिके ग्रन्थ मिलते हैं। इन ग्रन्थोंमें पाशक और प्रस्तारज्ञान, तत्त्वज्ञान, शाकुनक्रम, दशक्रम, साक्षज्ञान, वर्णज्ञान, षोडशभाव फल, शून्यचालन, दिनज्ञान, प्रश्नज्ञान, भूमिज्ञान, धनमानपरीक्षा आदि विषय वर्णित हैं। दिगम्बर जैनाचार्योंमें रमलशास्त्रका प्रचार नहीं पाया जाता है। उन्होंने रमलके स्थानपर 'पाशाकेवली' नामक प्रणालीका प्रचार किया है। संस्कृत भाषामें सकलकीर्त्ति, गर्गाचार्य, सुग्रीव मुनि आदिके पाशाकेवली ग्रन्थ मिलते हैं। इन ग्रन्थोंको देखनेसे प्रतीत होता है कि दिगम्बर जैनाचार्योंने रमलके समान 'पाशाकेवली' की भी दो प्रणालियाँ निकाली थीं—(१) सहज पाशा और (२) यौगिक पाशा। सहज पाशा प्रणालीमें 'अरहन्त' शब्दके पृथक्-पृथक् चारों वर्णोंको एक चन्दन या अष्टधातुके बने पाशे-पर लिख कर इष्टदेवका १०८ बार स्मरण कर अथवा "ॐ नमः पञ्चपरमेष्ठिभ्यः" मन्त्रका १०८ बार जाप कर पवित्र मनसे चार बार उक्त पाशेको डालना चाहिए। इससे जो शब्द बने उसका फल ग्रन्थमें देख लेनेसे प्रश्नोंका फल ज्ञात हो जायेगा।

यौगिक पाशा प्रणालीकी दो विधियाँ देखनेको मिलती हैं। पहली विधि है कि अष्टधातुके निर्मित पाशे पर १, २, ३ और चार अंकोंको निर्मित करें। पश्चात् उपर्युक्त मन्त्रका या इष्टदेवका १०८ बार स्मरण कर पाशेको प्रथम चार बार गिरावे, उससे जो अंकसंख्या निकले उसे एक स्थान पर रख ले। द्वितीय बार पाशेको चार बार फिर गिरावे उससे जो अंक संख्या आवे उसे एक स्थान पर पुनः अंकित कर ले। तृतीय बार इसी प्रकार पाशा गिराने पर जो अंक संख्या प्राप्त हो उसे भी अंकित कर ले। इन तीनों प्रकारकी अंकित अंक संख्याओंमें जो सबसे अधिक अक संख्या हो, उसीका फला-फल देख ले। द्वितीय विधि यह बतायी गयी है कि प्रथम बार चार बार पाशा डालने पर यदि निष्पन्न अंक राशि विषम हो तो विषम राशि लग्न और सम हो तो सम राशि लग्न होती है। राशियोंके सम, विषमकी गणना द्वितीय बारमें डाले गये पाशेके प्रथम अंकसे करना चाहिए। इस प्रकार लग्न राशिका निश्चय कर पाशा द्वारा ग्रहोंका भी निर्णय कर राशि, नक्षत्र, ग्रहोंके बलाबल दृष्टि आदि विचारसे फलाफल ज्ञात करना चाहिए। द्वितीय प्रणालीका आभास सुग्रीव मुनिके नामसे उल्लिखित पाशाकेवलीके चार श्लोकोंमें ही मिलता है। 'पाशाकेवली' की प्रणालीको देखनेसे ज्ञात होता है कि जैना-चार्योंमें प्रश्ननिरूपणकी नाना प्रणालियोंमें इस प्रणालीको भी महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त था। संस्कृत भाषामें 'गर्भप्रश्न' और 'अक्षरकेवली' प्रश्नग्रन्थ सरल और आशुबोधगम्य प्रथम प्रणाली-सहज पाशाकेवलीमें निर्मित हुए हैं। इन दोनों ग्रन्थोंमें यौगिक पाशा-प्रणाली और सहज पाशाप्रणाली मिश्रित है।

हिन्दी भाषामें विनोदीलाल और वृन्दावनके 'अरहन्त' पाशाकेवली सहज पाशाप्रणाली पर मिलते हैं। १६वीं, १७वीं और १८ सदियोंमें पाशाकेवली प्रणाली-का प्रश्नोत्तर निकालनेके लिए अधिक प्रयोग हुआ है। इस प्रकार जैन प्रश्नशास्त्रमें उत्तरोत्तर विकास होता रहा है।

केवलज्ञानप्रश्नचूड़ामणिका जैन प्रश्नशास्त्रमें स्थान

जैन प्रश्नशास्त्रकी उपर्युक्त प्रणालियोंपर विचार करनेसे ज्ञात होता है कि केवल-ज्ञान प्रश्नचूड़ामणिमें 'चन्द्रोन्मीलन' प्रश्नप्रणालीका वर्णन किया गया है। इस छोटे-से ग्रन्थमें वर्णोंका वर्ग विभाजन कर संयुक्त, असंयुक्त, अभिहत, अनभिहत, अभिघातित, अभिधूमित, आलिंगित और दग्ध इन संज्ञाओं द्वारा प्रश्नोंका उत्तर दिया गया है। इस ग्रन्थकी रचनाशैली बड़ी सरल और रोचक है। चन्द्रोन्मीलनमें जहाँ विस्तारपूर्वक फल बताया है वहाँ इस ग्रन्थमें संक्षेपमें। आयप्रणालीकी कुछ प्राचीन गाथाएँ इस ग्रन्थमें उद्धृत की गयी हैं। गद्यमें स्वयं रचयिताने 'आयप्रश्नप्रणाली' पर प्रकाश डाला है। प्रश्नशास्त्रकी दृष्टिसे इस ग्रन्थमें सभी आवश्यक बातें आ गयी हैं। कतिपय प्रश्नोंके उत्तर विलक्षण ढंगसे दिये गये हैं। नष्ट जन्मपत्र बनानेकी विधि इसकी सर्वथा नवीन और मौलिक है। यह विषय 'आयप्रश्नप्रणाली' में गर्भित नहीं होता है। चन्द्रोन्मीलन प्रश्नप्रणालीमें नष्ट जन्मपत्र निर्माणका विषय आ जाता है, परन्तु चन्द्रोन्मीलन ग्रन्थकी अब तक जितनी प्रतियाँ उपलब्ध हुई हैं उनमें यह विषय नहीं आया है।

केवलज्ञानप्रश्नचूड़ामणिको देखनेसे मालूम होता है कि यह ग्रन्थ चन्द्रोन्मीलन प्रणालीके विस्तारको संक्षेपमें समझानेके लिए लिखा गया है। इस शैलीके अन्य ग्रन्थोंमें जिस बातको दस-बीस श्लोकोंमें कहा गया है, इस ग्रन्थमें उसी बातको एक छोटे-से गद्य अंशमें कह दिया है। रचयिताकी अभिव्यंजना शक्ति बहुत बढ़ी-चढ़ी है। इसमें एक भी शब्द व्यर्थ नहीं आया है। भाषाका कम प्रयोग करने पर भी ग्रन्थकारोंको जिस बातका निरूपण करना चाहिए, सरलतासे कर दिया है। फलित ज्योतिषके प्रश्न ग्रन्थोंमें इसका महत्त्वपूर्ण स्थान है। यद्यपि इसका कलेवर 'आयज्ञानतिलक' या 'आयसद्भाव' की तुलनामें बहुत कम है, फिर भी विषय प्रतिपादनकी दृष्टिसे इसका स्थान उपलब्ध जैन प्रश्नसाहित्यमें महत्त्वपूर्ण है। इस एक ग्रन्थके सांगोपांग अध्ययनसे कोई भी व्यक्ति प्रश्नशास्त्रका अच्छा ज्ञान प्राप्त कर सकता है। 'प्रश्नचूड़ामणि' नामका एक ग्रन्थ चन्द्रोन्मीलन प्रश्नप्रणालीकी संशोधित केरल प्रश्नप्रणालीमें भी है; पर इस ग्रन्थमें वह खूबी नहीं जो इसमें है। प्रश्नचूड़ामणि या दिव्यचूड़ामणिमें पद्योंमें वर्णोंके अष्टवर्गोंका निरूपण किया है तथा फलकथनमें कई स्थानोंमें त्रुटियाँ हैं। प्रश्नचूड़ामणि ग्रन्थ भी जैनाचार्य द्वारा निर्मित प्रतीत होता है। इसमें मंगलाचरण नहीं है। ग्रन्थके अन्तमें "ॐ शान्ति श्रीजिनाय नमः" आया है। यह पाठ मूल ग्रन्थकारका प्रतीत होता है।

जैन प्रश्नशास्त्रमें केवलज्ञानप्रश्नचूड़ामणिका स्थान विषयनिरूपण शैलीकी अपेक्षा

से यदि सर्वोपरि माना जाय तो भी अत्युक्ति न होगी। इस एक ग्रन्थमें 'आयप्रश्न-प्रणाली', 'चन्द्रोन्मीलन प्रश्नप्रणाली' तथा 'कल्पितसंज्ञालग्नप्रणाली' इन तीनोंका सामान्य आभास मिल जाता है। यों तो इसमें 'चन्द्रोन्मीलनप्रश्नप्रणाली' का ही अनुसरण किया गया है।

केवलज्ञानप्रश्नचूड़ामणिका विषय-परिचय

इस ग्रन्थमें अ क च ट त प य श अथवा अ ए क च ट त प य श इन अक्षरोंका प्रथम वर्ग; आ ऐ ख छ ठ थ फ र ष इन अक्षरोंका द्वितीय वर्ग; इ ओ ग ज ड द ब ल स इन अक्षरोंका तृतीय वर्ग; ई औ घ झ ढ ध भ व ह इन अक्षरोंका चतुर्थ वर्ग और उ ऊ ङ ञ ण न म अं अः इन अक्षरोंका पंचम वर्ग बताया गया है। इन अक्षरोंको प्रश्नकर्त्ताके वाक्य या प्रश्नाक्षरोंसे ग्रहण कर अथवा उपर्युक्त पाँचों वर्गोंको स्थापित कर प्रश्नकर्त्तासे स्पर्श कराके अच्छी तरह फलाफलका विचार करना चाहिए। संयुक्त, असंयुक्त, अभिहत, अनभिहत और अभिघातित इन पाँचों द्वारा तथा आलिंगित, अभिधूमित और दग्ध इन तीन क्रियाविशेषणों द्वारा प्रश्नोंके फलाफलका विचार करना चाहिए।

प्रथम वर्ग और तृतीय वर्गके संयुक्त अक्षर प्रश्नवाक्यमें हों तो वह प्रश्नवाक्य संयुक्त कहलाता है। प्रश्नवर्णोंमें अ इ ए ओ ये स्वर हों तथा क च ट त प य श ग ज ड द ब ल स ये व्यंजन हों तो संयुक्त संज्ञक होता है। संयुक्त प्रश्न होनेपर पृच्छकका कार्य सिद्ध होता है। यदि पृच्छक लाभ, जय, स्वास्थ्य, सुख और शान्तिके सम्बन्धमें प्रश्न पूछने आया है तो संयुक्त प्रश्न होनेपर उसके वे सभी कार्य सिद्ध होते हैं। यदि प्रश्न-वर्णोंमें कई वर्गोंके अक्षर हैं अथवा प्रथम, तृतीय वर्गके अक्षरोंकी बहुलता होनेपर भी संयुक्त प्रश्न ही माना जाता है। जैसे पृच्छकके मुखसे प्रथम वाक्य 'कार्य' निकला, इस प्रश्नवाक्यका विश्लेषण किया। इसका क् + आ + र् + य् + अ यह स्वरूप हुआ। इस विश्लेषणमें क + य् + अ ये तीन अक्षर प्रथम वर्गके हैं तथा आ और र् द्वितीय वर्गके हैं। यहाँ प्रथम वर्गके तीन वर्ण और द्वितीय वर्गके दो वर्ण हैं, अतः प्रथम द्वितीय वर्गका संयोग होनेसे यह प्रश्न संयुक्त नहीं कहलायेगा।

प्रश्न पूछनेके लिए जब कोई आवे तो उसके मुखसे जो पहला वाक्य निकले, उसीको प्रश्नवाक्य मान कर अथवा उससे किसी पुष्प, फल, देवता, नदी और पहाड़का नाम पूछकर अर्थात् प्रातःकालमें आनेपर पुष्पका नाम, मध्याह्नकालमें फलका नाम, अपराह्नमें देवताका नाम और सायंकालमें नदी या पहाड़का नाम पूछकर प्रश्नवाक्य ग्रहण करना चाहिए। पृच्छकके प्रश्नवाक्यका स्वर, व्यंजनोंके अनुसार विश्लेषण कर संयुक्त, असंयुक्त, अभिहत, अनभिहत, अभिघातित, आलिंगित, अभिधूमित और दग्ध इन आठ भेदोंके द्वारा फलका निर्णय करना चाहिए।

यदि प्रश्नवाक्यमें संयुक्त वर्णोंकी अधिकता हो–प्रथम और तृतीय वर्गके वर्ण अधिक हों अथवा प्रश्नवाक्यका प्रारम्भ कि, चि, टि, ति, पि, यि, शि, को, चो, टो, तो,

पो, यो, शो, ग, ज, ड, द, ब, ल, स, गे, जे, दे, बे, ले, से अथवा क् + ग्, क् + ज्, क् + ड्, क् + द्, क् + ब्, क् + ल्, क् + स्, च् + ज्, च् + ड्, च् + द्, च् + ब्, च् + ल्, च् + स्, ट् + ग्, ट् + ज्, ट् + ड्, ट् + द, ट् + ब्, ट् + ल्, ट् + स्, त् + ग्, त् + ज्, त् + ड्, त् + द्, त् + ब्, त् + ल्, त् + स्, प् + ग्, प् + ज्, प् + ड्, प् + द्, प् + ब्, प् + ल्, प् + स्, य् + ग्, य् + ज्, य् + ड्, य् + द्, य् + ब्, य् + ल्, य् + स्, श् + ग्, श् + ज्, श् + ड्, श् + द्, श् + ब्, श् + ल्, श् + स्, ग् + क्, ग् + च्, ग् + ट्, ग् + त्, ग् + प्, ग् + य्, ग् + श्, ज् + क्, ज् + च्, ज् + ट्, ज् + प्, ज् + य्, ज् + श्, ड् + क्, ड् + च्, ड् + ट्, ड् + त्, ड् + प्, ड् + य्, ड् + श्, द् + क्, द् + च्, द् + ट्, द् + प्, द् + य्, द् + श्, ब् + क्, ब् + च्, ब् + ट्, ब् + त्, ब् + प्, ब् + य्, ब् + श्, ल् + क्, ल् + च्, ल् + ट्, ल् + त्, ल् + प्, ल् + य्, ल् + श्, स् + क्, स् + च्, स् + ट्, स् + त्, स् + प्, स् + य्, स् + श् से होता हो तो संयुक्त प्रश्न होता है। संयुक्त प्रश्नका फल शुभकारक बताया है।

प्रथम और द्वितीय वर्ग, द्वितीय और चतुर्थ वर्ग, तृतीय और चतुर्थ वर्ग एवं चतुर्थ और पंचम वर्गके वर्णोंके मिलनेपर असंयुक्त प्रश्न कहलाता है। प्रथम और द्वितीय वर्गाक्षरोंके संयोगसे—क ख, च छ, ट ठ, त थ, प फ, य र इत्यादि, द्वितीय और चतुर्थ वर्गाक्षरोंके संयोगसे—ख घ, छ झ, ठ ढ, थ ध, फ भ, र व, इत्यादि, तृतीय और चतुर्थ वर्गाक्षरोंके संयोगसे—गघ, जझ, डढ, दध, बभ, वल इत्यादि एवं चतुर्थ और पंचम वर्गाक्षरोंके संयोगसे—घङ, झञ, ढण, धन, भम इत्यादि विकल्प बनते हैं। असंयुक्त प्रश्न होनेसे फलकी प्राप्ति बहुत दिनोंके बाद होती है। यदि प्रथम द्वितीय वर्गोंके अक्षर मिलनेसे असंयुक्त प्रश्न हो तो धनलाभ, कार्य-सफलता और राजसम्मान अथवा जिस सम्बन्धमें प्रश्न पूछा गया हो, उस फलकी प्राप्ति तीन महीनेके उपरान्त होती है। द्वितीय चतुर्थ वर्गाक्षरोंके संयोगसे असंयुक्त प्रश्न हो, तो मित्र-प्राप्ति, उत्सववृद्धि, कार्यसाफल्यकी प्राप्ति छह महीनेमें होती है। तृतीय-चतुर्थ वर्गाक्षरोंके संयोगसे असंयुक्त प्रश्न हो तो अल्पलाभ, पुत्रप्राप्ति, मांगल्यवृद्धि और प्रियजनोंसे झगड़ा एक महीनेके अन्दर होता है। चतुर्थ और पंचम वर्गाक्षरोंके संयोगसे असंयुक्त प्रश्न हो तो घरमें विवाह आदि मांगलिक उत्सवोंकी वृद्धि, स्वजन-प्रेम, यशःप्राप्ति, महान् कार्योंमें लाभ और वैभवकी वृद्धि इत्यादि फलोंकी प्राप्ति शीघ्र होती है।

यदि पृच्छक रास्तेमें हो, शयनागारमें हो, पालकीपर सवार हो, मोटर, साइकिल, घोड़े, हाथी आदि किसी भी सवारीपर सवार हो तथा हाथमें कुछ भी चीज न लिये हो तो असंयुक्त प्रश्न होता है। यदि पृच्छक पश्चिम दिशाकी ओर मुँह कर प्रश्न करे तथा प्रश्न करते समय कुर्सी, टेबुल, बेंच अथवा अन्य लकड़ीकी वस्तुओंको छूता हुआ हो या नोंचता हुआ प्रश्न करे तो उस प्रश्नको भी असंयुक्त जानना चाहिए, असंयुक्त प्रश्नका फल प्रायः अनिष्टकर ही होता है। प्रस्तुत ग्रन्थमें असंयुक्त प्रश्नमें चिन्ता, मृत्यु, पराजय, हानि एवं कार्यनाश आदि फल बताये गये हैं।

यदि प्रश्नवाक्यका आद्यक्षर गा, जा, डा, दा, बा, ला, सा, गै, जै, डै, दै, बै, लै, सै, घि, झि, ढि, धि, भि, वि, हि, घो, झो, ढो, धो, भो, वो, हो, में से कोई हो तो असंयुक्त प्रश्न होता है। इस प्रकारसे असंयुक्त प्रश्नका फल अशुभ होता है। कार्य विनाश, मानसिक चिन्ताएँ, मृत्यु आदि फल ढो, झो, हो लै आद्य प्रश्नाक्षरोंके होनेपर तीन महीनेके भीतर होते हैं।

प्रश्नकर्त्ताके प्रश्नाक्षरोंमें कख, खग, गघ, घङ, चछ, छज, जझ, झञ, टठ, ठड, डढ, ढग, तथ, थद, दध, धन, पफ, फब, बभ, भम, यर, रल, लव, वश, शष, षस और सह इन वर्णोंके क्रमशः विपर्यय होनेपर—परस्परमें पूर्व और उत्तरवर्ती हो जानेपर अर्थात् खक, गख, घग, ङघ, छच, जछ, झज, ञझ, ठट, डठ, ढड, णढ, थत, दथ, धद, नध, फप, बफ, भंब, मभ, रय, लर, वल, षश, सष एवं हस होनेपर अभिहत प्रश्न होता है। इस प्रकारके प्रश्नाक्षरोंके होनेपर कार्यसिद्धि नहीं होती है। प्रश्नवाक्यके विश्लेषण करनेपर पंचमवर्गके वर्णोंकी संख्या अधिक हो तो भी अभिहत प्रश्न होता है। प्रश्नवाक्यका आरम्भ उपर्युक्त अक्षरोंके संयोगसे निष्पन्न वर्गोंसे हो तो अभिहत प्रश्न होता है। इस प्रकारके प्रश्नका फल भी अशुभ है।

अकार स्वर सहित और अन्य स्वरोंसे रहित अ क च ट त प य श ङ ञ ण न म ये प्रश्नाक्षर या प्रश्नवाक्यके आद्यक्षर हों तो अनभिहत प्रश्न होता है। अनभिहत प्रश्नाक्षर स्ववर्गाक्षरोंमें हों तो व्याधि-पीड़ा और अन्य वर्गाक्षरोंमें हों तो शोक, सन्ताप, दुःख, भय और पीड़ा फल होता है। जैसे मोतीलाल नामक व्यक्ति प्रश्न पूछने आया। प्रश्नवाक्य पूछनेपर उसने 'चमेली' का नाम लिया। चमेली यह प्रश्नवाक्य कौन-सा है? यह जाननेके लिए उस वाक्यका विश्लेषण किया तो प्रश्नवाक्यका प्रारम्भिक अक्षर च है, इसमें अ स्वर और च् व्यंजनका संयोग है, द्वितीय वर्ण 'मे' में ए स्वर और म् व्यंजनका संयोग है तथा तृतीय वर्ण 'ली' में ई स्वर और ल् व्यंजनका संयोग है। च् + अ् + म् + ए + ल् + ई इस विश्लेषणमें अ + च् + म् ये तीन वर्ण अनभिहत, ई अभिधूमित, ए आलिंगित और ल् अभिहत संज्ञक हैं। 'परस्परं शोधयित्वा योऽधिकः स एव प्रश्नः' इस नियमके अनुसार यह प्रश्न अनभिहत हुआ, क्योंकि सबसे अधिक वर्ण अनभिहत प्रश्नके हैं। अथवा प्रथम वर्ण जिस प्रश्नका हो, उसी संज्ञक प्रश्नवाक्यको मानना चाहिए, जैसे ऊपरके प्रश्नवाक्य 'चमेली' में प्रथम अक्षर 'च' है यह अनभिहत प्रश्नवाक्यका है, अतः अनभिहत प्रश्न माना जायगा। इसका फल कार्य असिद्धि कहना चाहिए।

प्रश्नश्रेणीके सभी वर्ण चतुर्थ वर्ग और प्रथम वर्गके हों अथवा पंचम वर्ग और द्वितीय वर्गके हों तो अभिघातित प्रश्न होता है। इस प्रश्नका फल अत्यन्त अनिष्टकर बताया गया है। यदि पृच्छक कमर, हाथ, पैर और छातीको खुजलाता हुआ प्रश्न करे तो भी अभिघातित प्रश्त होता है।

प्रश्नवाक्यके प्रारम्भमें या समस्त प्रश्नवाक्यमें अधिकांश स्वर अ इ ए ओ ये चार हों तो आलिंगित प्रश्न; आ ई ऐ औ ये चार हों तो अभिधूमित प्रश्न और उ ऊ

अं अः ये चार हों तो दग्ध प्रश्न होता है। आलिंगित प्रश्न होनेपर कार्यसिद्धि, अभिधूमित होनेपर धनलाभ, कार्यसिद्धि, मित्रागमन एवं यश लाभ और दग्ध प्रश्न होनेपर दुःख, शोक, चिन्ता, पीड़ा एवं धनहानि होती है। जब पृच्छक दाहिने हाथसे दाहिने अंगको खुजलाते हुए प्रश्न करे तो आलिंगित, दाहिने या बाँयें हाथसे समस्त शरीरको खुजलाते हुए प्रश्न करे तो अभिधूमित प्रश्न एवं रोते हुए नीचे की ओर दृष्टि किये हुए प्रश्न करे तो दग्ध प्रश्न होता है। प्रश्नाक्षरोंके साथ-साथ उपर्युक्त चर्या-चेष्टाका भी विचार करना आवश्यक है। यदि प्रश्नाक्षर आलिंगित हों और पृच्छककी चेष्टा दग्ध प्रश्नकी हो ऐसी अवस्थामें फल मिश्रित कहना चाहिए। प्रश्नवाक्यमें अथवा प्रश्नवाक्य का आद्य स्वर आलिंगित होनेपर तथा चेष्टा-चर्याके अभिधूमित या दग्ध होनेपर प्रश्न-का फल मिश्रित होगा, पर इस अवस्थामें गणकको अपनी बुद्धिका विशेष उपयोग करना होगा। यदि प्रश्नाक्षरोंमें आलिंगित स्वरोंकी प्रधानता है तो उसे निस्संकोच रूपसे आलिंगित प्रश्नका फल कहना चाहिए, भले ही चर्या-चेष्टा अन्य प्रश्नकी हो।

उदाहरण—किसीने आकर पूछा 'मेरा कार्य सिद्ध होगा या नहीं ?' इस प्रारम्भिक उच्चरित वाक्यको प्रश्नवाक्य मानकर विश्लेषण किया तो—

म् + ए + र + आ + क् + आ + र + य् + अ + स् + इ + द् + ध् + अ + ह + ओ + ग् + आ यह स्वरूप हुआ। इसमें अ अ इ ए ओ ये पाँच अक्षर स्वर आलिंगित और आ आ आ ये तीन अभिधूमित प्रश्नके हुए। "परस्परम् अक्षराणि शोधयित्वा योऽधिकः स एव प्रश्नः" इस नियमके अनुसार शोधन किया तो आलिंगित प्रश्नके दो स्वर अवशेष आये—५ आलि०—३ अभिधू० = २ स्वर आलिंगित। अतः यह प्रश्न आलिंगित हुआ। यदि इस पृच्छककी चर्या-चेष्टा अभिधूमित प्रश्न की हो, तो मिश्रित फल होनेपर भी आलिंगित प्रश्नका ही फल प्रधानरूपसे कहना चाहिए।

उपर्युक्त आठ प्रकारसे प्रश्नका विचार करनेके प्रश्चात् अधरोत्तर, वर्गोत्तर और वर्ग संयुक्त अधर इन भंगोंके द्वारा भी प्रश्नोंका विचार करना चाहिए। उत्तरके नौ भेद कहे गये हैं—उत्तरोत्तर, उत्तराधर, अधरोत्तर, अधराधर, अधरोत्तर, अधराधर, वर्गोत्तर, अक्षरोत्तर, स्वरोत्तर, गुणोत्तर और आदेशोत्तर। अ और कवर्ग उत्तरोत्तर, चवर्ग और टवर्ग उत्तराधर, तवर्ग और पवर्ग अधरोत्तर एवं यवर्ग और शवर्ग अधराधर होते हैं। प्रथम और तृतीय वर्गवाले अक्षर वर्गोत्तर, द्वितीय और चतुर्थ वर्गवाले अक्षर अधरोत्तर एवं पंचम वर्गवाले अक्षर दोनों—प्रथम और तृतीय मिला देनेसे क्रमशः वर्गोत्तर और वर्गाधर होते हैं।

क ग ङ च ज ञ ट ड ण त द न प ब म य ल श स ये उन्नीस वर्ण उत्तर-संज्ञक, ख घ छ झ ठ ढ थ ध फ भ र व ष ह ये चौदह वर्ण अधरसंज्ञक, अ इ उ ए ओ अं ये छह वर्ण स्वरोत्तरसंज्ञक; अ च त य उ ज द ल ये आठ वर्ण गुणोत्तर संज्ञक और क ट प श ग ड ब ह ये आठ वर्ण गुणाधर संज्ञक हैं। संयुक्त, असंयुक्त, अभिहत

एवं अनभिहत आदि आठ प्रकारके प्रश्नोंके साथ नौ प्रकारके इन प्रश्नोंका भी विचार करना चाहिए।

प्रश्नकर्त्ताके प्रथम, तृतीय और पंचम स्थानके वाक्याक्षर उत्तर एवं द्वितीय और चतुर्थ स्थानके वाक्याक्षर अधर कहलाते हैं। यदि प्रश्नमें दीर्घाक्षर प्रथम, तृतीय और पंचम स्थानमें हों तो लाभ करानेवाले होते हैं, शेष स्थानोंमें रहनेवाले ह्रस्व और प्लुताक्षर हानि करानेवाले होते हैं। साधक इन प्रश्नाक्षरोंपर-से जीवन, मरण, लाभ, अलाभ, जय, पराजय आदि फलोंको ज्ञात कर सकता है। इस प्रकार विभिन्न दृष्टि-कोणोंसे आचार्यने वाचिक प्रश्नोंका विचार किया है।

ज्योतिष शास्त्रमें प्रश्न दो प्रकारके बताये गये हैं—मानसिक और वाचिक। वाचिक प्रश्नमें प्रश्नकर्त्ता जिस बातको पूछना चाहता है उसे ज्योतिषीके सामने प्रकट कर उसका फल ज्ञात करता है। परन्तु मानसिक प्रश्नमें पृच्छक अपने मनकी बात नहीं बतलाता है; केवल प्रतीकों—फल, पुष्प, नदी, पहाड़, देवता आदिके नाम द्वारा ही ज्योतिषीको उसके मनकी बात जानकर कहना पड़ता है।

संसारमें प्रधानतया तीन प्रकारके पदार्थ होते हैं—जीव, धातु और मूल। मानसिक प्रश्न भी उक्त तीन ही प्रकारके हो सकते हैं। आचार्यने सुविधाके लिए इनका नाम तीन प्रकारकी योनि—जीव, धातु और मूल रखा है। अ आ इ ई उ ऊ ए ऐ ओ औ अं अः इन बारह स्वरोंमें-से अ आ इ ए ओ अः ये छह स्वर तथा क ख ग घ च छ ज झ ट ठ ड ढ य श ह ये पन्द्रह व्यंजन इस प्रकार कुल २१ वर्ण जीव संज्ञक; उ ऊ अं ये तीन स्वर तथा त थ द ध प फ ब भ व स ये दस व्यंजन इस प्रकार कुल १३ वर्ण धातु संज्ञक और ई ऐ औ ये तीन स्वर तथा ङ ञ ण न म ल र ष ये आठ व्यंजन इस प्रकार कुल ११ वर्ण मूल संज्ञक होते हैं।

जीवयोनिमें अ ए क च ट त प य श ये अक्षर द्विपद संज्ञक; आ ऐ ख छ ठ थ फ र ष ये अक्षर चतुष्पद संज्ञक; इ ओ ग ज ड द ब ल स ये अक्षर अपद संज्ञक और ई औ घ झ ढ घ भ व ह ये अक्षर पादसंकुल संज्ञक होते हैं। द्विपद योनिके देव, मनुष्य, पक्षी और राक्षस ये चार भेद हैं। अ क ख ग घ ङ प्रश्न वर्णोंके होनेपर देव-योनि; च छ ज झ ञ ट ठ ड ढ ण प्रश्नवर्णोंके होनेपर मनुष्य योनि; त थ द ध न प फ ब भ म के होनेपर पशु या पक्षी योनि और य र ल व श ष स ह प्रश्नवर्णोंके होने-पर राक्षस योनि होती है। देवयोनिके चार भेद हैं—कल्पवासी, भवनवासी, व्यन्तर और ज्योतिषी। देवयोनिके वर्णोंमें अकारकी मात्रा होनेपर कल्पवासी, इकारकी मात्रा होनेपर भवनवासी; एकारकी मात्रा होनेपर व्यन्तर और ओकारकी मात्रा होनेपर ज्योतिष्क देवयोनि होती है।

मनुष्य योनिके ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र और अन्त्यज ये पाँच भेद हैं। अ ए क च ट त प य श ये वर्ण ब्राह्मण योनि संज्ञक; आ ऐ ख छ ठ थ फ र ष ये वर्ण क्षत्रिय योनि संज्ञक; इ ओ ग ज ड द ब ल स ये वर्ण वैश्य योनि संज्ञक; ई औ घ झ ढ

ध भ व ह ये वर्ण शूद्रयोनि संज्ञक एवं उ ऊ ङ ञ ण न म अं अः ये वर्ण अन्त्यज योनि संज्ञक होते हैं। इन पाँचों योनियोंके वर्णोंमें यदि अ इ ए ओ ये मात्राएँ हों तो पुरुष, आ ई ऐ औ ऐ मात्राएँ हों तो स्त्री एवं उ ऊ अं अः ये मात्राएँ हों तो नपुंसक संज्ञक होते हैं। पुरुष, स्त्री और नपुंसकमें भी आलिंगित प्रश्न होनेपर गौर वर्ण, अभिधूमित होनेपर श्याम और दग्ध होनेपर कृष्ण वर्ण होता है। आलिंगित प्रश्न होनेपर बाल्यावस्था, अभिधूमित होनेपर युवावस्था और दग्ध प्रश्न होनेपर वृद्धावस्था होती है। आलिंगित प्रश्न होनेपर सम—न कद अधिक बड़ा और न अधिक छोटा, अभिधूमित होनेपर लम्बा और दग्ध प्रश्न होनेपर कुब्ज और बौना होता है।

त थ द ध न प्रश्नाक्षरोंके होनेपर जलचर पक्षी और प फ ब भ म प्रश्नाक्षरोंके होनेपर थलचर पक्षियोंकी चिन्ता कहनी चाहिए। राक्षस योनिके दो भेद हैं—कर्मज और योनिज। भूत, प्रेतादि राक्षस कर्मज कहलाते हैं और असुरादिको योनिज कहते हैं। त थ द ध न प्रश्नाक्षरोंके होनेपर कर्मज और श ष स ह प्रश्नाक्षरोंके होनेपर योनिज राक्षसकी चिन्ता समझनी चाहिए।

चतुष्पद योनिके खुरी, नखी, दन्ती और श्रृंगी ये चार भेद हैं। यदि प्रश्नाक्षरोंमें आ और ऐ स्वर हों तो खुरी; छ और ठ प्रश्नाक्षरोंमें हों तो नखी; थ और फ प्रश्नाक्षरोंमें हों तो दन्ती एवं र और ष प्रश्नाक्षरोंमें हों तो श्रृंगी योनि होती है। खुरी योनिके ग्रामचर और अरण्यचर ये दो भेद हैं। आ, ऐ प्रश्नाक्षरके होनेपर ग्रामचर—घोड़ा, गधा, ऊँट आदि मवेशीकी चिन्ता और ख प्रश्नाक्षर होनेपर वनचारी पशु—रोझ, हरिण, खरगोश आदि पशुओंकी चिन्ता समझनी चाहिए।

नखी योनिके ग्रामचर और अरण्यचर ये दो भेद हैं। प्रश्नवाक्यमें छ प्रश्नाक्षर हो तो ग्रामचर अर्थात् कुत्ता, बिल्ली आदि नखी पशुओंकी चिन्ता और ठ प्रश्नाक्षर हो तो अरण्यचर—व्याघ्र, चीता, सिंह, भालू आदि जंगली जीवोंकी चिन्ता कहनी चाहिए।

दन्ती योनिके दो भेद हैं—ग्रामचर और अरण्यचर। प्रश्नवाक्यमें थ अक्षर हो तो ग्रामचर—शूकर आदि ग्रामीण पालतू दन्ती जीवोंकी चिन्ता और फ अक्षर हो तो अरण्यचर जंगली हाथी, सेही आदि दन्ती पशुओंकी चिन्ता कहनी चाहिए।

श्रृंगी योनिके दो भेद हैं—ग्रामचर और अरण्यचर। प्रश्नवाक्यमें र अक्षर हो तो भैंस, बकरी, गाय, बैल आदि पालतू सींगवाले पशुओंकी चिन्ता एवं ष अक्षर हो तो अरण्यचर—हरिण, कृष्णसार आदि वनचारी सींगवाले पशुओंकी चिन्ता समझनी चाहिए।

अपद योनिके दो भेद हैं—जलचर और थलचर। प्रश्नवाक्यमें इ ओ ग ज ड अक्षर हों तो जलचर—मछली, शंख इत्यादिकी चिन्ता और द ब ल स अक्षर हों तो सांप, मेढक आदि थलचर अपदोंकी चिन्ता समझनी चाहिए।

पादसंकुल योनिके दो भेद हैं—अण्डज और स्वेदज। इ और घ झ ढ ये प्रश्ना-

क्षर अण्डज संज्ञक—भ्रमर, पतंग इत्यादि और ध भ व ह ये प्रश्नाक्षर स्वेदक संज्ञक—जूँ, खटमल आदि हैं।

धातु योनिके भी दो भेद बताये हैं—धाम्य और अधाम्य। त द प ब उ अं स इन प्रश्नाक्षरोंके होनेपर धाम्य धातु योनि और घ थ ध फ ऊ व ए इन प्रश्नाक्षरोंके होनेपर अधाम्य धातु योनि होती है। धाम्य योनिके आठ भेद हैं—सुवर्ण, चाँदी, ताँबा, राँगा, काँसा, लोहा, सीसा और पित्तल। धाम्य योनिके प्रकारान्तरसे दो भेद हैं—घटित और अघटित। उत्तराक्षर प्रश्नवर्णोंमें रहनेपर घटित और अधराक्षर रहनेपर अघटित धातु योनि होती है। घटित धातु योनिके तीन भेद हैं—जीवाभरण—आभूषण, गृहाभरण—बर्तन और नाणक–सिक्के, नोट आदि। अ ए क च ट त प य श प्रश्नाक्षर हों तो द्विपदाभरण—दो पैरवाले जीवोंके आभूषण होते हैं। इसके तीन भेद हैं—देवताभूषण, पक्षिआभूषण और मनुष्याभूषण। मनुष्याभरणके शिरसाभरण, कर्णाभरण, नासिकाभरण, ग्रीवाभरण, हस्ताभरण, जंघाभरण और पादाभरण ये आठ भेद हैं। इन आभूषणोंमें मुकुट, खौर, सीसफूल आदि शिरसाभरण; कानोंमें पहने जानेवाले कुण्डल, एरिंग आदि कर्णाभरण, नाकमें पहनी जानेवाली लौंग, बाली, नथ आदि नासिकाभरण, कण्ठमें पहनी जानेवाली हँसुली, हार, कण्ठी आदि ग्रीवाभरण; हाथोंमें पहने जानेवाले कंकण, अँगूठी, मुदरी, छल्ला, छाप आदि हस्ताभरण; जंघोंमें बाँधे जानेवाले घुँघरू, क्षुद्रघण्टिका आदि जंघाभरण और पैरोंमें पहने जानेवाले बिछुए, छल्ला, पाजेब आदि पादाभरण होते हैं। क ग ङ च ज ञ ट ड ण त द न प ब म य ल श स प्रश्नाक्षरोंके होनेपर मनुष्याभरणकी चिन्ता एवं ख घ छ झ ठ ढ थ ध फ भ र व ष ह प्रश्नाक्षरोंके होनेपर स्त्रियोंके आभूषणोंकी चिन्ता समझनी चाहिए।

उत्तराक्षर प्रश्नवर्णोंके होनेपर दक्षिण अंगका आभूषण और अधराक्षर प्रश्नवर्णोंके होनेपर वाम अंगका आभूषण समझना चाहिए। अ क ख ग घ ङ प्रश्नाक्षरोंके होनेपर या प्रश्नवर्णोंमें उक्त प्रश्नाक्षरोंकी बहुलता होनेपर देवोंके उपकरण—छत्र, चामर आदि अथवा आभूषण (पद्मावती देवी एवं धरणेन्द्र आदि रक्षक देवोंके आभूषण) और त थ द ध न प फ ब भ म इन प्रश्नवर्णोंके होनेपर पक्षियोंके आभूषणोंकी चिन्ता कहनी चाहिए। प्रश्नकर्ताके प्रश्नवाक्यमें प्रथम वर्णकी मात्रा अ इ ए ओ इन चार मात्राओंमें से कोई हो तो जीवाभरणकी चिन्ता; आ ई ऐ औ इन चार मात्राओंमें-से कोई मात्रा हो तो गृहाभरणकी चिन्ता और उ ऊ अं अः इन चार मात्राओंमें-से कोई मात्रा हो तो सिक्के, नोट, रुपये आदिकी चिन्ता समझनी चाहिए। प्रश्नवाक्यके आद्य वर्णकी मात्रा अ आ इन दोनोंमें-से कोई हो तो शिरसाभरणकी चिन्ता; इ ई इन दोनोंमें-से कोई हो तो कर्णाभरण की चिन्ता; उ ऊ इन दोनों मात्राओंमें-से कोई हो तो नासिकाभरणकी चिन्ता; ए मात्राके होनेसे ग्रीवाभरणकी चिन्ता; ऐ मात्राके होनेसे कण्ठाभरणकी चिन्ता; ऋ तथा संयुक्त व्यंजनमें उकारकी मात्रा होनेसे हस्ताभरणकी चिन्ता; ओ औ इन मात्राओंमें-से किसीके होनेपर जंघाभरणकी चिन्ता और अं अः इन दोनों मात्राओंमें-से किसीके होनेपर पादा-

भरणकी चिन्ता समझनी चाहिए।

यदि प्रश्नवाक्यका आद्य वर्ण क ग ङ च ज ञ ट ड ण त द न प ब म य ल श स इन अक्षरोंमें-से कोई हो तो हीरा, माणिक्य, मरकत, पद्मराग और मूंगाकी चिन्ता; ख घ छ झ ठ ढ थ ध फ भ र व ष ह इन अक्षरोंमें-से कोई हो तो हरिताल, शिला, पत्थर आदिकी चिन्ता एवं उ ऊ अं अः इन स्वरोंसे युक्त व्यंजन प्रश्नके आदिमें हो तो शर्करा (चीनी), लवण, बालू आदिकी चिन्ता समझनी चाहिए। यदि प्रश्नवाक्यके आदिमें अ इ ए ओ इन चार मात्राओंमें-से कोई हो तो हीरा, मोती, माणिक्य आदि जवाहरातकी चिन्ता; आ ई ऐ औ इन मात्राओंमें-से कोई हो तो शिला, पत्थर, सीमेण्ट, चूना, संगमरमर आदिकी चिन्ता, एवं उ ऊ अं अः इन मात्राओंमें-से कोई मात्रा हो तो चीनी, बालू आदिकी चिन्ता कहनी चाहिए। मुष्टिका प्रश्नमें मुट्ठीके अन्दर भी इन्हीं प्रश्न विचारोंके अनुसार योनिका निर्णय कर वस्तु कहनी चाहिए।

मूल योनिके चार भेद हैं—वृक्ष, गुल्म, लता और वल्ली। यदि प्रश्नवाक्यके आद्यवर्णकी मात्रा आ हो तो वृक्ष, ई हो तो गुल्म, ऐ हो तो लता और औ हो तो वल्ली समझनी चाहिए। पुनः मूलयोनिके चार भेद कहे गये हैं—बल्कल, पत्ते, फूल और फल। प्रश्नवाक्यके आदिमें, क च ट त वर्णोंके होनेपर बल्कल, ख छ ठ थ वर्णोंके होनेपर पत्ते; ग ज ड द वर्णोंके होनेपर फूल और घ झ ढ ध वर्णोंके होनेपर फलकी चिन्ता कहनी चाहिए। इन चारों भेदोंके भी दो-दो भेद हैं—भक्ष्य और अभक्ष्य। क ग ङ च ज ञ ट ड ण त द न प ब म य ल श स प्रश्न वर्णोंके होनेपर या प्रश्नवाक्यमें उक्त वर्णोंकी अधिकता होनेपर भक्ष्य और ख घ छ झ ठ ढ थ ध फ भ र व ष प्रश्नवर्णोंके होनेपर या प्रश्नवाक्यमें इन वर्णोंकी अधिकता होनेपर अभक्ष्य मूल योनिकी चिन्ता कहनी चाहिए। भक्ष्याभक्ष्यके अवगत हो जानेपर उत्तराक्षर प्रश्नवर्णोंके होनेपर सुगन्धित और अधराक्षर प्रश्नवर्णोंके होनेपर दुर्गन्धित मूल योनिकी चिन्ता समझनी चाहिए। अथवा क च ट त प य श प्रश्न वर्णोंके होनेपर भक्ष्य; ख छ ठ थ फ र ष प्रश्नवर्णोंके होनेपर अभक्ष्य; ग ज ड द ब ल ष प्रश्नवर्णोंके होनेपर सुगन्धित एवं घ झ ढ ध भ व स प्रश्नवर्णोंके होनेपर दुर्गन्धित मूल योनिकी चिन्ता समझनी चाहिए।

उत्तराक्षर प्रश्नवर्णोंके होनेपर आर्द्र मूल योनि, अधराक्षर प्रश्नवर्णोंके होनेपर शुष्क, उत्तराक्षर प्रश्नवर्णोंके होनेपर स्वदेशस्थ, अधराक्षर प्रश्नवर्णोंके होनेपर परदेशस्थ मूल योनि समझनी चाहिए। ङ ञ ण न म प्रश्नाक्षरोंके होनेपर सूखे हुए तृण, काठ, देवदारु, दूब, चन्दन आदि समझने चाहिए। इ और ज प्रश्नवर्णोंके होनेपर शस्त्र और वस्त्र सम्बन्धी मूल योनि कहनी चाहिए।

जीवयोनिसे मानसिक चिन्ता और मुष्टिगत प्रश्नोंके उत्तरोंके साथ चोरकी जाति, अवस्था, आकृति, रूप, कद, स्त्री, पुरुष एवं बालक आदिका पता लगाया जा सकता है। धातु योनिमें चोरी गयी वस्तुका स्वरूप, नाम पृच्छकके बिना कहे भी ज्योतिषी जान सकता है। धातु योनिके विश्लेषणसे कहा जा सकता है कि अमुक प्रकारकी वस्तु चोरी

गयी है या नष्ट हुई है। इन योनियोंके विचार द्वारा किसी भी व्यक्तिकी मनःस्थित विचारधाराका पता सहजमें लगाया जा सकता है।

इस ग्रन्थमें मूक प्रश्नोंके अनन्तर मुष्टिका प्रश्नोंका विचार किया है। यदि प्रश्नाक्षरोंमें पहलेके दो स्वर आलिंगित हों और तृतीय स्वर अभिधूमित हो तो मुट्ठीमें श्वेत रंगकी वस्तु; पूर्वके दो स्वर अभिधूमित हों और तृतीय स्वर दग्ध हो तो पीले रंगकी वस्तु; पूर्वके दो स्वर दग्ध और तृतीय आलिंगित हो तो रक्त-श्याम वर्णकी वस्तु; प्रथम स्वर दग्ध, द्वितीय आलिंगित और तृतीय अभिधूमित हो तो श्याम-श्वेत वर्णकी वस्तु; प्रथम आलिंगित, द्वितीय दग्ध और तृतीय अभिधूमित हो तो काले रंगकी वस्तु एवं प्रथम दग्ध, द्वितीय अभिधूमित और तृतीय आलिंगित स्वर हो तो मुट्ठीमें हरे रंगकी वस्तु समझनी चाहिए। यदि पृच्छकके प्रश्नाक्षरोंमें प्रथम स्वर अभिधूमित, द्वितीय आलिंगित और तृतीय दग्ध हो तो विचित्र वर्णकी वस्तु; तीनों स्वर आलिंगित हों तो कृष्ण वर्णकी विचित्र वस्तु; तीनों दग्ध हों तो नील वर्णकी वस्तु और तीनों अभिधूमित स्वर हों तो कांचन वर्णकी वस्तु समझनी चाहिए।

लाभालाभ सम्बन्धी प्रश्नोंका विचार करते हुए कहा है कि प्रश्नाक्षरोंमें आलिंगित–आ इ ए ओ मात्राओंके होनेपर शीघ्र अधिक लाभ; अभिधूमित—आ ई ऐ औ मात्राओंके होनेपर अल्प लाभ एवं दग्ध—उ ऊ अं अः मात्राओंके होनेपर अलाभ एवं हानि होती है। उ ऊ अं अः इन चार मात्राओंसे संयुक्त क ग ङ च ज ञ ट ड ण त द न प ब म य ल श स ये प्रश्नाक्षर हों तो बहुत लाभ होता है। आ ई ऐ औ मात्राओंसे संयुक्त क ग ङ च ज ञ ट ड ण त द न प ब म य ल श स प्रश्नाक्षरोंके होनेपर अल्प लाभ होता है। अ इ ए ओ मात्राओंसे संयुक्त उपर्युक्त प्रश्नाक्षरोंके होनेपर कष्ट द्वारा अल्पलाभ होता है। अ आ इ ए ओ अः क ख ग घ च छ ज झ ट ठ ड ढ य श ह प्रश्नाक्षर हों तो जीवलाभ और रुपया, पैसा, सोना, चाँदी, मोती, माणिक्य आदिका लाभ होता है। ई ऐ औ ङ ञ ण न म ल र ष प्रश्नाक्षर हों तो लकड़ी, वृक्ष, कुरसी, टेबुल, पलंग आदि वस्तुओंका लाभ होता है।

शुभाशुभ प्रश्न प्रकरणमें प्रधानतया रोगीके स्वास्थ्य लाभ एवं उसकी आयुका विचार किया गया है। प्रश्नवाक्यमें आद्य वर्ण आलिंगित मात्रासे युक्त हो तो रोगीका रोग यत्नसाध्य, अभिधूमित मात्रासे युक्त हो तो कष्टसाध्य और दग्धमात्रासे युक्त हो तो मृत्यु फल समझना चाहिए। पृच्छकके प्रश्नाक्षरोंमें आद्य वर्ण आ ई ऐ औ मात्राओंसे संयुक्त संयुक्ताक्षर हो तो पृच्छक जिसके सम्बन्धमें पूछता है उसकी दीर्घायु कहनी चाहिए। आ ई ऐ औ इन मात्राओंसे युक्त क ग ङ च ज ञ ट ड ण त द न प ब म य ल श स वर्णोंमें-से कोई भी वर्ण प्रश्नवाक्यका आद्यक्षर हो तो लम्बी बीमारी भोगनेके बाद रोगी स्वास्थ्यलाभ करता है। इस प्रकार शुभाशुभ प्रकरणमें विस्तारसे स्वास्थ्य, अस्वास्थ्य, जीवन-मरणका विचार किया गया है।

प्रस्तुत ग्रन्थका महत्त्वपूर्ण प्रकरण नष्ट-जन्मपत्र बनानेका है। इसमें प्रश्नाक्षरों

परसे ही जन्ममास, पक्ष, तिथि और संवत् आदिका आनयन किया गया है। मासानयन करते हुए बताया है कि यदि अ ए क प्रश्नाक्षर हों या प्रश्नवाक्यके आदिमें इनमें-से कोई हो तो फाल्गुन मासका जन्म, च ट प्रश्नाक्षर हों या प्रश्नवाक्यके आदिमें इनमें-से कोई अक्षर हो तो चैत्र मासका जन्म, त प प्रश्नाक्षर हों या प्रश्नवाक्यके आदिमें इनमें-से कोई अक्षर हो तो कार्त्तिक मासका जन्म, य श प्रश्नाक्षर हों या प्रश्नवाक्यके आदिमें इनमें-से कोई अक्षर हो तो मार्गशीर्षका जन्म; आ ऐ ख छ ठ थ फ र ष प्रश्नाक्षर हों या प्रश्नवाक्यके आदिका अक्षर इनमें-से कोई हो तो माघ मासका जन्म; इ ओ ग ज ड द प्रश्नाक्षर हों या इनमें-से कोई भी वर्ण प्रश्नवाक्यके आदिमें हो तो वैशाख मासका जन्म; द ब ल ये प्रश्नाक्षर हों या इनमें-से कोई भी वर्ण प्रश्नवाक्यके आदिमें हो तो ज्येष्ठ मासका जन्म; ई औ घ झ ढ ये प्रश्नाक्षर हों या इनमें-से कोई भी वर्ण प्रश्नवाक्यके आदिमें हो तो आषाढ़ मासका जन्म; ध भ व ह प्रश्नाक्षर हों या इनमें-से कोई भी वर्ण प्रश्नवाक्यके आदिमें हो तो श्रावण मासका जन्म; उ ऊ ङ ण ञ ये प्रश्नाक्षर हों या इनमें-से कोई भी वर्ण प्रश्नवाक्यका आदि अक्षर हो तो भाद्रपद मासका जन्म; न म अं अः ये प्रश्नाक्षर हों या इनमें-से कोई भी वर्ण प्रश्नवाक्यके आदिमें हो तो आश्विन मासका जन्म एवं आ ई ख छ ठ ये प्रश्नाक्षर हों या इनमें-से कोई भी वर्ण प्रश्नवाक्यका आद्यक्षर हो तो पौष मासका जन्म समझना चाहिए। इसी प्रकार आगे पक्ष और तिथिका भी विचार किया है, इस ग्रन्थमें प्रतिपादित विधिसे नष्टजन्मपत्र सरलता पूर्वक बनाया जा सकता है।

इस ग्रन्थमें आगे मूकप्रश्न, मुष्टिकाप्रश्न, लूकाप्रश्न इत्यादि प्रश्नोंके लिए उपयोगी वर्ग पंचाधिकारका वर्णन किया है। क्योंकि प्रश्नाक्षर जिस वर्गके होते हैं, वस्तुका नाम उस वर्गके अक्षरोंपर नहीं होता। इसलिए सिंहावलोकन, गजावलोकन, नंद्यावर्त, मण्डूकप्लवन और अश्वमोहित क्रम ये पाँच प्रकारके सिद्धान्त वर्गाक्षरोंके परिवर्तनमें कार्य करते हैं। इस पंचाधिकारके स्वरूप, गणित और नियमोपनियम आदि आवश्यक बातोंको जानकर प्रश्नोंके रहस्यको अवगत करना चाहिए। इस ग्रन्थके ७२वें पृष्ठसे लेकर अन्त तक सभी वर्गोंके पंचाधिकार दिये गये हैं तथा चक्रोंके आधारपर उनका स्वरूप परिवर्तन भी दिखलाया गया है।

प्रश्न निकालनेकी विधि

यद्यपि प्रश्न निकालनेकी विधिका पहले उल्लेख किया जा चुका है। परन्तु पाठक इस नवीन विषयको सरलता पूर्वक जान सकें; इसलिए संक्षेपमें प्रश्नविधिपर प्रकाश डाला जायगा।

१—जब पृच्छक प्रश्न पूछनेके लिए आवे तो पूर्वोक्त पांचों वर्गोंको एक कागज पर लिखकर उससे अक्षरोंका स्पर्श तीन बार करावे। पृच्छक द्वारा स्पर्श किये गये तीनों अक्षरोंको लिख ले; फिर संयुक्त, असंयुक्त, अभिहत, अनभिहत, अभिघातित, अभिधूमित, आलिंगित और दग्ध इन संज्ञाओं द्वारा तथा अधरोत्तर, वर्गोत्तर और वर्ग संयुक्त अधर इन ग्रन्थोक्त संज्ञाओं द्वारा प्रश्नोंका विचार कर उत्तर दे।

२—वर्णमालाके अक्षरोंमें-से पृच्छक से कोई भी तीन अक्षर पूछे। पश्चात् उसके प्रश्नाक्षरोंको लिखकर ग्रन्थोक्त पाँचों वर्गोंके अक्षरोंसे मिलान करे तथा संयुक्त, असंयुक्त आदि संज्ञाओं द्वारा फलका विचार करे।

३—पृच्छकके आनेपर किसी अबोध बालकसे अक्षरोंका स्पर्श करावें या वर्ण-मालाके अक्षरोंमें-से तीन अक्षरोंका नाम पूछे; पश्चात् उस अबोध शिशु द्वारा बताये गये अक्षरों को प्रश्नाक्षर मानकर प्रश्नोंका विचार करे।

४—पृच्छक आते ही जिस वाक्यसे बातचीत आरम्भ करे; उसी वाक्यको प्रश्नवाक्य मानकर संयुक्त, असंयुक्त आदि संज्ञाओं द्वारा प्रश्नोंका फलाफल ज्ञात करे।

५—प्रातःकालमें पृच्छकके आनेपर उससे किसी पुष्पका नाम, मध्याह्नकालमें फलका नाम, अपराह्णकालमें देवताका नाम और सायंकालमें नदी या पहाड़का नाम पूछ-कर प्रश्नवाक्य ग्रहण करना चाहिए। इस प्रश्नवाक्य-परसे संयुक्त, असंयुक्त आदि संज्ञाओं द्वारा प्रश्नोंका फलाफल अवगत करना चाहिए।

६—पृच्छककी चर्या, चेष्टा जैसी हो, उसके अनुसार प्रश्नोंका फलाफल बतलाना चाहिए।

७—प्रश्नलग्न निकालकर उसके आधारसे प्रश्नोंके फल बतलाने चाहिए।

८—पृच्छकसे किसी अंक संख्याको पूछकर उसपर गणित क्रिया द्वारा प्रश्नोंका फलाफल अवगत करना चाहिए।

ग्रन्थका बहिरंग रूप

उपयोगी प्रश्न—पृच्छकसे किसी फलका नाम पूछना तथा कोई एक अंकसंख्या पूछनेके पश्चात् अंकसंख्याको द्विगुणा कर फल और नामके अक्षरोंकी संख्या जोड़ देनी चाहिए। जोड़नेके पश्चात् जो योग संख्या आवे, उसमें १३ जोड़कर योगमें नौका भाग देना चाहिए। १ शेषमें धनवृद्धि, २ में धनक्षय, ३ में आरोग्य, ४ में व्याधि, ५ में स्त्री-लाभ, ६ में बन्धुनाश, ७ में कार्यसिद्धि, ८ में मरण और ९ में राज्यप्राप्ति होती है।

कार्यसिद्धि-असिद्धिका प्रश्न—पृच्छकका मुख जिस दिशामें हो उस दिशाकी अंकसंख्या (पूर्व १, पश्चिम २, उत्तर ३, दक्षिण ४), प्रहरसंख्या (जिस प्रहरमें प्रश्न किया गया है उसकी संख्या, तीन-तीन घण्टेका एक प्रहर होता है। प्रातःकाल सूर्योदयसे तीन घण्टे तक प्रथम प्रहर, आगे तीन-तीन घण्टे पर एक-एक प्रहरकी गणना कर लेनी चाहिए।), वारसंख्या (रविवार १, सोमवार २, मंगलवार ३, बुधवार ४, बृहस्पति ५, शुक्र ६, शनि ७) और नक्षत्रसंख्या (अश्विनी १, भरणी २, कृत्तिका ३ इत्यादि गणना) को जोड़कर योगफलमें आठका भाग देना चाहिए। एक अथवा पांच शेष रहे तो शीघ्र कार्यसिद्धि; छह अथवा चार शेषमें तीन दिनमें कार्यसिद्धि; तीन अथवा सात शेष में विलम्बसे कार्यसिद्धि एवं एक अथवा आठ शेष में कार्य असिद्धि होती है।

पृच्छकसे एकसे लेकर एक सौ आठ अंकके बीचकी एक अंकसंख्या पूछनी चाहिए।

इस अंकसंख्यामें १२ का भाग देनेपर १।७।९ शेष बचे तो विलम्बसे कार्यसिद्धि, ८।४। १०।५ शेषमें कार्यनाश एवं २।६।११।० शेषमें शीघ्र कार्यसिद्धि होती है।

३—पृच्छकसे किसी फूलका नाम पूछकर उसकी स्वरसंख्याको व्यंजन संख्यासे गुणा कर दे; गुणनफलमें पृच्छकके नामके अक्षरोंकी संख्या जोड़कर योगफलमें ९ का भाग दे। एक शेषमें शीघ्र कार्यसिद्धि; २।५।० में विलम्बसे कार्यसिद्धि और ४।६।८ शेषमें कार्यनाश तथा अवशिष्ट शेषमें कार्य मन्दगतिसे होता है।

४—पृच्छकके नामके अक्षरोंको दो से गुणाकर गुणनफलमें ७ जोड़ दे। इस योगमें ३ का भाग देनेपर सम शेषमें कार्यनाश और विषम शेषमें कार्यसिद्धि फल कहना चाहिए।

५—पृच्छकसे एकसे लेकर नौ तककी अंकसंख्यामें-से कोई भी अंक पूछना चाहिए। बतायी गयी अंक संख्याको उसके नामको अक्षरसंख्यासे गुणा कर देना चाहिए। इस गुणनफल में तिथिसंख्या और प्रहरसंख्या जोड़ देनी चाहिए। तिथिकी गणना शुक्लपक्ष की प्रतिपदासे होती है, अतः शुक्लपक्षकी प्रतिपदाकी संख्या १, द्वितीयाकी २ इसी प्रकार अमावास्याकी ३० संख्या मानी जाती है। वारसंख्या रविवारको १, सोमवारको २, मंगलको ३ इसी प्रकार उत्तरोत्तर बढ़ती हुई शनिको ७ मानी जाती है। उपर्युक्त योग संख्यामें ८ का भाग देनेपर ०।७।१ शेषमें कार्य असिद्धि, मतान्तरसे ७।१ में विलम्बसे सिद्धि; २।६।४ शेषमें सिद्धि; ३।५ शेषमें कुछ विलम्बसे सिद्धि होती है।

६—निम्न चक्र बनाकर पृच्छकसे अंगुली रखवाना चाहिए। यदि पृच्छक ८।२ अंक पर अंगुली रखे तो कार्याभाव; ४।६ पर अंगुली रखे तो कार्यसिद्धि; ७।३ पर अंगुली रखे तो विलम्बसे कार्यसिद्धि एवं १।५।९ पर अंगुली रखे तो शीघ्र ही कार्यसिद्धि फल कहना चाहिए।

७—पृच्छक यदि ऊपरको देखता हुआ प्रश्न करे तो कार्यसिद्धि और जमीनकी ओर देखता हुआ प्रश्न करे तो कार्यकी असिद्धि होती है। अपने शरीरको खुजलाता हुआ प्रश्न करे तो विलम्बसे कार्यसिद्धि; जमीन खरोंचता हुआ प्रश्न करे तो कार्य असिद्धि एवं इधर-उधर देखता हुआ प्रश्न करे तो विलम्बसे कार्य-सिद्धि होती है।

८—मेष, मिथुन, कन्या और मीन लग्नमें प्रश्न किया गया हो तो कार्यसिद्धि; तुला, कर्क, सिंह और वृष लग्नमें प्रश्न किया हो तो विलम्बसे सिद्धि एवं वृश्चिक, धनु, मकर और कुम्भ लग्नमें प्रश्न किया गया हो तो प्रायः असिद्धि; मतान्तरसे धनु और कुम्भ लग्नमें कार्यसिद्धि होती हैं। मकर लग्नमें प्रश्न करनेपर कार्यसिद्धि नहीं होती। लग्नके अनुसार प्रश्नका विचार करनेपर ग्रह दृष्टिका विचार कर लेना भी आवश्यक-सा है। अतः दशम भाव और पंचम भावके सम्बन्धका विचारकर फल कहना चाहिए।

९—पिण्ड बनाकर इस ग्रन्थके विवेचनमें २३वें पृष्ठपर प्रतिपादित विधिसे कार्यसिद्धिके प्रश्नोंका विचार करना चाहिए।

लाभालाभ प्रश्न—पृच्छकसे एकसे लेकर इक्यासी तककी अंकसंख्यामें-से कोई एक अंकसंख्या पूछनी चाहिए। उसकी अंकसंख्याको २ से गुणाकर नामके अक्षरोंकी संख्या जोड़ देनी चाहिए। इस योगफलमें ३ का भाग देनेपर दो शेषमें लाभ, एक शेषमें अल्प लाभ, कष्ट अधिक और शून्य शेषमें हानि फल कहना चाहिए।

२—लाभालाभके प्रश्नमें पृच्छकसे किसी नदीका नाम पूछना चाहिए। यदि नदीके नामके आद्यक्षरमें अ इ ए ओ मात्राएँ हों तो बहुत लाभ; आ ई ऐ औ मात्राएँ हों तो अल्प लाभ एवं उ ऊ अं अः ये मात्राएँ हों तो हानि फल कहना चाहिए।

३—पृच्छकके नामाक्षरकी मात्राओंको नामाक्षरके व्यंजनोंसे गुणाकर दो का भाग देना चाहिए। एकमें लाभ और शून्य शेषमें हानि फल समझना चाहिए।

४—पृच्छकके प्रश्नाक्षरोंसे आलिंगितादि संज्ञाओंमें जिस संज्ञाकी मात्राएँ अधिक हों, उन्हें तीन स्थानोंमें रखकर एक जगह आठसे, दूसरी जगह चौदहसे और तीसरी जगह चौबीससे गुणाकर तीनों गुणनफल राशियोंमें सातका भाग देना चाहिए। यदि तीनों स्थानोंमें सम शेष बचे तो अपरिमित लाभ; दो स्थानोंमें सम शेष और एक स्थानमें विषम शेष बचे तो साधारण लाभ और एक स्थानमें सम शेष तथा अन्य दो स्थानोंमें विषम शेष रहें तो अल्प लाभ होता है। तीनों स्थानोंमें विषम शेष रहनेसे निश्चित हानि होती है।

चोरी गयी वस्तुकी प्राप्तिका प्रश्न—पृच्छक जिस दिन पूछने आया हो उस तिथिकी संख्या, वार संख्या, नक्षत्र संख्या और लग्न संख्या (जिस लग्नमें प्रश्न किया हो उसकी संख्या, ग्रहण करनी चाहिए। मेषमें १, वृषमें २, मिथुनमें ३, कर्कमें ४ आदि) को जोड़ देना चाहिए। इस योगफलमें तीन और जोड़कर जो संख्या आवे उसमें पाँचका भाग देना चाहिए। एक शेष बचे तो चोरी गयी वस्तु पृथ्वीमें, दो बचे तो जलमें, तीन बचे तो आकाशमें (ऊपर किसी स्थानपर रखी हुई), चार बचे तो राज्यमें (राज्यके किसी कर्मचारीने ली है) और पाँच बचे तो ऊबड़-खाबड़ जमीनमें नीचे खोदकर रखी हुई कहना चाहिए।

पृच्छकके प्रश्न पूछनेके समय स्थिर लग्न—वृष, सिंह, वृश्चिक, कुम्भ हो तो चोरी गयी वस्तु घरके समीप; चर लग्न—मेष, कर्क, तुला, मकर हों तो चोरी गयी वस्तु घरसे दूर किसी बाहरी आदमीके पास; द्विस्वभाव—मिथुन, कन्या, धनु, मीन हों तो कोई सामान्य परिचित नौकर, दासी आदि चोर होता है। यदि लग्नमें चन्द्रमा हो तो चोरी गयी वस्तु पूर्व दिशामें, दशममें चन्द्रमा हो तो दक्षिण दिशामें, सप्तम स्थानमें चन्द्रमा हो तो पश्चिम दिशा में और चतुर्थ स्थान में चन्द्रमा हो तो खोयी वस्तु अथवा चोरका निवासस्थान उत्तर दिशामें जानना चाहिए। लग्न पर सूर्य और चन्द्रमा दोनोंकी दृष्टि हो तो अपने ही घरका चोर होता है।

पृच्छककी मेष लग्न राशि हो तो ब्राह्मण चोर, वृष हो तो क्षत्रिय चोर, मिथुन हो तो वैश्य चोर, कर्क हो तो शूद्र चोर, सिंह हो तो अन्त्यज चोर, कन्या हो तो स्त्री

चोर, तुला हो तो पुत्र, भाई अथवा मित्र चोर, वृश्चिक हो तो सेवक चोर, धनु हो तो भाई अथवा स्त्री चोर, मकर हो तो वैश्य चोर, कुम्भ हो तो चूहा चोर और मीन लग्न राशि हो तो पृथ्वीके नीचे चोरी गयी वस्तु होती है। चरलग्न—मेष, कर्क, तुला, मकर हों तो चोरी गयी वस्तु किसी अन्य स्थानपर, स्थिर—वृष, सिंह, वृश्चिक, कुम्भ हों तो उसी स्थानपर (घरके भीतर ही) चोरी गयी वस्तु और द्विस्वभाव—मिथुन, कन्या, धनु, मीन हों तो घरके आस-पास बाहर कहीं चोरी गयी वस्तु होती है। मेष, कर्क, तुला और मकर लग्न राशियोंके होनेपर चोरका नाम दो अक्षरका; वृष, सिंह, वृश्चिक और कुम्भ राशियोंके होने पर चोरका नाम चार अक्षरोंका एवं मिथुन, कन्या, धनु और मीन लग्न राशियोंके होनेपर चोरका नाम तीन अक्षरोंका होता है।

अन्ध संज्ञक नक्षत्रोंमें वस्तुकी चोरी हुई हो तो शीघ्र मिलती है। मन्दलोचन संज्ञक नक्षत्रोंमें चोरी गयी वस्तु प्रयत्न करनेसे मिलती है। मध्यलोचन संज्ञक नक्षत्रोंमें चोरी गयी वस्तु प्रयत्न करनेसे मिलती है। मध्यलोचन संज्ञक नक्षत्रोंमें चोरी गयी या खोयी हुई वस्तुका पता बहुत दिनोंमें लगता है। सुलोचन संज्ञक नक्षत्रोंमें चोरी गयी वस्तु कभी नहीं मिलती। अन्ध नक्षत्रोंमें चोरी गयी या खोयी हुई वस्तु पूर्व दिशामें; काण संज्ञक नक्षत्रोंमें दक्षिण दिशामें; चिपट संज्ञक नक्षत्रोंमें पश्चिम दिशामें एवं सुलोचन संज्ञक नक्षत्रोंमे चोरी गयी वस्तु उत्तर दिशामें होती है। मघा, पूर्वाफाल्गुनी और उत्तरा फाल्गुनी नक्षत्रोंमें खोयी वस्तु घरके भीतर; हस्त, चित्रा, स्वाती, विशाखा, अनुराधा, ज्येष्ठा, मूल, पूर्वाषाढ़ा, उत्तराषाढ़ा, श्रवण और घनिष्ठा नक्षत्रोंमें खोयी वस्तु घरसे दूर—४,७,१०,२५,३०,४५,१७ २१,३४,४३,२३ और २४ कोशकी दूरी पर; शतभिषा, पूर्वाभाद्रपद, उत्तराभाद्रपद, रेवती, अश्विनी और भरणी नक्षत्रोंमें खोयी वस्तु घरमें या घरके आस-पास पड़ोसमें ५० गजकी दूरी पर एवं कृत्तिका, रोहिणी, मृगशिर, आर्द्रा, पुनर्वसु, पुष्य और आश्लेषा नक्षत्रोंमें खोयी वस्तु बहुत दूर चली जाती है और कभी नहीं मिलती।

अन्ध-मन्दलोचनादि नक्षत्र संज्ञा बोधक चक्र

रो०	पुष्य	उफा०	वि०	पूषा०	ध०	रे०	अन्ध लोचन
मृ०	आश्ले०	ह०	अनु०	उषा०	श०	अ०	मन्दलोचन या चिपटलोचन
आ०	म०	चि०	ज्ये०	अभि०	पूभा०	भ०	मध्यलोचन या काणलोचन
पुन०	पूफा०	स्वा०	मू०	श्र०	उभा०	कृ०	सुलोचन

यदि प्रश्नकर्त्ता कपड़ोंके भीतर हाथ छिपा कर प्रश्न करे तो घरका ही चोर, और बाहर हाथ कर प्रश्न करे तो बाहरके व्यक्तिको चोर समझना चाहिए। चोरका

स्वरूप, आयु, कद एवं अन्य बातें अवगत करनेके लिए इस ग्रन्थका ४५वाँ पृष्ठ तथा योनि विचार प्रकरण देखना चाहिए ।

प्रवासी-आगमन सम्बन्धी प्रश्न—प्रश्नाक्षरोंकी संख्याको ११से गुणा कर देना चाहिए । इस गुणनफलमें ८ जोड़ देनेपर जो योगफल आवे उसमें ७ से भाग देना चाहिए । एक शेष रहने पर परदेशी परदेशमें सुख पूर्वक निवास करता है; दो में आने की चिन्ता करता है, तीन शेषमें रास्तेमें आता है, चार शेषमें गाँवके पास आया हुआ होता है, पाँच शेषमें परदेशी व्यर्थ इधर-उधर मारा-मारा घूमता रहता है, छह शेष में कष्टमें रहता है और सात शेषमें रोगी अथवा मृत्यु शय्या पर पड़ा रहता है ।

२—प्रश्नाक्षर संख्याको छह से गुणा कर, गुणनफलमें आठ जोड़ देना चाहिए । इस योगफलमें सातसे भाग देने पर यदि एक शेष रहे तो परदेशीकी मृत्यु, दो शेष रहने पर धन-धान्यसे पूर्ण सुखी, तीन शेष रहने पर कष्टमें, चार शेष रहने पर आनेवाला, पाँच शेष रहने पर शीघ्र आनेवाला, छह शेष रहने पर रोगसे पीड़ित तथा मानसिक सन्तापसे दग्ध एवं सात शेषमें प्रवासीका मरण या महा कष्ट फल कहना चाहिए ।

३—प्रश्नाक्षर संख्याको छह से गुणा कर, उसमें एक जोड़ दे । योगफलमें सात-का भाग देनेपर एक शेष रहे तो प्रवासी आधे मार्गमें, दो शेष रहे तो घरके समीप, तीन शेष रहे तो घरपर, चार शेष रहे तो सुखी, धन-धान्य पूर्ण; पाँच शेष रहे तो रोगी; छह शेष रहे तो पीड़ित एवं सात अर्थात् शून्य शेष रहने पर आनेके लिए उत्सुक रहता है ।

गर्भिणीको पुत्र या कन्या प्राप्तिका प्रश्न—जब यह पूछनेके लिए पृच्छक आवे कि अमुक गर्भवती स्त्रीको पुत्र होगा या कन्या, तो गर्भिणीके नामके अक्षर संख्यामें वर्तमान तिथि तथा पन्द्रह जोड़कर नौ का भाग देनेसे यदि सम अंक शेष रहे तो कन्या और विषम अंक शेष रहे तो पुत्र होता है ।

२—पृच्छककी प्रश्न तिथिको शुक्लपक्षकी प्रतिपदासे गिनकर तिथि, प्रहर, वार, नक्षत्रका योग कर देना चाहिए । इस योगफलमें-से एक घटाकर सातका भाग देनेसे विषम अंक शेष रहनेपर पुत्र और सम अंक शेष रहनेपर कन्या होती है ।

३—पृच्छकके तिथि, वार, नक्षत्रमें गर्भिणीके अक्षरोंको जोड़कर सातका भाग देनेसे एक आदि शेषमें रविवार आदि होते हैं । रवि, भौम और गुरुवार निकलें तो पुत्र, शुक्र, चद्र और बुधवार निकलें तो कन्या एवं शनिवार आवे तो गर्भस्राव अथवा उत्पत्तिके अनन्तर सन्तानकी मृत्यु होती है ।

४—गर्भिणीके नामके अक्षरोंमें २० का अंक, पूछनेकी तिथि (शुक्लपक्षकी प्रतिपदासे एकादि गणना कर) तथा ५ जोड़कर जो योग आवे उसमें-से एक घटा कर नौका भाग देनेपर सम अंक शेष रहे तो कन्या और विषम अंक शेष रहे तो पुत्र होता है ।

५—गर्भिणीके नामके अक्षरोंकी संख्याको तिगुनाकर स्थान (जिस गाँवमें

रहती हो, उसके नाम) की अक्षर संख्या, पूछनेके दिनकी तिथिसंख्या तथा सात और जोड़कर सबका योग कर लेना चाहिए। इस योगफलमें आठका भाग देनेपर सम शेष बचे तो कन्या और विषम बचे तो पुत्र होता है।

रोगीप्रश्न—रोगीके रोगका विचार प्रश्नकुण्डली[1] में सप्तम भावसे करना चाहिए। यदि सप्तम भावमें शुभग्रह हो तो जल्द रोग शान्त होता है, और अशुभ ग्रह हो तो विलम्बसे रोग शान्त होता है।

१—रोगीके नामके अक्षरोंको तीनसे गुणाकर ४ युक्त करे, जो योगफल आवे उसमें तीनका भाग दे। एक शेष रहे तो जल्द आरोग्य लाभ, दो शेषमें बहुत दिन तक रोग रहता है और शून्य शेषमें मृत्यु होती है। प्रश्नकुण्डलीमें अष्टम स्थानमें शनि, राहु, केतु और मंगल हों तो भी रोगी की मृत्यु होती है।

मुष्टिप्रश्न—प्रश्नके समय मेष लग्न हो तो मुट्ठीमें लाल रंग की वस्तु, वृष लग्न हो तो पीले रंगकी वस्तु, मिथुन हो तो नीले रंगकी वस्तु, कर्क हो तो गुलाबी रंगकी, सिंह हो तो धूम्र वर्णकी, कन्यामें नीले वर्णकी, तुलामें पीले वर्णकी, वृश्चिकमें लाल, धनुमें पीले वर्णकी, मकर और कुम्भमें कृष्ण वर्णको और मीनमें पीले रंगकी वस्तु होती है। इस प्रकार लग्नेशके अनुसार वस्तुके स्वरूपका प्रतिपादन करना चाहिए।

मूकप्रश्न—प्रश्नके समय मेष लग्न हो तो प्रश्नकर्त्ताके मनमें मनुष्योंकी चिन्ता, वृष लग्न हो तो चौपायोंकी, मिथुन हो तो गर्भकी, कर्क हो तो व्यवसायकी, सिंह हो तो अपनी, कन्या हो तो स्त्री की, तुला हो तो धनकी, वृश्चिक हो तो रोगकी, धनु हो तो शत्रुकी, कुम्भ हो तो स्थान और मीन हो तो देव-सम्बन्धी चिन्ता जाननी चाहिए।

मुकदमा सम्बन्धी प्रश्न—प्रश्न लग्न-लग्नेश, दशम-दशमेश तथा पूर्णचन्द्र बलवान्, शुभ ग्रहोंसे युक्त, दृष्ट होकर परस्पर मित्र तथा 'इत्थशाल' आदि योग करते हों और सप्तम-सप्तमेश तथा चतुर्थ चतुर्थेश हीन बली होकर 'मणऊ' आदि अनिष्ट योग करते हों तो प्रश्नकर्त्ताको मुकद्दमेमें यशपूर्वक विजय लाभ होता है।

२—पापग्रह लग्नमें हों तो पृच्छक की विजय होती है। यदि लग्न और सप्तम इन दोनोंमें पापग्रह हों तो पृच्छककी विशेष प्रयत्न करनेपर विजय होती है।

३—प्रश्न लग्नमें सूर्य और अष्टम भावमें चन्द्रमा हो तथा इन दोनोंपर शनि मंगल की दृष्टि हो तो पृच्छककी निश्चय हार होती है।

४—यदि बुध, गुरु, सूर्य और शुक्र क्रमशः प्रश्नकुण्डलीमें ५।४।१।१० में हों और शनि मंगल लाभ स्थानमें हों तो मुकद्दमेमें विजय मिलती है।

५—पृच्छकके प्रश्नाक्षरोंको पाँचसे गुणाकर गुणनफलमें तिथि, वार, नक्षत्र,

---

१. प्रश्नकुण्डली बनानेकी विधि इसी ग्रन्थके प्रारम्भमें दी गयी है। अथवा परिशिष्टमें दी गयी जन्मकुण्डली की विधिसे प्रश्नकुण्डलीका निर्माण करना चाहिए।

प्रहरकी संख्या जोड़ देनी चाहिए। योगफलमें सातका भाग देनेपर एक शेषमें सम्मानपूर्वक विजय लाभ, दो में पराजय, तीनमें कष्टसे विजय, चार शेषमें व्ययपूर्वक विजय, पाँच शेषमें व्यय सहित पराजय, छह शेषमें पराजय और शून्य शेषमें प्रयत्नपूर्वक विजय मिलती है।

६—पृच्छकसे किसी फूलका नाम पूछकर उसके स्वरोंको व्यंजन संख्यासे गुणा कर तीनका भाग देने पर दो शेषमें विजय और एक तथा शून्य शेषमें पराजय होती है।

ग्रन्थकार

इस ग्रन्थके रचयिता समन्तभद्र बताये गये हैं। ग्रन्थकर्त्ताका नाम ग्रन्थके मध्य या किसी प्रशस्तिवाक्यमें नहीं आया है। प्रारम्भमें मंगलाचरण भी नहीं है। अन्तमें प्रशस्ति भी नहीं आयी है, जिससे ग्रन्थकर्त्ताके नामका निर्णय किया जा सके तथा उसके सम्बन्धमें विशेष जानकारी प्राप्त की जा सके। केवल ग्रन्थारम्भमें लिखा है—"श्री समन्तभद्रविरचितकेवलज्ञानप्रश्नचूडामणिः'। मूडबिद्री से प्राप्त ताड़पत्रीय प्रति के अन्त में भी 'समन्तभद्रविरचितकेवलज्ञानप्रश्नचूडमणिः समाप्तः' ऐसा उल्लेख मिलता है। अतः यह निर्विवादरूप से स्वीकार करना पड़ता है कि इस ग्रन्थ के रचयिता समन्तभद्र ही हैं।

यह समन्तभद्र कौन हैं ? इन्होंने अपने जन्मसे किस स्थानको कब सुशोभित किया है ? इनके गुरु कौन थे ? इन्होंने कितने ग्रन्थोंका निर्माण किया है ? आदि बातोंके सम्बन्धमें निश्चितरूपसे कुछ भी नहीं कहा जा सकता है। समन्तभद्र नामके कई व्यक्ति हुए हैं, जिन्होंने जैनागमकी श्रीवृद्धि करनेमें सहयोग दिया है। तार्किक-शिरोमणि सुप्रसिद्ध श्रीस्वामी समन्तभद्र तो इस ग्रन्थके रचयिता नहीं हैं। हाँ, एक समन्तभद्र जो अष्टांगनिमित्तज्ञान और आयुर्वेदके पूर्ण ज्ञाता थे, जिन्होंने साहित्य शास्त्रका पूर्ण परिज्ञान प्राप्त किया था, इस शास्त्रके रचयिता माने जा सकते हैं।

प्रतिष्ठातिलकमें कविवर नेमिचन्द्रने जो अपनी वंशावली बतायी है, उससे केवलज्ञानप्रश्नचूड़ामणिके रचयिताके जीवनपर कुछ प्रकाश पड़ता है। वंशावलीमें बताया गया है कि कर्मभूमिके आदिमें भगवान् ऋषभदेवके पुत्र श्रीभरत चक्रवर्तीने ब्राह्मण नामकी जाति बनायी। इस जातिके कुछ विवेकी, चारित्रवान्, जैनधर्मानुयायी ब्राह्मण कांची नामके नगरमें रहते थे। इस वंशके लोग देवपूजा, गुरुवन्दना, स्वाध्याय, संयम, तप और दान इन षट् कर्मोंमें प्रवीण थे; श्रावक की ५३ क्रियाओंका भली भाँति पालन करते थे। इस वंशके ब्राह्मणोंको विशाखाचार्यने उपासकाध्ययनांगकी शिक्षा दी थी; जिससे वे श्रावकाचारका पालन करनेमें तनिक भी त्रुटि नहीं करते थे। जैनधर्ममें उनकी प्रगाढ़ श्रद्धा थी; राजा-महाराजाओं द्वारा स्तुत्य थे। इस वंशके निर्मलबुद्धिवाले कई ब्राह्मणोंने दिगम्बरीय दीक्षा धारण की थी। इस प्रकार इस कुलमें व्रतपालन करनेवाले अनेक ब्राह्मण हुए।

कालान्तरमें इसी कुलमें भट्टाकलंक स्वामी हुए। इन्होंने अपने वचनरूपी वज्र द्वारा वादियोंके गर्वरूपी पर्वतको चूर-चूर किया था। इनके ज्ञानकी यशोपताका दिग्-दिगन्तमें फहरा रही थी। इसके पश्चात् इसी वंशमें सिद्धान्तपारगामी, सर्वशास्त्रोपदेशक इन्दनन्दी नामके आचार्य हुए। अनन्तर इस वंशमें अनन्तवीर्य नामके मुनि हुए। यह अकलंक स्वामीके कार्यों को प्रकाशमें लानेके लिए दीपवर्त्तिकाके समान थे। पश्चात् इस वंशरूपी पर्वत पर वीरसेन नामक सूर्यका उदय हुआ, जिसके प्रकाशसे जैनशासनरूपी आकाश प्रकाशित हुआ।

इस वंशमें आगे जिनसेन, वादीभसिंह, हस्तिमल्ल, परवादिमल्ल आदि कई नरपुंगव हुए, जिन्होंने जैन शासनकी प्रभावना की। पश्चात् इस वंशमें ऐसे बहुत-से ब्राह्मण हुए, जिन्होंने श्रावकाचार या मुनि आचारका पालन कर अपना आत्मकल्याण किया था।

आगे इस वंशमें लोकपालाचार्य नामक विद्वान् हुए। यह गृहस्थाचार्य थे, फिर भी संसारसे विरक्त रहा करते थे। इनका सम्मान चोल राजा करते थे। यह किसी कारण कांचीको छोड़कर बन्धु-बान्धव सहित कर्नाटक देशमें आकर रहने लगे। इनका पुत्र तर्कशास्त्रका पारगामी, कुशाग्रबुद्धि समयनाथ नामका था। समयनाथका पुत्र कवि-शिरोमणि, आशुकवि कविराजमल्ल नामका था। इसका चतुर विद्वान् पुत्र चिन्तामणि नामका था। चिन्तामणिका पुत्र घटवादमें निपुण अनन्तवीर्य नामका हुआ। इसका पुत्र संगीतशास्त्रमें निपुण पार्यनाथ नामका हुआ। पार्यनाथका पुत्र आयुर्वेदमें प्रवीण आदि-नाथ नामक हुआ। इसका पुत्र धनुर्विद्यामें प्रवीण ब्रह्मदेव नामका हुआ। इसका पुत्र देवेन्द्र नामका हुआ। यह देवेन्द्र संहिता शास्त्रमें निपुण, कलाओंमें प्रवीण, राजमान्य, जिनधर्माराधक, त्रिवर्गलक्ष्मी सम्पन्न और बन्धुवत्सल था। इसकी स्त्रीका नाम आदिदेवी था। इस आदिदेवीके पिताका नाम विजयप और माताका नाम श्रीमती था। आदिदेवी-के ब्रह्मसूरि, चन्दपार्य और पार्श्वनाथ ये तीन भाई थे। देवेन्द्र और आदिदेवीके आदिनाथ, नेमिचन्द्र और विजयप ये तीन पुत्र हुए। आदिनाथ संहिताशास्त्रमें पारगामी था, इसके त्रैलोक्यनाथ और जिनचन्द्र नामके दो पुत्र हुए।

विजयप ज्योतिषशास्त्रका पारगामी था। इस विजयपका साहित्य, ज्योतिप, वैद्यक आदि विषयोंका ज्ञाता समन्तभद्र नामका पुत्र था। केवलज्ञानप्रश्नचूडामणिका कर्त्ता यही समन्तभद्र मुझे प्रतीत होता है। ज्योतिष शास्त्रका ज्ञान इन्हें परम्परागत भी प्राप्त हुआ होगा। विजयपके ग्रन्थ भी चन्द्रोन्मीलन प्रणाली पर हैं। आयसद्भाव-में विजयपका नाम भी आया है। प्रतिष्ठातिलकमें समन्तभद्रका उल्लेख निम्न प्रकार हुआ है—

"धीमान् विजयपाख्यस्तु ज्योतिःशास्त्रादिकोविदः।
समन्तभद्रस्तत्पुत्रः साहित्यरससान्द्रधीः॥"

प्रतिष्ठातिलकके उक्त कथनका समर्थन कल्याणकारककी प्रशस्तिसे भी होता है। इस प्रशस्तिमें समन्तभद्रको अष्टांग आयुर्वेदका प्रणेता बतलाया है। मेरा अनुमान है कि यह समन्तभद्र आयुर्वेदके साथ ज्योतिष शास्त्रके भी प्रणेता थे। इन्होंने अपने पिता विजयपसे ज्योतिपका ज्ञान प्राप्त किया था। कल्याण कारकके रचयिता उग्रादित्यने कहा है—

"अष्टाङ्गमप्यखिलमत्र समन्तभद्रैः प्रोक्तं स्वविस्तरवचोविभवैर्विशेषात्।
संक्षेपतो निगदितं तदिहात्मशक्त्या कल्याणकारकमशेषपदार्थयुक्तम्॥"

सेनगणकी पट्टावलीमें तथा श्रवणबेलगोलके शिलालेखोंमें भी समन्तभद्र नामके दो-तीन विद्वानोंका उल्लेख मिलता है। परन्तु विशेष परिचयके बिना यह निर्णय करना बहुत कठिन है कि इस ग्रन्थके रचयिता समन्तभद्र कौनसे हैं? वंशपरम्पराको देखते हुए प्रतिष्ठातिलकके रचयिता नेमिचन्द्रके भाई विजयपके पुत्र समन्तभद्र ही प्रतीत होते हैं। शृंगारार्णवचन्द्रिकामें भी विजयवर्णीने एक समन्तभद्रका महाकवीश्वरके रूपमें उल्लेख किया है; पर यह समन्तभद्र प्रस्तुत ग्रन्थके रचयिता नहीं जँचते। यह तो आयुर्वेद और ज्योतिषके ज्ञाता उक्त समन्तभद्र ही हो सकते हैं।

केवलज्ञानप्रश्नचूडामणिका रचनाकाल

इस ग्रन्थमें इसके रचनाकालका कहीं भी निर्देश नहीं है। अनुमानके आधार-पर ही इसके रचनाकालके सम्बन्धमें कुछ भी कहा जा सकता है। चन्द्रोन्मीलनप्रश्न-प्रणालीका प्रचार ९वीं शतीसे लेकर १३-१४वीं शती तक रहा है। यदि विजयपके पुत्र समन्तभद्रको इस ग्रन्थका रचयिता मान लेते हैं तो इसका रचना समय १३वीं शती का मध्य भाग होना चाहिए। विजयपके भाई नेमिचन्द्रने प्रतिष्ठातिलककी रचना आनन्द नामके संवत्सरमें चैत्र मास की पंचमीको की है। इस आधार पर इसका रचनाकाल १३वीं शती होता है। केवलज्ञानप्रश्नचूडामणिमें जो प्राचीन गाथाएँ उद्धृत की गयी हैं, उनके मूल ग्रन्थका पता कहीं भी नहीं लगता है। पर उनकी विषयप्रतिपादन शैली ९-१० शतीसे पीछेकी प्रतीत नहीं होती है। प्रतिष्ठातिलकमें दी गयी प्रशस्तिके आधार-पर विजयपका समय १२वीं शती आता है।

दक्षिणभारतमें चन्द्रोन्मीलनप्रश्नप्रणालीका प्रचार ४-५ सौ वर्ष तक रहा है। यह ग्रन्थ इस प्रणालीका विकसित रूप है। इसमें च-त-य-क-ट-प-श-वर्ग पंचाधिकारका निरूपण किया गया है। यह विषय १०-११वीं शतीमें स्वतन्त्र था। सिंहावलोकन, गजाव-लोकन, नद्यावर्त, मण्डूकप्लवन, अश्वमोहित इन पाँच परिवर्तनशील दृष्टियों द्वारा चवर्ग, तवर्ग, यवर्ग, कवर्ग, टवर्ग, पवर्ग और शवर्गोंको प्राप्त हो आता है। इसी प्रकार कोई भी वर्ग उक्त कर्मों द्वारा दूसरे वर्गको प्राप्त हो जाता है। १०-११वीं शतीमें यह विषय संहिता शास्त्रके अन्तर्गत था तथा गणित द्वारा इसका विचार होता था। १२वीं शताब्दीमें इसका समावेश प्रश्नशास्त्रके भीतर किया गया है तथा प्रश्नाक्षरोंपर-से ही

उक्त दृष्टियोंका विचार भी होने लग गया है। ९वीं शताब्दीके ज्योतिषके विद्वान् गर्गाचार्यने सर्वप्रथम वर्गपंचकको परिवर्तनशील दृष्टियोंका रूप प्रदान कर चन्द्रोन्मीलनप्रश्न-प्रणालीमें स्थान दिया। गर्गाचार्यके समयमें चन्द्रोन्मीलन प्रश्नप्रणालीमें केवल पंचवर्ग सम्बन्धी असंयुक्त, संयुक्त, अभिहत आदि आठ संज्ञावाली विधि ही थी। उस समय केवल वाचिक प्रश्नोंके उत्तर ही इस प्रणाली द्वारा निकाले जाते थे। मूक प्रश्नोंके लिए 'पाशाकेवली' प्रणाली थी। इस प्रणालीके आद्य आविष्कर्ता गर्गाचार्य ही हैं। इनका पाशाकेवली अंक प्रणाली पर है तथा मूकप्रश्नोंका उत्तर निकालनेके लिए इसका प्रवर्तन किया गया था। ११वीं शतीमें मूक प्रश्नोंके निकालनेका बड़ा भारी रिवाज था। उस समय इनके निकालनेकी तीन विधियाँ प्रचलित थीं—(१) मन्त्रसाधना (२) स्वर-साधना (३) अष्टांगनिमित्तज्ञान। इन तीनों प्रणालियोंका जैन सम्प्रदायमें प्रचार था। गर्गाचार्यने पाशाकेवलीके आदिमें "ओं नमो भगवती कूष्माण्डिनी सर्वकार्यप्रसाधिनी सर्व-निमित्तप्रकाशिनी एह्येहि २ वरं देहि २ हलि २ मातङ्गिनी सत्यं ब्रूहि २ स्वाहा" इस मन्त्रको सात बार पढ़कर मुखसे "सत्यं वद, मृषा परिहारय" कहते हुए तीन बार पाशा डालनेका विधान बताया है। इससे सिद्ध है कि मन्त्रसाधना द्वारा ही पाशेसे फल कहा जाता था। प्रथम संख्या १११ का फल बताया है। "इस प्रश्नका फल बहुत शुभ है, तुम्हारे दिन अच्छी तरह व्यतीत होंगे। तुमने मनमें विलक्षण बात विचार रखी है वह सिद्ध होगी। तुम्हारे मनमें व्यापार और युद्धसम्बन्धी चिन्ता है, वह शीघ्र दूर होगी।

स्वरसाधनाका निरूपण भी गर्गाचार्यने किया है। यह स्वरसाधना उत्तरकालीन स्वर विज्ञानसे भिन्न थी। यह एक यौगिक प्रणाली थी, जिसका ज्ञान एकाध ऋषि मुनिको ही था। स्वर विज्ञानका प्रचार १३वीं सदीके उपरान्त हुआ प्रतीत होता है। अष्टांगनिमित्त ज्ञानका प्रचार बहुत पहलेसे था और ९-१०वीं शताब्दीमें इसका बहुत कुछ भाग लुप्त भी हो गया था।

इस विवेचनसे स्पष्ट है कि मूक प्रश्न, मुष्टिका प्रश्न एवं लूका प्रश्न आदिका विश्लेषण चन्द्रोन्मीलन प्रश्न प्रणालीमें १२वीं शतीसे आया है। प्रस्तुत ग्रन्थमें मूक प्रश्नोंका विश्लेषण योनिज्ञान विवरण द्वारा किया गया है, अतः यह निश्चित है कि यह ग्रन्थ १२वीं शताब्दीके बादका है।

चन्द्रोन्मीलन प्रश्न प्रणालीका अन्त १४वीं शतोमें हो जाता है। इसके पश्चात् इस प्रणालीमें रचना होना बिलकुल बन्द हो गया प्रतीत होता है। १४वीं शतीके पश्चात् रमलप्रणाली, प्रश्नलग्नप्रणाली, स्वरविज्ञान तथा केरलप्रश्नप्रणालीका प्रचार और विकास होने लग गया था। १४वीं शतीके प्रारम्भमें लग्नप्रणालीका दक्षिण भारतमें भी प्रचार दिखलाई पड़ता है, अतः यह सुनिश्चित है कि केवलज्ञानप्रश्नचूडा-मणिका रचनाकाल १२वीं शताब्दीके पश्चात् और १४वीं शताब्दीके पहले है। इस ग्रन्थमें रचयिताने ग्रन्थकारोक्त जो शवर्ग चक्र दिया है, उससे सिद्ध है, कि जब कोई भी वर्ग परिवर्तनशील दृष्टियों द्वारा अन्य वर्गको प्राप्त हो जाता है तो उसका फलादेश

दृष्टिक्रमके अनुसार अन्यवर्ग सम्बन्धी हो जाता है। इस प्रकारका विषय सुधार चन्द्रोन्मीलन प्रणालोमें १३वीं शतीमें आया हुआ जँचता है। इस प्रणालीके प्रारम्भिक ग्रन्थोंमें इतना विकास नहीं है। अतः विषयनिरूपणकी दृष्टिसे इस ग्रन्थका रचनाकाल १३वीं शताब्दी है।

रचनाशैलीके विचारसे आरम्भमें पाँच वर्गोंका निरूपण कर अष्ट संख्याओं द्वारा सीधे-सादे ढंगसे बिना भूमिका बाँधे प्रश्नोंका उत्तर प्रारम्भ कर दिया गया है। इस प्रकारकी सूत्ररूप प्रणाली ज्योतिषशास्त्रमें ११-१२वीं सदीमें खूब प्रचलित थी। कई श्लोकोंमें जिस बातको कहना चाहिए, उसीको एक छोटे-से गद्य टुकड़ेमें—वाक्यमें कह दिया गया है। इस प्रकारके ग्रन्थ दक्षिण भारतमें ज्यादे लिखे जाते थे। अतः रचनाशैलीकी दृष्टिसे भी यह ग्रन्थ १२वीं या १३वीं शताब्दीका प्रतीत होता है। धाम्य और अधाम्य योनिका जो सांगोपांग विवेचन इस ग्रन्थमें है, उससे भी यही कहा जा सकता है कि यह १३वीं शताब्दीसे बादका बनाया हुआ नहीं हो सकता।

आत्मनिवेदन

केवलज्ञानप्रश्नचूडामणिका अनुवाद तथा विस्तृत विवेचन अनेक ज्योतिष ग्रन्थोंके आधार पर लिखा गया है। विवेचनोंमें ग्रन्थके स्पष्टीकरणके साथ-साथ अनेक विशेष बातों पर प्रकाश डाला गया है। इस ग्रन्थको एक बार सन् १९४२ में आद्योपान्त देखा था, उसी समय इसके अनुवाद करनेकी इच्छा उत्पन्न हुई थी। श्री जैन-सिद्धान्त-भास्कर भाग ९, किरण २ में इस ग्रन्थका परिचय भी मैंने लिखा था। परिचयको देखकर श्री बा० कामता प्रसाद जी अलीगंजने अनुवाद करने की प्रेरणा भी पत्र द्वारा की थी, पर उस समय यह कार्य न हो सका।

भारतीय ज्ञानपीठ काशीकी स्थापना हो जाने पर श्रद्धेय प्रो० महेन्द्रकुमार जी न्यायाचार्यने इसके अनुवाद तथा सम्पादन करनेकी मुझे प्रेरणा की। आपके आदेश तथा अनुमतिसे इस ग्रन्थका सम्पादन किया गया है। मूडबिद्रीके शास्त्रभण्डारसे श्रीमान् प० के० भुजबलीजी शास्त्री, विद्याभूषणने ताड़पत्रीय प्रति भेजी, जिसके लिए मैं उनका आभारी हूँ। इस प्रतिकी संज्ञा क० मू० रखी गयी है। यद्यपि 'भवन' की केवलज्ञानप्रश्नचूडामणिकी प्रति भी मूडबिद्रीसे ही नकल कर आयी थी, पर शास्त्रीजी द्वारा भेजी गयी प्रतिमें अनेक विशेषताएँ मिलीं। कई स्थानोंमें शुद्ध तथा विषयको स्पष्ट करने वाले पाठान्तर भी मिले। इस प्रतिके आदि और अन्तमें भी ग्रन्थकर्त्ताका नाम अंकित है। इस प्रतिके अन्तमें "इति केवलज्ञानचूडामणिः केवलज्ञानहोराज्ञानप्रदीपकन्नड़ः समाप्तः" लिखा है। पवर्ग शवर्ग चक्र इसी प्रतिके आधार पर रखे गये हैं, क्योंकि ये दोनों चक्र इसी प्रतिमें शुद्ध मिले हैं। अवशेष ग्रन्थका मूलपाठ श्री जैन-सिद्धान्त-भवन, आरा की हस्तलिखित प्रतिके आधार पर रखा गया है। फुटनोटमें क० मू० के पाठान्तर रखे गये हैं।

मूडबिद्रीसे आयी हुई ताड़पत्रीय प्रतिकी लिपिका वाचन मित्रवर श्री देवकुमार-जो शास्त्रीने किया है, अतः मैं उनका आभारी हूँ। इस ग्रन्थकी प्रकाशन-व्यवस्था श्रीमान् प्रो० महेन्द्रकुमार जी न्यायाचार्यने की है, अतः मैं उनका विशेष कृतज्ञ हूँ। प्रूफ संशोधन पं० महादेवजी चतुर्वेदी व्याकरणाचार्यने किया है। सम्पादनमें श्रीमान् पं० फूलचन्द्रजी सिद्धान्तशास्त्री, गुरुवर्य पं० कैलाशचन्द्रजी सिद्धान्तशास्त्री, मित्रवर प्रो० गो० खुशालचन्द्रजी एम० ए०, साहित्याचार्य, के कई महत्त्वपूर्ण सुझाव मिले हैं, अतः आप महानुभावोंका भी कृतज्ञ हूँ।

श्री जैन-सिद्धान्त-भवन आराके विशाल ज्योतिष विषयक संग्रहसे विवेचन एव प्रस्तावना लिखनेमें सहायता मिली है, अतः भवनका आभार मानना भी अत्यावश्यक है। इस ग्रन्थमें उद्धरणोंके रूपमें आयी हुई गाथाओंका अर्थ विषय-क्रमको ध्यानमें रख कर लिखा गया है। प्रस्तुत दोनों प्रतियोंके आधार पर भी गाथाएँ शुद्ध नहीं की जा सकी हैं। हाँ, विषयके अनुसार उनका भाव अवश्य स्पष्ट हो गया है।

सम्पादनमें अज्ञानता एवं प्रमादवश अनेक त्रुटियाँ रह गयी होंगी, विज्ञ पाठक क्षमा करेंगे। इतना सुनिश्चित है कि इसके परिशिष्टों तथा भूमिकाके अध्ययनसे साधारण व्यक्ति भी ज्योतिषकी अनेक उपयोगी बातोंको जान सकेंगे, इसमें दोष नहीं हो सकते हैं।

अनन्तचतुर्दशी वि० नि० २४७५
जैनसिद्धान्तभवन, आरा

नेमिचन्द्र जैन शास्त्री,
ज्योतिषाचार्य, साहित्यरत्न

केवलज्ञानप्रश्नचूडामणिः

अक च ट त प य शा वर्गाः
आ ए क च ट त प य शा वर्गा इति[2] } प्रथमः ॥१॥

आ ऐ ख छ ठ थ फ र षा इति द्वितीयः ॥२॥

इ ओ ग ज ड द ब ल सा[3] इति तृतीयः ॥३॥

ई औ घ झ ढ ध भ व हा इति चतुर्थः ॥४॥

उ ऊ ङ ञ ण न माः, अं अः, इति पञ्चमः ॥५॥

अ आ इ ई उ ऊ ए ऐ ओ औ अं अः एतान्यक्षराणि सर्वाः[4] कथकस्य वाक्यतः प्रश्नाद्वा गृहीत्वा स्थापयित्वा सुष्ठु विचारयेत्। तद्यथा—संयुक्तः[5], असंयुक्तः, अभिहितः, अनभिहितः; अभिघातित इत्येतान् पञ्चालिङ्गिताभिधूमित-दग्धांश्च त्रीन् क्रियाविशेषान् प्रश्ने तावद्विचारयेत्।

अर्थ—अ क च ट त य श अथवा आ ए क च ट त प य श इन अक्षरोंका प्रथमवर्ग आ ऐ ख छ ठ थ फ र ष इन अक्षरोंका द्वितीय वर्ग; इ ओ ग ज ड द ब ल स इन अक्षरोंका तृतीय वर्ग; ई औ घ झ ढ ध भ व ह इन अक्षरोंका चतुर्थ वर्ग और उ ऊ ङ ञ ण न म अं अः इन अक्षरोंका पंचम वर्ग होता है। इन अक्षरोंको प्रश्नकर्त्ताके वाक्य या प्रश्नाक्षरोंसे ग्रहण कर अथवा उपर्युक्त पाँचों वर्गोंको स्थापित कर प्रश्नकर्त्तासे स्पर्श कराके अच्छी तरह फलाफलका विचार करना चाहिए। संयुक्त, असंयुक्त, अभिहित, अनभिहित और अभिघातित इन पाँचोंका तथा आलिंगित, अभिधूमित और दग्ध इन तीन क्रियाविशेषणोंका प्रश्नमें विचार करना चाहिए।

विवेचन—ज्योतिष शास्त्र में बिना जन्मकुण्डली के तात्कालिक फल बतलाने के लिए तीन सिद्धान्त प्रचलित हैं—प्रश्नाक्षर-सिद्धान्त, प्रश्नलग्न-सिद्धान्त और स्वर

---

१. तुलना—चं० प्र०, श्लो० ३३। "वर्गौ द्वौ विद्धिर्द्वादशमात्रासु विज्ञेयौ। काद्याः सप्त च तेषां वर्णाः पञ्चाब्धयोऽङ्कवर्गाणाम् ॥"—के० प्र० र०, पृ० ४। प्र० कौ०, पृ० ४। प्र० कु०, पृ० ३। "अ आ इ ई उ ऊ ऋ ॠ ऌ ॡ ए ऐ ओ औ ध्वजः सूर्यः ॥ १ ॥ क ख ग घ धूम्रः भौमः।"—ध्व० प्र०, पृ० १। २. पञ्चसु वर्गेषु इतीति पाठो नास्ति क० मू०। ३. इ ओ ग ज ड ब ल स्ताः तृतीयः—क० मू०। ४. स्वरांश्च क० मू०। ५. तुलना—के० प्र० सं०, पृ० ४। संयुक्तादीनां विशेषविवेचनं चन्द्रोन्मीलनप्रश्नस्यैकोनविंशतिश्लोके द्रष्टव्यम्। के० प्र० र०, पृ० १२। ध्व० प्र० प० १।

विज्ञान सिद्धान्त। प्रस्तुत ग्रन्थ में प्रश्नाक्षर सिद्धान्त का प्रतिपादन किया गया है। इस सिद्धान्तका मूलाधार मनोविज्ञान है, क्योंकि बाह्य और आभ्यन्तरिक दोनों प्रकारकी विभिन्न परिस्थितियोंके अधीन मानव मनकी भीतरी तहमें जैसी भावनाएँ छिपी रहती हैं वैसे ही प्रश्नाक्षर निकलते हैं। सुप्रसिद्ध विज्ञानवेत्ता फ्रायडेका कथन है कि अबाध-भावानुषंगसे हमारे मनके अनेक गुप्तभाव भावी शक्ति, अशक्तिके रूपमें प्रकट हो जाते हैं तथा उनसे समझदार व्यक्ति सहजमें ही मनकी धारा और उससे घटित होनेवाले फलको समझ लेता है। इनके मतानुसार मनकी दो अवस्थाएँ हैं—सज्ञान और निर्ज्ञान। सज्ञान अवस्था अनेक प्रकारसे निर्ज्ञान अवस्थाके द्वारा ही नियन्त्रित होती रहती है। प्रश्नोंकी छान-बीन करनेपर इस सिद्धान्तके अनुसार पूछनेपर मानव निर्ज्ञान अवस्था विशेषके कारण ही झट उत्तर देता है और उसका प्रतिबिम्ब सज्ञान मानसिक अवस्थापर पड़ता है। अतएव प्रश्नके मूलमें प्रवेश करनेपर संज्ञात इच्छा, असंज्ञात इच्छा, अन्तर्ज्ञात इच्छा और निर्ज्ञात इच्छा ये चार प्रकारकी इच्छाएँ मिलती हैं। इन इच्छाओंमें-से संज्ञात इच्छा बाधा पानेपर नाना प्रकारसे व्यक्त होनेकी चेष्टा करती है तथा इसीके द्वारा रुद्ध या अवदमित इच्छा भी प्रकाश पाती है। यद्यपि हम संज्ञात इच्छाका प्रकाश कालमें रूपान्तर जान सकते हैं, किन्तु असंज्ञात या अज्ञात इच्छाके प्रकाशित होनेपर भी बिना कार्य देखे उसे नहीं जान सकते। विशेषज्ञ प्रश्नाक्षरोंके विश्लेषणसे ही असंज्ञात इच्छाका पता लगा लेते हैं। सारांश यह है कि संज्ञात इच्छा प्रत्यक्षरूपसे प्रश्नाक्षरोंके रूपमें प्रकट होती है और इन प्रश्नाक्षरोंमें छिपी हुई असंज्ञात और निर्ज्ञात इच्छाओंको उनके विश्लेषणसे अवगत किया जाता है। अतः प्रश्नाक्षर सिद्धान्त मनोवैज्ञानिक है तथा आधुनिक पाश्चात्त्य ज्योतिषके विकसित सिद्धान्तोंके समान तथ्यपूर्ण है।

प्रश्न करनेवाला आते ही जिस वाक्यका उच्चारण करे उसके अक्षरोंका विश्लेषण कर प्रथम, द्वितीय इत्यादि पाँचों वर्गोंमें विभक्त कर लेना चाहिए, अनन्तर आगे बतायी हुई विधिके अनुसार संयुक्त, असंयुक्तादिका भेद स्थापित कर फल बतलाना चाहिए। अथवा प्रश्नकर्तासे पहले किसी पुष्प, फल, देवता, नदी और पहाड़का नाम पूछकर अर्थात्—प्रातःकालमें पुष्पका नाम, मध्याह्नमें फलका नाम, अपराह्णमें—दिनके तीसरे पहरमें देवताका नाम और सायंकालमें नदीका नाम या पहाड़का नाम पूछकर प्रश्नाक्षर ग्रहण करने चाहिए। पृच्छकके प्रश्नाक्षरोंका विश्लेषण कर संयुक्त, असंयुक्त, अभिहित आदि आठ प्रश्नश्रेणियोंमें विभाजित कर प्रश्नका उत्तर देना चाहिए। अथवा उपर्युक्त पाँचों वर्गोंको पृथक् स्थापित कर प्रश्नकर्त्तासे अक्षरोंका स्पर्श कराके, स्पर्श किये

---

१. "···पृच्छकस्य वाक्याक्षराणि स्वरसंयुक्तानि ग्राह्याणि। यदि च प्रश्नाक्षराण्यधिकान्यस्पष्टानि भवेयुस्तदाऽयं विधिः। यदि प्रश्नकर्त्ता ब्राह्मणस्तदा तन्मुखात्पुष्पस्य नाम ग्राहयेत्। यदि प्रश्नकर्त्ता क्षत्रियस्तदा कस्याश्चिन्नद्या नाम ग्राहयेत्। यदि प्रश्नकर्त्ता वैश्यस्तदा देवानां मध्ये कस्यचिद्देवस्य नाम ग्राहयेत्। यदि प्रश्नकर्त्ता शूद्रस्तदा कस्यचित् फलस्य नाम ग्राहयेत्।" के० प्र० सं०, पृ० १२–१३।

हुए अक्षरोंको प्रश्नाक्षर मानकर संयुक्त, असंयुक्तादि प्रश्न श्रेणियोंमें विभाजित कर फल बतलाना चाहिए। प्रश्नकुतूहलादि प्राचीन ग्रन्थोंमें पिंगल शास्त्रके अनुसार प्रश्नाक्षरोंके मगण, यगण, रगण, तगण, जगण, भगण, नगष, गुरु और लघु ये विभाग कर उत्तर दिये गये हैं। इनका विचार छन्दशास्त्रके अनुसार ही गुरु, लघु क्रमसे किया गया है अर्थात् मगणमें तीन गुरु, यगणमें आदि लघु और दो गुरु, रगणमें मध्य लघु और शेष दो गुरु, सगणमें अन्त गुरु और शेष दो लघु, तगणमें अन्त लघु और शेष दो गुरु, जगणमें मध्य गुरु और शेष दो लघु, भगणमें आदि गुरु और शेष दो लघु और नगणमें तीन लघु वर्ण होते हैं। यदि प्रश्नकर्त्ताके उच्चरित वर्णोंमें प्रारम्भके तीन वर्ण लघु मात्रावाले हों तो नगण समझना चाहिए। इसी प्रकार उच्चरित वर्णोंके क्रमसे मगण, यगणादिका विचार करना चाहिए। मगणादिका स्पष्ट ज्ञान करनेके लिए चक्र नीचे दिया जाता है—

मगणादि [1]सम्वन्धी-प्रश्न-सिद्धान्त-चक्र

मगण	यगण	रगण	सगण	तगण	जगण	भगण	नगण	गण
SSS	ISS	SIS	IIS	ISS	ISI	SII	III	लघुगुरु
पृथ्वी	जल	तेज	वायु	आकाश	तमोगुण	सत्त्व-गुण	रजोगुण	गुण और तत्त्व
स्थिर	चर	चर	चर	स्थिर	द्विस्वभाव	चर	स्थिर	चरादि भाव संज्ञा
स्त्री	पुरुष	पुरुष	नपुंसक	नपुंसक	पुरुष	स्त्री	पुरुष	पुरुषादि संज्ञा
मूल	जीव	धातु	जीव	ब्रह्म	जीव	जीव	जीव	चिन्ता
मित्र	सेवक	शत्रु	शत्रु	सम	सम	सेवक	मित्र	मित्रादि संज्ञा
पीत	श्वेत	रक्त	हरित	नील	ईषद् रक्त	श्वेत	रक्त	रंग
पूर्व	पश्चिम	आग्नेय कोण	वायव्य कोण	ईशानकोण	उत्तर	दक्षिण	नैर्ऋत्य-कोण	दिशा

यदि पृच्छकके प्रश्न वर्णोंमें पूर्व चक्रानुसार दो मित्र[2] गण हों तो कार्य सिद्धि और मित्रलाभ; मित्रसेवक संज्ञक गणोंके होनेपर सफलतापूर्वक कार्य सिद्धि; मित्र-शत्रु

१. "पृथिव्यादीनि पञ्चभूतानि यथासंख्येन ज्ञेयानि। जेन तमो भेन सतो नेन रजोग्रहणम्। त्रयाणां गीतोपनिषद्भिः फलं वाच्यम्।"—प्र० कु०, पृ० ६। २. द्रष्टव्यम्—प्र० कु०, पृ० ८।

संज्ञक गणोंके प्रश्नाक्षरोंमें होनेपर प्रिय भाईका मरण; मित्र-सम संज्ञक गणोंके होनेपर कुटुम्बमें पीड़ा; दो सेवक गणोंके होनेपर मनोरथसिद्धि; भृत्य-शत्रु गणोंके होनेसे शत्रु-वृद्धि; मृत्यु-सम गणोंके होनेसे धननाश; शत्रु-मित्र गणोंके होनेसे शारीरिक कष्ट; शत्रु-सेवक गणोंके होनेसे भार्या कष्ट; दो शत्रु गणोंके होनेसे प्रत्यक्ष कार्यहानि; शत्रु-सम गणोंके होनेसे सुख नाश एवं मित्र, मित्र गणोंके होनेसे सुख होता है। दो सम गण निष्फल होते हैं, सम और मित्र गणोंके होनेसे अल्पलाभ; सम और सेवक गणोंके होनेसे उदासीनता एवं सम और शत्रु गणोंके होनेसे आपसमें विरोध होता है। मगण-[1]यगणके होनेपर कार्य सिद्धि, रगणके होनेसे मृत्यु और कार्य नाश, सगणके होनेसे क्षय रोग अथवा कार्य विनाश और नगणके होनेसे प्रश्न निष्फल होता है। यदि [2]प्रश्नकर्त्ताके प्रश्नाक्षरोंमें प्रथम मगण हो तो धन-सन्तानकी वृद्धि; रगण हो तो मृत्यु या मृत्यु तुल्य कष्ट; सगण हो तो विदेशकी यात्रा; जगण हो तो रोग; भगणसे निर्मल यशका विस्तार और नगणसे अखण्ड सुख प्राप्ति सम्बन्धी प्रश्न जानने चाहिए। इस प्रकार गणोंका विचार कर प्रश्नोंका फल बतलाना चाहिए। प्रश्नाक्षर सम्बन्धी सिद्धान्तका उपर्युक्त क्रमसे विचार करनेपर भी चर्या और चेष्टा आदिका भी विचार करना आवश्यक है। क्योंकि मनोविज्ञानके सिद्धान्तसे बहुत-सी बातें चर्या और चेष्टासे भी प्रकट हो जाती हैं। इसका प्रधान कारण यह है कि मनुष्यका शरीर यन्त्रके समान है जिसमें भौतिक घटना या क्रियाका उत्तेजन पाकर प्रतिक्रिया होती है। यही प्रतिक्रिया उसके आचरणमें प्रदर्शित होती है। मनोविज्ञानके पण्डित पेवलावने बताया है कि मनुष्यकी समस्त भूत, भावी और वर्तमान प्रवृत्तियाँ चेष्टा और चर्याके द्वारा आभासित होती हैं। समझदार मानव चेष्टाओंसे जीवनका अनुमान कर लेता है। अतः प्रश्नाक्षर सिद्धान्तका पूरक अंग चेष्टा-चर्यादि[3] हैं।

दूसरा प्रश्नोंके फलका निरूपण करनेवाला सिद्धान्त समयके शुभाशुभत्वके ऊपर आश्रित है। अर्थात् पृच्छकके समयानुसार तात्कालिक प्रश्न कुण्डली बनाकर उससे ग्रहोंके[4] स्थान-विशेष द्वारा फल कहा जाता है। इस सिद्धान्तमें मूलरूपसे फलादेश सम्बन्धी समस्त कार्य समयपर ही अवलम्बित है। अतः सर्व-प्रथम इष्टकाल बनाकर लग्न सिद्ध करना चाहिए और फिर द्वादश[5] भावोंमें ग्रहोंको स्थित कर फल बतलाना चाहिए।

---

१. द्रष्टव्यम्—प्र० कु०, पृ० १०। २. द्रष्टव्यम्—प्र० कु०, पृ० ५-६। ३. दै० व०, पृ० ५। ४. बृ० पा० हो, पृ० ७४१। ५. द्वादशभावोंके नाम निम्न प्रकार हैं: "तनुकोशसहोदरबन्धुसुतारिपुकामविनाशशुभा विबुधैः। पितृमं तत आप्तिरयाय इमे क्रमतः कथिता मिहिरप्रमुखैः।"—प्र० भू०, पृ० ५। "होरादयस्तनुकुटुम्बसहोत्थबन्धुपुत्रारिपत्निमरणानि शुभास्पदायाः। रिष्फाख्यमित्युपचयान्यरिकर्मलाभदुश्चिक्यसंज्ञितगृहाणि न नित्यमेके॥ कल्पस्वविक्रमगृहप्रतिभाक्षतानि चित्तोत्थरन्ध्रगुरुमानभवव्ययानि। लग्नाच्चतुर्थनिधने चतुरस्रसंज्ञे द्यूनं च सप्तमगृहं दशमं खमाज्ञा॥"—बृ० जा०, पृ० १७–१८।

इष्टकाल बनानेके नियम

१—सूर्योदयसे १२ बजे दिनके भीतरका प्रश्न हो तो प्रश्न समय और सूर्योदय कालका अन्तर कर शेषको ढाई गुना ($२\frac{१}{२}$) करनेसे घटचादि रूप इष्टकाल होता है। जैसे—मान लिया कि सं २००१ वैशाख शुक्ला द्वितीया, सोमवारको प्रातःकाल ८ बजकर १५ मिनटपर कोई प्रश्न पूछने आया तो उस समयका इष्टकाल उपर्युक्त नियमके अनुसार; अर्थात् ५ बजकर ३५ मिनट सूर्योदय कालको आनेके समय ८ बजकर १५ मिनटमें-से घटाया तो (८–१५) – (५–३५) = (२–४०) इसको ढाई गुना किया तो ६ घटी ४० पल इष्टकाल हुआ।

२—यदि २ बजे दिनसे सूर्यास्तके अन्तरका प्रश्न हो तो प्रश्न समय और सूर्यास्त कालका अन्तर कर शेषको ($२\frac{१}{२}$) ढाई गुना कर दिनमानमें-से घटानेपर इष्टकाल होता है। उदाहरण—२००१ वैशाख शुक्ला द्वितीया, सोमवार २ बजकर २५ मिनटपर पृच्छक आया तो इस समयका इष्टकाल निम्न प्रकार हुआ—सूर्यास्त ६–२५ प्रश्नसमय २–२५ = ४–० इसे ढाई गुना किया तो $\frac{४ \times ५}{२} = १०$ घटी हुआ। इसे दिनमान ३२ घड़ी ४ पलमें-से घटाया गया तो (३२–४) – (१०–०) = २२ घटी ४ पल यही इष्टकाल हुआ।

३—सूर्यास्तसे १२ बजे रात्रिके भीतरका प्रश्न हो तो प्रश्न समय और सूर्यास्त कालका अन्तर कर शेषको ढाई गुना कर दिनमानमें जोड़ देनेसे इष्टकाल होता है। जैसे—सं० २००१ वैशाख शुक्ला द्वितीया सोमवारको रातके १० बजकर ४५ मिनटका इष्टकाल बनाना है। अतः १०–४५ प्रश्नसमय–६–२५ सूर्यास्तकाल ४–२० = $४\frac{२०}{६०} = ४\frac{१}{३} = \frac{१३}{३} \times \frac{५}{२} = \frac{६५}{६} = १०\frac{५}{६} \times \frac{६०}{१} = ५०$ पल, १० घटी ५० पल हुआ। इसे दिनमान ३२ घटी ४ पलमें जोड़ा तो (३२–४) + (१०–५०) = (४२–५४) = ४२ घटी ५४ पल इष्टकाल हुआ।

४—यदि १२ बजे रातके बाद और सूर्योदयके अन्दरका प्रश्न हो तो प्रश्न समय और सूर्योदयकालका अन्तर कर शेषको ढाईगुना कर ६० घड़ीमें से घटाने पर इष्टकाल होता है। उदाहरण—सं० २००१ वैशाख शुक्ला द्वितीया, सोमवारको रातके ४ बजकर १५ मिनटका इष्टकाल बनाना है। अतः उपर्युक्त नियमके अनुसार—५ – ३५ सूर्योदयकाल –४–१५ प्रश्न समय = १–२० = $१\frac{२०}{६०} = १\frac{१}{३} = \frac{४}{३} \times \frac{५}{२} = \frac{१०}{३} = ३\frac{१}{३} \times \frac{६०}{१} = २०$; ३ घटी २० पल हुआ; इसे ६० घटी में से घटाया तो (६० – ०) – (३ – २०) = (५६ – ४०), ५६ घटी ४० पल इष्टकाल हुआ।

बिना[1] घड़ीके इष्टकाल बनानेकी रीति

दिनमें जिस समय इष्टकाल बनाना हो, उस समय अपने शरीरकी छायाको अपने पाँवसे नापे, परन्तु जहाँ खड़ा हो उस पाँवको छोड़के जो संख्या हो उसमें सात और मिलाकर भाजक कल्पना करे। इस भाजकका मकरादिसे मिथुनान्त पर्यन्त अर्थात् सौम्यायन जब तक रवि रहे तब तक १४४ में भाग दे, और कर्कादि छह राशियों में रवि हो तो १३५ में भाग दे; जो लब्ध हो, उसमें दोपहरसे पहलेकी इष्टघड़ी इष्टकाल हो तो एक घटा देनेसे और दोपहरसे बादकी इष्टघड़ी हो तो एक और जोड़नेसे घटचात्मक इष्टकाल होता है।

इष्टकालपर-से लग्न बनानेका नियम

प्रत्येक पंचांगमें लग्नसारणी लिखी रहती है। यदि सायनसारणी पंचांगमें हो तो सायन सूर्य और निरयनसारणी हो तो निरयनसूर्यके राशि और अंशके सामने जो घटयादि अंक हैं उनमें इष्टकालके घटी, पलको जोड़ देना चाहिए। यदि घटी स्थानमें ६० से अधिक हों तो अधिकको छोड़कर शेष तुल्य अंक उस सारणीमें जहाँ हों उस राशि, अंशको लग्न समझना चाहिए। परन्तु यह गणित क्रिया स्थूल है—उदाहरण—पूर्वोक्त ६ घटी ४० पल इष्टकालका लग्न बनाना है। इस दिन सायनसूर्य मेषराशिके ११ अंश पर है। लग्नसारणीमें मेषराशिके सूर्यके ११ अंशका फल ४ घटी १५ पल ३९ विपल है; इसे इष्टकालमें जोड़ा तो—४–१५–३९ + ६–४०–० संस्कृतफल = १०–५५–३९, इस संस्कृत फलको उसी लग्नसारणीमें देखा तो वृषलग्नके २५ अंशका फल १०–५४–३० और २६ अंशका फल ११–४–४९ मिला। अतः लग्न वृषके २५ और २६ अंशके मध्यमें हुआ। इसका स्पष्टीकरण किया तो—

$$\begin{array}{l} \text{११}^\circ\text{–४}'\text{–४९}'' \\ \underline{\text{१०}^\circ\text{–५४–३०}} \\ \text{१०–१९}'' = \text{१०} + \frac{\text{१९}}{\text{६०}} = \frac{\text{६२६}}{\text{६०}} \end{array} \qquad \begin{array}{l} \text{१०}^\circ\text{–५५}'\text{–३९} \\ \underline{\text{१०}^{\circ\prime\prime}\text{–५४}'\text{–३०}} \\ \text{१}'\text{–९} = \text{१} + \frac{\text{९}}{\text{६०}} = \frac{\text{६९}}{\text{६०}} \end{array}$$

$$\frac{\text{६१९}}{\text{६०}} : \frac{\text{६९}}{\text{६०}} :: \text{६० कला} = \frac{\text{६०} \times \text{६९} \times \text{६०}}{\text{६०} \times \text{६१९}} = \frac{\text{४१४०}}{\text{६१९}} = \text{६}\frac{\text{४२६}}{\text{६१९}}$$

$$\frac{\text{४२६}}{\text{६१९}} \times \frac{\text{६०}}{\text{१}} = \frac{\text{२५५६०}}{\text{६१९}} = \text{४१}\frac{\text{१८}}{\text{६१९}}$$

अर्थात् लग्नमान १ राशि २५ अंश ६ कला और ४१ विकला हुआ। इस लग्नको प्रारम्भमें रखकर बारह राशियोंको क्रमसे स्थापित कर देनेसे प्रश्नकुण्डली बन जायगी।

---

१. "भागं वारिधिवारिराशिशशिपु (१४४) प्राहुर्मृगाद्ये बुधाः, पट्के वाण-कृपीटयोनिविधुषु (१३५) स्यात् कर्कटाद्ये पुनः। पादैः सप्तभिरन्वितैः प्रथमकं मुक्त्वा दिनाद्ये दले, हित्वैकां घटिकां परे च सततं दत्त्वेष्टकालं वदेत्॥"—भु० दी०, पृ० ३६।

लग्न बनानेका[1] सूक्ष्म नियम

जिस समयका लग्न बनाना हो, उस समयके स्पष्ट सूर्यमें तात्कालिक स्पष्ट अयनांश जोड़ देनेसे तात्कालिक सायनसूर्य होता है। उस तात्कालिक सायनसूर्यके भुक्त या भोग्य अंशादिको स्वदेशी उदयमानसे गुणा करके ३० का भाग देनेपर लब्ध पलादि भुक्त या भोग्यकाल होता है—भुक्तांशको स्वोदयमानसे गुणा करके ३० का भाग देने पर भुक्तकाल और भोग्यांशको स्वोदयसे गुणा करके ३० का भाग देने पर भोग्यकाल होता है। इस भुक्त या भोग्यकालको इष्टघटी, पलमें घटानेसे जो शेष रहे उसमें भुक्त या भोग्य राशियोंके उदयमानोंको जहाँ तक घट सके घटाना चाहिए। शेषको ३ से गुणाकर अशुद्धोदय मान—जो राशि घटी नहीं है उसके उदयमानके भाग देने पर जो लब्ध अंशादि आवें उनको क्रमसे अशुद्धराशिमें जोड़नेसे सायन स्पष्ट लग्न होता है। इसमें-से अयनांश घटा देनेपर स्पष्ट लग्न आता है।

प्रश्नाक्षरोंसे[2] लग्न निकालनेका नियम

प्रश्नका प्रथम अक्षर अवर्ग हो तो सिंह लग्न, कवर्ग हो तो मेष और वृश्चिक लग्न, चवर्ग हो तो तुला और वृष लग्न टवर्ग हो तो मिथुन और कन्या, तवर्ग हो तो धन और मीन लग्न, पवर्ग हो तो कुम्भ और मकर लग्न एवं यवर्ग अथवा शवर्ग हो तो कर्क लग्न जानना चाहिए। जहाँ एक-एक वर्गमें दो-दो लग्न कहे गये हैं वहाँ विषम प्रश्नाक्षरोंके होनेपर विषम लग्न और सम प्रश्नाक्षरोंके होनेपर सम लग्न जानना चाहिए। इस लग्नपर-से ग्रहोंके अनुसार फल बतलाना चाहिए।

तीसरा स्वरविज्ञान सम्बन्धी सिद्धान्त पृच्छकके अदृष्ट पर आश्रित है। अर्थात् पृच्छकके अदृष्टका प्रभाव सभी वस्तुओंपर पड़ता है। बल्कि यहाँ तक कि उसके अदृष्टके प्रभावसे वायुमें भी विचित्र प्रकारका प्रकम्पन उत्पन्न होता है जिससे वायु चन्द्रस्वर और सूर्यस्वरके रूपमें परिवर्तित हो पृच्छकके इष्टानिष्ट फलको प्रकट करती है। कुछ लोगोंका अभिमत है कि वायुका ही प्रभाव प्रकृतिके अनुसार भिन्न-भिन्न मानवोंपर भिन्न-भिन्न प्रकारका पड़ता है। स्वरविज्ञान वायुके द्वारा घटित होनेवाले प्रभावको व्यक्त करता है। सामान्य स्वरविज्ञान निम्न प्रकार है—

मानव-हृदयमें अष्टदल कमल होता है। उस कमलके आठों पत्रोंपर सदैव वायु

---

१. "तत्कालार्कः सायनः स्वोदयघ्ना भोग्यांशाखत्र्युद्धृता भोग्यकालः। एवं यातांशैर्भवेद्यातकालो भोग्यः शोध्योऽभीष्टनाडीपलेभ्यः॥ तदनु जहीहि गृहोदयाँश्च शेषं गगनगुणघ्नमशुद्धहल्लवाद्यम्। सहितमजादिगृहैरशुद्धपूर्वैर्भवति विलग्नमदोऽयनांशहीनम्॥ भोग्यतोऽल्पेष्टकालात् खरामाहतात्, स्वोदयाप्तांशयुग्भास्करः स्यात्तनुः। अर्कभोग्यस्तनोर्भुक्तकालान्वितो युक्तमध्योदयोऽभीष्टकालो भवेत्॥"—ग्र० ला० चि० प्र०। २. 'अवर्गे सिंहलग्नं च पवर्गे मेषवृश्चिकौ। चवर्गे यूकवृषभौ टवर्गे युग्मकन्यके॥ तवर्गे धनुमीनौ च पवर्गे कुम्भनक्रकौ। यशवर्गे कर्कटश्च लग्नं शब्दाक्षरैर्वदेत्॥"—के० प्र० सं०, पृ० ५४।

चलता रहता है। उस वायुमें पृथ्वी, अप्, तेज, वायु और आकाश ये पाँच तत्त्व चलते रहते हैं और इनके संचालनसे सब प्रकारका शुभाशुभ फल होता है। किन्तु विचारणीय बात यह है कि इनके संचालनका ज्ञान करना ऋषि, मुनियोंको ही संभव है, साधारण मानव जिसे स्वराभ्यास नहीं है वह दो चार दिनमें इसका ज्ञान नहीं कर सकता है। आजकल स्वरविज्ञानके जाननेवालोंका प्रायः अभाव है। केवल चन्द्रस्वर और सूर्य-स्वरके स्थूल ज्ञानसे प्रश्नोंका उत्तर देना अनुचित है। स्थूल ज्ञान करनेका नियम यह है कि नाकके दक्षिण या वाम किसी भी छिद्रसे निकलता हुआ वायु (श्वास) यदि छिद्रके बीचसे निकलता हो तो पृथ्वी तत्त्व; छिद्रके अधोभागसे अर्थात् ऊपर वाले ओष्ठको स्पर्श करता हुआ निकलता हो तो जलतत्त्व; छिद्रके ऊर्ध्वभागको स्पर्श करता हुआ निकलता हो तो अग्नितत्त्व; छिद्रसे तिरछा होकर निकलता हो तो वायुतत्त्व और एक छिद्रसे बढ़कर क्रमसे दूसरे छिद्रसे निकलता हो तो आकाशतत्त्व चलता है ऐसा जानना चाहिए। अथवा[1] १६ अंगुलका एक शंकु बनाकर उस पर ४ अंगुल, ८ अंगुल, १२ अंगुल और १६ अंगुलके अन्तरपर रुई या अत्यन्त मन्द वायुसे हिल सके ऐसा कुछ और पदार्थ लगाके उस शंकुको अपने हाथमें लेकर नासिकाके दक्षिण या वाम किसी भी छिद्रसे श्वास चल रहा हो उसके समीप लगा करके तत्त्वकी परीक्षा करनी चाहिए। यदि आठ अंगुल तक वायु (श्वास) बाहर जाता हो तो पृथ्वी तत्त्व, सोलह अंगुल तक बाहर जाता हो तो जलतत्त्व, बारह अंगुल तक बाहर जाता हो तो वायुतत्त्व, चार अंगुल तक बाहर जाता हो तो अग्नितत्त्व और चार अंगुलसे कम दूरी तक जाता हो अर्थात् केवल बाहर निर्गमन मात्र हो तो आकाशतत्त्व होता है। पृथ्वीतत्त्वके चलनेसे लाभ, जलतत्त्वके चलनेसे तत्क्षण लाभ, वायु[2] और अग्नितत्त्वके चलनेसे हानि और आकाशतत्त्वके चलनेसे फलका अभाव होता है। [3]मतान्तरसे पृथ्वी और जलतत्त्वके चलनेसे शुभ फल; वायु और आकाशतत्त्वके चलनेसे अनिष्ट फल एवं शारीरिक कष्ट तथा अग्नितत्त्वके चलनेसे मिश्रित फल होता है।

शरीरके वाम[4] भागमें इड़ा और दक्षिण भागमें पिंगला नाड़ी रहती है। इड़ामें चन्द्रमा स्थित है और पिंगलामें सूर्य। नाकके दक्षिण छिद्रसे हवा निकलती हो तो सूर्य स्वर और वाम छिद्रसे हवा निकलती हो तो चन्द्रस्वर जानना चाहिए। चन्द्रस्वरमें राजदर्शन, गृहप्रवेश एवं राज्याभिषेक आदि शुभ कार्योंकी सिद्धि और सूर्यस्वरमें स्नान, भोजन, युद्ध, मुकद्दमा, वादविवाद आदि कार्योंकी सिद्धि होती हैं। [5]प्रश्नके समय चन्द्र-स्वर चलता हो और पृच्छक वाम भागमें खड़ा हो कर प्रश्न पूछे तो निश्चयसे कार्यसिद्धि

---

१. "वामे वा दक्षिणे वापि धाराष्टाङ्गुलदीर्घिका। षोडशाङ्गुलमापः स्युस्तेजश्च चतुरङ्गुलम्॥ द्वादशांगुलदीर्घः स्याद्वायुर्व्योमाङ्गुलेन हि।"—स० सा०, पृ० ७३। तत्त्वानां विवेचन शिवस्वरोदये, पृ० ४२–६० तथा समरसारे, पृ० ७०-८० इत्यादिषु द्रष्टव्यम्। २. शि० स्व०, पृ० ४४-४५। ३. स० सा०, पृ० ७६। ४. शि० स्व०, पृ० १५-१६। ५. स० सा०, पृ० ८३।

होती है। सूर्यस्वर चलता हो और पृच्छक दक्षिण भागमें खड़ा होकर प्रश्न पूछे तो कष्टसे कार्यसिद्धि होती है। जिस तरफका स्वर नहीं चलता हो उस ओर खड़ा होकर प्रश्न पूछे तो कार्य हानि होती है। यदि सूर्य (दक्षिण) नाड़ीमें विषमाक्षर और चन्द्र (वाम) नाड़ीमें पृच्छक समाक्षरोंका उच्चारण करे तो अवश्य कार्यसिद्धि होती है। किसी-किसीके मतमें दक्षिण स्वर चलनेपर प्रश्नकर्त्ताके सम प्रश्नाक्षर हों तो धनहानि, रोगवृद्धि, कौटुम्बिक कष्ट एवं अपमान आदि सहन करने पड़ते हैं और यदि दक्षिण स्वर चलनेपर विषम प्रश्नाक्षर हों तो सन्तानप्राप्ति, धनलाभ, मित्रसमागम, कौटुम्बिक सुख एवं स्त्री लाभ होता है। जिस समय श्वास भीतर जा रहा हो उस समय पृच्छक प्रश्न करे तो जय और बाहर आ रहा हो उस समय प्रश्न करे तो हानि होती है। जिस ओर का स्वर चल रहा हो उसी ओर आकर पृच्छक प्रश्न करे तो मनोरथसिद्धि और विपरीत ओर पृच्छक खड़ा हो तो कार्य हानि होती है। स्वरका विचार सूक्ष्म रीतिसे जाननेके लिए शरीरमें रहनेवाली ७२ हजार[1] नाड़ियोंका परिज्ञान करना अत्यावश्यक है। इन नाड़ियोंके सम्यक् ज्ञानसे ही चन्द्र और सूर्य स्वरका पूर्ण परिज्ञान हो सकता है।

प्रस्तुत ग्रन्थमें प्रश्नाक्षरवाले सिद्धान्तका ही निरूपण किया गया है। समस्त वर्णमालाके स्वर और व्यंजनोंको पाँच वर्गोंमें विभक्त किया है, तथा इसी विभाजनपर-से संयुक्त, असंयुक्त, अभिहित, अनभिहित, अभिघातित, आलिंगित, अभिधूमित और दग्ध ये आठ विशेष संज्ञाएँ निर्धारित की हैं। केरल प्रश्न संग्रहमें उपर्युक्त संज्ञाएँ प्रश्नाक्षरोंकी न बताकर चर्या-चेष्टाकी बतायी गयी हैं। गर्गमनोरमा, केरल प्रश्नरत्न आदि ग्रन्थोंमें ये संज्ञाएँ समय-विशेषकी बतायी गयी हैं। फलाफलका विवेचन प्रायः समान है। केरलीय प्रश्नरत्नमें ४५ वर्णोंके नौ वर्ग निश्चित किये हैं—

अ आ इ ई उ ऊ इन वर्गोंको अवर्ग संज्ञा; ए ऐ ओ औ अं अः की ए वर्ग; क ख ग घ ङ की क वर्ग; च छ ज झ ञ की च वर्ग; ट ठ ड ढ ण की ट वर्ग; त थ द ध न की त वर्ग; प फ ब भ म की प वर्ग; य र ल व की य वर्ग और श ष स ह की श वर्ग संज्ञा बतायी है। वर्गविभाजन क्रममें अन्तर रहनेके कारण संयुक्त, असंयुक्तादि प्रश्न संज्ञाओंमें भी अन्तर है।

पाँचों वर्गोंके योग और उनके फल—

[2]तथाहि—[3]पञ्चवर्गानपि क्रमेण प्रथमतृतीयवर्गांश्च[4] परस्परं दृष्ट्वा [5]योजयेत्। प्रथम-तृतीययोः द्वितीयचतुर्थाभ्यां योगः[6], पृथग्भावात् पञ्चमवर्गोऽपि

---

१. शि० स्व०, पृ० ६। २. "प्रथमं च तृतीयं च संयुक्तं पञ्चमेव च। द्विचतुर्थमसंयुक्तं क्रमादभिहितं भवेत्॥" चं०प्र०, श्लो० ३४, प्रश्नाक्षराणां पञ्चिरूपविभाजन तद्विशेषफलं च पंचपक्षीनाम्नः ग्रन्थस्य तृतीयचतुर्थपृष्ठयोः द्रष्टव्यम्। प्रश्नाक्षराणां नववर्गक्रमेण संयुक्तादि-विभागः केरलप्रश्नरत्नग्रन्थस्य सप्तविंशतितमपृष्ठे द्रष्टव्यः। इयं योजनापि तत्र प्रकारान्तरेण दृश्यते। ३. पंचमवर्ग्योऽपि क० मू०। ४. वर्ग्यांश्च–क० मू०। ५. योजनीयाः–क० मू०। ६. योगः, इति पाठो नास्ति–क० मू०।

(वर्गस्यापि) प्रथमतृतीयाभ्यां[1] योगः। यत्र यत्किञ्चित् पृच्छति तत्सर्वमपि लभते। तत्र स्वकाययोगे[2] स्वकीयचिन्ता; परकाययोगे परकीयचिन्ता। स्ववर्ग-संयोगे[3] स्वकीयचिन्ता, परवर्गसंयोगे परकीयचिन्ता इत्यर्थः। कण, चण, उणि इत्यादि।

अर्थ—पाँचों वर्गोंको क्रमसे प्रथम, तृतीय वर्गके साथ मिलाकर फलकी योजना करनी चाहिए। प्रथम और तृतीयका द्वितीय और चतुर्थके साथ योग तथा पृथक् होनेके कारण-पंचम वर्गको दो भागोंमें विभक्त करनेके कारण, पंचम वर्गका प्रथम और तृतीय वर्गके साथ योग करना चाहिए। उपर्युक्त संयोगी वर्गोंके प्रश्नाक्षर होनेपर पूछनेवाला जिन वस्तुओंके सम्बन्धमें प्रश्न करता है, उन सभी वस्तुओंकी प्राप्ति होती है। यदि पूछनेवाला अपने शरीरको स्पर्श कर अर्थात् स्वशरीरको खुजलाते हुए या अन्य प्रकारसे स्पर्श करते हुए प्रश्न करे तो स्वसम्बन्धी चिन्ता और दूसरेके शरीरको छूते हुए प्रश्न करे तो परसम्बन्धी चिन्ता—प्रश्न, कहना चाहिए। यदि प्रथम, द्वितीयादि वर्गोंमें-से प्रश्नाक्षर स्ववर्ग संयुक्त हों तो स्वसम्बन्धी चिन्ता अर्थात् पृच्छक अपने शरीरादिके सम्बन्धमें प्रश्न और भिन्न-भिन्न वर्गोंके प्रश्नाक्षर हों तो परसम्बन्धी चिन्ता अर्थात् पृच्छक अपनेसे भिन्न व्यक्तियोंके सम्बन्धमें प्रश्न पूछना चाहता है। जैसे कण, चण, उणि इत्यादि।

विवेचन—प्रश्नका फल बतलानेवाले गणकको प्रश्नका फल निकालनेके लिए सबसे पहले पूर्वोक्त पाँचों वर्गोंको एक कागज या स्लेटपर लिख लेना चाहिए, फिर संयुक्त वर्ग बनानेके लिए प्रथम और द्वितीयका अर्थात् प्रथम वर्गमें आये हुए अ क च ट त प य श इन अक्षरोंका द्वितीय वर्ग वाले आ ऐ ख छ ठ थ फ र ष इन अक्षरोंके साथ योग करना चाहिए। वर्गाक्षरोंमें पंचम वर्गके अक्षर पृथक् होनेके कारण उ ऊ ङ ञ ण न म अं अः इन अक्षरोंका प्रथम और तृतीय वर्ग वाले अक्षरोंके साथ योग करना चाहिए। जैसे चण, गण, उण इत्यादि।

उदाहरण—मोतीलाल नामक कोई व्यक्ति दिन के ११ बजे प्रश्न पूछने आया। फल बलनानेवाले ज्योतिषीको सर्वप्रथम उसकी चर्या, चेष्टा, उठन-बैठन, बात-चीत आदिका सूक्ष्म निरीक्षण करना चाहिए। मनोगत भावोंके अवगत करनेमें उपर्युक्त चेष्टा, चर्यादिसे पर्याप्त सहायता मिलती है, क्योंकि मनोविज्ञान-सम्मत अबाधभावानुषङ्गके क्रमसे भविष्यत्में घटित होनेवाली घटनाएँ भी प्रतीकों द्वारा प्रकट हो जाती हैं। चतुर गणक चेहरेकी भावभंगीसे भी बहुत-सी बातोंका ज्ञान कर सकता है। अतः प्रश्नशास्त्रके साथ लक्षण शास्त्रका भी घनिष्ट सम्बन्ध है। जिसे लक्षणशास्त्रका अच्छा ज्ञान है वह बिना गणित क्रियाके फलित ज्योतिषकी सूक्ष्म बातोंको जान सकता है।

---

१. प्रथमतृतीयवर्गाभ्यां–क० मू०। २. स्वकायसंयोगे–क० मू०। ३. 'स्ववर्गसंयोगे-स्वकीयचिन्ता'–इति पाठो नास्ति–क० मू०।

पृच्छक अकेला आवे और आते ही तिनके, घास आदिको तोड़ने लगे तो समझना चाहिए कि उसका कार्य सिद्ध नहीं होगा, यदि वह अपने शरीरको खुजलाते हुए प्रश्न पूछे तो समझना चाहिए कि इसका कार्य चिन्तासहित सिद्ध होगा। अतः मोतीलाल की चर्या, चेष्टाका निरीक्षण करनेके बाद मध्याह्न कालका प्रश्न होनेके कारण उससे किसी फलका नाम पूछा, तो मोतीलालने आमका नाम बताया। अब गणक को विचार करना चाहिए कि 'आम' इस प्रश्न-वाक्यमें किस-किस वर्गके अक्षर संयुक्त हैं? विश्लेषण करनेपर मालूम हुआ कि 'आ' प्रथम वर्गका प्रथमाक्षर है और म पंचम वर्गका सप्तम अक्षर है। अतः प्रश्नमें पंचम और प्रथम वर्गका संयोग पाया जाता है, इसलिए पृच्छकके अभीष्ट कार्यकी सिद्धि होगी। प्रश्नका फल बतलानेका दूसरा नियम यह है कि पृच्छकसे पहले उसके आनेका हेतु पूछना चाहिए और उसी वाक्यको प्रश्न-वाक्य मानकर उत्तर देना चाहिए। जैसे—मोतीलालसे उसके आनेका हेतु पूछा तो उसने कहा कि मैं 'मुकद्दमेकी हार-जीत' के सम्बन्धमें प्रश्न पूछने आया हूँ। अब गणकको मोतीलालके मुखसे कहे गये 'मुकद्दमेकी हार जीत' इस प्रश्न वाक्य पर विचार करना चाहिए। इस वाक्यके प्रथम अक्षर 'मु'में पंचम वर्गके म् और उ का सम्बन्ध है, द्वितीय अक्षर 'क'में द्वितीय वर्गके क् और प्रथम वर्गके अ का संयोग है, तृतीय अक्षर 'द्द' में तृतीय वर्गके द् + द् और प्रथम वर्गके अ का संयोग है और चतुर्थ अक्षर 'मे' में पंचम वर्गके अक्षर म् और प्रथम वर्गके ए का संयोग है। अतः इस वाक्यमें प्रथम, तृतीय और पंचम वर्गका योग है, इसलिए मुकद्दमामें जीत होगी। इसी प्रकार अन्य प्रश्नोंके उत्तर निकालने चाहिए। अथवा सबसे पहले प्रश्नकर्त्ता जिस वाक्यसे बात-चीत आरम्भ करे उसीको प्रश्नवाक्य मानकर उत्तर देना चाहिए।

प्रश्नलग्नानुसार प्रारम्भिक फल निकालनेके लिए द्वादशभावोंसे निम्न प्रकार विचार करना चाहिए। लग्नसे[1] आरोग्य, पूजा, गुण, वर्त्तन, आयु, अवस्था, जाति, निर्दोषता, सुख, क्लेश, आकृति एवं शारीरिक स्थिति आदि बातोंका विचार, धनभाव—द्वितीय भावसे माणिक्य, मोती, रत्न, धातु, वस्त्र, सुवर्ण, चाँदी, धान्य, हाथी, घोड़े आदिके क्रय-विक्रयका विचार; तृतीय भावसे भाई, नौकर, दास, शूरकर्म, भ्रातृचिन्ता एवं सद्बुद्धि लाभ आदि बातोंके सम्बन्धमें विचार; चतुर्थ भावसे घर, निधि, औषध, खेत, बगीचा, मिल, स्थान, हानि, लाभ, गृहप्रवेश, वृद्धि, माता, पिता, एवं देशसम्बन्धी कार्य इत्यादि बातोंका विचार; पंचम भावसे विनय, प्रबन्ध-पटुता, विद्या, नीति, बुद्धि, गर्भ, पुत्र, प्रज्ञा, मन्त्रसिद्धि, वाक्चातुर्य एवं माताकी स्थिति इत्यादि बातोंका विचार; छठवें भावसे अस्वस्थता, खोटी दशा, शत्रु-स्थिति, उग्रकर्म, क्रूरकर्म, शंका, युद्धकी सफलता, असफलता, मामा, भैंसादि पशु, रोग एवं मुकद्दमेकी हार-जीत आदि बातोंका विचार, सातवें भावसे स्वास्थ्य, काम विकार, भार्या सम्बन्धी विचार, भानजे सम्बन्धी

१. दै० व०, पृ० ७–१०।

कार्योंका विचार, चौरकर्म, बड़े कार्योंकी सफलता और असफलताका विचार एवं सौभाग्य आदि बातोंका विचार; अष्टम भावसे आयु, विरोध, मृत्यु, राज्य-भेद, बन्धु-जनोंका छिद्र, गढ़, किला आदि की प्राप्ति, शत्रु-वध, नदी-तैरना, कठिन कार्योंमें सफलता प्राप्त करना एवं अल्पायु सम्बन्धी बातोंका विचार; नौवें भावसे धार्मिक शिक्षा, दीक्षा, देवमन्दिरका निर्माण, यात्रा, राज्याभिषेक, गुरु, धर्मकार्य, बावड़ी, कुआँ, तालाब आदिके निर्माणका विचार, साला, देवर और भावजके सुख-दुःखका विचार एवं जीवनमें सुख, शान्ति आदि बातोंका विचार; दसवें भावसे जलकी वृष्टि, मान, पुण्य, राज्याधिकार, पितृ-कार्य, स्थान-भ्रष्टता एवं सम्मान प्राप्ति आदि बातोंका विचार; ग्यारहवें भावसे कार्यकी वृद्धि, लाभ, सवारीके सुखका विचार, कन्या, हाथी, घोड़ा, चाँदी, सोना आदि द्रव्योंके लाभालाभका विचार एवं श्वसुरकी चिन्ता इत्यादि बातोंका विचार और बारहवें भावसे त्याग, भोग, विवाह, खेती, व्यय, युद्ध सम्बन्धी जय-पराजय, काका, मौसी, मामीके सम्बन्ध और उनके सुख-दुःख इत्यादि बातोंका विचार करना चाहिए।

उपर्युक्त बारह भावोंमें ग्रहोंकी स्थितिके अनुसार घटित होनेवाले फलका निर्णय करना चाहिए। ग्रहोंको दीप्त[1], दीन, स्वस्थ, मुदित, सुप्त, प्रपीड़ित, मुषित, परिहीयमानवीर्य, प्रवृद्धवीर्य, अधिकवीर्य ये दस अवस्थाएँ कही गयी हैं। उच्चराशिका ग्रह दीप्त, नीच राशिका दीन, स्वगृहका स्वस्थ, मित्रगृहका मुदित, शत्रुगृहका सुप्त, युद्धमें अन्य ग्रहोंके साथ पराजित हुआ निपीड़ित, अस्तंगत ग्रह मुषित, नीच राशिके निकट पहुँचा हुआ परिहीयमानवीर्य, उच्चराशिके निकट पहुँचा ग्रह प्रवृद्धवीर्य और उदित होकर शुभ ग्रहोंके वर्गमें रहनेवाला ग्रह अधिकवीर्य कहलाता है। दीप्त अवस्थाका ग्रह हो तो उत्तम सिद्धि; दीन अवस्थाका ग्रह हो तो दीनता, स्वस्थ अवस्थाका ग्रह हो तो अपने मनका कार्य, सौख्य एवं श्रीवृद्धि; मुदित अवस्थाका ग्रह होनेसे आनन्द एवं इच्छित कार्यों की सिद्धि; प्रसुप्त अवस्थाका ग्रह हो तो विपत्ति; प्रपीड़ित अवस्थाका ग्रह हो तो शत्रुकृत पीड़ा; मुषित अवस्थाका ग्रह हो तो धनहानि; प्रवृद्धवीर्य हो तो अश्व, गज, सुवर्ण एवं भूमि लाभ और अधिकीर्य ग्रह होनेसे शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक शक्तिका विकास एवं विपुल सम्पत्ति लाभ होता है। पहले बारह भावोंसे जिन-जिन बातोंके सम्बन्धमें विचार करनेके लिए बताया गया है, उन बातोंको ग्रहोंके बलाबलके अनुसार तथा दृष्टि, मित्रामित्र सम्बन्ध आदि विषयोंको ध्यानमें रखकर फल बतलाना चाहिए। किसी-किसी [2]आचार्यके मतसे प्रश्नकालमें ग्रहोंके उच्च, नीच, मित्र, सम, शत्रु, शयनादिमान, बलाबल, स्वभाव और दृष्टि आदि बातोंका विचार कर प्रश्नका फल बतलाना चाहिए। गणकको प्रश्न सम्बन्धी अन्य आवश्यक बातों पर विचार करनेके साथ ही यह भी विचार कर लेना चाहिए कि पृच्छक दुष्टभावसे प्रश्न तो नहीं कर रहा है।

---

१. दै० व०, पृ० ३–४। २. प्र० भू०, पृ० १३।

यदि दुष्टभावसे प्रश्न करता है तो उसे निष्फल समझकर उत्तर नहीं देना चाहिए। प्रश्नका सम्यक् फल तभी निकलता है जब पृच्छक अपनी अन्तरंग प्रेरणासे प्रेरित हो प्रश्न करता है, अन्यथा प्रश्नका फल साफ नहीं निकलता। दुष्टभावसे किये गये प्रश्न की पहचान यह है कि यदि प्रश्न लग्नमें चन्द्रमा और शनि हो, सूर्य कुम्भ राशिमें हो और बुध प्रभाहीन हो तो दुष्टभावसे किया गया प्रश्न समझना चाहिए।

संयुक्त प्रश्नाक्षर और उनका फल

[1]अथ संयुक्तानि[2] कादिगादीनि संयुक्तानि प्रश्नाक्षराणि प्रश्ने लाभः पुत्रादिवस(श) क्षेमकराणि। [3]जादिगादीनि प्रश्नाक्षराणि लाभकराणि स्त्रीजन-कारीणि।

अर्थ—संयुक्तोंको कहते हैं—कादि—क च ट त प य श इन प्रथम वर्गके अक्षरोंको गादि–ग ज ड द ब ल स इन तृतीय वर्गके अक्षरोंके साथ मिलानेसे संयुक्त प्रश्न बनते हैं। संयुक्त प्रश्न होनेपर लाभ होता है और पुत्रादिके कारण कल्याण होता है। यदि प्रश्नाक्षर जादि, गादि अर्थात् तृतीय वर्गके ज ग ड द ब ल स हों तो लाभ करानेवाले तथा स्त्री-पुत्रादिकी प्राप्ति करानेवाले होते हैं।

विवेचन—पहले आचार्यने संयुक्त, असंयुक्त, अभिहित, अनभिहित, अभिघातित, आलिंगित, अभिधूमित और दग्ध ये आठ भेद प्रश्नोंके कहे हैं। इन आठ प्रश्नभेदोंका लक्षण और फल बतलाते हुए सर्वप्रथम संयुक्तका फल और लक्षण बताया है। प्रथम और तृतीय वर्गके अक्षरोंके संयोगवाले प्रश्न संयुक्त कहलाते हैं, संयुक्त प्रश्न होनेपर लाभ होता है। केरलसंग्रहादि कतिपय ज्योतिष ग्रन्थोंमें अपने शरीरको स्पर्श करते हुए प्रश्न करनेका नाम ही संयुक्त प्रश्न कहा है। इस मतके अनुसार भी संयुक्त प्रश्न होनेपर लाभ होता है। उदाहरण—जैसे देवदत्त प्रश्न पूछने आया कि मैं परीक्षामें पास होऊँगा या नहीं? गणकने किसी अबोध बालकसे फलका नाम पूछा तो उसने 'लौका' का नाम लिया। अब प्रश्नवाक्य 'लौका' का विश्लेषण किया तो प्रथमाक्षर 'लौ' में तृतीयवर्गका 'ल्' और चतुर्थवर्गका 'औ' संयुक्त है तथा द्वितीय वर्ण 'का' में प्रथमवर्गके क् और आ दोनों ही वर्ण सम्मिलित हैं, अतः प्रश्नमें प्रथम, तृतीय और चतुर्थ वर्गका संयोग है। उपर्युक्त विश्लेषित वर्गोंमें अधिकांश वर्ण प्रथम और तृतीय

---

१. "प्रथमतृतीयाक्षरयोः संयुक्तेति स्वतो मिथश्चाख्याः। कग, चज, टड, तद, पब, यल, शस, कज, चग, टग, तग, पग, यग, शग, टज, तज, पज, यज, शज, कड, चड, तड, पड, यड, शड, कद, चद, टद, पद, तद, शद, यद, कब, चब, टब, तब, पब, यब, शब, कल, चल, टल, तल, पल, यल, शल, कस, चस, टस, तस, पस, यस, इत्याद्यनन्तभेदाः भवन्ति।"—के० प्र० र०, पृ० २७-२६। चन्द्रो० श्लो० ३४-३७। के० प्र० सं० पृ० ४। नरपतिज०, पृ० ११। २. संयुक्तादीनि क० मू०। ३. चादिगादीनि क० मू०।

वर्णके हैं, अतः यह संयुक्त प्रश्न है। इसका फल परीक्षामें उत्तीर्णता प्राप्त करना है। प्रस्तुत ग्रन्थमें यह एक विशेषता है कि केवल तृतीयवर्गके वर्णोंकी भी संयुक्त संज्ञा बतायी गयी है। संयुक्त संज्ञक प्रश्न धन लाभ करानेवाले एवं स्त्री, पुत्रादिकी प्राप्ति करानेवाले होते हैं।

प्रश्नकुतूहलादि जिन ग्रन्थोंमें प्रश्नाक्षरोंके मगण, यगणादि भेद किये गये हैं, उनके मतानुसार प्रश्नकर्त्ताके प्रश्नाक्षर मगण, नगण, भगण और यगण इन चारों गणोंसे संयुक्त[1] हों तो लाभ होता है। यदि मगण और नगण इन दो गणोंसे संयुक्त प्रश्नाक्षर हों तो दिनमें लाभ और भगण एवं यगण इन दो गणोंसे संयुक्त प्रश्नाक्षर हों तो रातमें लाभ होता है। यदि जगण और रगण इन दो गणों से संयुक्त प्रश्नाक्षर हों तो दिनमें हानि एवं सगण और तगण इन दो गणोंसे संयुक्त प्रश्नाक्षर हों तो रातमें हानि होती है। जगण, रगण, सगण और तगण इन चार गणोंसे संयुक्त प्रश्नाक्षर हों तो कार्यहानि समझनी चाहिए।

लग्नानुसार प्रश्नोंका फल निकालनेका प्राचीन नियम इस प्रकार है कि ज्योतिषीको [2]पूर्वकी ओर मुख कर मेष, वृष आदि १२ राशियोंकी कल्पना कर लेनी चाहिए और पृच्छक जिस दिशामें हो उस दिशाकी राशिको आरूढ़ लग्न मानकर फल कहना चाहिए। उपर्युक्त नियमका संक्षिप्त सार यह है—मेष, वृष आदि बारह राशियोंको लिखकर उनकी पूर्वादि दिशाएँ मान लेनी चाहिए अर्थात् मेष और वृष पूर्व, मिथुन कर्क सिंह और कन्या दक्षिण, तुला और वृश्चिक पश्चिम एवं धनु मकर कुम्भ और मीन उत्तर संज्ञक हैं। निम्न चक्रसे आरुढ़ लग्नका ज्ञान अच्छी तरह हो सकता है।

आरूढ़ राशि बोधक-चक्र

पूर्व

	१२	१	२	३	
उत्तर	११			४	दक्षिण
	१०			५	
	९	८	७	६	

पश्चिम

उदाहरण—मोतीलाल प्रश्न पूछने आया और वह पूर्वकी ओर ही बैठ गया। अब यहाँ विचार करना है कि पूर्व दिशाकी मेष और वृष इन दो राशियोंमें-से कौन-सी राशिको आरूढ़ लग्न माना जाय? यदि मोतीलाल उत्तर-पूर्वके कोनेके निकट है तो

१. प्र० कु०, पृ० १२। २. बृ० पा० हो०, पृ० ७४०।

मेष और दक्षिण-पूर्वके कोनेके निकट है तो वृष राशिको आरूढ़ लग्न मानना चाहिए। विचारनेसे पता लगा कि मोतीलाल दक्षिण और पूर्वके कोनेके निकट है अतः उसकी आरूढ़ लग्न वृष मानना चाहिए। आरूढ़ लग्न निकालनेके सम्बन्धमें मेरा निजी मत यह है कि उपर्युक्त चक्रके अनुसार बारह राशियोंको स्थापित कर लेना चाहिए, फिर पृच्छकसे किसी भी राशिका स्पर्श कराना चाहिए, जिस राशिको पृच्छक छुए उसीको आरूढ़ लग्न मानकर फल बताना चाहिए। फल प्रतिपादन करनेके लिए आरूढ़ लग्नके साथ लग्नका भी विचार करना आवश्यक है। अतः छत्र लग्नका ज्ञान करनेके लिए मेषादि वीथियोंको जान लेना चाहिए। वृष[1], मिथुन, कर्क और सिंह इन चार राशियों-की मेष वीथी; वृश्चिक, धनु, मकर और कुम्भ इन चार राशियोंकी मिथुन वीथी और मेष, मीन, कन्या और तुला इन चार राशियोंकी वृषभ वीथी जाननी चाहिए। आरूढ़-लग्नसे वीथीकी राशि जितनी संख्यक हो प्रश्नलग्नसे उतनी ही संख्यक राशि छत्रलग्न कहलाती है। [2]ज्ञानप्रदीपिकाकारके मतानुसार मेष प्रश्न लग्नकी छत्र राशि वृष; वृषकी मेष; मिथुन, कर्क और सिंहकी छत्र राशि मेष; कन्या और तुलाकी मेष; वृश्चिक और धनु की मिथुन; मकर की मिथुन; कुम्भ की मेष और मीन की वृष छत्र राशि है। प्रश्न-समयमें आरूढ़, छत्र और प्रश्न लग्नके बलाबलसे प्रश्नका उत्तर देना चाहिए। प्रश्नका विशेष विचार करनेके लिए भूत[3], भविष्य, वर्तमान, शुभाशुभ दृष्टि, पाँच मार्ग, चार केन्द्र, बलाबल, वर्ग, उदयबल, अस्तबल, क्षेत्र, दृष्टि, नर, नारी, नपुंसक, वर्ण, मृग तथा नर आदि रूप, किरण, योजन, आयु, रस एवं उदयमान आदि बातोंकी परीक्षा करना अत्यावश्यक है। यदि प्रश्न[4] करनेवाला एक ही समयमें बहुत-से प्रश्न पूछे तो पहला प्रश्न लग्नसे, दूसरा चन्द्रमासे, तीसरा सूर्यके स्थानसे, चौथा बृहस्पतिके स्थानसे, पाँचवाँ प्रश्न बुधके स्थानसे और छठवाँ बली शुक्र या बुध इन दोनोंमें जो अधिक बलवान् हो उसीके स्थानसे बतलाना चाहिए। ग्रह अपने क्षेत्रमें, मित्रक्षेत्रमें, अपने और मित्रके षड्वर्गोंमें, उच्चराशिमें, मूलत्रिकोणमें, नवांशमें, शुभ ग्रहसे दृष्ट होनेपर बलवान् होते हैं। चन्द्रमा और शुक्र स्त्रीराशि—वृष, कर्क, कन्या, वृश्चिक, मकर और मीन इन राशियोंमें; सूर्य, मंगल, बुध, गुरु और शनि पुरुष राशियोंमें—मेष, मिथुन, सिंह, तुला, धनु और कुम्भ इन राशियोंमें बलवान् होते हैं। बुध और बृहस्पति लग्नमें स्थित रहनेसे पूर्व दिशामें, सूर्य और मंगल चौथे स्थानमें रहनेसे दक्षिण दिशामें, शनि सातवें भावमें रहनेसे पश्चिम दिशामें और शुक्र दसवें भावमें रहनेसे उत्तर दिशामें दिग्बली होते हैं। तथा चन्द्रमा और सूर्य उत्तरायणमें अन्य भौमादि पाँच ग्रह वक्री, उज्ज्वल एवं पुष्ट रहनेसे बलवान् होते हैं। सूर्य, शुक्र और बृहस्पति दिनमें; मंगल और शनि रात्रिमें; बुध दिन और रात्रि दोनोंमें; शुभ ग्रह शुक्लपक्षमें और अपने-अपने दिन, मास, ऋतु, अयन, वर्ष और काल होरामें एवं पाप ग्रह कृष्णपक्ष और अपने-अपने दिन, मास, ऋतु,

---

१. बृ० पा० हो०, पृ० ७४१। २. ज्ञा० प्र०, पृ० ८। ३. ज्ञा० प्र०, पृ० १। ४. ता० नी०, पृ० २५४। ज्ञा० प्र०, पृ० १।

अयन, वर्ष और काल होरामें बली होते हैं। इस प्रकार ग्रहोंके कालबलका विचार करना चाहिए। प्रश्नकालमें स्थानवल और सम्बन्धबलका विचार करना भी परमावश्यक है। तथा लग्नसे विचार करनेवाले ज्योतिषीको भावविचार निम्न प्रकारसे करना चाहिए। जो भाव अपने स्वामीसे युत हों या देखे जाते हों अथवा बुध, गुरु और पूर्णचन्द्रसे युक्त हों तो उनकी वृद्धि होती है और पापग्रह संयुक्त बुध, क्षीण चन्द्रमा, शनि, मंगल और सूर्यसे युत या देखे जाते हों तो हानि होती है।

असंयुक्त प्रश्नोत्तर

[1]अथासंयुक्तानि प्रथमद्वितीयौ कख, चछ इत्यादि; [2]द्वितीयचतुर्थौ खग, छज इत्यादि; तृतीयचतुर्थौ गघ, जझ इत्यादि; चतुर्थपञ्चमौ घङ, झञ इत्यादि।

अर्थ—असंयुक्त प्रश्नाक्षर प्रथम द्वितीय, द्वितीय-चतुर्थ, तृतीय-चतुर्थ और चतुर्थ-पंचम वर्गके संयोगसे बनते हैं। १—प्रथम और द्वितीय वर्गाक्षरोंके संयोगसे—कख, चछ, टठ,तथ, पफ. यर इत्यादि; २—द्वितीय और चतुर्थ वर्गाक्षरोंके संयोगसे—खघ, छझ, ठढ, थध, फभ, रव इत्यादि; ३—तृतीय और चतुर्थ वर्गाक्षरोंके संयोगसे—गघ, जझ, डढ, दध, बभ, यल इत्यादि एवं चतुर्थ और पंचम वर्गाक्षरोंके संयोगसे घङ, झञ ढण, धन, भम इत्यादि विकल्प बनते हैं।

विवेचन—प्रस्तुत ग्रन्थके अनुसार प्रश्नकर्त्ताके प्रश्नाक्षर प्रथम-द्वितीय, द्वितीय-चतुर्थ, तृतीय-चतुर्थ और चतुर्थ-पंचम वर्गके हों तो असंयुक्त प्रश्न समझना चाहिए। प्रश्नवाक्यमें असंयुक्त प्रश्नोंका निर्णय करनेके लिए वर्गोंका सम्बन्ध क्रमसे लेना चाहिए। असंयुक्त प्रश्न होनेसे फलकी प्राप्ति बहुत दिनोंके बाद होती है। यदि प्रथम-द्वितीय वर्गोंके अक्षर मिलनेसे असंयुक्त प्रश्न हो तो धन-लाभ, कार्य-सफलता और राज-सम्मान; द्वितीय-चतुर्थ वर्गाक्षरोंके संयोगसे असंयुक्त प्रश्न हो तो मित्रप्राप्ति, उत्सववृद्धि और कार्यसाफल्य; तृतीय-चतुर्थ वर्गाक्षरोंके संयोगसे असंयुक्त प्रश्न हो तो अल्पलाभ, पुत्रप्राप्ति, मांगल्यवृद्धि और प्रियजनों से विवाद एवं चतुर्थ-पंचम वर्गाक्षरों के संयोगसे असंयुक्त प्रश्न हो तो घरमें विवाहादि मांगलिक उत्सवोंकी वृद्धि, स्वजन-प्रेम, यशप्राप्ति, महान् कार्योंमें लाभ और वैभव-वृद्धि इत्यादि फलोंकी प्राप्ति होती है। यदि प्रश्नकर्त्ताका वाचिक प्रश्न हो और उसके प्रश्नवाक्यके अक्षर असंयुक्त हों तो पृच्छकको कार्यमें सफलता मिलती है। आचार्यप्रवर गर्गके मतानुसार असंयुक्त प्रश्नोंका फल पृच्छकके मनोरथको पूरण

---

१. "समवर्णयोश्च तद्वन्नगवर्गाणामसंयुक्ताः।"—के० प्र० र०, पृ० २७। २. द्वितीय-तृतीयौ क०मू०।

करनेवाला होता है। कुछ ग्रन्थोंमें बताया गया है कि यदि पृच्छक[1] रास्ते में हो, शयनागारमें हो, पालकीमें बैठा हो या मोटर, साइकिल, घोड़े, हाथी अथवा अन्य किसी सवारीपर सवार हो, भावरहित हो और फल या द्रव्य हाथमें न लिये हो तो असंयुक्त प्रश्न होता है, इस प्रश्नमें बहुत दिनोंके बाद लाभादि सुख होता है। कहीं-कहीं यह भी बताया गया है कि पृच्छक पश्चिम दिशाकी ओर मुँह कर प्रश्न करे तथा प्रश्न समयमें आकर कुर्सी, टेबुल, बेंच या अन्य काष्ठकी चीजोंको छूता हुआ या नोंचता हुआ बातचीत आरम्भ करे और पृच्छकके मुखसे निकला हुआ प्राथमिक वाक्य दीर्घाक्षरोंसे शुरू हुआ हो तो असंयुक्त प्रश्न होता है। इसका फल प्रारम्भमें कार्यहानि और अन्तमें कार्य-साफल्य समझना चाहिए। चन्द्रोन्मीलन एवं केरलसंग्रहादि कुछ प्रश्नग्रन्थोंके अनुसार असंयुक्त प्रश्नोंका फल अच्छा नहीं है अर्थात् धनहानि, शोक, दुःख, चिन्ता, अपयश एवं कलह-वृद्धि इत्यादि अनिष्ट फल समझना चाहिए।

असंयुक्त एवं अभिहत प्रश्नाक्षर और उनका फल

असंयुक्तानि द्वितीयवर्गाक्षराण्यूर्ध्वम्, प्रथमवर्गाक्षराण्यधः परिवर्तनतः प्रथम-द्वितीयान्यसंयुक्तानि भवन्ति खक, छच इत्यादि; तृतीयवर्गाक्षराण्यूर्ध्वं द्वितीयवर्गाक्षराण्यधः पतितान्यभिहतानि भवन्ति गख इत्यादि; एवं चतुर्थान्युपरि तृतीयान्यधः, घग इत्यादि। पञ्चमाक्षराण्यधः, उपरि चतुर्थाक्षराणि चेदप्यभिहतानि भवन्ति ङघ, ञझ इत्यादि; स्ववर्गे स्वकीयचिन्ता परवर्गे परकीय-चिन्ता।[2][3]

अर्थ—असंयुक्त प्रश्नाक्षरोंको कहते हैं—द्वितीय वर्गाक्षरके वर्ण ऊपर और प्रथम वर्गाक्षरके वर्ण नीचे रहनेपर उनके परिवर्तनसे प्रथम-द्वितीय वर्गजन्य असंयुक्त होते हैं—जैसे द्वितीय वर्गाक्षर 'ख' को ऊपर रखा और प्रथम वर्गाक्षर 'क' को नीचे रखा और इन दोनोंका परिवर्तन किया अर्थात् प्रथमके स्थानपर द्वितीयको और द्वितीयके स्थानपर प्रथमको रखा तो खक, छच इत्यादि विकल्प बने। तृतीय वर्गके वर्णके ऊपर और द्वितीय वर्गके वर्ण नीचे हों तो उनके परिवर्तनसे द्वितीय तृतीय वर्गजन्य अभिहत होते हैं—जैसे तृतीय वर्गके वर्ण ग को ऊपर रखा और द्वितीय वर्गके वर्ण ख को नीचे अर्थात् ख ग इस प्रकार रखा, फिर इनका परिवर्तन किया तो तृतीयके स्थानपर द्वितीय वर्णको रखा और द्वितीय वर्गके वर्णके स्थानपर तृतीय वर्गके वर्णको रखा तो ग ख, ज छ, ड ठ इत्यादि विकल्प बने। इसी प्रकार चतुर्थ वर्गके वर्ण ऊपर और तृतीय वर्गके वर्ण नीचे हों, तो उनके परिवर्तनसे तृतीय-चतुर्थ वर्गजन्य अभिहत होते हैं—जैसे

१. के० प्र० सं०, पृ० ४। २. "प्रश्नार्णौ चेत् क्रमगावभिहितसंज्ञन्"-के० प्र० र०, पृ० २७। "यदि प्रष्टा प्रश्नसमये वामहस्तेन वामाङ्गं स्पृशति तदाऽभिहतः प्रश्नः, अलाभकरो भवति।"-के० प्र०, सं० ५। ३. पञ्चमाक्षराण्युपरि चतुर्थाक्षराण्यधः क० मू०।

चतुर्थ वर्गका वर्ण 'घ' ऊपर और तृतीय वर्गका ग नीचे हो अर्थात् ग घ इस प्रकारकी स्थिति हो तो इसके परस्पर परिवर्तनसे अर्थात् वर्गाक्षरके स्थानपर तृतीय वर्गाक्षरके पहुँचनेसे और तृतीय वर्गाक्षरके स्थानपर चतुर्थ वर्गाक्षरके पहुँचनेसे तृतीय-चतुर्थ वर्ग-जन्य अभिहत घ ग, झ ज, ढ ड इत्यादि विकल्प बनते हैं। पंचम वर्गके अक्षर ऊपर और चतुर्थ वर्गके अक्षर नीचे हों तो इनके परिवर्तनसे चतुर्थ-पंचमवर्गजन्य अभिहत होते हैं; जैसे ङ घ, ञ झ इत्यादि। स्ववर्गके प्रश्नाक्षर होनेपर स्वकीय चिन्ता और परवर्गके प्रश्नाक्षर होनेपर परकीय चिन्ता होती है। यहाँ स्ववर्गके संयोगसे तात्पर्य कवर्ग, चवर्ग आदि वर्गोंके वर्णोंके संयोगसे है अर्थात् खक, छच, जछ, ङघ, घग, ञझ, झज इत्यादि संयोगी वर्ण स्ववर्ग संयोगी कहलायेंगे और भिन्न-भिन्न वर्गोंके वर्णोंके संयोगी विकल्प परवर्ग कहलाते हैं अर्थात् खच, छक, जख, ञघ, झग; ङझ, घञ, इत्यादि विकल्प परवर्ग माने जायेंगे।

विवेचन—प्रश्नकर्त्ताके प्रश्नाक्षरोंमें—कख, खग, गघ, घङ, चछ, छज, जझ, झञ, टठ, ठड, डढ, ढण, तथ, थद, दध, धन, पफ, फब, बभ, भम, यर, रल, लव, शष, षस और सह इन वर्णोंके क्रमशः विपर्यय होनेपर परस्परमें पूर्व और उत्तरवर्ती हो जानेपर अर्थात् खक, गख, घग, ङघ, छच, जछ, झज, ञझ, ठट, डठ, ढड, णढ, थत, दथ, धद, नध, फप, बफ, भब, मभ, रय, लर, वल, षश, सष एवं हस होनेपर अभिहत प्रश्न होता है। इस प्रकारके प्रश्नमें प्रायः कार्यसिद्धि नहीं होती है। केवल अभिहित प्रश्नसे ही फल नहीं बतलाना चाहिए, बल्कि पृच्छककी चर्या और चेष्टापर ध्यान देते हुए लग्न बनाकर लग्नके स्वामियोंके अनुसार फल बतलाना चाहिए। यदि लग्नका स्वामी बलवान् हो तथा शुभ एवं बली ग्रहोंके साथ हो या शुभ ग्रहोंकी दृष्टि हो तो इस प्रकारकी प्रश्नलग्नकी स्थितिमें कार्यसिद्धि कहनी चाहिए। लग्नके स्वामी[1] पापग्रह (क्षीण चन्द्रमा, सूर्य, मंगल, शनि एवं इन ग्रहोंसे युक्त बुध) हों, कमजोर हों, शत्रु स्थान[2] में हों तथा अशुभ ग्रहोंसे (सूर्य, मंगल, शनि, राहु और केतु से) दृष्ट एवं युत हों तो प्रश्नलग्न निर्बल होता है, ऐसे लग्नमें किया गया प्रश्न कदापि सिद्ध नहीं हो सकता है। लग्न और लग्नेशके साथ कार्यस्थान और कार्येशका भी विचार करना आवश्यक होता है।

किसी-किसी का[3] मत है कि प्रश्नलग्नेश लग्नको और कार्येश कार्यस्थानको देखे

---

१. "सिंहस्याधिपतिः सूर्यः कर्कटस्य निशाकरः। मेषवृश्चिकयोर्भौमः कन्यामिथुनयोर्बुधः॥ धनुमीनयोर्मन्त्री तुलावृषभयोर्भृगुः। शनिर्मकरकुम्भयोश्च राशीनामधिपा इमे॥"—ज्ञानप्रदीपिका, पृ० ३। २ शत्रुवर्ग—"बुधस्य वैरी दिनकृत् चन्द्रादित्यौ भृगोररी। बृहस्पते रिपुर्भौमः शुक्रसोमात्मजौ विना। शनेश्च रिपवः सर्वे तेषां तत्तद्ग्रहाणि च॥" मित्रवर्ग—"भौमस्य मित्रे शुक्रज्ञौ भृगोर्ज्ञार्कमन्त्रिणः। अङ्गारकं विना सर्वे ग्रहमित्राणि मन्त्रिणः। आदित्यस्य गुरुर्मित्रं शनेर्विद्गुरुभार्गवाः। भास्करेण विना सर्वे बुधस्य सुहृदस्तथा॥ चन्द्रस्य मित्रं जीवज्ञौ मित्रवर्गं उदाहृतः॥"—ज्ञानप्रदीपिका, पृ० २–४। ३. प्र० मू०, पृ० १४।

तो कार्य सिद्ध होता है। यदि लग्नेश कार्यस्थानको और कार्येश लग्नस्थानको देखे तो भी कार्य सिद्ध होता है अथवा लग्नस्थानमें रहनेवाला लग्नेश कार्यस्थानमें रहनेवाले कार्येशको देखे तो भी कार्य सिद्ध होता है। यदि प्रश्नकुण्डलीमें ये तीनों बली योग हों और लग्न या कार्यस्थानके ऊपर पूर्णबली चन्द्रमाकी दृष्टि हो तो अति शीघ्र अल्प परिश्रमसे ही कार्य सिद्ध होता है। कार्यसिद्धिका एक अन्य योग यह भी है कि यदि प्रश्नलग्न शुभ ग्रहके षड्वर्गमें हो या शुभग्रहसे युत हो, अथवा मेषादि विषमराशि लग्न हो तो शीघ्र ही कार्य सिद्ध होता है।

मूर्ध्वोदय अर्थात्[1] मिथुन, सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक और कुम्भ प्रश्नलग्न हों और शुभग्रह—बुध, शुक्र, गुरु और चन्द्रमा लग्नमें हों तो प्रश्नका फल शुभ और पृष्ठोदय अर्थात् मेष, वृष, कर्क, धनु और मकर प्रश्नलग्न हों और लग्नमें पापग्रह हों तो अशुभ फल कहना चाहिए। केन्द्र (१।४।७।१०) और नवम, पंचम स्थानमें शुभ ग्रह हों और केन्द्र तथा अष्टम स्थानको छोड़कर तृतीय, षष्ठ और एकादश स्थानमें अशुभ ग्रह हों तो पूछनेवालेके मनोरथोंकी सिद्धि होती है। केन्द्रका स्वामी लग्नमें हो अथवा उसका मित्र केन्द्रमें हो और पापग्रह केन्द्र और बारहवें भावके अतिरिक्त अन्य स्थानोंमें हों तो कार्यसिद्धि होती है। पुरुष राशि अर्थात् मेष, मिथुन, सिंह, तुला, धनु और कुम्भ प्रश्नलग्न हों और लग्न, चतुर्थ, सप्तम और दशम स्थानमें शुभ ग्रह हों तो भी कार्यकी सिद्धि होती है। कन्या, तुला, मिथुन, कुम्भ और नर संज्ञक राशियाँ प्रश्नलग्न हों और लग्नमें शुभग्रह हों तथा पापग्रह ग्यारहवें और बारहवें स्थानमें हों तो भी कार्यकी सिद्धि समझनी चाहिए। चतुष्पद अथवा द्विपद राशियाँ लग्नमें हों और पापग्रहसे युक्त हों, उन पाप ग्रहोंसे दृष्ट शुभ ग्रहोंकी लग्न पर दृष्टि होनेसे नर राशिका लग्न हो तो शुभ फल होता है। लग्न और चन्द्रमाके ऊपर शुभ ग्रहोंकी दृष्टि हो तो शुभ और पाप ग्रहोंकी दृष्टि हो तो अशुभ फल जानना चाहिए। यदि लग्नका स्वामी चतुर्थको और कार्यभावका स्वामी कार्यभावको त्रिपाद दृष्टिसे देखें अथवा दोनोंकी परस्पर दृष्टि हो एवं चन्द्रमा लग्नेश और कार्येश इन दोनोंको देखता हो तो पूर्वरीतिसे कार्य की सिद्धि कहनी चाहिए।

अनभिहत प्रश्नाक्षर और उनका फल

इदानीमनभिहतानाह—अकारास्वरसंयुक्तान[3]न्यस्वरसंयोगवर्जितान् अ क च ट त प य शादीन् ङ ञ ण न मांश्च प्रश्ने पतिताननभिहतान् ब्रुवन्ति। [4]व्याधिपीडां परवर्गे शोकसन्तापदुःखभयपीडाञ्च निर्दिशेत्।

अर्थ—अब अनभिहत प्रश्नाक्षरोंको कहते हैं—अकार स्वरसहित और अन्य स्वरोंसे रहित अ क च ट त प य श ङ ञ ण न म ये प्रश्नाक्षर हों तो अनभिहत प्रश्न

१. दै० व०, पृ० ११–१२। २. तुलना—के० प्र० र०, पृ० २८। के० प्र० सं०, पृ० ५। चं० प्र० श्लो० ३५। केरल सं०, पृ० ५। ज्योतिष सं०, पृ० ४। ३. युक्तानि क० मू०।
४. स्ववर्गे परवर्गे व्याधिपीडितानां शोकसन्तापदुःखभयपीडां निर्दिशेत् क० मू०।

होता है। यह अनभिहत प्रश्न स्ववर्गाक्षरोंमें हो तो व्याधि और पीड़ा एवं अन्य वर्गाक्षरोंमें हो तो शोक, सन्ताप, दुःख, भय और पीड़ा फल जानना चाहिए।

विवेचन—किसी-किसीके मतसे प्रथम-पंचम, प्रथम-चतुर्थ, द्वितीय-पंचम और तृतीय-पंचम वर्गसे संयुक्त वर्णोंकी अनभिहत संज्ञा बतायी गयी है। चन्द्रोन्मीलन प्रश्नके अनुसार पूर्व और उत्तर वर्ग संयुक्त वर्णोंकी अनभिहत संज्ञा होती है और जब प्रश्नाक्षरोंमें केवल पंचमवर्गके वर्ण हों तो उसे अघातन कहते हैं। अघातन प्रश्नका फल अत्यन्त अनिष्टकारक होता है। इस ग्रन्थके अनुसार अनभिहत प्रश्नका फल रोग, शोक, दुःख, भय, धनहानि एवं सन्तानकष्ट होता है। जैसे—मोतीलाल प्रश्न पूछने आया; ज्योतिषीने उससे किसी फूलका नाम पूछा तो उसने चमेलीका नाम लिया। चमेली प्रश्नवाक्यमें अनभिहत प्रश्नाक्षर है या नहीं? यह जाननेके लिए उपर्युक्त वाक्यका विश्लेषण किया तो प्रश्न वाक्यका प्रारम्भिक अक्षर 'च' है, इसमें अ स्वर और च् व्यंजन का संयोग है, द्वितीय अक्षर 'मे' में ए स्वर और म् व्यंजनका संयोग है तथा तृतीयाक्षर 'ली' में ई स्वर और ल् व्यंजनका संयोग है। इस विश्लेषणमें अ + च + म् ये तीन वर्ण अनभिहत, ई अभिधूमित, ए आलिंगित और 'ल्' अभिहतसंज्ञक हैं। "परस्परम् अक्षराणि शोधयित्वा योऽधिकः स एव प्रश्नः" इस नियमके अनुसार यह प्रश्न अनभिहत हुआ, क्योंकि सबसे अधिक वर्ण अनभिहत वर्गके हैं। किसी-किसीके मतसे प्रथम वर्ण जिस प्रश्नका हो, वही प्रधान रूपसे ले लिया जाता है। जैसे उपर्युक्त प्रश्न वाक्यमें 'च' अक्षरमें स्वर और व्यंजन दोनों ही अनभिहत प्रश्नके हैं अतः आगेवाले विश्लेषणपर विचार न कर उसे अनभिहत ही मान लिया जायेगा।

अभिघातित प्रश्नाक्षर और उनका फल

अथाभिघातितानि[2]—चतुर्थवर्गाक्षराण्युपरि प्रथमवर्गाक्षराण्यधः[3] पातितान्यभिघातितानि भवन्ति घ क, झ च इत्यादि। पञ्चमवर्गाक्षराण्युपरि द्वितीयवर्गाक्षराण्यधः [4]पातितान्यभिघातितानि भवन्ति ङ ख, ञ छ इत्यादि। अनेन[5] पितृचिन्ता मृत्युं च निर्दिशेत्।

अर्थ—अभिघातित प्रश्नाक्षर कहते हैं। चतुर्थ वर्गाक्षरके ऊपर और प्रथम वर्गाक्षरके नीचे रहनेपर परस्परमें परावर्तन हो जानेसे अर्थात् चतुर्थ वर्गाक्षरके पूर्ववर्ती और प्रथम वर्गाक्षरके परवर्ती होनेसे अभिघातित प्रश्न होते हैं। जैसे घक, झच, ढट, भप, धत, वय इत्यादि। पंचम वर्गाक्षरके ऊपर और द्वितीय वर्गाक्षरके नीचे रहनेपर परस्परमें परावर्तन हो जानेसे अर्थात् पंचम वर्गाक्षरके पूर्ववर्ती और द्वितीय वर्गाक्षरके उत्तरवर्ती होनेसे अभिघातित प्रश्न होते हैं। जैसे ङख, ञच, णठ, इत्यादि। इन अभिघातित प्रश्नोंका फल पितासम्बन्धी चिन्ता और मृत्यु कहना चाहिए।

---

१. तुलना—के० प्र० सं०, पृ० ५। २. अभिघातित क० मू०। ३. वर्गाणि क० मू०। ४. पातितानीति पाठो नास्ति क० मू०। ५. अनेनेति पाठो नास्ति क० मू०।

विवेचन—अभिघातित प्रश्न अत्यन्त अनिष्टकर होता है। इसका लक्षण भिन्न-भिन्न आचार्योंने भिन्न-भिन्न प्रकारका बताया है। कोई चतुर्थ-प्रथम, तृतीय-द्वितीय और चतुर्थ-तृतीय वर्गके वर्णोंके प्रश्न श्रेणीमें रहनेपर अभिघातित प्रश्न कहते हैं, तथा अन्य किसीके मतसे प्रश्नकर्त्ता कमर, हृदय, हाथ, पैरको मलता हुआ प्रश्न करे तो भी अभिघातित प्रश्न होता है। इस ग्रन्थानुसार यदि प्रश्नश्रेणीके सभी वर्ग चतुर्थ वर्गाक्षर और प्रथम वर्गाक्षरके हों अथवा पंचम वर्गाक्षर और द्वितीय वर्गाक्षरके हों तो अभिघातित प्रश्न समझना चाहिए। जैसे मोहन प्रश्न पूछने आया, ज्योतिषीने उससे किसी कपड़ेका नाम पूछा तो उसने धोतीका नाम बताया। मोहनके इस प्रश्न वाक्यमें 'धो' वर्ग चतुर्थ वर्गका और 'त' प्रथम वर्गका है अतः यह अभिघातित प्रश्न हुआ, इसका फल पिताकी मृत्यु या पृच्छककी मृत्यु समझना चाहिए।

प्रश्नलग्नानुसार मृत्यु ज्ञात करनेकी विधि यह है कि प्रश्नलग्न[1] मेष, वृष, कर्क, धनु और मकर इन राशियोंमें-से कोई हो और पाप ग्रह—क्षीण चन्द्रमा, सूर्य, मंगल, शनि चौथे, सातवें और बारहवें भावमें हो अथवा मंगल, दूसरे और नौवें भावमें हों एवं चन्द्रमा अष्टम भावमें हो तो पृच्छककी मृत्यु होती है। ज्योतिषीको प्रश्नका फल बतलाते समय केवल एक ही योगसे मृत्युका निर्णय नहीं करना चाहिए, बल्कि दो-चार योगोंको विचार कर ही फल बतलाना चाहिए। यहाँ विशेष जानकारीके लिए दो-चार योगोंके लक्षण दिये जाते हैं। प्रश्नलग्नमें पापग्रहोंका दुरुधरा योग हो, चन्द्रमा सातवें और चौथे भावमें स्थित हो, सूर्य प्रश्नलग्नमें स्थित हो और प्रश्न समयमें राहुकाल समायोग[2] हो तो पृच्छक जिसके सम्बन्धमें प्रश्न पूछता है उसकी मृत्यु होती है। यदि प्रश्नकालमें वैधृति, व्यतीपात, आश्लेषा, रेवती, कर्कांश, विषघटी, दिन—मंगल, बुध, गुरु, शुक्र और शनि, पापग्रह युक्त नक्षत्र, सायंकाल, प्रातःकाल और मध्याह्नकालकी सन्ध्याका समय, मासशून्य, तिथिशून्य, नक्षत्रशून्य हों तथा प्रश्नलग्नसे क्षीणचन्द्रमा बारहवें और आठवें भावमें हो अथवा बारहवें और आठवें भावपर शत्रुग्रहकी दृष्टि हो एवं राहु आठवीं राशिको स्पर्श करे तो पृच्छक जिसके सम्बन्धमें पूछता है उसकी मृत्यु होती है। लग्नेश[3] और अष्टमेशका इत्थशाल योग हो, पापग्रह लग्नेश और अष्टमेशको देखते हों, अष्टम स्थानका स्वामी केन्द्रमें हो, लग्नेश अष्टम स्थानमें हो, चन्द्रमा छठवें स्थानमें हो और सप्तमेशके साथ चन्द्रमाका इत्थशाल हो अथवा सप्तमेश छठवें स्थानमें हो तो रोगी पुरुषके विषयमें पूछे जानेपर उसकी मृत्यु होती है। यदि लग्नेश और चन्द्रमाका अशुभ ग्रहोंके साथ इत्थशाल योग हो अथवा चन्द्रमा और लग्नेश केन्द्र और अष्टम स्थानमें स्थित हों और चन्द्रमा शुभ ग्रहोंसे अदृष्ट हो तथा चन्द्रमाके साथ कोई शुभग्रह भी नहीं हो और लग्नेश अस्त हो अथवा लग्नका स्वामी सातवें भावमें स्थित हो तो रोगीकी मृत्यु कहनी चाहिए। यदि लग्नमें चन्द्रमा हो, बारहवें भावमें शनि हो, सूर्य आठवें भावमें और

---

१. बृ० पा० हो०, पृ० ७४०। २ बृ० पा० हो०, पृ० ७४३–७४४। ३. प्र० वै० शा० पृ० ७।

मंगल दसवें भावमें स्थित हों और बलवान् बृहस्पति लग्नमें नहीं हों तो पृच्छक जिस रोगीके सम्बन्धमें प्रश्न करता है उसकी मृत्यु होती है। लग्न, चतुर्थ, पंचम और द्वादश इन स्थानोंमें पापग्रह हों तो रोगके नाश करनेवाले होते हैं। पर छठवें, लग्न, चौथे, सातवें और दसवें भावमें पापग्रहोंके रहनेसे रोगीकी मृत्यु होती है।

आलिंगित, अभिधूमित और दग्ध प्रश्नाक्षर

अथालिङ्गितादीनि–अ इ ए ओ एते स्वरा उपरितः संयुक्ताक्षराण्यधः[1] क कि के को इत्याद्यालिङ्गितानि[2] भवन्ति। आ ई ऐ औ[3] एते चत्वार[4] एतद्युक्तव्यञ्जनाक्षराण्यभिधूमितानि[5] भवन्ति। उ ऊ अं अः, एतद्युक्तव्यञ्जनाक्षराणि[6] दग्धानि[7]।

अर्थ—अ इ ए ओ ये चार स्वर पूर्ववर्त्ती हों और संयुक्ताक्षर–व्यंजन परवर्ती हों तो आलिंगित प्रश्न होता है, जैसे क कि के को इत्यादि। आ ई ऐ औ ये चार स्वर व्यंजनोंमें संयुक्त हों तो अभिधूमित प्रश्न होता है और उ ऊ अं अः इन चार स्वरोंसे संयुक्त व्यंजन दग्धाक्षर कहलाते हैं।

विवेचन—प्रश्नाक्षर सिद्धान्तके अनुसार आलिंगित, अभिधूमित और दग्ध प्रश्नोंका ज्ञान तीन प्रकारसे किया जाता है—प्रश्नवाक्यके स्वरोंसे, चर्या-चेष्टासे और प्रारम्भके उच्चरित वाक्यसे। यदि प्रश्नवाक्यके प्रारम्भमें या समस्त प्रश्नवाक्यमें अधिकांश अ इ ए ओ ये चार स्वर हों तो आलिंगित प्रश्न, आ ई ऐ औ ये चार स्वर हों तो अभिधूमित प्रश्न और उ ऊ अं अः ये चार स्वर हों तो दग्ध प्रश्न होता है। आलिंगित प्रश्न होनेपर कार्यसिद्धि, अभिधूमित होनेपर धनलाभ, कार्यसिद्धि, मित्रागमन एवं यशलाभ और दग्ध प्रश्न होनेपर दुःख, शोक, चिन्ता, पीड़ा एवं हानि होती है। जब पूछने वाला दाहिने हाथसे दाहिने अंगको खुजलाते हुए प्रश्न करे तो आलिंगित प्रश्न, दाहिने अथवा बाँयें हाथसे समस्त शरीरको खुजलाते हुए प्रश्न करे तो अभिधूमित प्रश्न और रोते हुए नीचेकी ओर दृष्टि किये हुए प्रश्न करे तो दग्ध प्रश्न होता है। चर्या-चेष्टाका अन्तर्भाव प्रश्नाक्षर वाले सिद्धान्तमें होता है, अतः प्रश्नवाक्य या प्रारम्भिक उच्चरित वाक्यसे विचार करते समय चर्या-चेष्टाका विचार करना भी नितान्त आवश्यक है। इन आलिंगित, अभिधूमित इत्यादि प्रश्नोंका सम्बन्ध प्रश्नशास्त्रसे अत्यधिक है। आगे वाला समस्त विचार इन प्रश्नोंसे सम्बन्ध रखता है। गर्ग-मनोरमादि कतिपय प्रश्नग्रन्थोंमें आलिंगित काल, अभिधूमित काल और दग्ध काल इन तीन प्रकारके समयों-पर-से ही पिण्ड बनाकर प्रश्नोंके उत्तर दिये गये हैं। यदि पूर्वाह्ण कालमें प्रश्न किया

---

१. अधः पाठो नास्ति–ता० मू०। २. चं० प्र०, श्लो० ३६। के० प्र० र०, पृ० २८। के० प्र० सं०, पृ० ५। ३. आ इ ए ऐ–ता० मू०। ४. एत…अक्षराणि–क० मू०। ५. के० प्र० र०, पृ० २८। के० प्र० सं०, पृ० ६। ग० म०, पृ० १। ६. व्यंजनानि–क० मू०। ७. के० प्र० र०, पृ० २८। चं० प्र०, श्लो० ३७–३८। के० प्र० सं०, पृ० ६। ८. ग० म०, पृ० १।

जाय तो आलिंगित, मध्याह्न कालमें किया जाय तो अभिधूमित और अपराह्न कालमें किया जाय तो दग्ध प्रश्न कहलाता है। समयकी यह संज्ञा भी प्रश्नाक्षर वाले सिद्धान्त-से सम्बद्ध है। अतः विचारकको आलिंगितादि प्रश्नोंके ऊपर विचार करते हुए पूर्वाह्न, मध्याह्न और अपराह्नके सम्बन्धमें भी विचार करना चाहिए। प्रधानरूपसे फल बतलाने-के लिए प्रश्नवाक्यके सिद्धान्तका ही अनुसरण करना चाहिए। उदाहरण—जैसे मोहनने आकर पूछा कि 'मेरा कार्य सिद्ध होगा या नहीं?' इस प्रारम्भिक उच्चरित वाक्यको प्रश्न वाक्य मान कर इसका विश्लेषण किया तो—म् + ए + र् + आ + क् + आ + र् + य् + अ + स् + इ + द् + ध् + अ + ह् + ओ + ग् + आ यह स्वरूप हुआ। इसमें ए अ ह अ और ओ ये पाँच मात्राएँ आलिंगित और आ आ एवं आ ये तीन मात्राएँ अभिधूमित प्रश्नकी हुई। पूर्वोक्त नियमानुसार परस्पर मात्राओंका संशोधन करनेपर आलिंगित प्रश्नकी मात्राएँ अधिक हैं अतः इसे आलिंगित प्रश्न समझना चाहिए। इस प्रश्नका धनलाभ एवं कार्यसिद्धि आदि फल बतलाना चाहिए।

प्रश्नलग्नानुसार लग्नेश और एकादशेशके सम्बन्धका नाम ही आलिंगित प्रश्न है, क्योंकि लग्न[1] का स्वामी लेने वाला होता है और ग्यारहवें भावका स्वामी देने वाला होता है, अतः जब दोनों ही ग्रह एक स्थानमें हो जायें तो लाभ और कार्यसिद्धि होती है। परन्तु इतना स्मरण रखना चाहिए कि पूर्वोक्त योग तभी सफल होगा जब ग्यारहवें भावको चन्द्रमा देखता हो क्योंकि सभी राजयोगादि उत्कृष्ट योग चन्द्रमाकी दृष्टिके बिना सफल नहीं हो सकते हैं। ग्यारहवें भाव[2] का स्वामी, दसवें भावका स्वामी, सातवें भावका स्वामी और आठवें भावका स्वामी, इन ग्रहोंके एवं लग्न भावके स्वामीके सम्बन्धका नाम अभिधूमित प्रश्न है। उपर्युक्त ग्रहोंके बलाबलसे उक्त स्थानोंका वृद्धि-ह्रास अवगत करना चाहिए।

यदि लग्नका स्वामी छठवें भावमें अवस्थित हो और छठवें भावका स्वामी आठवें भावमें स्थित हो तो दग्ध प्रश्न होता है। इसका फल अत्यन्त अनिष्टकर होता है।

उत्तर और अधर प्रश्नाक्षरोंका फल

गाथा—

जेअक्खराणि भिहिया[3] पण्हादि सत्ति उत्तरा चाहु।
याता जाण सयललाहो अहरो हंसज्जुए विद्धि[4]॥

अर्थ—पहले उत्तरोत्तरोत्तरोत्तर, उत्तरोत्तरोत्तर, उत्तरोत्तर, उत्तरोत्तराधर आदि जो दस भेद प्रश्नोंके कहे गये हैं, उनमें उत्तर प्रश्नाक्षर वाले प्रश्नमें सब प्रकारसे लाभ होता है और अधर प्रश्नाक्षर वाले प्रश्नमें हानि, अशुभ होता है।

---

१. मु० दी०, पृ० ५६। २. मु० दी, पृ० ५६। ३. भणिदा–ता० मू०। ४. खिद्धि–क० मू०।

विवेचन—पृच्छकके प्रश्नाक्षरोंके आदिमें उत्तर स्वरवर्ण हो तो वर्तमानमें शुभ; अधर हो तो अशुभ; उत्तरोत्तर स्वर वर्ण हो तो राजसम्मानप्राप्ति, अधराधर स्वर वर्ण हो तो रोगप्राप्ति; उत्तराधर स्वर वर्ण हो तो सामान्यतः सुखप्राप्ति; उत्तराधिक स्वर वर्ण हो तो धनधान्यकी प्राप्ति; अधराधिक स्वर वर्ण हो तो धन-हानि एवं अधराधराधर स्वर वर्ण हो तो महाकष्ट कहना चाहिए। आचार्यने उपर्युक्त गाथा में 'उत्तरा' शब्दके द्वारा पाँचों प्रकारके उत्तरप्रश्नोंका ग्रहण कर शुभ फल बताया है और 'अहरो' शब्दके द्वारा पाँचों प्रकारके अधरप्रश्नोंका ग्रहण कर निकृष्ट फल कहा है। तात्पर्य यह है कि यहाँ सामान्यतः एक ही उत्तरसे उत्तर शब्द संयुक्त सभी उत्तरोंका ग्रहण किया है, इसी प्रकार अधर प्रश्नोंको भी समझना चाहिए।

प्रश्नशास्त्रके अन्य ग्रन्थोंमें उत्तर और अधर प्रश्नोंके भेद-प्रभेद कर विभिन्न प्रकारोंसे फलोंका निरूपण किया गया है। तथा गमनागमन, हानि-लाभ, जय-पराजय, सफलता-असफलता आदि प्रश्नोंके उत्तरोंमें उत्तर स्वर संयुक्त प्रश्नोंको श्रेष्ठ और अधर स्वर संयुक्त प्रश्नोंको निकृष्ट कहा है।

उपसंहार

एभिरष्टभिः प्रकारैः प्रश्नाक्षराणि शोधयित्वा पुनरुत्तराधरविभागं कुर्यात्।

अर्थ—इन संयुक्त, असंयुक्त, अभिहत, अनभिहत आदि आठ प्रकारके प्रश्नोंको शोधकर उत्तर, अधर और अधरोत्तरादिका विभाग कर प्रश्नोंका उत्तर देना चाहिए।

गाथा—

अहरोत्तर[1]-वग्गोत्तर वग्गेण य संयुत्तं अहरं।
जाणइ पण्णायंसो जाणइ ते हावणं सयलं॥

अर्थ—अधरोत्तर, वर्गोत्तर और वर्ग संयुक्त अधर इन भंगोंके द्वारा जो प्रश्नको जानता है वह सभी पदार्थोंको जानता है अर्थात् उपर्युक्त तीनों भंगों द्वारा संसारके सभी प्रश्नोंका उत्तर दिया जा सकता है।

उत्तरके नौ भेद और उनके लक्षण

उत्तरा नवविधाः—उत्तरोत्तरः, उत्तराधरः, अधरोत्तरः, अधराधरः, वर्गोत्तरः, अक्षरोत्तरः, स्वरोत्तरः, गुणोत्तरः, आदेशोत्तरश्चेति। अकवर्गावुत्तरोत्तरौ। चटवर्गावुत्तराधरौ। तपवर्गावधरोत्तरौ। यशवर्गावधराधरौ। अथ वर्गोत्तरौ प्रथम तृतीयवर्गौ। द्वितीयचतुर्थवर्गा[3]वक्षरोत्तरौ। पंचमवर्गोऽप्युभयपक्षाभ्यामे-

१. "उत्तरा विषमा वर्गाः समा वर्गाष्टकेऽधराः। स्वेषूत्तरोत्तरौ ज्ञेयौ पूर्ववच्चाधराधरौ॥"—के० प्र० र०, पृ० ४। २. के० प्र० र०, पृ० ५–६। चं० प्र०, श्लो० १८, २७–३०।
३. वर्गावधरोत्तरौ-क० मू०।

रितभेदेन वर्गोत्तरौ वर्गाधरौ च ज्ञातव्यौ। क ग ङ च ज ञ ट ड ण त द न प ब म य ल श सा एतान्येकोनविंशत्यक्षराण्युत्तराणि भवन्ति।

शेषाः ख घ छ झ ठ ढ थ ध फ भ र व ष हाश्चतुर्दशाक्षराण्यधराणि भवन्ति। अ[1] इ उ ए ओ अं एतानि षडक्षराणि स्वरोत्तराणि भवन्ति। आ ई ऊ[2] ऐ औ अः, एतानि षडक्षराणि स्वराधराणि भवन्ति। अ च त याः[3] गुणोत्तराः। क ट प य शाः गुणाधराः[4]। ड ज द लाः गुणोत्तराः[5]। ग ड ब हाः गुणाधराः[6] भवन्तीति गुणोत्तराः।

अर्थ—उत्तरके नौ भेद हैं—उत्तरोत्तर, उत्तराधर, अधरोत्तर, अधराधर, वर्गोत्तर, अक्षरोत्तर, स्वरोत्तर, गुणोत्तर और आदेशोत्तर। अ और चवर्ग उत्तरोत्तर; चवर्ग और टवर्ग उत्तराधर; तवर्ग और पवर्ग अधरोत्तर और यवर्ग और शवर्ग अधराधर होते हैं। प्रथम और तृतीय वर्गवाले अक्षर वर्गोत्तर, द्वितीय और चतुर्थ वर्गवाले अक्षर अधरोत्तर एवं पंचम वर्गवाले अक्षर दोनों—प्रथम और तृतीयके साथ मिला देनेसे क्रमशः वर्गोत्तर और वर्गाधर होते हैं। क ग ङ च ज ञ ट ड ण त द न प व म य ल श स ये १९ वर्ण उत्तरसंज्ञक; शेष ख घ छ झ ठ ढ थ ध फ भ र व ष ह ये १४ वर्ण अधर संज्ञक; अ इ उ ए ओ अं ये ६ वर्ण स्वरोत्तरसंज्ञक; अ च त य उ ज द ल ये ८ वर्ण गुणोत्तर संज्ञक और क ट प श ग ड ब ह ये ८ वर्ण गुणाधरसंज्ञक होते हैं।

विवेचन—प्रश्नकर्ताके प्रश्नाक्षरोंका पहले कहे गये संयुक्त, असंयुक्त, अभिहत, अनभिहत, अभिघातित, आलिंगित, अभिधूमित और दग्ध इन आठ प्रकारोंसे विचार करना चाहिए। किन्तु इनमें भी सूक्ष्म रीतिसे प्रश्नका विचार करनेके लिए उत्तरोत्तर, उत्तराधर, अधरोत्तर आदि उपर्युक्त नौ भेदोंके अनुसार प्रश्नाक्षरोंका विचार करना परमावश्यक है। प्रश्नका वास्तविक उत्तर निकालनेके लिए आलिंगित (पूर्वाह्णकाल), अभिधूमित (मध्याह्न) और दग्ध (अपराह्ण) इन तीनोंमें गणित क्रिया द्वारा निम्न प्रकारसे पिण्ड बनाकर उत्तर देना चाहिए।

आलिंगित (पूर्वाह्ण) कालमें पिण्ड बनानेकी विधि

यदि आलिंगित कालका प्रश्न हो तो वर्ग संख्यासहित वर्णकी संख्याको वर्ग संख्यासहित स्वरकी संख्यासे गुणा करनेपर जो गुणनफल आये वही पिण्ड होता है।

---

१. इदानीं स्वरोत्तरं वक्ष्यामः—अ इ उ ए ओ अं ६ उत्तराः।—ता० मू०। २. आ ई ऊ ऐ औ अः अधराः—ता० मू०। ३. अथ गुणोत्तराः—अ च त याः—ता० मू०। ४, अधराः—ता० मू०।५. उत्तराः—ता० मू। ६. अधराः—ता० मू०।

(१) स्वरसंख्याचक्र

अ = १	ई = ४	ऋ = ७	ऌ = १०	ओ = १३
आ = २	उ = ५	ॠ = ८	ए = ११	औ = १४
इ = ३	ऊ = ६	ॡ = ९	ऐ = १२	अं = १५
				अः = १६

(२) वर्गसंख्याचक्र

अवर्ग	= १
कवर्ग	= २
चवर्ग	= ३
टवर्ग	= ४
तवर्ग	= ५
पवर्ग	= ६
यवर्ग	= ७
शवर्ग	= ८

(३) केवलवर्णसंख्याबोधकचक्र

क = १,	ख = २,	ग = ३,	घ = ४,	ङ = ५
च = १,	छ = २,	ज = ३,	झ = ४,	ञ = ५
ट = १,	ठ = २,	ड = ३,	ढ = ४,	ण = ५
त = १,	थ = २,	द = ३,	ध = ४;	न = ५
प = १,	फ = २,	ब = ३,	भ = ४,	म = ५
य = १,	र = २,	ल = ३,	व = ४	
श = १,	ष = २,	स = ३,	ह = ४	

(४) वर्गसंख्यासहित स्वरों और वर्णोंके ध्रुवाङ्क

अवर्ग १	अ २, आ ३, इ ४, ई ५, उ ६, ऊ ७, ऋ ८. ॠ ९, ॡ १०, ऌ ११, ए १२, ऐ १३, ओ १४, औ १५, अं १६, अः १७,
कवर्ग २	क् ३, ख् ४, ग् ५, घ् ६, ङ् ७,
चवर्ग ३	च् ४, छ् ५, ज् ६, झ् ७, ञ् ८,
टवर्ग ४	ट् ५, ठ् ६, ड् ७, ढ् ८, ण् ९,
तवर्ग ५	त् ६, थ् ७, द् ८, घ् ९, न् १०,
पवर्ग ६	प् ७, फ् ८, ब् ९, भ् १०, म् ११
यवर्ग ७	य् ८, र् ९, ल् १०, व् ११,
शवर्ग ८	श् ९, ष् १०, स् ११, ह् १२, त्र् १३, क्ष् १४, ज्ञ् १५,

उदाहरण—जैसे मोतीलालने प्रातःकाल ७½ बजे प्रश्न किया कि हमारे घरमें पुत्र होगा या कन्या ? यह प्रश्न पूर्वाह्लमें होनेके कारण आलिङ्गित कालका है। इसलिए

पृच्छकसे फलका नाम पूछा तो उसने अनारका नाम लिया। पृच्छकके इस प्रश्नवाक्यका विश्लेषण = (अ + न् + आ + र् + अ) हुआ; यहाँ दो व्यंजन (जिन्हें वर्ण कहा गया है) और तीन स्वर हैं इसलिए चौथे चक्रकी वर्गसंख्या सहित वर्णसंख्या (१० + ९) = १९ को वर्गसंख्या सहित स्वरसंख्या (२ + ३ + २) = ७ से गुणा किया तो १९ × ७ = १३३ पिण्डसंख्या हुई। इसमें निम्न प्रकार अपने-अपने विकल्पानुसार भाग देनेपर फलाफल होता है = सिद्धि-असिद्धिविषयक प्रश्नके पिण्डमें २ का भाग देनेसे १ शेष बचे तो कार्यसिद्धि और शून्य बचे तो असिद्धि; लाभालाभविषयक प्रश्नके पिण्डमें २ का भाग देनेसे १ शेषमें लाभ और शून्य शेषमें हानि; दिशा-विषयक प्रश्नके पिण्डमें ८ का भाग देनेसे एकादि शेषमें क्रमशः पूर्वादि दिशा; सन्तानविषयक प्रश्नके पिण्डमें ३ का भाग देनेसे १ शेषमें पुत्र, २ शेषमें कन्या और शून्य शेषमें नपुंसक एवं कालविषयक प्रश्नके पिण्डमें ३ का भाग देनेसे १ शेषमें भूत, २ शेषमें वर्तमान और शून्य शेषमें भविष्यत्काल समझना चाहिए। उपर्युक्त उदाहरणमें सन्तानविषयक प्रश्न होनेके कारण पिण्डमें ३ का भाग दिया—१३३ ÷ ३ = ४४ भागफल और शेष १ रहा; अतः इसका फल पुत्रप्राप्ति समझना चाहिए।

अभिधूमित कालमें पिण्ड बनानेकी विधि

अभिधूमित कालका प्रश्न हो तो केवल स्वर संख्याको केवल वर्ण संख्यासे गुणा करनेपर पिण्ड होता है।

उदाहरण—मोतीलालने अभिधूमित (मध्याह्न) समयमें पूछा कि मुझे व्यापारमें लाभ होगा या नहीं ? मध्याह्नका प्रश्न होनेसे उससे फलका नाम पूछा तो उसने सेवका नाम बताया। पृच्छक मोतीलालके प्रश्नवाक्यका विश्लेषण (स् + ए + व् + अ) यह हुआ। इसमें स् + व् ये दो वर्ण (व्यंजन) और ए + अ ये दो स्वर हैं। प्रथम और तृतीय चक्रके अनुसार क्रमशः वर्ण और स्वर संख्या (३ + ४) = ७ व्यंजन संख्या और (११ + १) = १२ स्वर संख्या हुई। इनका परस्पर गुणा करनेसे १२ × ७ = ८४ पिण्ड हुआ; लाभालाभ विषयक प्रश्न होनेके कारण पिण्डमें २ का भाग दिया तो—८४ ÷ २ = ४२ लब्ध, शेष शून्य रहा, अतः इस प्रश्नका फल हानि समझना चाहिए।

दग्ध कालमें पिण्ड बनानेकी विधि

यदि दग्ध (पराह्ण) कालका प्रश्न हो तो केवल वर्गकी संख्याको वर्ण (व्यंजन) की संख्यासे गुणाकर गुणनफलमें स्वरों और वर्णोंकी संख्या मिलानेपर पिण्ड होता है।

उदाहरण—मोतीलालने दग्ध कालमें आकर पूछा कि मैं उत्तीर्ण होऊँगा या नहीं ? इस प्रश्नमें भी उससे फलका नाम पूछा तो उसने दाडिम कहा। इस प्रश्न वाक्यका (द् + आ + ड् + इ + म् + अ) यह विश्लेषण हुआ; द्वितीय चक्रानुसार वर्ग

संख्या (त ५ + ट ४ + प ६) = १५ हुई तथा तृतीय चक्रानुसार वर्ण संख्या (द् ३ + ड् ३ + म् ५) = ११ हुई। इन दोनोंका परस्पर गुणा किया तो ११ × १५ = १६५ हुआ, इसमें प्रथम चक्रानुसार स्वर संख्या (आ२ + इ ३ + अ १) = ६ जोड़ दी तो १६५ + ६ = १७१ हुआ, इस योगफलमें वर्ण संख्या (द् ३ + ड् ३ + म् ५) = ११ मिलाया तो १७१ + ११ = १८२ पिण्ड हुआ। कार्यसिद्धि विषयक प्रश्न होनेके कारण २ से भाग दिया तो १८२ ÷ २ = ९१ लब्ध और शेष शून्य रहा। अतएव इस प्रश्नका फल परीक्षामें अनुत्तीर्ण होना हुआ।

आदेशोत्तर और उनका फल

अथोदेशोत्तराः—पृच्छकस्य वाक्याक्षराणि प्रथमतृतीयपञ्चमस्थाने, उत्तराः, द्वितीयचतुर्थेऽधराः। यदि दीर्घमक्षरं प्रश्ने प्रथमतृतीयपञ्चमस्थाने दृष्टं तदेव लाभकरं स्यात्, शेषा अलाभकराः स्युः।

[1]जीवितमरणं लाभालाभं साधयन्तीति साधकाः। अ इ ए ओ एते तिर्यङ्मात्रलमूलस्वराः[2]। तिर्यङ्मात्राः तिर्यग्द्रव्यमधोमात्राः अधोद्रव्यमूर्ध्वमात्राः, ऊर्ध्वद्रव्यं तिष्ठन्तीति कथयन्तीत्यादेशोत्तराः।

अर्थ—आदेशोत्तर कहते हैं कि प्रश्नकर्त्ताके प्रथम, तृतीय और पंचमस्थानके वाक्याक्षर उत्तर एवं द्वितीय और चतुर्थ स्थानके वाक्याक्षर अधर कहलाते हैं। यदि प्रश्नमें दीर्घाक्षर प्रथम, तृतीय और पंचम स्थानमें हों तो लाभ करानेवाले होते हैं, शेष स्थानोंमें रहनेवाले दीर्घाक्षर अथवा उपर्युक्त स्थानोंमें रहनेवाले ह्रस्व और प्लुताक्षर अलाभ (हानि) करानेवाले होते हैं। साधक इन प्रश्नाक्षरोंपर-से जीवन, मरण, लाभ और अलाभ आदिको अवगत कर सकते हैं। अ इ ए ओ ये चार तिर्यङ्मात्रिक मूल स्वर हैं। तिर्यङ्मात्रिक प्रश्नमें तिर्यङ्-तिरछे स्थानमें द्रव्य; अधोमात्रिक प्रश्नमें अधः स्थानमें द्रव्य और ऊर्ध्व मात्रिक प्रश्नमें ऊर्ध्वस्थानमें द्रव्य है, इस प्रकारका प्रश्न फल जानना चाहिए।

विवेचक—प्रश्नाक्षरोंके नाना विकल्प करके फलका विचार करना चाहिए। पूर्वोक्त उत्तर, अधर, उत्तराधर आदि नौ भेदोंका विचार कर सूक्ष्म फल निकालनेके लिए आदेशोत्तरका भी विचार करना आवश्यक है। पृच्छकके प्रश्नाक्षरोंमें प्रथम, तृतीय और पंचम स्थानकी उत्तर, द्वितीय और चतुर्थकी अधर एवं अ इ ए ओ इन चार ह्रस्व यात्राओं की तिर्यङ् संज्ञा वतायी है। ग्रन्थान्तरोंके अनुसार आ ई ऐ औ की अधो संज्ञा तथा इन्हीं प्लुत स्वरोंकी ऊर्ध्व संज्ञा है। यदि प्रश्नाक्षरोंमें प्रथम, तृतीय और पंचम स्थानमें दीर्घ अक्षर हों तो लाभकारक तथा शेष स्थानोंमें हों तो हानिकारक होते हैं। ऊर्ध्व, अधः और तिर्यङ् आदिके विचारके साथ पहले वताये गये संयुक्त, असंयुक्त आदि-

---

१. "अथाराकविकटौ वक्ष्यामः। लाभालाभं ज्ञानं साधयतीति साधकाः"—क० मू०।

२. तिर्यङ्मात्राः मूलस्वराः—ता० मू०।

का भी विचार करना चाहिए। प्रश्नका साधारणतया फल वतलानेके लिए नीचे एक सरल विधि दी जा रही है।

चक्र स्थापन

१	२	३
६	५	४
७	८	९

इस चक्रके अंकों पर अंगुली रखवाना चाहिए यदि पृच्छक आठ और दोके अंक पर अंगुली रखे तो कार्याभाव; छः और चारके अंक पर अंगुली रखे तो कार्यसिद्धि; सात और तीनके अंक पर अंगुली रखे तो विलम्बसे कार्य-सिद्धि एवं नौ, एक और पाँचके अंक पर अंगुली रखे तो शीघ्र ही कार्यसिद्धि फल कहना चाहिए।

प्रश्न निकालनेका अनुभूत नियम

प्रश्नकर्त्तासे प्रातःकालमें पुष्पका नाम, मध्याह्नमें फलका नाम, अपराह्नमें देवताका नाम और सायंकालमें तालाव या नदीका नाम पूछना चाहिए। इन उच्चरित प्रश्नाक्षरोंपर-से पिण्ड बनाकर अपने-अपने ध्रुवांकके अनुसार प्रश्नका उत्तर देना चाहिए।

पिण्ड बनानेकी विधि

पहले प्रश्न वाक्यके स्वर और व्यंजनोंका विश्लेषण करना चाहिए। फिर स्वर और व्यंजनोंके अधरांकोंके योगमें भिन्न-भिन्न प्रश्नोंके अनुसार भिन्न-भिन्न क्षेपक जोड़ देनेपर पिण्ड होता है।

स्वर और व्यञ्जनोंका ध्रुवांक बोधक चक्र

अ	१२	क	१३	ठ	१३	ब	२६
आ	२१	ख	१२	ड	२२	भ	२७
इ	११	ग	२१	ढ	३५	म	८६
ई	१८	घ	३०	ण	४५	य	१६
उ	१५	ङ	१०	त	१४	र	१३
ऊ	२२	च	१५	थ	१८	ल	१३
ए	१८	छ	२१	द	१७	व	३५
ऐ	३२	ज	२३	ध	१३	श	२६
ओ	२५	झ	२६	न	३५	ष	३५
औ	१९	ञ	२६	प	२८	स	३५
अं	२५	ट	१७	फ	१८	ह	१२

क्षेपक और भाजक बोधक चक्र

कार्यसम्बन्धी प्रश्न	क्षेपक	भाजक
लाभालाभसम्बन्धी प्रश्न	४२	३
जयपराजयसम्बन्धी प्रश्न	३४	३
सुख-दुःखसम्बन्धी प्रश्न	३८	२
यात्रासम्बन्धी प्रश्न	३३	३
जीवनमरणसम्बन्धी प्रश्न	४०	३
तीर्थयात्रासम्बन्धी प्रश्न	३९	३
वर्षासम्बन्धी प्रश्न	३२	३
गर्भसम्बन्धी प्रश्न	२६	३

प्रश्नों का फलावबोधक चक्र

प्रश्न	शेष	फल	शेष	फल	शेष	फल
लाभालाभसम्बन्धी प्रश्न	१	पूर्ण लाभ	२	अल्पलाभ	शून्य	हानि
जयपराजयसम्बन्धी प्रश्न	१	जय	२	सन्धि	शून्य	पराजय
सुख-दु:खसम्बन्धी प्रश्न	१	सुख	शून्य	दु:ख	×	×
यात्रासम्बन्धी प्रश्न	१	यात्रा	२	विलम्बसे	शून्य	यात्राहानि
जीवनमरणसम्बन्धी प्रश्न	१	जीवित	२	कष्ट में	शून्य	मरण
तीर्थयात्रासम्बन्धी प्रश्न	१	यात्रा	२	मध्यम	शून्य	अभाव
वर्षासम्बन्धी प्रश्न	१	वर्षा	२	मध्यम	शून्य	अनावृष्टि
गर्भसम्बन्धी प्रश्न	१	गर्भ है	२	संशय	शून्य	नहीं है

उदाहरण—जैसे मोतीलालने प्रश्न पूछा कि अजमेरमें रहनेवाला मेरा सम्बन्धी वहुत बीमार था, वह जीवित है या नहीं ? इस प्रश्नमें उसके मुखसे या किसी बालकके मुखसे फलका नाम उच्चारण कराया तो बालकने आमका नाम लिया। इस प्रश्नवाक्य का विश्लेषण (आ + म् + अ) है इसमें दो स्वर और एक व्यंजन है अतः प्रथम चक्रके अनुसार अ = १२, आ = २१ और म् = ८६ के है अतः १२ + २१ + ८६ = ११९ योगफल में द्वितीय चक्र के अनुसार क्षेपक ४० जोड़ा तो ११९ + ४० = १५९ हुआ; इसमें जीवनमरणसम्बन्धी भाजक ३ का भाग दिया तो १५९ ÷ ३ = ५३ लब्ध और शेष शून्य रहा। तृतीयचक्रके अनुसार इसका फल मरण जानना चाहिए। इसी प्रकार विभिन्न प्रश्नोंके अनुसार पिण्ड बनाकर अपने-अपने भाजकका भाग देनेपर शेषके अनुसार फल बतलाना चाहिए।

योनिविभाग

गाथा—आ इ आ तिण्णि सरा सत्तमनमो या बारसा [1]जीवं।
पंचमछट्ठं[2]उमारा सदाउ सेसेसु तिसु मूलं ॥ १ ॥

---

१. "प्रथमं च द्वितीयं च तृतीयं चैव सप्तमम्। नवमं चान्तिमं चैव षट् स्वराः समुदाहृताः ॥"—चं० प्र०, श्लो० ४२। २. "उ ऊ अमिति मात्राणि त्रीणि धातून्यथाक्षरैः ॥ यथा उ ऊ अं। अन्ये चैव स्वराः शेषा मूले चैव नियोजयेत्। यथा ई ऐ औ।"—के० प्र०, श्लो० ४३।

जीवक्खरेक्केवीसा दी (ते) रहदव्वक्खरं मुणेयब्बं ।
एयार मूलगणिया एमिणिया पक्कालया सव्वे ॥ २ ॥

अर्थ—अ इ आ ये तीन स्वर तथा सप्तम—ए, नवम–ओ और बारहवाँ स्वर–अः ये छः स्वर जीव संज्ञक; पंचम–उ, छठवाँ–ऊ और ग्यारहवाँ स्वर–अं ये तीन स्वर धातु-संज्ञक और अवशेष तीन स्वर–ई ऐ औ मूल संज्ञक हैं। २१ अक्षर जीव संज्ञक, १३ अक्षर द्रव्य–धातु संज्ञक और ११ अक्षर मूलसंज्ञक होते हैं। इन सब अक्षरोंका प्रश्न कालमें विचार करना चाहिए।

तत्र त्रिविधो योनिः। जीवधातुमूलमिति[1]। अ आ इ ए ओ अः इत्येते जीवस्वराः षट्। क ख ग घ, च छ ज झ, ट ठ ड ढ, य श हा इति पञ्चदश-व्यञ्जनाक्षराणि च जीवाक्षराणि भवन्ति। उ ऊ अं इति त्रयः स्वराः, त थ द ध, प फ ब भ, वसा इति त्रयोदशाक्षराणि धात्वक्षराणि भवन्ति। ई ऐ औ इति त्रयः स्वराः-ङ ञ ण न म र ल षा इत्येकादशाक्षराणि मूलानि भवन्ति।

अर्थ—योनिके तीन भेद हैं—जीव, धातु और मूल। अ आ इ ई उ ऊ ए ऐ ओ औ अं अः इन बारह स्वरोंमें से अ आ इ ए ओ अः ये स्वर तथा क ख ग घ च छ ज झ ट ठ ड ढ य श ह ये पन्द्रह व्यंजन इस प्रकार कुल २१ वर्ण जीवसंज्ञक; उ ऊ अं ये तीन स्वर तथा त थ द ध प फ ब भ व स ये दस व्यंजन इस प्रकार कुछ १३ वर्ण धातुसंज्ञक और ई ऐ औ ये तोन स्वर तथा ङ ञ ण न म ल र ष ये आठ व्यंजन इस प्रकार कुल ११ वर्ण मूलसंज्ञक होते हैं।

एकद्वित्रिनवान्त्यसप्तममिता जीवाः स्वरा उ ऊ अम्। धातुमूलमितोऽवशेषमथभूहस्तास्त्रि-चन्द्रामवाः ॥–के० प्र० र० पृ० ७; शिरः–स्पर्शे तु जीवः स्यात्पादस्पर्शे तु मूलकम्। धातुश्च मध्यमस्पर्शे शारदावचनं तथा ॥"–के० प्र० सं० पृ० ११।

१. द्रष्टव्यम्–के० प्र० र० पृ० ४१-४३। प्र० भू० पृ० १८। के० प्र० सं० पृ० १८। प्र० वै० पृ० १०५। ग० म० पृ० ५। २. चत्वारः कचटादितश्च यशहाः स्युर्जीवसंज्ञा रपौचत्वारश्च तपादितोऽक्षरगणं धातोः परं मूलके ॥"–के० प्र० र० पृ० ६। के० प्र० सं० पृ० ६–७। चं० प्र० श्लो० ३६-४१। प्र० कौ० पृ० ५। लग्नग्रहानुसारेण जीवधातुमलादिविवेचनं निम्नलिखितग्रन्थेषु द्रष्टव्यम्–भु० दी० पृ० २१–२२। [ष० प० भ० टी० पृ० ८–९। ज्ञा० प्र० पृ० १७। प्र० वै० पृ० १०५। प्र० सि० पृ० २८। दै० व० पृ० ३९–४०। प्र० कु० पृ० १०–११। पं० प० पृ० १२। ता० नी० पृ० ३२२। न० ज० पृ० १०३।

जीवादिसंज्ञा बोधक चक्र

जीवाक्षर २१	क ख ग घ च छ ज झ ट ठ ड ढ य श ह अ आ इ ए ओ अः
धात्वक्षर १३	त थ द ध प फ ब भ व स उ ऊ अं
मूलाक्षर ११	ङ ञ ण न म ल र ष ई ऐ औ

योनि निकालनेकी विधि

प्रश्ने जीवाक्षराणि धात्वक्षराणि मूलाक्षराणि च परस्परं शोधयित्वा तत्र योऽधिकः स एव योनिः। [1]अभिधूमितालिङ्गितश्चेत् मूलं दग्धालिङ्गिताभिधूमितश्चेत् धातुः, आलिङ्गिताभिधूमितदग्धश्चेत् जीवः।

अर्थ—प्रश्नाक्षरोंमें-से जीवाक्षर धात्वक्षर और मूलाक्षरोंके परस्पर घटानेपर जिसके वर्णोंकी संख्या अधिक शेष रहे वही योनि होती है। आचार्य योनि जाननेका दूसरा नियम बताते हैं कि अभिधूमित और आलिंगित प्रश्नाक्षर हों तो मूल योनि; दग्ध, आलिंगित और अभिधूमित प्रश्नाक्षर हों तो धातु योनि और आलिंगित, अभिधूमित एवं दग्धाक्षर प्रश्नके वर्ण हों तो जीवयोनि होती है।

विवेचन—प्रश्न दो प्रकारके होते हैं—मानसिक और वाचिक। वाचिक प्रश्नमें प्रश्नकर्त्ता जिस बातको पूछना चाहता है उसे ज्योतिषीके सामने प्रकट कर उसका फल ज्ञात करता है। लेकिन मानसिक प्रश्नमें पृच्छक अपने मनकी बात नहीं बतलाता है, केवल प्रतीक-फल, पुष्प, नदी आदि नामके द्वारा ही ज्योतिषी उसके मनकी बात बतलाता है। संसारमें प्रधानरूपसे तीन प्रकारके पदार्थ होते हैं—जीव, धातु और मूल। मानसिक प्रश्न भी मूलतः उपर्युक्त तीन ही प्रकारके होते हैं। आचार्योंने सुविधाके लिए इनका नाम तीन प्रकारकी योनि—जीव, धातु और मूल रखा है। कभी-कभी धोका देनेके लिए भी पृच्छक आते हैं, अतः सत्यासत्यका निर्णय करनेके लिए लग्न बनाकर निम्न प्रकारसे वास्तविक बातका ज्ञान करना चाहिए। "**पृच्छालग्ने यदि चन्द्रशनी स्यातां तथा कुम्भे रविः, बुधोऽस्तमितश्च तदा ज्ञेयमयं पृच्छकः कपटतयाऽऽगतोऽस्ति; अन्यथा सत्यतयेति**" अर्थात् यदि प्रश्न लग्नमें चन्द्रमा और

१. अभिधूमितालिङ्गितदग्धं चेत् मलं-क० मू०।

शनिश्चर हों, कुम्भ राशिका रवि हो और बुध अस्त हो तो पृच्छकको कपट रूपसे आया हुआ समझना चाहिए और लग्नकी स्थिति इससे विलक्षण हो तो उसे वास्तविक पृच्छक समझना चाहिए। वास्तविक पृच्छकके प्रतीक सम्बन्धी प्रश्नाक्षर जीवयोनिके हों तो जीवसम्बन्धी चिन्ता, धातु योनिके हों तो धातुसम्बन्धी चिन्ता और मूलयोनिके होनेपर मूलसम्बन्धी चिन्ता—मनस्थित विचारधारा समझनी चाहिए। योनियोंका विशेष ज्ञान निम्न प्रकारसे भी किया जा सकता है—

१—दिनमानमें तीनका भाग देनेसे लब्ध एक-एक भागकी उदयवेला, मध्यवेला एवं अस्तंगतवेला ये तीन संज्ञाएँ होती हैं। उदयवेलामें तीनका भाग देनेपर प्रथम भागमें जीवसम्बन्धी प्रश्न, द्वितीय भागमें धातुसम्बन्धी प्रश्न और तृतीय भागमें मूल-सम्बन्धी प्रश्न जानना चाहिए। मध्यवेलामें तीनका भाग देनेसे क्रमशः धातु, मूल और जीवसम्बन्धी चिन्ता और अस्तंगतवेलामें तीनका भाग देनेसे क्रमशः मूल, जीव एवं धातुसम्बन्धी चिन्ता समझनी चाहिए। जैसे—किसीने आठ बजे प्रातःकाल आकर प्रश्न किया, इस दिनका दिनमान ३३ घटी है, इसमें तीनका भाग देनेसे ११ घटी उदयवेला, ११ घटी मध्यवेला और ११ घटी अस्तंगतवेलाका प्रमाण हुआ। ११ घटी प्रमाण उदयवेलामें तीनका भाग दिया तो ३ घटी ४० पल एक भागका प्रमाण हुआ। पूर्वोक्त क्रियाके अनुसार ८ बजे प्रातःकालका इष्टकाल ६ घटी ३० पल है, यह इष्टकाल उदय-वेलाके द्वितीयभागके भीतर है अतः इसका फल धातुसम्बन्धी चिन्ता जाननी चाहिए। इसी प्रकार मध्य और अस्तंगतवेलाके प्रश्नोंका ज्ञान करना चाहिए।

२—प्रश्नकर्त्तासे कोई इष्टांक पूछ कर उसे दूना कर, एक और जोड़ दे, फिर इस योगफलमें तीनका भाग देकर शेष अंकोंके अनुसार फल कहे अर्थात् एक शेषमें जीवचिन्ता, दो शेषमें धातुचिन्ता और तीन शेषमें—शून्यमें मूलसम्बन्धी चिन्ता समझनी चाहिए। जैसे—मोहन प्रश्न पूछने आया। ज्योतिषीने उससे कोई अंक पूछा, उसने १० का अंक बताया। उपर्युक्त नियमके अनुसार १० × २ + १ = २१, २१ ÷ ३ = ७ लब्ध, शेष शून्य रहा; अतः शून्यमें मूलसम्बन्धी चिन्ता कहनी चाहिए।

३—जिस समय प्रश्नकर्त्ता आवे उस समयका इष्टकाल बनाकर दूना करे और उसमें एक जोड़कर तीनका भाग देनेपर एक शेषमें जीवचिन्ता, दो शेषमें धातुचिन्ता, तीन शेष—शून्यमें मूलचिन्ता कहनी चाहिए। जैसे—मोहनने आठ बजे आकर प्रश्न किया, इस समयका इष्टकाल पूर्वोक्त विधिके अनुसार ६ घटी ३० पल हुआ, इसे दूना किया तो १३ घटी हुआ, इसमें एक जोड़ा तो १३ + १ = १४ आया, पूर्वोक्त नियमानुसार तीनका भाग दिया तो १४ ÷ ३ = ४ लब्ध और २ शेष रहा, इसका फल धातुचिन्ता है।

४—पृच्छक पूर्वकी ओर मुँह करके प्रश्न करे तो धातुचिन्ता, दक्षिणकी ओर मुँह करके प्रश्न करे तो जीवचिन्ता, उत्तरकी ओर मुँह करके प्रश्न करे तो मूलचिन्ता

और पश्चिमकी ओर मुँह करके प्रश्न करे तो मिश्रित—धातु, मूल एवं जीवसम्बन्धी मिला हुआ प्रश्न कहना चाहिए।

५—पृच्छक शिरको स्पर्श कर प्रश्न करे तो जीवचिन्ता, पैरको स्पर्श करता हुआ प्रश्न करे तो मूल चिन्ता, और कमरको स्पर्श करता हुआ प्रश्न करे तो धातुचिन्ता कहनी चाहिए। भुजा, मुख और शिरको स्पर्श करता हुआ प्रश्न करे तो शुभदायक जीवचिन्ता, हृदय एवं उदरको स्पर्श करता हुआ प्रश्न करे तो धनचिन्ता, गुदा और वृषणको स्पर्श करता हुआ प्रश्न करे तो अधममूलचिन्ता एवं जानु, जंघा और पादका स्पर्श करता हुआ प्रश्न करे तो सामान्य जीवचिन्ताका प्रश्न कहना चाहिए।

६—पूर्वाह्णकालके प्रश्नके पिण्डको तीनसे भाग देनेपर एक शेषमें धातु, दो में मूल और तीनमें—शून्यमें जीवचिन्ताका प्रश्न कहना चाहिए। मध्याह्न कालके प्रश्नके पिण्डमें तीनका भाग देने पर एकादि शेषमें क्रमशः मूल, जीव और धातुचिन्ताका प्रश्न कहना चाहिए। इसी प्रकार दग्ध कालके प्रश्नके पिण्डमें तीनका भाग देनेसे एक शेषमें जीव, दो में धातु और शून्यमें मूलसम्बन्धी प्रश्न कहना चाहिए।

७—समराशिमें प्रथम नवांश लग्न हो तो जीव, द्वितीयमें मूल, तृतीयमें धातु; चतुर्थमें जीव, पंचममें मूल, छठवेंमें धातु, सातवेंमें जीव, आठवेंमें मूल और नवेंमें धातुसम्बन्धी प्रश्न समझना चाहिए। विषमराशिमें प्रथम नवांश लग्न हो तो धातु, द्वितीयमें मूल, तीसरेमें जीव, चौथेमें धातु, पाँचवेंमें मूल, छठवेंमें जीव, सातवेंमें धातु, आठवेंमें मूल और नौवेंमें जीव सम्बन्धी प्रश्न होता है।

जीव योनिके भेद

तत्र जीवः[1] द्विपदः, चतुष्पदः, अपदः, पादसंकुलेति[2] चतुर्विधः। अ ए क च ट त प य शाः द्विपदाः। आ ऐ ख छ ठ थ फ र षाश्चतुष्पदाः। इ ओ ग ज ड द ब ल सा अपदाः। ई औ घ झ ढ ध भ व हाः पादसंकुलाः भवन्ति।

अर्थ—जीव योनिके द्विपद, चतुष्पद, अपद और पादसंकुल ये चार भेद हैं। अ ए क च ट त प य श ये अक्षर द्विपदसंज्ञक; आ ऐ ख छ ठ थ फ र ष ये अक्षर चतुष्पदसंज्ञक; इ ओ ग ज ड द ब ल स ये अक्षर अपद संज्ञक और ई औ घ झ ढ ध भ व ह ये अक्षर पादसंकुलसंज्ञक होते हैं।

विवेचन—ज्योतिष शास्त्रमें जीवयोनिका विचार दो प्रकारसे किया गया है, एक—प्रश्नाक्षरोंसे और दूसरा—प्रश्नलग्न एवं ग्रहस्थिति आदिसे। प्रस्तुत ग्रन्थका विचार प्रश्नाक्षरोंका है। लग्नके विचारानुसार मेष, वृष, और धनु चतुष्पद, कर्क और

---

१. तुलना—के० प्र० र० पृ० ५४–५६। के० प्र० सं० पृ० १८। ग० म० पृ० ७। प० प० भ० टी० पृ० ८। भु० दी० पृ० २२। प्र० कौ० पृ० ६। प्र० कु० पृ० १५। प्र० वै० पृ० १०६। २. पादसंकुलश्चेति—क० मू०।

वृश्चिक पादसंकुल, मकर और मीन अपद एवं कुम्भ, मिथुन, तुला और कन्या द्विपदसंज्ञक हैं। ग्रहोंमें शुक्र और बृहस्पति द्विपदसंज्ञक, शनि, सूर्य और मंगल चतुष्पद संज्ञक, चन्द्रमा, राहु पादसंकुलसंज्ञक तथा शनि और राहु अपदसंज्ञक हैं। जीव योनिका ज्ञान होनेपर कौन-सा जीव है, इसको जाननेके लिए जिस प्रकारकी लग्न हो तथा जो ग्रह बली होकर लग्नको देखे अथवा युक्त हो उसी ग्रहका जीव कहना चाहिए। यदि लग्न स्वयं बलवान् हो और उसी जातिका ग्रह लग्नेश हो तो लग्नका जातिका ही जीव समझना चाहिए। इस ग्रन्थके अनुसार जीवयोनिका निर्णय कर लेनेके पश्चात् अ ए क च ट त प य श ये द्विपद, आ ऐ ख छ ठ थ फ र ष ये चतुष्पद, इ ओ ग ज ड द ब ल स ये अपद और ई औ घ झ ढ ध भ व ह पादसंकुला होते हैं, पर यहाँ पर भी **"परस्परं शोधयित्वा तत्र योऽधिकः स एव योनिः"** इस सिद्धान्तानुसार परस्पर द्विपद, चतुष्पद, अपद और पादसंकुला योनिके अक्षरोंको घटानेके बाद जिस प्रकारकी जीवयोनिके अक्षर अधिक शेष रहें, वही जीवयोनि समझनी चाहिए। जैसे—मोहनने प्रश्न किया कि मेरे मनमें क्या है? यहाँ मोहनके मुखसे निकलनेवाले प्रथम वाक्यको भी प्रश्नवाक्य माना जा सकता है, अथवा दिनके प्रथम भागमें प्रश्न किया हो तो बालकके मुखसे पुष्पका नाम, द्वितीय भागका प्रश्न हो तो स्त्रीके मुखसे फलका नाम, तृतीय भागका प्रश्न हो तो वृद्धके मुखसे वृक्ष या देवताका नाम और रात्रिका प्रश्न हो तो बालक, स्त्री और वृद्धमें-से किसी एकके मुखसे तालाब या नदी का नाम ग्रहण कराकर उसीको प्रश्नवाक्य मान लेना चाहिए। सत्य फलका निरूपण करनेके लिए उपर्युक्त दोनों ही दृष्टियोंसे फल कहना चाहिए। मोहन दिनके ९ बजे आया है, अतः यह दिनके प्रथम भागका प्रश्न हुआ, इसलिए किसी अबोध बालकसे पुष्पका नाम पूछा तो बालकने जुहीका नाम बताया। प्रश्नवाक्य जुहीका विश्लेषण (ज् + उ + ह् + ई) यह हुआ। इसमें ज् और ह् दो वर्ण जीवाक्षर, उ धात्वक्षर और ई मूलाक्षर हैं। संशोधन करनेपर जीवयोनिका एक वर्ण अवशेष रहा, अतः यह जीवयोनि हुई। अब द्विपद, चतुष्पद, अपद और पादसंकुलके विचारके लिए देखा तो पूर्वोक्त विश्लेषणमें ह् + ई ये अक्षर पादसंकुल और ज् अपद संज्ञक हैं। संशोधन करनेसे यह पादसंकुला योनि हुई। अतः मोहनके मनमें पादसंकुलासम्बन्धी जीवकी चिन्ता समझनी चाहिए।

द्विपदयोनि और देवयोनिके भेद

तत्र द्विपदा[1] देवमनुष्यराक्षसा इति। तत्रोत्तरोत्तरेषु देवताः, उत्तराधरेषु मनुष्याः[2]। अधरोत्तरेषु पक्षिणः[3], अधराधरेषु राक्षसाः भवन्ति। तत्र देवाश्चतुर्णि[4]

१. तुलना—के० प्र० र० पृ० ५६–५७। के० प्र० सं० पृ० १८। ग० म० पृ० ७।
२. तुलना—प्र० कौ० पृ० ७। ज्ञा० प्र० पृ० २०। ३. "मृगमीनौ तु खचरौ तत्रस्थौ मन्द भूमिजौ। वनकुक्कुटकाकौ च चिन्तिताविति कीर्त्तयेत्॥ इत्यादि—"ज्ञा० प्र० पृ० २१।
४. "देवाश्चतुर्णिकायाः"—त० सू० ४। १। देवगतिनामकर्मोदये सत्यभ्यन्तरे हेतौ बाह्यविभूतिविशेषैर्द्वीपाद्रिसमुद्रादिषु प्रदेशेषु यथेष्टं दीव्यन्ति क्रीडन्तीति देवाः"—स० सि० ४। १।

कायाः—कल्पवासिनः, व्यन्तराः, ज्योतिष्काश्चेति ।

अर्थ—द्विपदयोनिके देव, मनुष्य, पक्षी और राक्षस ये चार भेद हैं। उत्तरोत्तर प्रश्नाक्षरों (अ क ख ग घ ङ) के होनेपर देव; उत्तराधर प्रश्नाक्षरों (च छ ज झ ञ ट ठ ड ढ ण) के होनेपर मनुष्य; अधरोत्तर प्रश्नाक्षरों (त थ द ध न प फ ब भ म) के होनेपर पक्षी और अधराधर प्रश्नाक्षरों (य र ल व श ष स ह) के होनेपर राक्षस योनि होती है। इनमें देवयोनिके चार भेद हैं—कल्पवासी, भवनवासी; व्यन्तर और ज्योतिषी।

विवेचन—दो पैर वाले जीव—देव, मनुष्य, पक्षी और राक्षस होते हैं। लग्नके अनुसार कुम्भ, मिथुन, तुला और कन्या ये चार द्विपद राशियाँ क्रमशः देव, मनुष्यादि संज्ञक हैं, लेकिन मतान्तरसे सभी राशियाँ देवादि संज्ञक हैं। पूर्वोक्त विधिसे लग्न बनाकर ग्रहोंकी स्थितिसे देवादि योनिका निर्णय करना चाहिए। प्रस्तुत ग्रन्थके अनुसार प्रश्नकर्त्तासे समयके अनुसार पुष्प, फलादिका नाम उच्चारण कराके पहले आलिंगित, अभिधूमित और दग्धकालमें जो पिण्ड बनानेकी विधि बतायी गयी है उसीके अनुसार बनाना चाहिए, परन्तु यहाँ इतना ध्यान और रखना चाहिए कि प्रश्नकर्त्ताके नामके वर्णांक और स्वरांकोंको प्रश्नके वर्णांक और स्वरांकोंमें जोड़कर तब पिण्ड बनाना चाहिए। इस पिण्डमें चारका भाग देनेपर एक शेषमें देव, दो में मनुष्य, तीनमें पक्षी और शून्यमें राक्षस जानना चाहिए। उदाहरण—जैसे मोहनने प्रातःकाल ८ बजे प्रश्न पूछा। आलिंगितकालका प्रश्न होनेसे फलका नाम जामुन बताया। इस प्रश्नवाक्यका विश्लेषण किया तो (ज् + आ + म् + उ + न् + अ) यह हुआ। 'वर्ग संख्या सहित स्वरों और वर्णोंके ध्रुवांक' चक्रके अनुसार (ज्६ + म्११ + न्१०) = ६ + ११ + १० = २७ वर्गांक, तथा इसी चक्रके अनुसार स्वरांक (आ३ + अ२ + उ६) = ३ + २ + ६ = ११; मोहन इस नामके वर्णोंका विश्लेषण (म् + ओ + ह् + अ + न् + अ) यह हुआ। यहाँपर भी 'वर्ग संख्या सहित स्वरों और वर्णोंके ध्रुवांक' चक्रके अनुसार वर्णांक = (म्११ + ह्१२ + न्१०) = ११ + १२ + १० = ३३; स्वरांक = (अ२ + अ२ + ओ१४) = २ + २ + १४ = १८। नामके वर्णांकोंको प्रश्नके वर्णांकोंके साथ तथा नामके स्वरांकोंको प्रश्नके स्वरांकोंके साथ योग कर देनेपर स्वरांक और वर्णांकोंका परस्पर गुणा करनेसे पिण्ड होता है। अतः २७ + ३० = ५७ वर्णांक, स्वरांक = ११ + १८ = २९, ५७ × २९ = १६५३ पिण्ड हुआ; इसमें चारका भाग दिया तो १६५३ ÷ ४ = ४१३ लब्ध, १ शेष, अतः देवयोनि हुई। अथवा विना गणित क्रियाके केवल प्रश्नाक्षरोंपर-से ही योनिका ज्ञान करना चाहिए। जैसे मोहनका 'जामुन' प्रश्नवाक्य है इसमें (ज् + आ + म् + उ + न् + अ) ये स्वर और व्यंजन हैं। इस विश्लेषणमें ज् मनुष्ययोनि तथा म् और न् पक्षी योनि हैं। संशोधन करनेपर पक्षी योनिके वर्ण अधिक हैं अतः पक्षी योनि हुई। अब यहाँपर यह शंका हो सकती है कि पहले नियमके अनुसार देव योनि आयी और दूसरे नियमके अनुसार पक्षी योनि, अतः दोनों परस्पर विरोधी हैं। लेकिन यह शंका ठीक

नहीं है क्योंकि द्वितीय नियमके अनुसार प्रातःकालके प्रश्नमें पुष्पका नाम पूछना चाहिए, फलका नहीं। यहाँ फलका नाम बताया गया है, इससे परस्परमें विरोध आता है। अतएव खूब सोच-विचारकर प्रश्नोंका उत्तर देना चाहिए।

देवयोनि जानने की विधि

अकारे कल्पवासिनः[1]। इकारे भवनवासिनः। एकारे व्यन्तराः। ओकारे ज्योतिष्काः। तद्यथा—क कि के को इत्यादि। अग्रे नाम्ना विशेषेण[2] वर्गस्य क्षितिदेवताः ब्राह्मणाः, राजानः, तपस्विनश्चानुक्रमेण ज्ञातव्या इति देवयोनिः।

अर्थ—देवयोनिके वर्णोंमें अकारकी मात्रा होनेपर कल्पवासी, इकारकी मात्रा होनेपर भवनवासी; एकारकी मात्रा होनेपर व्यन्तर और ओकारकी मात्रा होनेपर ज्योतिष्क देवयोनि होती है। जैसे—क में अकारकी मात्रा होनेसे कल्पवासी; कि में इकारकी मात्रा होनेसे भवनवासी; के में एकारकी मात्रा होनेसे व्यन्तर और को में ओकारकी मात्रा होनेसे ज्योतिष्क योनि होती है। आगे नामकी विशेषताके अनुसार पृथ्वीदेवता—ब्राह्मण, राजा और तपस्वी क्रमसे जानने चाहिए। इस प्रकार देवयोनिका प्रकरण पूर्ण हुआ।

विवेचन—व्यंजनोंसे सामान्य देवयोनिका विचार किया गया है, किन्तु मात्राओंसे कल्पवासी आदि देवोंका विचार करना चाहिए। जैसे—मोहनका प्रश्न वाक्य 'किसमिस' है, इस वाक्यका आदि वर्ण कि है। अतः देवयोनि हुई, क्योंकि मतान्तरसे प्रश्नवाक्यके प्रारम्भिक अक्षरके अनुसार ही योनि होती है। 'कि' इस वर्णमें 'इ' की मात्रा है अतः भवनवासी योनि हुई।

मनुष्ययोनिका विशेष निरूपण

अथ मनुष्ययोनिः[3]—ब्राह्मण[4]क्षत्रियवैश्यशूद्रान्त्यजाश्चेति मनुष्याः पञ्चविधाः। यथासंख्यं पञ्चवर्गाः क्रमेण ज्ञातव्याः। तत्रालिङ्गि[5]तेषु पुरुषः। अभि-

---

१. तुलना–के० प्र० र०, पृ० ५८। "देवा अकारवर्गे तु दैत्याश्चैव कवर्गकम्। मुनिसंज्ञं तवर्गं तु पवर्गे राक्षसाः स्मृताः॥ देवाश्चतुर्विधा ज्ञेयाः भुवनान्तरसंस्थिताः। कल्पवासी ततो नित्यं शेषं क्षिप्रमुदाहरेत्॥ एकविंशहता प्रश्नाः सप्तमात्राहतानि च। क्रमभागं पुनर्दद्यात् ज्ञातव्यं देवदानवम्॥ एकं भुवनमध्यं द्वितीयम् अन्तरास्थितम्। तृतीयं कल्पवासी च शून्ये चैव व्यन्तराः॥"–चं० प्र० श्लो० ५४, २४८–२५०। २. विशेषः–क० मू०। ३. तुलना–के० प्र० र० पृ० ५८–६०। ग० म० पृ० ८। भु० दी० पृ० २३–२६। ज्ञा० प्र० पृ० २२–२३। चं० प्र० श्लो० २५८–२६६ ४. "ब्राह्मणाः, क्षत्रियाः, वैश्याः, शूद्राः, अन्त्यजाश्चेति"–ता० मू०। ५. "तत्र द्विपदे त्रिविधो भेदः। पुरुषस्त्रीनपुंसकभेदात्। आलिङ्गितेन पुरुषः। अभिधूमितेन नारी] दग्धकेन षंढः।"–के० प्र० सं० १८, ग० म० पृ० ९। भु० दी० पृ० २४। प्र० वै० पृ० १०६–७। न० ज० पृ० ३१। च० प्र० २७१–७३।

धूमितेषु स्त्री। दग्धेषु नपुंसकः। तत्रालिङ्गिते[1] गौरः। अभिधूमिते श्यामः। दग्धेषु कृष्णः।

अर्थ—मनुष्य योनिके ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र और अन्त्यज ये पांच भेद हैं। प्रथम, द्वितीय आदि पाँचों वर्गोंको क्रमसे ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र और अन्त्यज समझना चाहिए अर्थात् अ ए क च ट त प य श ये ब्राह्मण वर्ण; आ ऐ ख छ ठ थ फ र ष ये क्षत्रिय वर्ण; इ ओ ग ज ड द ब ल स ये वैश्य वर्ण; ई औ घ झ ढ ध भ व ह ये शूद्र वर्ण और उ ऊ ङ ञ ण न म अं अः ये अन्त्यज वर्ण संज्ञक होते हैं। इन पाँचों वर्णोंमें भी आलिंगित प्रश्न वर्ण होनेपर पुरुष, अभिधूमित होनेपर स्त्री और दग्ध होनेपर नपुंसक होते हैं। पुरुष, स्त्री आदिमें भी आलिंगित प्रश्न वर्ण होनेपर गौर वर्ण, अभिधूमित होनेपर श्याम और दग्ध होनेपर कृष्ण वर्णके व्यक्ति होते हैं।

विवेचन—मनुष्य योनिके अवगत हो जानेपर ब्राह्मण, क्षत्रिय आदि वर्ण-विशेषका ज्ञान करनेके लिए प्रश्नलग्नानुसार फल कहना चाहिए। यदि शुक्र और बृहस्पति बलवान् होकर लग्नको देखते हों या लग्नमें हों तो ब्राह्मण वर्ण; मंगल और रवि बलवान् होकर लग्नको देखते हों या लग्नमें हों तो क्षत्रिय वर्ण, चन्द्रमा बलवान् होकर लग्नको देखता हो या लग्नमें हो तो वैश्य वर्ण, बुध बलवान् होकर लग्नको देखता हो या लग्नमें हो तो शूद्र वर्ण और राहु एवं शनिश्चर दोनों ही बलवान् होकर लग्नको देखते हों या लग्नमें हों तो अन्त्यज वर्ण जानना चाहिए। विशेष प्रकारके मनुष्योंके ज्ञान करनेका नियम यह है कि सूर्य अपनी उच्च राशि [मेष] में उदित हो और शुभ ग्रहसे दृष्ट हो तो सम्राट्, केवल उच्च राशिमें रहनेपर जमींदार, स्वक्षेत्रग [सिंह राशि में] होनेसे मन्त्री, मित्र गृहमें मित्र दृष्ट होनेसे राजाश्रित योद्धा होता है। उपर्युक्त स्थितिसे भिन्न सूर्यकी स्थिति हो तो काँसका काम करनेवाला, कुम्हार, शंखछेदी आदि निम्न श्रेणीका व्यक्ति समझना चाहिए। नर राशिमें सूर्य यदि चन्द्रसे दृष्ट या युक्त हो तो वैद्य, बुध से युक्त या दृष्ट हो तो चोर और राहुसे युक्त या दृष्ट होनेपर विष देने-वाला चाण्डाल जानना चाहिए। शनिके बली होनेसे वृक्ष काटनेवाला, राहुके बली होने पर धीवर या नाई, चन्द्रमाके बली होनेसे नर्त्तक एवं शुक्रके बली होनेसे कुम्हार तथा चूना बेचनेवाला समझना चाहिए।

यदि लग्नमें कोई सौम्य ग्रह बलवान् होकर स्थित हो तो पृच्छकके मनमें अपनी जातिके मनुष्यकी चिन्ता; तृतीय भावमें स्थित हो तो भाईकी चिन्ता, चतुर्थ भावमें स्थित हो तो मित्रकी चिन्ता, पंचम भावमें स्थित हो तो माता एवं पुत्रकी चिन्ता, छठे भावमें स्थित हो तो शत्रुकी चिन्ता, सातवें भावमें स्थित हो तो स्त्रीकी चिन्ता, आठवें भावमें स्थित हो तो मृतपुरुषकी चिन्ता, नौवें भावमें स्थित हो तो मुनि या किसी बड़े धर्मात्मा पुरुषकी चिन्ता, दसवें भावमें स्थित हो तो पिताकी चिन्ता, ग्यारहवें भावमें स्थित हो

१. "गौरः श्यामस्तथा सम इत्यादि"–ग० म० पृ० ६। भु० दी० पृ० २४–२५। बृ० जा० पृ० २७। चं० प्र० श्लो० ४६–४८।

तो बड़े भाई एवं गुरु आदि पूज्य पुरुषोंकी चिन्ता और बारहवें भावमें बली ग्रहके स्थित होनेपर हितैषीकी चिन्ता जाननी चाहिए। प्रश्नकालके ग्रहोंमें सूर्य और शुक्र वक्री हों तथा इन दोनोंमें-से कोई एक ग्रह अस्त हो तो पृच्छकके मनमें परस्त्रीकी चिन्ता; सप्तम भावमें बुध हो तो वेश्याकी चिन्ता एवं सप्तम भावमें शनिश्चर हो तो नाईन, धोबिन आदि नीच वर्णोंकी स्त्रियोंकी चिन्ता जाननी चाहिए। यदि प्रश्न लग्नमें बलवान् बुध और शनिश्चर स्थित हो अथवा इन दोनोंमें-से किसी एक ग्रहकी लग्न स्थानके ऊपर पूर्ण दृष्टि हो तो नपुंसककी चिन्ता; शुक्र और चन्द्रमा इन दोनोंमें-से कोई एक ग्रह लग्नेश होकर लग्नमें स्थित हो अथवा इनकी पूर्ण दृष्टि हो तो स्त्रीकी चिन्ता एवं बलवान् सूर्य, वृहस्पति और मंगलमें-से कोई एक ग्रह अथवा तीनों ही ग्रह लग्नमें स्थित हों या लग्नको देखते हों तो पुरुषकी चिन्ता समझनी चाहिए।

यदि लग्नमें सूर्य हो तो पाखण्डियोंकी चिन्ता, तीसरे और चौथे स्थानमें स्थित हो तो कार्यकी चिन्ता, पाँचवें स्थानमें स्थित हो तो पुत्र और कुटुम्बियोंकी चिन्ता, छठवें स्थानमें सूर्यके स्थित होनेसे कार्य और मार्गकी चिन्ता, सातवें स्थानमें स्थित होनेपर सपत्नीकी चिन्ता, आठवें भावमें सूर्यके स्थित रहनेपर नौकाकी चिन्ता, नौवें स्थानमें सूर्यके रहनेपर अन्य नगरके मनुष्यकी चिन्ता, दसवें भावमें सूर्यके रहनेसे सरकारी कार्योंकी चिन्ता; ग्यारहवें भावमें सूर्यके रहनेसे टैक्स, कर आदिके वसूल करनेकी चिन्ता और बारहवें भावमें सूर्यके रहनेसे शत्रुसे हानिकी चिन्ता होती है।

प्रथम स्थानमें चन्द्रमा हो तो धनकी चिन्ता, द्वितीयमें हो तो धनके सम्बन्धमें आपसके झगड़ोंकी चिन्ता, तृतीय स्थानमें हो तो वृष्टिकी चिन्ता, चतुर्थ स्थानमें हो तो माताकी चिन्ता, पंचम स्थानमें हो तो पुत्रोंकी चिन्ता, छठवें स्थानमें हो तो रोगकी चिन्ता, सातवें स्थानमें हो तो स्त्रीकी चिन्ता, आठवें स्थानमें हो तो भोजनकी चिन्ता, नौवें स्थानमें हो तो मार्ग चलनेकी चिन्ता, दसवें स्थानमें हो तो दुष्टोंकी चिन्ता, ग्यारहवें स्थानमें स्थित हो तो वस्त्र, धूप, कपूर, अनाज आदि वस्तुओंकी चिन्ता, एवं बारहवें भावमें चन्द्रमा स्थित हो तो चोरी गयी वस्तुके लाभकी चिन्ता कहनी चाहिए।

लग्न स्थानमें मंगल हो तो कलहजन्य चिन्ता, द्वितीय भावमें मंगल हो तो नष्ट हुए धनके लाभकी चिन्ता, तृतीय स्थानमें होनेसे भाई और मित्रकी चिन्ता, चतुर्थ स्थानमें रहनेसे शत्रु, पशु एवं क्रय-विक्रयकी चिन्ता, पाँचवें स्थानमें रहनेसे क्रोधी मनुष्यके भयकी चिन्ता, छठवें स्थानमें रहनेसे सोना, चाँदी, अग्नि आदिकी चिन्ता, सातवें स्थानमें रहनेसे दासी, दास, घोड़ा आदिकी चिन्ता, आठवें स्थानमें रहनेसे मन्दिरकी चिन्ता, नौवें स्थानमें रहनेसे मार्गकी चिन्ता, दसवें स्थानमें रहनेसे वाद-विवाद, मुकद्दमा आदिकी चिन्ता, ग्यारहवें स्थानमें रहनेसे शत्रुवृद्धिकी चिन्ता और बारहवें स्थानमें मंगलके रहनेसे शत्रुसे होनेवाले अनिष्टकी चिन्ता कहनी चाहिए।

बुध लग्नमें हो तो वस्त्र, धन और पुत्रकी चिन्ता, द्वितीयमें हो तो विद्याकी चिन्ता, तृतीय स्थानमें हो तो भाई, बहन आदिकी चिन्ता, चतुर्थ स्थानमें हो तो खेती

और बगीचाकी चिन्ता, पाँचवें भावमें हो तो सन्तानकी चिन्ता, छठवें भावमें स्थित हो तो गुप्त कार्योंकी चिन्ता, सातवें भावमें स्थित हो तो राजाज्ञाकी चिन्ता, आठवें भावमें स्थित हो तो पक्षी, मुकद्दमा और राजदण्ड आदिकी चिन्ता, नौवें स्थानमें स्थित हो तो धार्मिक कार्योंकी चिन्ता, दसवें स्थानमें स्थित हो तो शास्त्रकथा, सुख आदिकी चिन्ता; ग्यारहवें भावमें स्थित हो तो धनप्राप्तिकी चिन्ता और बारहवें भावमें बुध स्थित हो तो घरेलू झगड़ोंकी चिन्ता जाननी चाहिए।

बृहस्पति लग्नमें स्थित हो तो व्याकुलताके नाशकी चिन्ता, द्वितीय स्थानमें हो तो धन, कुशलता, सुख एवं भोगोपभोगकी वस्तुओंकी प्राप्तिकी चिन्ता, तृतीय स्थानमें हो तो स्वजनोंकी चिन्ता, चतुर्थ स्थानमें हो तो भाईके विवाहकी चिन्ता, पाँचवें स्थानमें स्थित हो तो पुत्रके स्नेह और उसके विवाहकी चिन्ता, छठवें स्थानमें स्थित हो तो स्त्रीके गर्भकी चिन्ता, सातवेंमें हो तो धनप्राप्तिकी चिन्ता, आठवेंमें हो तो कृपणसे धनप्राप्तिकी चिन्ता, नौवें स्थानमें हो तो धन सम्पत्तिकी चिन्ता, दसवें स्थानमें स्थित हो तो मित्र-सम्बन्धी झगड़ेकी चिन्ता, ग्यारहवें भावमें स्थित हो तो सुखकी चिन्ता और बारहवें भावमें बृहस्पति हो तो यशकी चिन्ता कहनी चाहिए।

लग्नमें शुक्र हो तो नृत्य संगीत, विषय-वासना तृप्तिकी चिन्ता, द्वितीय स्थानमें हो तो धन, रत्न, वस्त्र इत्यादिकी चिन्ता, तृतीय भावमें हो तो स्त्रीके गर्भकी चिन्ता, चतुर्थ स्थानमें हो तो विवाहकी चिन्ता, पंचम स्थानमें हो तो भाई और सन्तानकी चिन्ता, छठवें स्थानमें हो तो गर्भवती स्त्रीकी चिन्ता, सातवें स्थानमें हो तो स्त्रीप्राप्तिकी चिन्ता, आठवेंमें हो तो परस्त्रीकी चिन्ता, नौवें स्थानमें हो तो रोगकी चिन्ता, दसवें स्थानमें हो तो अच्छे कार्योंकी चिन्ता, ग्यारहवें स्थानमें हो तो व्यापारकी चिन्ता और बारहवें भावमें शुक्र हो तो दिव्य वस्तुओंकी प्राप्तिको चिन्ता कहनी चाहिए।

लग्नमें शनिश्चर हो तो रोगकी चिन्ता, द्वितीयमें हो तो पुत्रको पढ़ानेकी चिन्ता, तृतीय स्थानमें हो तो भाईके नाशकी चिन्ता, चौथे स्थानमें शनि हो तो स्त्रीकी चिन्ता, पाँचवें भावमें हो तो मनुष्योंके कार्यकी चिन्ता, छठवें स्थानमें हो तो जार स्त्रीकी चिन्ता, सातवें स्थानमें हो तो गाड़ीकी चिन्ता, आठवें स्थानमें हो तो धन, मृत्यु, दास, दासी आदि की चिन्ता, नौवें स्थानमें हो तो निन्दाकी चिन्ता, दसवें स्थानमें हो तो कार्यकी चिन्ता, ग्यारहवें स्थानमें हो तो कुत्सित कर्मकी चिन्ता और बारहवें भावमें शनि हो तो शत्रुओं-की चिन्ता कहनी चाहिए। सातवें भवनमें शुक्र, बुध, गुरु, चन्द्रमा और सूर्य इन ग्रहोंका इत्थशाल योग होवे तो कन्याके विवाहकी चिन्ता समझनी चाहिए।

पुरुष, स्त्री आदिके रूपका ज्ञान लग्नेश और लग्न देखनेवाले ग्रहके रूपके ज्ञान-से करना चाहिए। जिस वर्णका ग्रह लग्नको देखता हो तथा जिस वर्णका बली ग्रह लग्नेश हो उसी वर्णके मनुष्यकी चिन्ता कहनी चाहिए। यदि मंगल लग्नेश हो अथवा पूर्ण बली होकर लग्नको देखता हो तो लाल वर्ण [रंग], बृहस्पतिकी उक्त स्थिति होनेपर कांचन वर्ण, बुधकी उक्त स्थिति होनेपर हरा वर्ण, सूर्यकी उक्त स्थिति होनेपर

गौर वर्ण, चन्द्रमाकी उक्त स्थिति होनेपर आकके पुष्पके समान वर्ण, शुक्रकी उक्त स्थिति होनेपर शुक्ल वर्ण और शनि, राहु एवं केतुको उक्त स्थितिपर कृष्ण वर्णके व्यक्तिकी चिन्ता कहनी चाहिए।

बाल-वृद्धादि एवं आकृति मूलक समादि अवस्था

आलिङ्गितेषु बालः[१]। अभिधूमितेषु मध्यमः। दग्धेषु वृद्धः। आलिङ्गितेषु समः। अभिधूमितेषु दीर्घः[२]। दग्धेषु कुब्जः। अनामविशेषाः[३] ज्ञातव्या इति मनुष्ययोनिः।

अर्थ—आलिगित प्रश्नाक्षर होनेपर बाल्यावस्था, अभिधूमित प्रश्नाक्षर होनेपर मध्यमावस्था—युवावस्था और दग्ध प्रश्नाक्षर होनेपर वृद्धावस्था होती है। आलिगित प्रश्नाक्षर होनेपर सम न अधिक कदमें बड़ा न अधिक छोटा, अभिधूमित प्रश्नाक्षर होने पर दीर्घ लम्बा और दग्ध प्रश्नाक्षर होनेपर कुब्ज मनुष्यकी चिन्ता होती है। नामको छोड़कर अन्य सब विशेषताएँ प्रश्नाक्षरोंपर-से ही जाननी चाहिए। इस प्रकार मनुष्य योनिका प्रकरण पूर्ण हुआ।

विवेचन—यदि मंगल चतुर्थ भावका स्वामी हो, चतुर्थ भावमें स्थित हो या चतुर्थ भावको देखता हो तो युवा; बुध चतुर्थ भावका स्वामी हो, चतुर्थ भावमें स्थित हो या चतुर्थ भावको देखता हो तो बालक; चन्द्रमा और शुक्र चतुर्थ भावमें स्थित हों, चतुर्थ भावके स्वामी हों या चतुर्थभावको देखते हों तो अर्द्ध वयस्क; शनि, रवि, बृहस्पति और राहु ये ग्रह चतुर्थ भावमें स्थित हों, चतुर्थ भावके स्वामी हों या चतुर्थ भावको देखते हों तो वृद्ध पुरुषकी चिन्ता कहनी चाहिए। आकार बली लग्नाधीशके समान जानना चाहिए अर्थात् बली सूर्य लग्नाधीश हो तो शहदके समान पीले नेत्र, लम्बी-चौड़ी बराबर देह, पित्त प्रकृति और थोड़े बालोंवाला; बली चन्द्रमा लग्नाधीश हो तो पतली गोल देह, वात-कफ प्रकृति, सुन्दर आँख, कोमल वचन और बुद्धिमान्; मङ्गल लग्नाधीश हो तो क्रूर दृष्टि, युवक, उदारचित्त, पित्त प्रकृति, चंचल स्वभाव और पतली कमर वाला; बुध लग्नाधीश हो तो वाक्पटु, हँसमुख, वात-पित्त-कफ प्रकृति वाला; बृहस्पति लग्नाधीश हो तो स्थूल शरीर, पीले बाल, पीले नेत्र, धर्मबुद्धि और कफ प्रकृतिवाला; शुक्र लग्नाधीश हो तो सुन्दर शरीर, स्वस्थ, कफ-वात प्रकृति और कुटिल केशवाला एवं शनैश्चर लग्नाधीश हो तो आलसी, पीले नेत्र, कृश शरीर, मोटे दाँत, रूखे बाल, लम्बी देह और अधिक वात वाला होता है। इस प्रकार लग्नानुसार जीवयोनिका निरूपण करना चाहिए।

---

१. तुलना—के० प्र० पृ० ६०-६१। चं० प्र० श्लो० २६६। ता० नी० पृ० ३२४। भु० दी० पृ० ३०-४५। २. के० प्र० र० पृ० ६१। चं० प्र० श्लो० २७५-२७७, २८५। भुव० दी० पृ० २४। ३. अग्रे नाम्ना विशेष इति मनुष्याः ता० मू०।

इस प्रस्तुत ग्रन्थानुसार प्रश्नकर्त्ताके मनमें क्या है, वह क्या पूछना चाहता है, इत्यादि बातोंका परिज्ञान आचार्यने जीव, मूल और धातु इन तीन प्रकारकी योनियों द्वारा किया है। जीव प्रश्नाक्षर—अ आ इ ओ अः ए क ख ग घ च छ ज झ ट ठ ड ढ य श ह होनेपर पृच्छककी जीवसम्बन्धी चिन्ता कहनी चाहिए, लेकिन जीवयोनिके द्विपद, चतुष्पद, अपद और पादसंकुल ये चार भेद होते हैं। अतः जीवविशेषकी चिन्ता-का ज्ञान करनेके लिए द्विपदके देव, मनुष्य, पक्षी और राक्षस ये चार भेद किये गये हैं। मनुष्य योनि सम्बन्धी प्रश्नके ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र और अन्त्यज इन पाँच भेदों द्वारा विचार-विनिमय कर वर्ण-विशेषका निर्णय करना चाहिए। फिर प्रत्येक वर्णके पुरुष, स्त्री और नपुंसक ये तीन-तीन भेद होते हैं, क्योंकि ब्राह्मण वर्ण सम्बन्धी प्रश्न होनेपर पुरुष, स्त्री आदिका निर्णय भी करना आवश्यक है। पुनः पुरुष, स्त्री आदि भेदोंके भी बाल्य, युवा और वृद्ध ये तीन अवस्थासम्बन्धी भेद हैं तथा इनमें-से प्रत्येकके गौर, श्याम और कृष्ण रंगभेद एवं सम, दीर्घ और कुब्ज ये तीन आकृति सम्बन्धी भेद हैं। इस प्रकार मनुष्य योनिके जीवका अक्षरानुसार निर्णय करना चाहिए। उदाहरण—जैसे किसी आदमीने प्रातःकाल ९ बजे आकर पूछा कि मेरे मनमें क्या चिन्ता है? ज्योतिषीने उससे फलका नाम पूछा तो उसने जामुन बताया। जामुन इस प्रश्न वाक्यका विश्लेषण किया तो ज् + आ + म् + उ + न् + अ यह रूप हुआ। इसमें ज् + आ + अ ये तीन जीवाक्षर न् + म् ये दो मूलाक्षर और उ धात्वक्षर हैं। **"प्रश्ने जीवाक्षराणि धात्वक्षराणि मूलाक्षराणि च परस्परं शोधयित्वा योऽधिकः स एव योनिः"** इस नियमानुसार जीवाक्षर अधिक होनेसे जीव योनि हुई, अतः जीवसम्बन्धी चिन्ता कहनी चाहिए। पर किस प्रकारके जीवकी चिन्ता है? यह जाननेके लिए ज् + आ + अ इन विश्लेषित वर्णों में 'ज्' अपद, 'आ' चतुष्पद और 'अ' द्विपद हुआ। यहाँ तीनों वर्ण भिन्न-भिन्न संज्ञक होनेके कारण 'योऽधिकस्स एव योनिः', नहीं लगा, किन्तु प्रथमाक्षरकी प्रधानता मानकर चतुष्पद सम्बन्धी चिन्ता कहनी चाहिए। इस प्रकार उत्तरोत्तर मनुष्य योनि सम्बन्धी चिन्ताका निर्णय करना चाहिए।

पक्षियोनिके भेद

अक्ष [1]पक्षियोनिः—तवर्गे जलचराः। पवर्गे स्थलचराः। तत्र नाम्ना

---

१. तुलना—के० प्र० र० पृ० ६१-६२। ग० म० पृ० ८। चं० प्र० श्लो० २८७-२८८। शा० प्र० पृ० २१-२२। प्र० कौ० पृ० २। विशेष फलादेशके लिए पक्षीचक्र—"चंचु-मस्तककण्ठेपु हृदयोदरपत्सु च। पक्षयोश्च त्रिकं चैव शशिभादि न्यसेद् बुधः। चंकुस्थे नामसे मृत्युः; शीप कण्ठोदरे हृदि। विजयः क्षेमलाभश्च भंगदं पादपक्षयोः"—न० र० पृ० २१३; पक्षिशेषं खेशर ५० हतं दिवतवि ग्रामचरः, अरण्यचरः, अम्बुचरः,। खेशरहतं ५० दीप्त-रवि, १२ हृतं त १, शुकः २, पिकः ३, हंसः ४, काकः ५, कुक्कुटः ६, चक्रवाकः ७, गुल्लिः ८, मयूरः ९, सालुवः १०, परिवाणः ११, ककोरले १२, लावगे १३, बुसले ०। अरण्याखगशेषं अद्रिशर ५७ हतं दिवत वि—स्थूलखगः। स—मध्यमखगः ०। सूक्ष्मखगः।

विशेषाः [1] ज्ञातव्याः । इति पक्षियोनिः ।

अर्थ—प्रश्नाक्षर तवर्ग के हों तो जलचर पक्षी और पवर्गके हों तो थलचर पक्षी-की चिन्ता कहनी चाहिए । पक्षियोंके नाम अपनी बुद्धिके अनुसार बतलाना चाहिए । इस प्रकार पक्षियोनिका निरूपण समाप्त हुआ ।

विवेचन—यदि प्रश्नलग्न मकर या मीन हो और उन राशियोंमें शनि या मंगल स्थित हों तो वनकुक्कुट और काक सम्बन्धी चिन्ता; अपनी राशियोंमें—वृष और तुलामें शुक्र हो तो हंस, बुध हो तो शुक, चन्द्रमा हों तो मोर सम्बन्धी चिन्ता कहनी चाहिए । अपनी राशि–सिंहमें सूर्य हो तो गरुड़; बृहस्पति अपनी राशि–धनु और मीनमें हो तो श्वेत वक; बुध अपनी राशि-कन्या और मिथुनमें हो तो मुर्गा; मंगल अपनी राशि–मेष और वृश्चिकमें हो तो उल्लू एवं राहु धनु और मीनमें हो तो भरदूल पक्षीकी चिन्ता कहनी चाहिए । सौम्य ग्रहों–बुध, चन्द्र, गुरु और शुक्रके लग्नेश होनेपर सौम्य-पक्षीकी चिन्ता और क्रूर ग्रहों–रवि, शनि और मंगलके लग्नेश होनेपर क्रूर पक्षियोंकी चिन्ता समझनी चाहिए । इस प्रकार लग्न और लग्नेशके विचारसे पक्षियोनिका निरूपण करना आवश्यक है । प्रश्नाक्षर और प्रश्नलग्न इन दोनोंपर-से विचार करनेपर ही सत्यासत्य फलका कथन करना चाहिए । एकांगी केवल लग्न या केवल प्रश्नाक्षरोंका विचार अधूरा रहता है, आचार्यने इसो अभिप्रायसे "तत्र विशेषाः ज्ञातव्याः" इत्यादि कहा है ।

राक्षसयोनिके भेद

कर्मजाः योनिजाश्चेति राक्षसा [2] द्विविधाः । [3] तवर्गे कर्मजाः । शवर्गे योनिजाः । तत्र नाम्ना [4] विशेषतो ज्ञेयाः [5] । इति द्विपदयोनिश्चतुर्विधः ।

अर्थ—राक्षसयोनिके दो भेद हैं—कर्मज और योनिज । तवर्गके प्रश्नाक्षर होनेपर कर्मज और शवर्गके प्रश्नाक्षर होनेपर योनिज राक्षसयोनि होती है । नामसे विशेष प्रकारके भेदोंको जानना चाहिए । इस प्रकार द्विपद योनिके चारों भेदोंका कथन समाप्त हुआ ।

विवेचन—भूत, प्रेतादि राक्षस कर्मज कहे जाते हैं और असुरादिको योनिज कहते हैं । यद्यपि सैद्धान्तिक दृष्टिसे भूतादि स्वतन्त्र व्यन्तरोंके भेदोंमें से हैं, पर यहाँ पर राक्षससामान्यके अन्तर्गत ही व्यन्तरके समस्त भेदों तथा भवनवासियोंके असुरकुमार,

---

स्थूलखगशेषं ताराहतं २७, दिवत १, बेरुण्डा २, रणवक्कि ३, हेब्बल्लि; ४, गरुडः ५, क्रौञ्चः ६, कोंगिडिः ७, वकः ०, गूगे०। मध्यमखगशेषम्"। —के० हो० ह० पृ० ८१ ।

१. ज्ञातव्या इति पाठो नास्ति—क० मू० । २.तुलना—के० प्र० र० पृ० ६२ । ग० म० पृ० ६ च० प्र० श्लो० २, १-६३ । ३. यवर्ग—ता० शू० । ४. विशेषः—क० मू० । ५. ज्ञेया इति पाठो नास्ति—क० मू० ।

वातकुमार, द्वीपकुमार और दिक्कुमारोंको रखा है। ज्योतिष शास्त्रमें निकृष्ट देवोंको राक्षस संज्ञा दी गयी है। रत्नप्रभाके पंकभागमें असुरकुमार और राक्षसोंका निवास स्थान बताया गया है। शास्त्रोंमें व्यन्तर देवोंके निवासोंका कथन भवनपुर, आवास और भवनके नामोंसे किया गया है अर्थात् द्वीप-समुद्रोंमें भवनपुर, तालाब, पर्वत और वृक्षोंपर आवास और चित्रा पृथ्वीके नीचे भवन हैं। ज्योतिषीको प्रश्नकर्त्ताकी चर्या और चेष्टासे उपर्युक्त स्थानोंमें रहनेवाले देवोंका निरूपण करना चाहिए। अथवा लग्नेश और लग्न-सप्तमके सम्बन्धसे उक्त देवोंका निरूपण करना चाहिए अर्थात् लग्नेश मंगल हो और सप्तम भावमें रहनेवाले बुध एवं रविके साथ इत्थशाल करता हो तो भवनपुरमें रहनेवाले निकृष्ट देवों—राक्षसोंकी चिन्ता, शनि लग्नेश होकर सप्तमेश शुक्र और सप्तम भावस्थ गुरुके साथ कम्बूल योग कर रहा हो तो आवासमें रहनेवाले राक्षसोंकी चिन्ता एवं राहु और केतु हीनबल हों तथा बृहस्पतिका रविके साथ मणऊ योग हो तो भवनमें रहनेवाले राक्षसोंकी चिन्ता कहनी चाहिए।

चतुष्पद योनिके भेद

अथ[1] चतुष्पदयोनिः[2]—खुरी नखी दन्ती श्रृंगी चेति चतुष्पदाश्चतुर्विधाः। तत्र आ ऐ खुरी, छ ठा नखी, थ फा दन्ती, र षा श्रृंगी।

अर्थ—खुरी, नखी, दन्ती और श्रृंगी ये चार भेद चतुष्पद योनिके हैं। यदि आ और ऐ स्वर प्रश्नाक्षर हों तो खुरी, छ और ठ प्रश्नाक्षर हों तो नखी, थ और फ प्रश्नाक्षर हों तो दन्ती और र एवं ष प्रश्नाक्षर हों तो श्रृंगी योनि कहनी चाहिए।

विवेचन—लग्न स्थानमें मंगलकी राशि हो और त्रिपाद दृष्टिसे मंगल लग्नको देखता हो तो खुरी; सूर्यकी राशि–सिंह लग्न हो और सूर्य लग्नको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो या लग्न स्थानमें हो तो नखी, मेष राशिमें शनि स्थित हो अथवा लग्न स्थानके ऊपर शनिकी पूर्ण दृष्टि हो तो दन्ती एवं मंगल कर्क राशिमें स्थित हो अथवा मकरमें स्थित हो और लग्न स्थानके ऊपर त्रिपाद या पूर्ण दृष्टि हो तो श्रृंगी योनि कहनी चाहिए।

प्रस्तुत ग्रन्थानुसार प्रश्नश्रेणीके आद्य वर्णकी जो मात्रा हो उसीके अनुसार खुरी, नखी, दन्ती और श्रृंगी योनिका निरूपण करना चाहिए। केरलादि प्रश्न ग्रन्थोंके मतानुसार अ आ इ ये तीन स्वर प्रश्नाक्षरोंके आदिमें हों तो खुरी; ई उ ऊ ये तीन स्वर प्रश्नाक्षरोंके आदिमें हों तो नखी, ए ऐ ओ ये तीन स्वर प्रश्नाक्षरोंके आदिमें हों तो दन्ती और औ अं अः ये तीन स्वर प्रश्नाक्षरोंके आदिमें हों तो श्रृंगी योनि कहनी चाहिये।

---

१. तुलना—के० प्र० र० पृ० ६२-६३। प्र० कौ० पृ० ६। चं० प्र० श्लो० २६४-२६६। के० हो० ह० पृ० ८६। २. "अथ चतुष्पदयोनिः" इति पाठो नास्ति–ता० मू०।

खुरी, नखी, दन्ती और श्रृंगी योनिके भेद और उनके लक्षण

तत्र [1]खुरिणः द्विविधाः–ग्रामचरा अरण्यचराश्चेति। 'आ ऐ' ग्रामचरा अश्वगर्दभादयः। 'ख' अरण्यचराः गवयहरिणादयः। तत्र नाम्ना [2]विशेषतो ज्ञेयाः। नखिनोऽपि ग्रामारण्याश्चेति द्विविधाः। 'छ' ग्रामचराः श्वानमार्जारादयः। 'ठ' अरण्यचरा व्याघ्रसिंहादयः। तत्र नाम्ना विशेषतो[3] ज्ञेयाः। दन्तिनो द्विविधाः–ग्रामचरा अरण्यचराश्चेति। '[4]थ' तत्र ग्रामचराः सूकरादयः। '[5]फ' अरण्यचरा हस्त्यादयः। तत्र नाम्ना विशेषंतो ज्ञेयाः। शृङ्गिणो द्विविधाः–ग्रामचरा अरण्यचराश्चेति। 'र' ग्रामचराः महिषछागादयः। 'ष' अरण्यचरा मृगगण्डकादय इति चतुष्पदो योनिः।

अर्थ—खुरी योनिके ग्रामचर और अरण्यचर ये दो भेद हैं। आ ऐ प्रश्नाक्षर होनेपर ग्रामचर अर्थात् घोड़ा, गधा, ऊँट आदि मवेशीकी चिन्ता और ख प्रश्नाक्षर होने पर भी वनचारी पशु रोझ, हरिण, खरगोश आदिकी चिन्ता कहनी चाहिए। इन पशुओं में भी नामके अनुसार विशेष प्रकारके पशुओंकी चिन्ता कहनी चाहिए।

नखी योनिके ग्रामचर और अरण्यचर ये दो भेद हैं। 'छ' प्रश्नाक्षर हो तो ग्रामचर अर्थात् कुत्ता, बिल्ली आदि नखी पशुओंकी चिन्ता और ठ प्रश्नाक्षर हो तो अरण्यचर–व्याघ्र, चीता, सिंह, भालू आदि जंगली नखी जीवोंकी चिन्ता कहनी चाहिए। नामके अनुसार विशेष प्रकारके नखी जीवोंकी चिन्ताका ज्ञान करना चाहिए।

दन्ती योनिके दो भेद हैं—ग्रामचर और अरण्यचर। 'थ' प्रश्नाक्षर हो तो ग्रामचर—शूकरादि ग्रामीण पालतू दन्ती जीवोंकी चिन्ता और 'फ' प्रश्नाक्षर हो तो अरण्यचर हाथी आदि जंगली दन्ती पशुओंकी चिन्ता कहनी चाहिए। दन्ती पशुओंको नामानुसार विशेष प्रकारसे जानना चाहिए।

श्रृंगी योनिके भी दो भेद हैं—ग्रामचर और अरण्यचर। 'र' प्रश्नाक्षर हो तो भैंस, बकरी आदि ग्रामीण पालतू सींगवाले पशुओंकी चिन्ता और 'ष' प्रश्नाक्षर हो तो अरण्यचर–हरिण, कृष्णसार आदि वनचारी सींग वाले पशुओंकी चिन्ता समझनी चाहिए। इस प्रकार चतुष्पद-पशु योनिका निरूपण सम्पूर्ण हुआ।

विवेचन—प्रश्नकालीन लग्न बनाकर उसमें यथास्थान ग्रहोंको स्थापित कर लेनेपर चतुष्पद योनिका विचार करना चाहिए। यदि मेष राशिमें सूर्य हो तो व्याघ्रकी चिन्ता, मंगल हो तो भेड़की चिन्ता, बुध हो तो लंगूरकी चिन्ता, शुक्र हो तो बैलकी चिन्ता, शनि हो तो भैंसकी चिन्ता और राहु हो तो रोझकी चिन्ता कहनी चाहिए। वृष

---

१. तुलना–चं० प्र० श्लो० २९७-३०१। ज्ञा० प्र० पृ० २३-२४। भु० दी० पृ० १५-१६। स० वृ० सं० पृ० १०५२। के० हो० वृ० पृ० ८७। २.विशेषः–क० मू०। ३.विशेषः–क० मू०। ४.'थ' इति पाठो नास्ति–क० मू०। ५.'फ' इति पाठो नास्ति–क० मू०। ६.विशेषः–क० मू०।

राशिमें सूर्य हो तो वारहसिंगाकी चिन्ता, मंगल हो तो कृष्ण मृगकी चिन्ता, बुध हो तो बन्दरकी चिन्ता, चन्द्रमा हो तो गायकी चिन्ता, शुक्र हो तो पीली गायकी चिन्ता, शनि हो तो भैंसकी चिन्ता और राहु हो तो भैंसा की चिन्ता बतलानी चाहिए। मंगल यदि कर्क राशिमें हो तो हाथी, मकर राशिमें हो तो भैंस, वृषमें हो तो सिंह, मिथुनमें हो तो कुत्ता, कन्यामें हो तो शृगाल, सिंहमें हो तो व्याघ्र एवं सिंह राशिमें रवि, चन्द्र और मंगल ये तीनों ग्रह हों तो सिंहकी चिन्ता कहनी चाहिए। चन्द्रमा तुला राशिमें स्थित हो और लग्न स्थानको देखता हो तो गाय, शुक्र तुला राशिमें स्थित हो, सप्तम भावके ऊपर पूर्ण दृष्टि हो और लग्नेश या चतुर्थेश हो तो बछड़ेको चिन्ता समझनी चाहिए। धनु राशिमें मंगल या बृहस्पति स्थित हो तो घोड़ा और शनि भी वक्री होकर धनु राशिमें ही बृहस्पति और मंगलके साथ स्थित हो तो मस्त हाथीकी चिन्ता वतलानी चाहिए। धनु राशिमें लग्नेशसे संबद्ध राहु बैठा हो तो भैंसकी चिन्ता; धनु राशिमें बुध और बृहस्पति स्थित हों तथा चतुर्थ एवं सप्तम भावसे सम्बद्ध हों तो बन्दरकी चिन्ता; धनु राशिमें ही चन्द्रमा और बुध स्थित हों अथवा दोनों ग्रह मित्रभावमें बैठे हों तो पशु सामान्यकी चिन्ता एवं सूर्य और बृहस्पतिकी पूर्ण दृष्टि धनु राशिपर हो तो गर्भिणी पशुकी चिन्ता और इसी राशिपर सूर्यकी पूर्ण दृष्टि हो तो वन्ध्या पशुकी चिन्ता कहनी चाहिए। यदि चन्द्रमा कुम्भ राशिमें स्थित हों और यह धनुराशिस्थ शुभ ग्रहको देखता हो तो वानरकी चिन्ता, कुम्भ राशिमें बृहस्पति स्थित हो या त्रिकोणमें बैठकर कुम्भ राशिको देखता हो तो भालू की चिन्ता एवं कुम्भ राशिमें शनि बैठा हो तो हाथीकी चिन्ता समझनी चाहिए। इस प्रकार लग्न और ग्रहोंके अनुसार पशुओंकी चिन्ताका ज्ञान करना चाहिए। प्रस्तुत ग्रन्थमें केवल प्रश्नाक्षरोंसे ही विचार किया गया है। उदाहरण—जैसे मोहनने प्रातःकाल १० बजे आकर प्रश्न किया कि मेरे मनमें कौन-सी चिन्ता है? मोहनसे किसी फलका नाम पूछा तो उसने आमका नाम लिया। इस प्रश्न वाक्यका (आ + म् + अ) यह विश्लेषण हुआ। इसमें आद्य वर्ण आ है, अतः "आ ऐ ग्रामचराः–अश्वगर्दभादयः" इस लक्षणके अनुसार घोड़ेकी चिन्ता कहनी चाहिए।

अपद योनिके भेद और लक्षण

अथापद[1]योनिः–ते[2] द्विविधाः जलचराः स्थलचराश्चेति। तत्र इ ओ ग ज डाः जलचराः–शङ्खमत्स्यादयः। द ब ल साः स्थलचराः–सर्पमण्डूकादयः। तत्र नाम्ना [3]विशेषतो ज्ञेयाः। इत्यपदयोनिः।

अर्थ–अपद योनिके दो भेद हैं—जलचर और थलचर। इनमें इ ओ ग ज ड ये प्रश्नाक्षर हों तो जलचर शंख, मछली इत्यादिकी चिन्ता और द ब ल स ये प्रश्नाक्षर

१. तुलना–के० प्र० र० पृ० ६४-६५। प्र० श्लो० ३११-१७। २. ते च–क० मू०। ३. विशेषः क० मू०।

हों तो थलचर—साँप, मेढक इत्यादिकी चिन्ता कहनी चाहिए। नामसे विशेष प्रकारका विचार करना चाहिए। इस प्रकार अपदयोनिका कथन समाप्त हुआ।

विवेचन—प्रश्नश्रेणीके आदिके वर्णसे अपदयोनिका ज्ञान करना चाहिए। मतान्तरसे क ग च ज त द ट ड प ब य ल की जलचर संज्ञा और ख घ छ झ थ ध ठ ढ फ भ र व की स्थलचर संज्ञा बतायी गयी है। मगर, मछली, शंख आदि जलचर और कीड़े, सर्प, दुमुही आदिकी स्थलचर संज्ञा कही गयी है। ङ ञ ण न म इन वर्णोंकी उभयचर संज्ञा है। किसी-किसी आचार्यके मतसे ई औ घ झ ढ ध भ व ह उ ऊ ङ ञ ण न म अं अः ये वर्ण स्थलसंज्ञक और इ ओ ग ज ड द ब ल स ये वर्ण जलचरसंज्ञक हैं। गणित क्रिया द्वारा निकालनेके लिए मात्राओंको द्विगुणित कर वर्णोंसे गुणा करना चाहिए; यदि गुणनफल विषमसंख्यक हो तो स्थलचर और समसंख्यक हो तो जलचर अपद योनिकी चिन्ता समझनी चाहिए।

पादसंकुला योनिके भेद और लक्षण

अथ[1] पादसंकुलायोनिः[2]—ई औ घ झ ढाः अण्डजाः भ्रमरपतङ्गादयः। ध भ व हाः स्वेदजाः यूकमत्कुणमक्षिकादयः। तत्र नाम्ना विशेष इति पादसंकुलायोनिः इति जीवयोनिः

अर्थ—पादसंकुल योनिके दो भेद हैं—अण्डज और स्वेदज। इ औ घ झ ढ ये प्रश्नाक्षर अण्डज संज्ञक भ्रमर, पतंग इत्यादि और ध भ व ह ये प्रश्नाक्षर स्वेदज संज्ञक—जूं, खटमलादि हैं। नामानुसार विशेष प्रकारके भेदोंको समझना चाहिए। इस प्रकार पादसंकुल योनि और जीवयोनिका प्रकरण समाप्त हुआ।

विवेचन—प्रश्नकर्त्ताके प्रश्नाक्षरोंकी स्वर संख्याको दो से गुणा कर प्राप्त गुणनफलमें प्रश्नाक्षरोंकी व्यंजन संख्याको चारसे गुणाकर जोड़नेसे योगफल समसंख्यक हो तो स्वेदज और विषमसंख्यक हो तो अण्डज बहुपाद योनिके जीवोंकी चिन्ता कहनी चाहिए। जैसे—मोतीलाल प्रातःकाल ८ बजे पूछने आया कि मेरे मनमें किस प्रकारके जीवकी चिन्ता है? प्रातःकालका प्रश्न होनेसे मोतीलालसे पुष्पका नाम पूछा तो उसने वकुलका नाम बतलाया। 'वकुल' इस प्रश्नवाक्यका (व् + अ + क् × उ + ल् + अ) यह विश्लेषित रूप हुआ। इसकी स्वर संख्या तीनको दो से गुणा किया तो ३ × २ = ६, व्यंजन संख्या तीनको चारसे गुणा किया तो ३ × ४ = १२, दोनोंका योग किया तो १२ + ६ = १८ योगफल हुआ; यह समसंख्यक है अतः स्वेदज योनिकी चिन्ता हुई। प्रस्तुत ग्रन्थके प्रश्नाक्षरोंके नियमानुसार भी प्रथमाक्षर 'व' स्वेदज योनिका है अतः

१. तुलना—के० प्र० र० पृ० ६५-६६। चं० प्र० ३३३-३३४। प० प० भ० पृ० ८। प्र० कौ० पृ० ६। ज्ञा० प्र० पृ० २१। ग० म० पृ० ८। के० हो० ह० ८९। २. अथ पादसंकुलाः भ्रमरखर्जूरादयः-क० मू०।

स्वेदज जीवोंकी चिन्ता कहनी चाहिए। प्रश्न लग्नसे यदि प्रश्नका फल निरूपण किया जाय तो मेष, वृष, कर्क, सिंह, वृश्चिक, मकरका पूर्वार्द्ध इन राशियोंके प्रश्न लग्न होने पर बहुपद जीव योनिकी चिन्ता कहनी चाहिए। मेष, वृष, कर्क और सिंह राशिके प्रश्न लग्न होने पर अण्डज जीव योनिकी चिन्ता और वृश्चिक एवं मकर राशिके पन्द्रह अंश तक लग्न होने पर स्वेदज जीव योनिकी चिन्ता कहनी चाहिए। मिथुन राशिमें बुध हो और चतुर्थ भावमें रहने वाले ग्रहोंसे सम्बद्ध हो तो मत्कुणकी चिन्ता, कन्याराशिमें शनि हो तथा चतुर्थ भावको देखता हो तो जूँ की चिन्ता, मीनराशिमें कोई ग्रह नहीं हो तथा लग्नमें कर्क राशि हो और शुक्र या चन्द्रमा उसमें स्थित हो तो भ्रमरकी चिन्ता एवं धनु राशिमें मंगलकी स्थिति हो और छठवें भावसे सम्बन्ध रखता हो तो पतंगकी चिन्ता कहनी चाहिए। तृतीय भावमें वृश्चिक राशि हो तो बिच्छू और खटमलकी चिन्ता, कर्क राशि हो तो कच्छपकी चिन्ता, मेष राशि हो तो गोधाकी चिन्ता, वृष राशि हो तो छिपकलीकी चिन्ता, मकर राशि हो तो छिपकली, गोधा, चींटी, लट और केंचुआ आदि जीवोंकी चिन्ता एवं वृश्चिक राशिमें मंगलके तृतीय भावमें रहने पर विषैले कीड़ोंकी चिन्ता कहनी चाहिए। चौथे भावमें मकर राशिके रहने पर चन्दनगोह, दुमुही आदि जीवोंकी चिन्ता, कर्क राशिके रहने पर चींटीकी चिन्ता और धनु राशिके रहने पर बिच्छूकी चिन्ता कहनी चाहिए। बहुपाद योनिका विचार प्रधानतः लग्न, चतुर्थ, तृतीय और षष्ठ भावसे करना चाहिए। यदि उक्त भावोंमें क्षीण चन्द्रमा, क्रूर ग्रह युक्त निर्बल बुध, राहु और शनि स्थित हों तो निम्न श्रेणीके बहुपाद जीवोंकी चिन्ता कहनी चाहिए।

धातुयोनिके भेद

अथ [1]धातुयोनिः। तत्र द्विविधो धातुः धाम्यमधा[2]म्यञ्चेति। त द प ब उ अं सा एते धाम्याः। घ थ ध फ भ ऊ व ए अधाम्याः।

अर्थ—धातु योनिके दो भेद हैं—धाम्य और अधाम्य। त द प ब उ अं स इन प्रश्नाक्षरोंके होने पर धाम्य धातु योनि और घ थ ध फ ऊ व ए इन प्रश्नाक्षरोंके होने पर अधाम्य धातु योनि कहनी चाहिए।

विवेचन—जो धातु अग्निमें डालकर पिघलाये जा सकें उन्हे धाम्य और जो अग्निमें पिघलाये नहीं जा सकें उन्हें अधाम्य कहते हैं। यदि त द प ब उ अं स ये प्रश्नाक्षर हों तो धाम्य और घ थ ध फ भ ऊ व ए ये प्रश्नाक्षर हों तो अधाम्य धातु योनि होती है। धाम्याधाम्य धातुयोनिको गणित क्रिया द्वारा अवगत करनेके लिए

---

१. तुलना—के० प्र० र० पृ० ६६-६७। के० प्र० सं० पृ० १६। ग० म० पृ० ५। प्र० कु० पृ० १३। प्र० कौ० पृ० ५। ज्ञा० प्र० पृ० १६। २ धाम्या अधाम्येति-क० मू०।

प्रश्नकर्त्तासे पुष्पादिका नाम पूछकर पूर्वाह्णकालमें वर्ग संख्या सहित वर्णकी संख्या और वर्ग संख्या सहित स्वरकी संख्याको परस्पर गुणाकर गुणनफलमें नामाक्षरोंकी वर्गसंख्या सहित वर्णकी संख्या और वर्ग संख्या सहित स्वरकी संख्याको परस्पर गुणा करने पर जो गुणनफल हो उसे जोड़ देनेसे योगफल पिण्ड होता है। मध्याह्न कालके प्रश्नमें प्रश्नाक्षर और नामाक्षर दोनोंकी स्वर संख्याको केवल वर्ण संख्यासे गुणा करने पर दोनों गुणनफलोंके योगतुल्य मध्याह्न कालीन पिण्ड होता है। और सायंकालके प्रश्नमें प्रश्नाक्षर और नामाक्षरके वर्गकी संख्याको वर्णकी संख्यासे गुणाकर दोनों गुणनफलोंके योगतुल्य सायंकालीन पिण्ड होता है। धातुचिन्ता सम्बन्धी प्रश्न होने पर इस पिण्डमें दो का भाग देनेपर एक शेषमें धाम्य और शून्य शेषमें अधाम्य धातु योनि होती है।

धाम्य धातुयोनिके भेद

तत्र धाम्या अष्टविधाः[1]—सुवर्णरजतताम्रत्रपुकांस्यलोहसीसरेतिकादयः। श्वेतपीतहरितरक्तकृष्णा[2] इति पञ्चवर्णाः। पुनर्धाम्याः द्विविधाः घटिताघटिताश्चेति। घटित उत्तराक्षरेष्वघटित अधराक्षरेषु।

अर्थ—धाम्य धातु योनिके आठ भेद हैं—सुवर्ण, चाँदी, ताँबा, राँगा, काँसा, लोहा, सीसा और रेतिका—पित्तल। सफेद, पीला, हरा, लाल और काला ये पाँचप्रकारके रंग हैं। धाम्य धातुके प्रकारान्तरसे दो भेद हैं—घटित और अघटित। उत्तराक्षर प्रश्नाक्षरोंके होनेपर घटित और अधराक्षर होने पर अघटित धातु योनि होती है।

विवेचन—शुक्र या चन्द्रमा लग्नमें स्थित हों या लग्नको देखते हों तो चाँदीकी चिन्ता, बुध लग्नमें स्थित हो या लग्नको देखता हो तो सोने (सुवर्ण) की चिन्ता, बृहस्पति लग्नमें स्थित हो या लग्नको देखता हो तो रत्नजटित सुवर्णकी चिन्ता, मंगल लग्नमें स्थित हो या लग्नको देखता हो तो सीसेकी चिन्ता, शनि लग्नमें स्थित हो तो लोहेकी चिन्ता और राहु लग्नमें स्थित हो तो हड्डीकी चिन्ता कहनी चाहिए। सूर्य अपने भाव–सिंह राशिमें स्थित हो और चन्द्रमा उच्चराशि-वृषमें स्थित हो तो सुवर्ण आदि श्रेष्ठ धातुओंकी चिन्ता, मंगल लग्नेश हो या अपनी राशियों-मेष और वृश्चिकमें स्थित हो तो ताँबेकी चिन्ता, बुध लग्न स्थानमें हो या मिथुन और कन्या राशिमें स्थित हो तो राँगेकी चिन्ता, गुरु लग्नेश होकर लग्नमें स्थित हो या पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो सोनेकी चिन्ता, शुक्र लग्नेश हो या लग्नमें स्थित हो और लग्न स्थानको देखता हो तो चाँदीकी चिन्ता, चन्द्रमा लग्नेश हो और लग्न स्थानसे सम्बद्ध हो तो काँसेकी चिन्ता, शनि और राहु लग्न स्थानमें स्थित हों या मकर और कुम्भ राशिमें दोनों स्थित हों तो लोहेकी चिन्ता कहनी चाहिए। मंगल, सूर्य, शनि और शुक्र अपने-अपने भावमें लोह वस्तुकी चिन्ता

१. तुलना—के० प्र० सं० पृ० १६। के०प्र०र० पृ० ६७-६८। प्र० कौ० पृ० ६०। ग० म० पृ० ६। ज्ञा० प्र० पृ० १६। भु० दी० पृ० २६-२७। नृ० जा० पृ० ३२। दे० व० पृ० ७। आ० ति० पृ० १५। २. श्वेतपीतनील···पञ्चवर्णाः—क० मू०।

कराने वाले होते हैं। चन्द्रमा, बुध एवं वृहस्पति अपने भाव और मित्रके भावमें रहने पर लोहेकी चिन्ता कराने वाले कहे गये हैं। सूर्यके लग्नेश होनेपर ताँबेकी चिन्ता, चन्द्रमाके लग्नेश होनेपर मणिकी चिन्ता, मंगलके लग्नेश होनेपर सोनेकी चिन्ता, बुधके लग्नेश होनेपर काँसेकी चिन्ता, वृहस्पतिके लग्नेश होनेपर चाँदीकी चिन्ता और शनिके लग्नेश होनेपर लोहेकी चिन्ता समझनी चाहिए। सूर्य सिंह राशिमें स्थित हो, सप्तमभाव को पूर्ण दृष्टिसे देखता हो या लग्नस्थानपर पूर्ण दृष्टि हो तो इस प्रकारकी स्थितिमें सर्जक (Sodium), पोटाशक (Potassium), रुविदक (Rubidium), कीशक (Cacsium) और ताम्र (Copper) की चिन्ता; वृश्चिक राशिमें मंगल हो, अपने मित्रकी राशिमें शनि हो और मङ्गलकी दृष्टि लग्न स्थानपर हो तो सुवर्ण, वेरिलक (Berylium), मग्नीशक (Magnesium), कालक (Calcium), वेरक (Barium), स्त्रंशक (Strontium), कदमक (Cadmium) एवं जस्ता (Zincum) की चिन्ता; बुध लग्नेश हो या मित्रभावमें स्थित हो अथवा लग्न स्थानके ऊपर त्रिपाद दृष्टि हो, अन्य ग्रह त्रिकोण ५।९ और केन्द्र (लग्न, ४।७।१०) में हों तथा व्यय भावमें कोई ग्रह नहीं हो तो पारद (Mercury), स्कन्दक (Scandium), इत्रिक (Worium) लन्थनक (Lanthanum), इत्तविक (Ytterbium), अलम्यूनियम (Aluminium), गलक (Gallium), इन्दुक (Indium), थल्लक (Thallium), तितानक (Titanium), शिर्कनक (Zirconium), सीरक (Cerium) एवं वनदक (Vanadium) की चिन्ता; वृहस्पति लग्नमें स्थित हो, बुध लग्नेश हो, शनि तृतीय भावमें स्थित हो, सूर्य सिंह राशिमें हो और बृहस्पति मित्रगृही हों तो जर्मनक (Germanium), रंग (Stannum), सीसा (Lead), नवक (Niobium), आर्सेनिक (Arsenicum), आन्तिमनि (Stibium) विषमिथ (Bismuth), क्रोमक (Chromcum), मोलिदक (Molybdenum), तुङ्गस्तक (Tungsten) एवं वारुणुक (Vranium) की चिन्ता; शनि लग्नमें स्थित हो, बुध मकर राशिमें स्थित हो, शुक्र कुम्भ या वृष राशिमें हो, लग्नेश शनि हो और चतुर्थ, पंचम और सप्तमभावमें कोई ग्रह नहीं हो तो मंगनक (Manganese), लौह (Iron), कोवाल्ट (Cobalt), निकेल (Nickel), रुथीनक (Ruthenium), पल्लदक (Palladium), अश्मक (Osmium), इरिदक (Iridium), प्लातिनक (Platium) और हेलिक (Helium) की चिन्ता; राहु धनराशिमें स्थित हो, लग्नमें केतु हो, नवम भावमें गुरु स्थित हो और ग्यारहवें भावमें सूर्य हो तो क्षार नमक (Salt), बुनसेन (Bunsen), चाँदी (Silver) और हरताल की चिन्ता एवं चक्रार्द्धमें सभी ग्रहोंके रहनेपर लौह-भस्म, ताम्र-भस्म और रौप्य-भस्मकी चिन्ता कहनी चाहिए। अथवा प्रश्नाक्षरोंपर-से पहले धातु योनिका निर्णय करनेके अनन्तर धाम्य और अधाम्य धातुयोनिका निर्णय करना चाहिए। धाम्य योनिके सुवर्ण, रजतादि आठ भेद कहे गये हैं। उत्तराक्षर प्रश्नश्रेणी वर्णोंके होनेपर घटित और अधराक्षर होनेपर अघटित धाम्य योनि कहनी चाहिए।

घटित योनिके भेद और प्रभेद

तत्र घटितः [1]त्रिविधः–जीवाभरणं गृहाभरणं नाणकञ्चेति। तत्र द्विपदाक्षरेषु द्विपदाभरणं त्रिविधं–देवताभरणं मनुष्याभरणं पक्षिभूषणमिति। तत्र नराभरणं शिरआभरणं कर्णाभरणं नासिकाभरणं[2] ग्रीवाभरणं कण्ठाभरणं[3] हस्ताभरणं जङ्घाभरणं पादाभरणमित्यष्टविधाः। तत्र शिरआभरणं किरीटघट्टिकार्द्धचन्द्रादयः। कर्णाभरणं कर्णकुण्डलादयः। नासिकाभरणं[4] नासामण्यादयः। ग्रीवाभरणं कण्ठिकाहारादयः। कण्ठाभरणं ग्रैवेयकादयः। हस्ताभरणं कङ्कणाङ्गुलीयकमुद्रिकादयः। जङ्घाभरणं जङ्घाघण्टिकादयः। पादाभरणं नूपुरमुद्रिकादयः। तत्रोत्तरेषु नराभरणम् [5]अधरेषु नार्याभरणम्। उत्तराक्षरेषु दक्षिणाभरणमधराक्षरेषु वामाभरणम्। तत्र नाम्ना विशेषः। देवानां[6] पक्षिणां च पूर्वोक्तवज्ज्ञेयम्। गृहाभरणं द्विविधं भाजनं भाण्डञ्चेति। तत्र नाम्ना विशेषः।

अर्थ—घटित धातुके तीन भेद हैं—जीवाभरण–आभूषण, गृहाभरण–पात्र और नाणक–सिक्के–नोट, रुपये आदि। द्विपद—अ ए क च ट त प य श प्रश्नाक्षर हों तो द्विपदाभरण—दो पैरवाले जीवोंका आभूषण होता है। इसके तीन भेद हैं–देवताभूषण, पक्षि आभूषण और मनुष्याभूषण। मनुष्याभूषणके शिरसाभरण, कर्णाभरण, नासिकाभरण, ग्रीवाभरण, कण्ठाभरण, हस्ताभरण, जंघाभरण और पादाभरण ये आठ भेद हैं। इन आभूषणोंमें मुकुट, खौर, सीसफूल आदि शिरसाभरण; कानोंमें पहने जानेवाले कुण्डल, एरिंग (बुन्दे) आदि कर्णाभरण; नाकमें पहने जानेवाली मणिकी लौंग वाली आदि नासिकाभरण; कण्ठमें पहने जानेवाली कण्ठी, हार आदि ग्रीवाभरण; गलेमें पहने जानेवाली हँसुली, हार आदि कण्ठाभरण; हाथोंमें पहने जानेवाले कंकण, अँगूठी, मुदरी, छल्ला आदि हस्ताभरण; जाँघोंमें बाँधे जानेवाले घुँघुरू, क्षुद्रघण्टिका आदि जंघाभरण और पैरोंमें पहने जानेवाले बिछुए, छल्ला, पाजेब आदि पादाभरण होते हैं। प्रश्नाक्षरोंमें उत्तर वर्णों--क ग ङ च ज ञ ट ड ण त द न प ब म य ल श स के होने पर मनुष्याभरण और अधराक्षरों—ख घ छ झ ठ ढ थ ध फ भ र व ष ह के होनेपर स्त्रियोंके आभूषण जानने चाहिए। उत्तराक्षर प्रश्नवर्णोंके होनेपर दक्षिण अंगका आभूषण और अधराक्षर प्रश्नवर्णोंके होनेपर वाम अंगका आभूषण कहना चाहिए। इन आभूषणोंमें भी नामकी विशेषता समझनी चाहिए। प्रश्न श्रेणीमें अ क ख ग घ ङ इन वर्णोंके होनेपर देवोंके आभूषण और त थ द ध न प फ ब भ म इन वर्णोंके होनेपर पक्षियोंके आभूषण

---

१. तुलना—के० प्र० र० पृ० ६६–७१। ग० म० पृ० ६–७। आ० ति० पृ० १५। दै० का० पृ० २२८। रा० प्र० पृ० २५–२६। ६७० ग० पृ० ७। प्र० कु० पृ० १४। के० हो० ह० पृ० ६०–६१। २. नासिकाभरणं–पाठो नास्ति–क० मू०। ३. नासिकाभरणं नास्ति–क० मू०। ४. नासिकाभरणं नासामण्यादय इति पाठो नास्ति–ता० म०। ५. अधरोत्तरेषु नार्याभरणं–ता० मू०। ६. देवनां पक्षिणां चेति पाठो नास्ति–क० मू०।

कहने चाहिए। विशेष बातें देव और पक्षि योनिके समान पहलेकी तरह जाननी चाहिए। गृहाभरणके पात्रोंके दो भेद हैं—भाजन—मिट्टीके वर्तन और भाण्ड—धातुके वर्तन। नाम की विशेषता प्रश्नाक्षरोंके अनुसार जान लेनी चाहिए।

विवेचन—प्रश्नकर्त्ताके प्रश्नाक्षरोंके प्रथम वर्णकी अ इ ए ओ इन चार मात्राओंमें से कोई मात्रा हो तो जीवाभरण, आ ई ऐ औ इन चार मात्राओंमें से कोई मात्रा हो तो गृहाभरण और उ ऊ अं अः इन चार मात्राओंमें-से कोई मात्रा हो तो नाणक धातुकी चिन्ता कहनी चाहिए। क ख ग घ च छ ज झ ट ठ ड ढ य श ह अ आ इ ओ अः ए इन प्रश्नाक्षरोंके होनेसे जीवाभरण समझना चाहिए। यदि प्रश्न श्रेणीमें च छ ज झ ञ ट ठ ड ढ ण इन वर्णोंमेंसे कोई भी वर्ण प्रथमाक्षर हो तो मनुष्याभरण कहना चाहिए। प्रश्नश्रेणीके आद्य वर्णमें अ आ इन दोनों मात्राओंके होनेसे शिरसाभरण, इ ई इन दोनों मात्राओंके होनेसे कर्णाभरण, उ ऊ इन दोनों मात्राओंके होनेसे नासिकाभरण, ए इस मात्राके होनेसे ग्रीवाभरण; ऐ इस मात्राके होनेसे कण्ठाभरण, ऋ तथा संयुक्त व्यंजनमें ऊकारकी मात्रा होनेसे हस्ताभरण, ओ औ इन दोनों मात्राओंके होनेसे जंघाभरण और अं अः इन दोनों मात्राओंके होनेसे पादाभरणकी चिन्ता कहनी चाहिए।

प्रश्नलग्नानुसार आभरणोंकी चिन्ता तथा घटित धातु योनिके अन्य भेदोंकी चिन्ताका विचार करना चाहिए। मिथुन, कन्या, तुला, धनु, इन प्रश्नलग्नोंके होनेपर मनुष्याभरण जानने चाहिए। यदि शुक्र लग्नमें स्थित हो या लग्नको देखता हो तो शिरसाभरण, शनि लग्नमें स्थित हो या लग्नको देखता हो तो कर्णाभरण, सूर्य लग्न में स्थित हो या लग्नको देखता हो तो नासिकाभरण, चन्द्रमा लग्नमें स्थित हो या लग्नको देखता हो तो ग्रीवाभरण, बुध लग्नमें स्थित हो या लग्नको देखता हो तो कण्ठाभरण, बृहस्पति लग्नमें स्थित हो या लग्न को देखता हो तो हस्ताभरण, मंगल लग्नमें स्थित हो या लग्नको देखता हो तो जंघाभरण और शनि एवं मंगल दोनों ही लग्नमें स्थित हों या दोनोंको लग्नके ऊपर त्रिपाद दृष्टि हो तो पादाभरण धातुकी चिन्ता कहनी चाहिए। यदि प्रश्नकालमें बृहस्पति, मंगल और रवि बलवान् हों तो पुरुषाभरण और चन्द्रमा, बुध, शनि, राहु और शुक्र बलवान् हों तो स्त्रीआभरणकी चिन्ता कहनी चाहिए। प्रथम चक्रार्द्धमें बलवान् ग्रह हों और द्वितीय चक्रार्द्धमें हीन बली ग्रह हों तो वाम अंगके आभरणकी चिन्ता; द्वितीय चक्रार्द्धमें बलवान् ग्रह और प्रथम चक्रार्द्धमें हीनबली ग्रह हों तो दक्षिण अंगके आभरणकी चिन्ता; पंचम, अष्टम और नवमके शुद्ध होनेपर देवाभरण और लग्न, चतुर्थ, षष्ठ और दशमके शुद्ध होनेपर पक्षी आभरणकी चिन्ता कहनी चाहिए। मिथुन लग्नमें बुध स्थित हो, द्वितीयमें शुक्र, चतुर्थमें मंगल, पंचममें शनि और बारहवें भागमें केतु स्थित हो तो हार, कण्ठा, हँमुली और खौरकी चिन्ता; कन्या लग्नमें बुध हो, वृश्चिक राशिमें शुक्र, मकरमें शनि, धनुमें चन्द्रमा और व्ययभावमें राहु स्थित हो तो पाजेब, नूपुर, छल्ला, छड़े, झाँझर आदि आभूषणोंकी चिन्ता; तुला लग्नमें शुक्र हो, मिथुन राशिमें बुध हो,

वृश्चिकमें केतु हो, मेषमें रवि हो, वृषमें गुरु हो और कुम्भ राशिमें शनि हो तो कर्णफूल, एरिंग, कुण्डल, बाली आदि कानके आभूषणोंकी चिन्ता; धनु लग्नमें बुध हो, मिथुनमें गुरु हो, मेषमें सूर्य हो, कर्क राशिमें चन्द्रमा हो, सिंहमें मंगल हो, कन्याराशिमें राहु हो और दसवें भावमें कोई ग्रह नहीं हो तो पहुँचो, कंकण, दस्तो, चूड़ी एवं टड्डे आदि आभूषणोंकी चिन्ता; सिंह लग्नमें एक साथ चन्द्रमा, सूर्य और मंगल बैठे हों तथा लग्नसे पंचम भावमें शुक्र हो, शनि मित्रके घरमें स्थित और बुध लग्नको देखता हो तो हीरे और मणियोंके आभूषणोंकी चिन्ता एवं चतुर्थ, पंचम, सप्तम, अष्टम, दशम और द्वादश भावमें ग्रहोंके नहीं रहनेसे सुवर्णडलीकी चिन्ता कहनी चाहिए। आभूषणोंका विचार करते समय ग्रहोंके बलाबलका भी विचार करना परमावश्यक है।

अधाम्य योनिके भेद

अथाधोम्यं कथ्यते। अधाम्या[2] अष्टविधाः। मौक्तिकपाषाणहरिताल-मणिशिलाशर्कराबालुकामरकतपद्मरागप्रवालादयः। तत्र नाम्ना[3] विशेषः। इति धातुयोनिः।

अर्थ—अधाम्य धातु योनि के आठ भेद हैं—मोती, पत्थर, हरिताल, मणि, शिला, शर्करा (चीनी), बालू, मरकत (मणिविशेष), पद्मराग और मूँगा इत्यादि। इन प्रधान आठ अधाम्य धातु योनिके भेदोंकी नामकी विशेषता है। इस प्रकार धातु योनिका प्रकरण पूर्ण हुआ।

विवेचन—वास्तवमें अधाम्य धातुके तीन भेद हैं—उत्तम, मध्यम और अधम। यदि प्रश्नकर्त्ताके प्रश्नाक्षरोंमें आद्य वर्ण क ग ङ च ज ञ ट ड ण त द न प ब म य ल श स इन अक्षरोंमें-से कोई हो तो उत्तम अधाम्ययोनि–हीरा, माणिक, मरकत, पद्मराग और मूँगाकी चिन्ता; ख घ छ झ ठ ढ थ घ फ भ र व ष ह इन अक्षरोंमें-से कोई वर्ण हो तो मध्यम अधाम्ययोनि–हरिताल, शिला, पत्थर आदिकी चिन्ता एवं उ ऊ अं अः इन स्वरोंसे संयुक्त व्यंजन प्रश्नमें हो तो अधम अधाम्ययोनि—शर्करा, लवण, बालू आदिकी चिन्ता कहनी चाहिए। यदि प्रश्नके आद्य वर्णमें अ इ ए ओ ये चार मात्राएँ हों तो उत्तम अधाम्य धातुकी चिन्ता; आ ई ऐ औ ये चार मात्राएँ हों तो मध्यम अधाम्य धातुकी चिन्ता और उ ऊ अं अः ये चार मात्राएँ हों तो अधम अधाम्य धातु योनिकी चिन्ता कहनी चाहिए।

यदि लग्न सिंह राशि हो और उस में सूर्य स्थित हो तो शिलाकी चिन्ता; कन्या

---

१. तुलना—के० प्र० र० पृ० ७१–७२। ग० म० पृ० ६। ज्ञा० प्र० पृ० १७। के० हो० ह० पृ० १३। २. अधाम्या अष्टविधा…प्रागेवोक्ताः—ता० मू०। ३. नाम्ना विशेषतो ज्ञेयाः—क० मू०।

राशि लग्न हो और उसमें बुध स्थित हो अथवा बुधकी लग्न स्थानपर दृष्टि हो तो मृत्पात्रकी चिन्ता; तुला या वृष राशि लग्न हो और उसमें शुक्र स्थित हो या शुक्रकी लग्न स्थानपर दृष्टि हो तो मोती और स्फटिक मणिकी चिन्ता; मेष या वृश्चिक राशि लग्न हो और लग्न स्थानमें वली मंगल स्थित हो अथवा लग्न स्थानपर मंगलकी दृष्टि हो तो मूंगाकी चिन्ता; मकर या कुम्भ राशि लग्न हो और लग्न स्थानमें शनि स्थित हो या लग्न स्थानपर शनिकी त्रिपाद दृष्टि हो तो लोहेकी चिन्ता; धनु या मीन राशि लग्नमें हो और लग्न स्थानमें बृहस्पति स्थित हो अथवा लग्न स्थानपर बृहस्पतिकी दृष्टि हो तो मनःशिलाकी चिन्ता; लग्न स्थानमें कुम्भ राशि हो और बलवान् शनि लग्नभावमें स्थित हो तथा लग्न स्थानपर राहु और केतुकी पूर्ण दृष्टि हो तो नीलम, वैडूर्यकी चिन्ता; वृष लग्नमें शुक्र स्थित हो, चन्द्रमाकी लग्न स्थानपर पूर्ण दृष्टि हो तो मरकत मणिकी चिन्ता; सूर्य द्वादश भावस्थ सिंह राशिमें स्थित हो, लग्नपर मंगलकी पूर्ण दृष्टि हो अथवा शनि लग्नको त्रिपाद दृष्टिसे देखता हो तो सूर्यकान्त मणिकी चिन्ता एवं कर्क लग्नमें चन्द्रमा स्थित हो, बुधकी लग्न स्थानपर पूर्ण दृष्टि हो या शुक्र चतुर्थ भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो चन्द्रकान्त मणिकी चिन्ता कहनी चाहिए। अधाम्य धातुयोनिके निर्णय हो जानेपर ही उपर्युक्त ग्रहोंके अनुसार फल कहना चाहिए। बिना अधाम्य धातु योनिके निर्णय किये फल असत्य निकलेगा।

मूल योनिके भेद-प्रभेद और पहचाननेके नियम

अथ मूलयोनिः[1]। स चतुर्विधः[2]–वृक्षगुल्मलतावल्लिभेदात्। आ ई ऐ औकारेषु यथासंख्यं वेदितव्यम्। पुनश्चतुर्विधः–त्वक्पत्रपुष्पफलभेदात्। कादिभिस्त्वक् खादिभिः पत्रं गादिभिः पुष्पं घादिभिः फलमिति। पुनश्च भक्ष्यमभक्ष्यमिति द्विविधम्। उत्तराक्षरेषु भक्ष्यमधराक्षरेष्वभक्ष्यम्। उत्तराक्षरेषु सुगन्धमधराक्षरेषु दुर्गन्धं कादिखादिगादिघादिभिर्द्रष्टव्यम्। आलिङ्गितादिषु यथासंख्यं योजनीयम्[3]। तिक्तकटुकाम्ललवणमधुरा इत्युत्तराः। उत्तराक्षरमार्द्रमधराक्षरं शुष्कम्। उत्तराक्षरं स्वदेशमधराक्षरं परदेशम्, ङ ञ ण न माः शुष्काः तृणकाष्ठादयः चन्दनदेवदूर्वादयश्च। इ ज शस्त्राणि वस्त्राणि च। इति मूलयोनिः।

अर्थ—मूलयोनि के चार भेद हैं वृक्ष, गुल्म, लता और बल्ली। यदि प्रश्नश्रेणी के आद्यवर्ण की मात्रा 'आ' हो तो वृक्ष, 'ई' हो तो गुल्म, 'ऐ' हो तो लता और 'औ' हो तो वल्ली समझना चाहिए। पुनः मूलयोनि के चार भेद हैं, वल्कल, पत्ते, फूल और

---

१. तुलना—के० प्र० र० पृ० ७२–७५। के० प्र० सं० पृ० २०–२१। ग० म० पृ० ६–११। प० पं० म० पृ० ८। श्रा० ति० ह० पृ० १५। ज्ञानप्र० पृ० १९–२१। प्र० कौ० पृ० ६। प्र० कु० पृ० २०-२१। के० हो० पृ० १०८–११३। २. स च चतुर्विधः—क० मू०।
३. योजनीयम्—पाठो नास्ति—क० मू०।

फल। क, च, ट आदि प्रश्न वर्णोंके होनेपर वल्कल; ख, छ, ठ, थ आदि प्रश्न वर्णों के होनेपर पत्ते; ग, ज, ड, द आदि प्रश्नवर्णोंके होनेपर फूल और घ, झ, ढ, व आदि प्रश्नवर्णोंके होनेपर फलकी चिन्ता कहनी चाहिए। इन चारों भेदोंके भी दो-दो भेद हैं—भक्ष्य-भक्षण करने योग्य और अभक्ष्य-अखाद्य। उत्तराक्षर—क ग ङ च ज ञ ट ड ण त द न प व म य ल श स प्रश्नवर्णोंके होनेपर भक्ष्य और अधराक्षर—ख घ छ झ ठ ढ थ ध फ भ र व ष प्रश्नवर्णोंके होनेपर अभक्ष्य मूलयोनि समझनी चाहिए। भक्ष्याभक्ष्यके अवगत हो जानेपर उत्तराक्षर प्रश्नवर्णोंके होनेपर सुगन्धित और अधराक्षर प्रश्नवर्णोंके होनेपर दुर्गन्धित मूलयोनि जाननी चाहिए। अथवा कादि क, च, ट, त, प, य, श प्रश्नवर्णोंके होनेपर भक्ष्य; खादि—ख, छ, ठ, थ, फ, र, ष प्रश्नवर्णोंके होनेपर अभक्ष्य; गादि—ग, ज, ड, द, व, ल, प प्रश्नवर्णोंके होनेपर सुगन्धित और घादि—घ, झ, ढ, ध, भ, व, स प्रश्नवर्णोंके होनेपर दुर्गन्धित मूलयोनि कहनी चाहिए। आलिंगित, अभिधूमित, दग्ध और उत्तराक्षर प्रश्नवर्णोंमें क्रमशः भक्ष्य, अभक्ष्य, सुगन्धित और दुर्गन्धित मूलयोनि कहनी चाहिए। तिक्त, कटुक, मधुर, लवण, आम्लक ये उपर्युक्त मूलयोनियोंके रस होते हैं। उत्तराक्षर प्रश्नवर्णोंके होनेपर आर्द्र, मूलयोनि, अधराक्षर प्रश्नवर्णोंके होनेपर शुष्क; उत्तराक्षर प्रश्नवर्णोंके होनेपर स्वदेश, अधराक्षर प्रश्नवर्णोंके होनेपर परदेशस्थ मूलयोनि समझनी चाहिए। ङ ञ ण न म इन प्रश्नाक्षरोंके होनेपर सूखे हुए तृण, काठ, चन्दन, देवदारु, दूब आदि समझने चाहिए। इ और ज प्रश्नवर्णोंके होनेपर शस्त्र और वस्त्र सम्बन्धी मूलयोनि कहनी चाहिए। इस प्रकार मूलयोनिका प्रकरण समाप्त हुआ।

विवेचन—मूलयोनिके प्रश्नके निश्चित हो जानेपर कौन-सी मूलयोनि है यह जाननेके लिए चर्याचेष्टा आदिके द्वारा विचार करना चाहिए। यदि प्रश्नकर्ता शिरको स्पर्श कर प्रश्न करे तो वृक्षकी चिन्ता, उदरको स्पर्श करता हुआ प्रश्न करे तो गुल्मकी चिन्ता, बाहुको स्पर्श करता हुआ प्रश्न करे तो लताकी चिन्ता और पीठको स्पर्श करता हुआ प्रश्न करे तो बल्लीकी चिन्ता कहनी चाहिए। यदि पैरको स्पर्श करता हुआ प्रश्न करे तो सकरकन्द, जिमीकन्द आदिकी चिन्ता; नाक मलते हुए प्रश्न करे तो फूलकी चिन्ता; आँख मलते हुए प्रश्न करे तो फलकी चिन्ता; मुँहपर हाथ फेरते हुए यदि प्रश्न-कर्त्ता प्रश्न करे तो पत्रकी चिन्ता और जाँघ खुजलाते हुए प्रश्न करे तो त्वक्-चिन्ता कहनी चाहिए।

प्रश्नकुण्डलीमें मंगलके बलवान् होनेपर छोटे धान्योंकी चिन्ता, बुध और बृहस्पतिके बलवान् होनेपर बड़े धान्योंकी चिन्ता, सूर्यके बलवान् होनेपर वृक्षकी चिन्ता, चन्द्रमाके बलवान् होनेपर लताओंकी चिन्ता, बृहस्पतिके लग्नेश होनेपर ईखकी चिन्ता, शुक्रके लग्नेश होनेपर इमलीकी चिन्ता, शनिके बलवान् होनेपर दारुकी चिन्ता, राहुके बलवान् होनेपर तीखे काँटेदार वृक्षकी चिन्ता एवं शनिके लग्नेश होनेपर फलोंकी चिन्ता कहनी चाहिए। मेष और वृश्चिक इन प्रश्नलग्नोंके होनेपर क्षुद्र सस्यचिन्ता;

वृष, कर्क और तुला इन प्रश्नलग्नोंके होने पर लताओंकी चिन्ता; कन्या और मिथुन इन प्रश्नोंके होनेपर वृक्षकी चिन्ता; कुम्भ और मकर इन प्रश्नलग्नोंके होनेपर काँटेदार वृक्षकी चिन्ता; मीन, धनु और सिंह इन प्रश्नलग्नोंके होनेपर ईख, धान और गेहूँके वृक्षकी चिन्ता कहनी चाहिए। यदि सूर्य सिंह राशिमें स्थित हो तो त्वक् चिन्ता, चन्द्रमा कर्क राशिमें स्थित हो तो मूलचिन्ता, मंगल मेष राशिमें स्थित हो तो पुष्पचिन्ता, बुध मिथुन राशिमें स्थित हो, तो छालकी चिन्ता, बृहस्पति धनु राशिमें स्थित हो तो फल-चिन्ता, शुक्र वृष राशिमें स्थित हो तो पक्व फलचिन्ता, शनि मकर राशिमें स्थित हो तो मूलचिन्ता एवं राहु मिथुन राशिमें स्थित हो तो लताचिन्ता अवगत करनी चाहिए। यदि बुध लग्नेश हो, अपने शत्रुभावमें स्थित हो अथवा लग्नभाव या शत्रुभावको देखता हो तो सुन्दर, सौम्य एवं सूक्ष्म वृक्षोंकी चिन्ता; शुक्र लग्नेश हो, अपने मित्रभावमें स्थित हो अथवा लग्न भाव या मित्र भावको देखता हो तो निष्कण्टक वृक्षकी चिन्ता; चन्द्रमा लग्नेश हो, शत्रुभावमें रहनेवाले ग्रहोंसे दृष्ट हो अथवा लग्न स्थान या स्वराशि स्थानको देखता हो तो केलाके वृक्षकी चिन्ता, बृहस्पति लग्न स्थानमें हो, लग्नेशके द्वारा देखा जाता हो और शत्रु स्थानमें सौम्य ग्रह हो या मित्र स्थानमें क्रूर ग्रह हो तो नारियलके वृक्षकी चिन्ता; शनि स्वराशिमें हो, लग्नेशकी दृष्टि शनि भावपर हो और लग्नेश मित्र-भावमें स्थित हो तो ताल वृक्षकी चिन्ता; राहु मीन या मेष राशिमें स्थित होकर मकर राशिके ग्रहसे तात्कालिक मैत्री सम्बन्ध रखता हो तो टेढ़े काँटेदार वृक्षकी चिन्ता एवं मंगल लग्न स्थानमें स्थित होकर मेष या वृश्चिक राशिमें रहनेवाले ग्रहसे दृष्ट हो अथवा मंगल लग्नेश हो और शत्रुभावमें स्थित हो तो मूँगफलीके वृक्षकी चिन्ता समझनी चाहिए। शास्त्रकारोंने बुधका मूँग, शुक्रका सफेद अरहर, मंगलका चना, चन्द्रमाका तिल, सूर्यका मटर, बृहस्पतिका लाल अरहर, शनिका उड़द और राहुका कुलथी धान्य बताया है। यदि उपर्युक्त ग्रह अपने-अपने मित्र स्थानमें हों तो उपर्युक्त धान्य सम्बन्धी चिन्ता कहनी चाहिए। यदि सूर्य उच्च राशिका हो और तीसरे भावमें रहनेवाले ग्रहसे दृष्ट हो तो शीशमके वृक्षकी चिन्ता, चन्द्रमा अपनी उच्च राशिमें हो और पाँचवें भावमें रहनेवाले ग्रहोंसे दृष्ट हो तो अनार और श्रीफलके वृक्षकी चिन्ता एवं शुक्र अपनी उच्च राशिमें स्थित हो और सातवें भावमें रहनेवाले ग्रहसे दृष्ट हो तो नीमके वृक्षकी चिन्ता अवगत करनी चाहिए।

जीव, धातु और मूलयोनिके निरूपणका प्रयोजन

जीव, धातु और मूल इन तीनों योनियोंके निरूपणका प्रधान उद्देश्य चोरी की गयी वस्तुका पता लगाना है। जीवयोनिमें चोरका स्वरूप बताया गया है। जीवयोनिके अनुसार चोरकी जाति, अवस्था, आकृति, रूप, कद, स्त्री, पुरुष एवं बालक आदिका कथन किया गया है। पूर्वोक्त जीव योनिके प्रकरणमें प्रश्न-वाक्यानुसार जाति, अवस्था, आदिका सम्यक् विवेचन किया गया है। विवेचनमें प्रतिपादित फलसे प्रश्नकुण्डलीके अनुसार ग्रहोंकी स्थितिसे चोरकी जाति, अवस्था, आकृति आदिका पता लगाया जा

सकता है। धातु योनिमें चोरी की गयी वस्तुका स्वरूप बताया गया है, अर्थात् पृच्छकके बिना बताये भी ज्योतिषी धातु योनिके निरूपणसे बता सकता है कि अमुक प्रकारकी वस्तु चोरी गयो है या नष्ट हुई है। मूल योनिके निरूपणका सम्बन्ध मनकी चिन्ताके निरूपणसे है, अथवा किसी वगीचे आदिको सफलता-असफलताका विचार विनिमय करना तथा प्रश्नकुण्डली या प्रश्नवाक्यानुसार कहाँपर किस प्रकारका वृक्ष फलीभूत हो सकता है और कहाँ नहीं आदि बातोंका भी विचार किया जा सकता है। अथवा उपर्युक्त तीन योनियोंका प्रयोजन दूसरेके मनकी बातको जानना भी है। प्रश्नकर्त्ताके प्रश्नवाक्यसे वर्तमान, भूत और भविष्यत्की सारी घटनाओंका सम्बन्ध रहता है। मनोविज्ञानके सिद्धान्तोंसे भी इस बातकी पुष्टि होती है कि मानवके प्रश्नवाक्य या अन्य शारीरिक क्रियाएँ तीनों कालोंकी घटनाओंसे सम्बन्ध रखती हैं। मनोविज्ञानके विद्वान् लावने अनेक प्रयोगों द्वारा यह सिद्ध कर दिया है कि शरीर यन्त्रके समान है और उसका सारा आचरण यान्त्रिक क्रिया-प्रतिक्रियाके रूपमें ही अनायास हुआ करता है। मानवके शरीरमें किसी भौतिक घटना या क्रियाका उत्तेजन पाकर प्रतिक्रिया होती है। यही प्रतिक्रिया उसके आचरणमें प्रदर्शित है। दूसरे मनोविज्ञानके प्रसिद्ध पण्डित फ्रायडेका कथन है कि मनुष्यके व्यक्तित्वका अधिकांश भाग अचेतन मनके रूपमें है जिसे प्रवृत्तियोंका अशान्त समुद्र कह सकते हैं। इस महासमुद्रमें मुख्यतः कामकी और गौणतः विभिन्न प्रकारकी वासनाओं, इच्छाओं और कामनाओंकी उत्ताल तरंगें उठती हैं, जो अपनी प्रचण्ड चपेटसे जीवननैयाको आलोड़ित करती रहती हैं। मनुष्यके मनका दूसरा अंश चेतन है और यह निरन्तर घात-प्रतिघातके द्वारा अनन्त कामनाँओंसे प्रादुर्भूत होता है और उन्हींको प्रतिबिम्बित करता रहता है। फ्रायडेके मतानुसार बुद्धि भी मनुष्यकी प्रवृत्तिका एक प्रतोक है जिसका काम केवल इतना ही है कि मनुष्यके द्वारा अपनी कामनाओंका औचित्य सिद्ध कर सके। फलतः उन्नत और विकसित बुद्धि, चाहे वह कैसी भी प्रचण्ड और अभिनव क्यों न हो, एक निमित्त मात्र है जिसके द्वारा प्रवृत्तियाँ अपनी वासनापूर्त्ति तथा सन्तोषप्राप्तिकी चेष्टा करती हैं। इस मतके अनुसार स्पष्ट है कि बुद्धि प्रवृत्तिकी दासी मात्र है; क्योंकि जब प्रवृत्ति ही बुद्धिकी प्रेरणात्मिका शक्ति है तब उसकी यह दासी उसी पथपर चलनेके लिए बाध्य है जिस पर चलना उसकी स्वामिनीको अभीष्ट है। इसका सारांश यह है कि मानव जीवनमें मूलरूपसे स्थित वासनाओं-इच्छाओंकी प्रतिच्छाया मात्र ही विचार, विश्वास, कार्य और आचरण होते हैं। अतः प्रश्नवाक्यकी धारासे मानवजीवनकी तहमें रहनेवाली प्रवृत्तियोंका अति घनिष्ट सम्बन्ध होता है; क्योंकि मानव प्रवृत्ति ही वासना पूर्ण करनेके लिए प्रेरणात्मक बुद्धि द्वारा प्रेरित होकर ज्ञानधाराको प्रवाहित करती रहती है। इस अविरल धाराका अनवच्छिन्न अंश प्रश्नवाक्य होता है जिसका एक छोर प्रवृत्तिसे सम्बद्ध रहता है अतः प्रश्नवाक्यके विश्लेषण रूप धक्केसे हृदयस्थ कुछ प्रवृत्तियोंका उद्घाटन हो जाता है। इसलिए तीनों प्रकारकी योनियों द्वारा मानसिक चिन्ताका ज्ञान करना विज्ञान-सम्मत है।

चोरी की गयी वस्तुके सम्बन्धमें विशेष विचार

चोरी की गयी वस्तुके सम्बन्धमें योनिविचारके अतिरिक्त निम्न विचार करना अत्यावश्यक है। यदि प्रश्नलग्नमें स्थिर राशि हो या स्थिर राशिका नवांश हो तो अपने ही व्यक्तिने वस्तु चुरायो है और वह घरके भीतर ही है, प्रश्नलग्नमें चर राशि हो तो दूसरे किसीने वस्तु चुरायी है तथा वह उस वस्तुको लेकर दूर चला गया है। यदि प्रश्न-लग्नमें द्विस्वभाव राशि हो तो अपने घरके निकटवर्ती मनुष्यने द्रव्य चुराया है और उसने उस द्रव्यको बहुत दूर नहीं किन्तु पासमें ही छिपाकर रख दिया है। यदि प्रश्नलग्नमें चन्द्रमा हो तो पूर्व दिशाकी ओर, चौथे स्थानमें चन्द्रमा हो तो उत्तर दिशाको ओर, सप्तम स्थानमें चन्द्रमा हो तो पश्चिम दिशाकी ओर और दशम स्थानमें चन्द्रमा हो तो दक्षिण दिशाकी ओर चोरी की गयी वस्तुको समझना चाहिए। यदि लग्न स्थानपर सूर्य और चन्द्रमाकी दृष्टि हो तो निश्चय ही अपने घरका मनुष्य चोर होता है। यदि प्रश्न-लग्न स्वामी और सप्तम भावका स्वामी लग्नमें स्थित हों तो निश्चय अपने ही कुटुम्बके मनुष्यको चोर और सप्तम भावका स्वामी सप्तम, तृतीय या बारहवें भावमें स्थित हो तो प्रबन्धकर्त्ता मैनेजर, मुख्तार आदिको चोर समझना चाहिए। यदि प्रश्नकर्त्ता अपने हाथों-को कपड़ोंके भीतर रखकर पाकिट, पतलून आदिके भीतर हाथ डालकर प्रश्न करे तो अपने घरका ही चोर और बाहर हाथ करके प्रश्न करे तो अन्य मनुष्यको चोर बतलाना चाहिए। ज्योतिषीको लग्नके नवांशपर-से खोयी वस्तुका स्वरूप, द्रेष्काणपर-से चोरका स्वरूप, राशिपर-से दिशा, देश एवं कालादिका विचार और नवांशसे जाति, अवस्था आदिका विचार करना चाहिए। यदि प्रश्नलग्न सिंह हो और उसमें सूर्य और चन्द्रमा स्थित हों तथा भौम और शनिकी दृष्टि हो तो अन्धा चोर, चन्द्रमा बारहवें स्थानमें हो तो बायें नेत्रसे काना चोर और सूर्य बारहवें भावमें स्थित हो तो, दक्षिण नेत्रसे काना चोर होता है।

यदि धन स्थानमें शुक्र, व्यय स्थानमें गुरु और लग्न स्थानमें शुभग्रह हों तो चोरी गयी वस्तु कुछ दिन बाद मिलेगी। लग्नमें चन्द्रमा स्थित हो तो लग्न राशिकी दिशामें और सूर्य स्थित हो तो लग्नेशकी दिशामें चोरी की गयी वस्तु मिलती है। शीर्षोदय लग्नमें पूर्ण चन्द्र अथवा शुभग्रह स्थित हों और लग्न स्थानपर शुभ ग्रहोंकी दृष्टि हो अथवा लाभ स्थानमें बलवान् शुभग्रह स्थित हों तो चोरी की गयी वस्तुकी शीघ्र प्राप्ति होती है। यदि लग्नसे द्वितीय, तृतीय, चतुर्थ, सप्तम और दशम स्थानमें शुभग्रह हों, प्रथम, तृतीय और छठे स्थानमें पापग्रह हों तो चोरी गयी वस्तु या खोयी हुई वस्तुकी प्राप्ति होती है। लग्नमें पूर्ण चन्द्र हो और उसपर गुरु या शुक्रकी दृष्टि हो अथवा केन्द्र और उपचय स्थानमें शुभ ग्रह हों तो भी खोयी हुई वस्तुकी प्राप्ति हो जाती है। लग्नमें पूर्ण चन्द्र, गुरु, शुक्र और बुध इन ग्रहोंमें-से कोई एक या दो ग्रह हों अथवा सप्तम स्थान-में शुभग्रह हों तो भी चोरी गयी अथवा खोयी हुई वस्तुकी प्राप्ति हो जाती है। प्रश्न-लग्न या चतुर्थ स्थानसे दूसरे और तीसरे स्थानमें शुभग्रह हों तो भी नष्ट हुआ द्रव्य कुछ

समयके बाद मिल जाता है। प्रश्नलग्न स्थानमें पापग्रहोंकी राशि हो और लग्नस्थान-पर पापग्रहोंकी दृष्टि हो तो भी खोयी हुई वस्तुकी प्राप्ति दस-पन्द्रह दिनके बाद हो जाती है। यदि प्रश्न समय सिंह, वृश्चिक और कुम्भ इन तीन राशियोंमें-से कोई भी राशि स्वनवांश युक्त सप्तम स्थानमें हो और उसपर पापग्रहकी दृष्टि हो तो चोरी की गयी वस्तुकी प्राप्ति नहीं होती है अथवा आठवें स्थानमें बलवान् मंगल हो तो भी खोयी हुई वस्तु नहीं मिलती है। यदि लग्नस्थानको बलवान् सूर्य या मंगल देखते हों तो चोरी की गयी वस्तु ऊपर; बुध या शुक्र देखते हों तो भित्ति (दीवाल) आदिमें खोदे हुए स्थान में; बृहस्पति या चन्द्रमा देखते हों तो समान भूमिमें; शनि या राहु बलवान् होकर लग्नको देखते हों तो भूमिमें गड्ढेके अन्दर एवं बलवान् रवि देखता हो तो छतके ऊपर खोई हुई वस्तुकी स्थिति समझनी चाहिए। शुक्र या चन्द्रमा लग्नमें स्थित हों या लग्न को देखते हों तो नष्ट वस्तु जल में; बृहस्पति देखता हो तो देवस्थानमें; रवि देखता हो तो पशुस्थानमें; बुध देखता हो तो ईंटोंके स्थानमें; मंगल देखता हो तो राखके भीतर एवं शनि और राहु देखते हों तो घरके बाहर या वृक्षके नीचे खोयी हुई वस्तुको जानना चाहिए।

चोरका नाम जाननेकी रीति

यदि प्रश्नलग्न चर राशिमें हो तो चोरके नामका पहला वर्ण संयुक्ताक्षर अर्थात् द्वारिका, व्रजरत्न आदि; स्थिर लग्न हो तो कृदन्त (पद संज्ञक) वर्ण अर्थात् भवानीशंकर, मंगलसेन इत्यादि और द्विस्वभाव लग्न हो तो स्वर वर्ण वाला नाम अर्थात् ईश्वरदास, ऋषभचन्द इत्यादि समझना चाहिए।

मूक प्रश्न विचार

आलिंगियम्मि जीवं मूलं अभिधूमितेसु वग्गेसु।
[1]दलिह भणं[2]हडाउये तस्सारसण्णा सा झरणी॥

अर्थ—आलिंगित वर्ण जीवसंज्ञक; अभिधूमित मूलसंज्ञक और दग्ध वर्ण धातुसंज्ञक होते हैं। प्रश्नाक्षरोंमें जिस प्रकारके वर्णोंकी अधिकता रहती है; उसी संज्ञक प्रश्न ज्ञात करना चाहिए।

विवेचन—जब कोई व्यक्ति आकर प्रश्न करता है कि मेरे मनमें कौन सा विचार है? उस समय पहलेकी प्रक्रियाके अनुसार फल; पुष्प और देवता आदिके नाम पूछकर प्रश्नाक्षर ग्रहण कर लेने चाहिए। यदि प्रश्नाक्षरोंमें आलिंगित वर्ण अधिक हों तो जीव सम्बन्धी प्रश्न; अभिधूमित वर्ण हों तो मूलसम्बन्धी प्रश्न एवं दग्ध वर्ण अधिक हों तो धातु सम्बन्धी प्रश्न समझना चाहिए।

---

१. सुदलिह–क० मू०। २. भण्णदि–ता० मू०।

ग्रन्थान्तरोंमें प्रश्नवाक्यकी प्रथम मात्रासे ही जीव, मूल और धातु सम्बन्धी विचार किया गया है। तुलनात्मक दृष्टिसे विचार करनेपर उपर्युक्त गाथावाली वर्णाधिक वाली प्रक्रिया विशेष वैज्ञानिक जँचती है।

मूक प्रश्न करते समय पृच्छककी ऊर्ध्व[1] दृष्टि हो तो जीवन-सम्बन्धी विचार, भूमिकी ओर दृष्टि हो तो मूलसम्बन्धी विचार, तिरछी दृष्टि हो तो धातुसम्बन्धी विचार, एवं मिश्र दृष्टि—कुछ भूमिकी ओर और कुछ आकाशकी ओर दृष्टि हो तो मिश्र—जीव, धातु और मूलसम्बन्धी मिश्रित विचार पृच्छकके मनमें समझना चाहिए।

यदि पृच्छक बाहु[2], मुख और सिरका स्पर्श करते हुए प्रश्न करे तो जीव सम्बन्धी विचार; उदर, हृदय और कटिका स्पर्श करते हुए प्रश्न करे तो धातुसम्बन्धी एवं वस्ति, गुह्य, जंघा और चरणका स्पर्श करते हुए प्रश्न करे तो मूलसम्बन्धी विचार पृच्छकके मनमें समझना चाहिए। उर्ध्व स्थित होकर प्रश्न करे तो जीव चिन्ता, सामने होकर प्रश्न करे तो मूल चिन्ता और नीचे होकर प्रश्न करे तो धातु चिन्ता कहनी चाहिए। यदि प्रश्न समय पृच्छक जलके पास हो तो जीव चिन्ता, अन्नके पास हो तो मूलचिन्ता और अग्निके समीप हो तो धातुचिन्ता कहनी चाहिए। पृच्छक पूर्व, पश्चिम आग्नेय कोणमें स्थित होकर प्रश्न करे तो धातु-सम्बन्धी विचार; उत्तर, दक्षिण और ईशान[3] कोणमें स्थित होकर प्रश्न करे तो जीवचिन्ता एवं वायव्य और नैर्ऋत्यकोण में स्थित होकर प्रश्न करे तो मूल चिन्ता पृच्छकके मनमें समझनी चाहिए।

मुष्टिकाप्रश्न विचार

जब यह पूछा जाय कि मुट्ठीमें किस रंगकी चीज है? तो पृच्छकके प्रश्नाक्षर लिख लेना चाहिए। यदि प्रश्नाक्षरोंमें पहलेके दो स्वर[4] आलिंगित हों और तृतीय स्वर अभिधूमित हो तो मुट्ठीमें श्वेत रंगकी वस्तु; पूर्वके दो स्वर अभिधूमित हों और तृतीय स्वर दग्ध हो तो पीले रंगकी वस्तु; पूर्वके दो स्वर दग्ध और तृतीय आलिंगित हो तो रक्त-श्याम वर्णकी वस्तु; प्रथम स्वर दग्ध, द्वितीय आलिंगित और तृतीय अभिधूमित हो तो श्याम-श्वेत वर्णकी वस्तु; प्रथम आलिंगित, द्वितीय दग्ध और तृतीय अभिधूमित हो तो काले रंगकी वस्तु एवं प्रथम दग्ध, द्वितीय अभिधूमित और तृतीय आलिंगित स्वर हो तो हरे रंगकी वस्तु मुट्ठीमें समझनी चाहिए। यदि प्रश्नाक्षरोंमें पृच्छकका प्रथम स्वर अभिधूमित, द्वितीय आलिङ्गित और तृतीय दग्ध हों तो विचित्र वर्णकी वस्तु; तीनों दग्ध हों तो नील वर्णकी वस्तु एवं तीनों अभिधूमित स्वर हों तो कांचन वर्णकी वस्तु समझनी चाहिए।

---

१. के० प्र० र० पृ० ४५। २. के० प्र० र० पृ० ४५। ३. के० प्र० र० पृ० ४६। ४. के० प्र० र० पृ० ४६-४८।

मुष्टिका प्रश्नमें जीव, धातु और मूल सम्बन्धका द्योतक चक्र

जोव	मूल	धातु
तिर्यक् दृष्टि	ऊर्ध्व दृष्टि	भूमि दृष्टि
उदर, हृदय, कटि स्पर्श	बाहु, मुख, सिरस्पर्श	वस्ति, गुदा, जंघा स्पर्श
अधःस्थानमें स्थित	ऊर्ध्व स्थानमें स्थित	सम्मुख स्थित
अग्नि पासमें	जल पासमें	अन्न पासमें
पूर्व, पश्चिम, अग्नि कोणसे प्रश्न	उत्तर, दक्षिण, ईशान कोणसे प्रश्न	वायव्य और नैर्ऋत कोण से प्रश्न

विशेष—चंपा, गुलाब, नारियल, आम, जामुन आदि प्रसिद्ध प्रश्न वाक्योंका उच्चारण प्रायः सदा सभी पृच्छक करते हैं। अतएव पृच्छकसे इन प्रसिद्ध फल, पुष्पादिके नामोंको छोड़ अन्य प्रश्न वाक्य ग्रहण करना चाहिए। अथवा पृच्छक आते ही जिस वाक्यसे बात-चीत आरम्भ करे उसे ही प्रश्नवाक्य मानकर प्रश्नाक्षर ग्रहण करने चाहिए। प्रश्नफल प्रतिपादनमें सबसे बड़ी विशेषता प्रश्नवाक्यकी है, अतः फल प्रतिपादकको प्रश्नवाक्य सावधानी और चतुराई पूर्वक ग्रहण करना चाहिए।

पूर्वोक्त प्रक्रियासे जीव, मूल और धातुके भेद-प्रभेदोंका विशेष विचार कर फल अवगत करना चाहिए।

आलिंगितादि मात्राओंका निवास

आलिङ्गएसु सग्गे[1] मत्ता अभिधूमिएसु[2] दड्ढेसु[3]।
ण पुलया[4] एवं खु सारणा वायरणे ?॥

अर्थ—आलिङ्गित मात्राओंका स्वर्गमें, अभिधूमितका पृथ्वीपर और दग्ध मात्राओंका पाताल लोकमें निवास रहता है।

विवेचन—यदि प्रश्नाक्षरोंके आलिंगित मात्राएँ हों तो उस प्रश्नका सम्बन्ध स्वर्गसे, अभिधूमित मात्राएँ हों तो पृथ्वीसे और दग्धमात्राएँ हों तो पाताल लोकसे समझना चाहिए। यहाँ मात्रा निवासका कथन चोरी और मूक प्रश्नोंके निर्णयके लिए

१. सग्गं-क० मू०। २. अभिधमितेसु-क० मू०। ३. माहीसु-ता० म०। दंडेसु-ता० म०। ४. पुढविया क० मू०।

किया है। ज्योतिषमें बताया गया है कि यदि प्रश्नाक्षरोंमें तृतीय, सप्तम और नवम मात्राओंमें-से कोई मात्रा हो तो देव सम्बन्धी प्रश्न; प्रथम, द्वितीय और द्वादश मात्राओंमें-से कोई मात्रा हो तो मनुष्य सम्बन्धी प्रश्न; चतुर्थ, अष्टम और दशम मात्राओंमें-से कोई मात्रा हो तो पक्षिसम्बन्धी प्रश्न एवं पंचम, षष्ठ और एकादश मात्राओंमें-से कोई मात्रा हो तो दैत्य सम्बन्धी प्रश्न समझना चाहिए।

यदि देवयोनि सम्बन्धी प्रश्न हो तो प्रश्नाक्षरोंके प्रारम्भमें आलिंगित मात्रा होनेसे देवका निवास स्वर्गमें, अभिधूमित होनेसे मृत्युलोकमें और दग्ध मात्रा होनेसे पाताल लोकमें समझना चाहिए। इसी प्रकार मनुष्य सम्बन्धी प्रश्नमें आलिंगित और दग्ध मात्राओंके होनेपर मृत मनुष्य सम्बन्धी प्रश्न और अभिधूमित मात्राओंके होनेपर जीवित मानव सम्बन्धो प्रश्न समझना चाहिए।

आलिंगितादि मात्राओंका स्वरूप बोधकचक्र

आलिंगित	अभिधूमित	दग्ध	संज्ञा
अ इ ए ओ	आ ई ऐ औ	उ ऊ अं अः	स्वर-मात्राएँ
पुरुष	स्त्री	नपुंसक	संज्ञा
सत्त्व	रज	तम	गुण
स्वर्ग	पृथ्वी	पाताल	निवास स्थान

लाभालाभविचार

प्रश्ने आलिङ्गितैर्लाभः, अभिधूमितैरल्पलाभः[1], दग्धैर्नास्ति[2] लाभः।

अर्थ—पृच्छकके प्रश्नके प्रश्नाक्षर आलिंगित हों तो लाभ, अभिधूमित हों तो अल्पलाभ और दग्ध हों तो लाभ नहीं होता है।

विवेचन—यों तो लाभालाभ प्रश्नका विचार ज्योतिष शास्त्रमें अनेक दृष्टि-कोणोंसे किया गया है, पर यहाँ आचार्यने आलिंगितादि प्रश्नाक्षरोंपर-से जो विचार किया है उसका अभिप्राय यह है कि यदि प्रश्नके आदिमें आलिंगित मात्रा हो या समस्त प्रश्नाक्षरोंमें आलिंगित मात्राओंका योग अधिक हो तो पृच्छकको लाभ; अभिधूमित संज्ञक प्रश्नाक्षरोंकी आदि मात्रा हो या समस्त प्रश्नाक्षरोंमें अभिधूमित मात्राओंकी संख्या अधिक हो तो अल्पलाभ एवं दग्ध संज्ञक आदि मात्रा हो या समस्त प्रश्नाक्षरोंमें दग्ध संज्ञक

१. अभिधूमितेऽल्पलाभः–क० मू०। २. दग्धे नास्ति लाभः–क० मू०।

मात्राओंकी अधिकता हो तो लाभाभाव समझना चाहिए ।

ज्योतिषके अन्य ग्रन्थोंमें बताया गया है कि तीन और पाँच आलिंगित मात्राओंके होनेपर स्वर्णलाभ; सात, आठ और नौ आलिंगित मात्राओंके होनेपर स्वर्णमुद्राओंका लाभ; दो और चार आलिंगित मात्राओंके होनेपर रजत-मुद्राओंका लाभ एवं एक या दो आलिंगित मात्राओंके होनेपर साधारण द्रव्य लाभ होता है। एक, दो और तीन अभिधूमित मात्राओंके होनेसे साधारण द्रव्यलाभ; चार, पाँच और छः अभिधूमित मात्राओंके साथ दो आलिंगित मात्राओंके होनेसे सहस्र मुद्राओंका लाभ; सात, आठ और दस अभिधूमित मात्राओंके साथ दो से अधिक आलिंगित मात्राओंके होनेसे आभूषण लाभ; दो और तीन अभिधूमित मात्राओंके साथ पाँच आलिंगित मात्राओंके होनेसे कांचन और पृथ्वी लाभ; नौ और दससे अधिक अभिभूमित मात्राओंके साथ एक या दो दग्ध मात्राओंके होनेसे साधारण हानि; तीन या चार अभिधूमित मात्राओंके साथ दो या तीन दग्ध मात्राओंके होनेसे लाभाभाव; तीनसे अधिक आलिंगित मात्राओंके साथ एक या दो दग्ध और चार अभिधूमित मात्राओंके होनेसे सम्मान लाभ; पाँच आलिंगित मात्राओंके साथ दो अभिधूमित और तीन दग्ध मात्राओंके होनेसे पृथ्वी लाभ; चार दग्ध मात्राओंके साथ एक आलिंगित और दो अभिधूमित होनेसे सहस्र मुद्राओंकी हानि; सात अभिधूमित मात्राओंके साथ इतनी ही आलिंगित मात्राओंके होनेसे अपरिमित धन लाभ तथा दग्ध मात्राओंके होनेसे धन हानि; चार अभिधूमित मात्राओंके साथ चार आलिंगित मात्राओंके होनेसे स्त्री लाभ; सात दग्ध मात्राओंके साथ एक आलिंगित और एक अभिधूमितके होनेसे स्त्री हानि और धन हानि; तीन आलिंगित मात्राओंके साथ सात अभिधूमित और दो दग्ध मात्राओंके होनेसे सैंकड़ों रुपयोंका लाभ; ग्यारह दग्ध मात्राओंके साथ पाँच अभिधूमित और चार आलिंगित हों तो अपार कष्टके साथ धन हानि; दससे अधिक आलिंगित मात्राओंके साथ दो दग्ध और चारसे कम अभिधूमित मात्राओंके होनेपर वस्त्र, धन और कांचनका लाभ एवं तीनों संज्ञकोंकी मात्राओंकी संख्या समान हो तो साधारण लाभ कहना चाहिए ।

यों तो लाभालाभ निकालनेके अनेक नियम हैं पर आलिंगितादि मात्राओंके लिए गणितके निम्न नियम अधिक प्रचलित हैं—

१—आलिंगित मात्राओंको दग्ध मात्राओंकी संख्यासे गुणा कर अभिधूमित मात्राओंकी संख्याका भाग देनेपर सम शेषमें लाभ और विषम शेषमें हानि समझना चाहिए । यदि इस गणित प्रक्रियामें शून्य लब्धि और विषम शेष आया हो तो महाहानि तथा शून्य शेष और शून्य लब्धि हो तो अपार कष्ट समझना चाहिए ।

२—प्रश्नाक्षरोंमें आलिंगितादि संज्ञाओंमें जिस संज्ञाकी मात्राएँ अधिक हों उन्हें सातसे गुणाकर २२ का भाग देनेपर सम शेषमें लाभ और विषम शेषमें लाभाभाव समझना चाहिए ।

३—जिस संज्ञक अधिक मात्राएँ हों, उन्हें तीन स्थानोंमें रखकर एक जगह आठ-

से, दूसरी जगह चौदहसे और तीसरी जगह चौबीससे गुणा कर तीनों गुणनफल राशियोंमें सातका भाग देना चाहिए। यदि तीनों स्थानोंमें सम शेष बचे तो अपरिमित लाभ; दो स्थानोंमें सम शेष बचे तो शक्ति प्रमाण लाभ और एक स्थानमें सम शेष बचे तो साधारण लाभ होता है। तीनों स्थानोंमें विषम शेष रहनेसे निश्चित हानि होती है।

द्रव्याक्षरोंकी संज्ञाएँ

दो बड्ढा दो दीहा दो तत्ताहा दो य चउरस्स।
दो तिक्कायच्छिय दव्वक्खरा भणिया॥

अर्थ—दो अक्षर वृत्ताकार, दो दीर्घाकार, दो त्रिकोणाकार, दो चौकोर और दो सछिद्र कहे गये हैं।

विवेचन—चोरी गयी वस्तुके स्वरूप विवेचनके लिए तथा अनेक प्रश्नोंके उत्तरके लिए यहाँ आचार्यने स्वरोंका आकार-प्रकार बताया है। बारह स्वरोंमें दो स्वर वृत्ताकार, दो दीर्घाकार; दो त्रिकोण, दो चौकोर, दो छिद्राकार और दो वक्राकार हैं। आगे नाम सहित वर्णन किया जाता है—

स्वर और व्यंजनोंकी संज्ञाएँ और उनके फल

अ इ वृत्तौ, आ ई दीर्घौ, उ ए त्र्यस्रौ, ऊ ऐ चतुरस्रौ, ओ अं सच्छिद्रौ, औ अः [1]वृत्ताक्षरौ। अ ए क च ट त प य शाः वर्तुलाः, स्निग्धकराः लाभकराः [2]लाभाः [3]जीवितार्थेषु गौरवर्णाः, दिवसचराः, गर्भे पुत्रकराः, पूर्वाशावासिनः सच्छिद्राः। ऐ ख छ ठ थ फ र षाः दीर्घाः [4]स्त्रियोऽलाभकराः, अच्छिद्राः, रात्रिचराः, [5]गर्भे पुत्रिकराः, शक्तियुक्ताः, पक्षाक्षराः, प्रथमवयसि दक्षिणदिग्वासिनः [6]कृष्णवर्णाः।

अथ—अ इ ये दो स्वर वृत्ताकार—गोल; आ ई ये दो स्वर दीर्घाकार—लम्बे; उ ए ये दो स्वर तिस्राकार—त्रिकोण; ऊ ऐ ये दो स्वर आयताकार—चौकोर; ओ अं ये दो स्वर छिद्राकार—छेद सहित और औ अः ये दो स्वर वक्राकार—टेढ़े आकारके हैं। अ ए क च ट त प य श ये वर्ण गोलाकार, स्निग्ध स्वरूप और लाभ करनेवाले हैं। तथा ये वर्ण जीवित रहनेके इच्छुक, गौरवर्ण, दिवसचर, गर्भमें पुत्र उत्पन्न करनेवाले, पूर्व दिशाके वासी और सच्छिद्र हैं। ऐ ख छ ठ थ फ र ष ये वर्ण लम्बे, स्त्री की हानि करनेवाले, अछिद्र, रात्रिमें विहार करनेवाले और गर्भमें कन्याएँ उत्पन्न करनेवाले हैं। ये शक्तिशाली, पक्षाक्षर, प्रथम अवस्थामें दक्षिण दिग्वासी और कृष्णवर्ण हैं।

---

१. वक्राक्षरो–ता० मू०। २. बालाः–ता० मू०। ३. जीवितार्थाः–क० मू०। ४. स्त्रीणाम्–क० मू०। ५. गर्भे बहुपुत्रिकराः–ता० मू०। ६. चन्द्रोन्मीलनप्रश्नशास्त्रस्य ४६ तमश्लोकमादाय ५३ तमश्लोकपर्यन्तं—वर्णस्वरूपं द्रष्टव्यम्।

विवेचन—आचार्यने उपर्युक्त प्रकरणमें प्रश्नशास्त्रके महत्त्वपूर्ण रहस्यका बहु-भाग बतला दिया है। तात्पर्य यह है कि जब प्रश्नाक्षर अ ए क च ट त प य श हों अर्थात् वर्गका प्रथम अक्षर अथवा आचार्य प्रतिपादित पाँच वर्गोंमें-से पहले वर्गके अक्षर प्रश्नाक्षरोंके आदि वर्ण हों तो चोरीके प्रश्नमें गौर वर्णका नाटा व्यक्ति पूर्व दिशाकी ओरका रहनेवाला चोर समझना चाहिए। जब सन्तानके सम्बन्धमें प्रश्न किया हो और उपर्युक्त वर्णमें कोई वर्ण प्रश्नका आदि वर्ण हो तो गौर वर्णका सुन्दर स्वस्थ पुत्र होता है। विवाह—स्त्री लाभके सम्बन्धमें जब प्रश्न हो और प्रश्नाक्षरोंकी उपर्युक्त स्थिति हो तो नाटे कदकी सुन्दर गौर वर्णकी भार्या जल्द मिलती है। यद्यपि ये वर्ण सच्छिद्र हैं, इससे विवाह होनेमें अनेक प्रकारकी बाधाएँ आती हैं, पर दिवाबली होनेके कारण सफलता मिल जाती है। धनलाभ और मुकद्दमा विजयके सम्बन्धमें प्रश्न किया हो और प्रश्नाक्षरोंकी स्थिति उपर्युक्त हो तो पूर्वकी ओरसे धन लाभ होता है; यों तो प्रारम्भमें धन हानि भी दिखाई पड़ती है, पर अन्तमें धन लाभ होता है। मुकद्दमाके प्रश्नमें बहुत प्रयत्न करनेपर विजयकी आशा कहनी चाहिए। यदि रोगीकी रोगनिवृत्तिके सम्बन्धमें प्रश्नकी उपर्युक्त स्थिति हो तो वैद्यक इलाजके द्वारा रोगी थोड़े दिनोंमें आरोग्य प्राप्त करता है।

जब प्रश्नाक्षरोंके आदि वर्ण ऐ ख छ ठ थ फ र ष हों तो चोरीके प्रश्नमें चोर लम्बे कदका, कृष्ण वर्ण, दक्षिण दिशाका रहनेवाला और चोरीके काममें पक्का होशियार समझना चाहिए। ऐसे प्रश्नाक्षरोंमें चोरी गयी चीज मिलती नहीं है, चोरी गयी चीजकी दिशा दक्षिण कहनी चाहिए। गर्भके होनेपर लड़का या लड़की कौन सन्तान उत्पन्न होगी? ऐसे प्रश्नमें जब प्रश्नाक्षरोंकी उपर्युक्त स्थिति हो तो लम्बी, स्वस्थ और काले रंगकी लड़की उत्पन्न होनेका फल कहना चाहिए। विवाहके प्रश्नमें उपर्युक्त स्थिति होने-पर विवाह नहीं होता है। वाग्दान—सगाई हो जानेके बाद सम्बन्ध विच्छेद हो जाता है। धन लाभके प्रश्नमें उक्त स्थिति होनेपर प्रारम्भमें धन लाभ और अन्तमें धन हानि कहनी चाहिए। मुकद्दमा विजयके प्रश्नमें उपर्युक्त स्थितिके होनेपर थोड़ा प्रयत्न करनेपर भी अवश्य विजय मिलती है। यद्यपि प्रारम्भमें ऐसा मालूम पड़ता है कि इसमें सफलता नहीं मिलेगी, लेकिन अन्ततोगत्वा विजय लक्ष्मीकी ही प्राप्ति होती है।

इ ओ ग ज ड द[१] ब ल साः त्रिकोणाः, हरिताः, दिवसाक्षराः, युवानः, नागोरगाः, पुत्रकराः, पश्चिमदिग्वासिनः। ई औ घ झ ढ ध भ हाः चतुरस्राः मध्यच्छिद्राः, मासाक्षराः, यौवनघ्नाः, गौरश्यामाः, उत्तरदिग्वासिनः। उ ऊ ङ ञ ण न माः अं अः एते शुक्ल-पीताः, आरोहणाक्षराः[३], संवत्सराक्षराः[४], अलाभकराः, सर्वदिशादर्शका[५] भवन्ति।

१. द्रष्टव्यम्—के० प्र० र०, पृ० ८। बृहज्ज्योतिषार्णव, अ० ५। २. शुकाः, पीताः—क० मू०। ३. अरुणाक्षराः—क० मू०। ४. गौरवः श्यामः कृष्णसंवत्सराक्षराः—क० मू०। ५. दर्शितः—ता० मू०।

अर्थ—इ ओ ग ज ड द व ल स ये वर्ण त्रिकोण—तिकोने, हरे रंगके, दिवसाक्षर—दिन बली अर्थात् उसी दिनमें फल देनेवाले, युवक संज्ञक, नागोरग जाति-के, गर्भके प्रश्नमें पुत्र उत्पन्न करनेवाले और पश्चिम दिशामें निवास करनेवाले हैं। ई और घ झ ढ ध भ ह ये वर्ण चौकोर, मध्यमें छिद्रवाले, मासाक्षर—मासबली अर्थात् मासके मध्यमें फल देनेवाले, यौवनको नष्ट करनेवाले, गौर-श्यामवर्ण—गेहुआँ रंग और उत्तर दिशामें निवास करनेवाले हैं। उ ऊ ङ ञ ण न म अं अः ये वर्ण शुक्ल-पीतवर्ण, आरोहणाक्षर—ऊपर-ऊपर वृद्धिगत होनेवाले, संवत्सराक्षर—संवत्में बली अर्थात् एक वर्षमें फल देनेवाले, लाभ नहीं करनेवाले और सभी दिशाओंको देखनेवाले होते हैं।

विवेचन—यदि प्रश्नाक्षरोंके आद्य वर्ण इ ओ ग ज ड द ब ल स हों तो चोरीके प्रश्नमें चोर युवक, काले रंगका, मध्यम कद वाला और पश्चिम दिशाका निवासी होता है। उपर्युक्त प्रश्नाक्षरोंके होनेपर चोरी गयी वस्तुकी प्राप्ति एक दिनके वाद होती है तथा चोरीकी वस्तु जमीनके भीतर गडी समझनी चाहिए। सन्तान प्रश्नमें जब उपर्युक्त वर्ण प्रश्नके आद्य वर्ण हों या समस्त प्रश्नाक्षरोंमें उपर्युक्त वर्णों-की अधिकता हो तो सन्तान लाभ समझना चाहिए। गर्भस्थ कौन-सी सन्तान है? यह ज्ञात करनेके लिए उक्त प्रश्नस्थितिमें पुत्रलाभ कहना चाहिए। जिस व्यक्तिकी उम्र ३० वर्ष से अधिक हो गयी है, यदि ऐसा व्यक्ति सन्तान प्राप्ति के लिए प्रश्न करता है तो उपर्युक्त प्रश्नस्थितिमें निश्चय सन्तानप्राप्तिका फल कहना चाहिए। धनलाभके प्रश्नमें जब आद्य प्रश्नाक्षर इ ओ ग ज ड द ब ल स हो, या समस्त प्रश्नाक्षरोंमें इन वर्णोंकी अधिकता हो तो अल्पलाभ कहना चाहिए। यदि समस्त प्रश्नाक्षरोंमें तृतीय वर्गके पाँच या सात वर्ण हों तो निश्चित धनलाभ और दो-तीन वर्णोंके होनेपर धनहानि कहनी चाहिए। मतान्तरमें कहा गया है कि जब प्रश्नाक्षरोंके आद्य अक्षर इ ओ व ल स हों तो शारीरिक कष्ट और सन्तानमरण होता है। मुकद्दमा विजय के प्रश्नमें जब प्रश्नाक्षर उपर्युक्त हों तो विजयमें सन्देह समझना चाहिए। ग ज द ये वर्ण यदि प्रश्नाक्षरोंके आदिमें हों तो निश्चित रूपसे मुकद्दमामें हार कहनी चाहिए। रोगनिवृत्तिके प्रश्नमें जब इ ओ ड प्रश्नाक्षरोंके आद्य वर्ण हों तो रोगीकी मृत्यु या मृत्युतुल्य कष्ट एवं ल स ज आद्य वर्ण हों तो बहुत समयके बाद प्रयत्न करनेपर रोगनिवृत्ति कहनी चाहिए।

यदि प्रश्नाक्षरोंके आद्य वर्ण चतुर्थ वर्गके—ई औ घ झ ढ ध भ व ह हों या प्रश्नाक्षरोंमें इन वर्णोंकी अधिकता हो तो चोरीके प्रश्नमें वृद्ध, गेहुआँ वर्ण वाला, उत्तर दिशाका निवासी एवं लम्बे कदका व्यक्ति चोर कहना चाहिए। उपर्युक्त प्रश्नाक्षरोंके होनेपर चोरी गयी वस्तु एक महीनेके भीतर प्रयत्न करनेसे मिल जाती है तथा चोरी गयी वस्तुकी स्थिति बक्स या तिजोरीमें बतलाना चाहिए। यदि पशु-चोरीका प्रश्न हो तो जंगलमें उस पशुका निवास कहना चाहिए। यहाँ इतना और

स्मरण रखना होगा कि चोरी गया हुआ पशु थोड़े दिनोंके बाद अपने-आप ही आ जायगा ऐसा फल कहना चाहिए। इसका कारण यह है कि तृतीय वर्गके वर्ण नागोरग जातिके हैं अतः उनका फल चौपाइयोंकी चोरीका अभाव है। सन्तान प्रश्नमें जब आद्य प्रश्नाक्षर चतुर्थ वर्गके हों तो सन्तानप्राप्तिका अभाव कहना चाहिए। यदि आद्य प्रश्नाक्षर झ ढ हों तो गर्भका विनाश; भ व ई हों तो कन्याप्राप्ति और ह व प्रश्नाक्षरों-के होनेपर पुत्रलाभ, किन्तु उसका तत्काल मरण फल कहना चाहिए। धनलाभके प्रश्नमें आद्य प्रश्नाक्षर चतुर्थ वर्गके अक्षर हों या समस्त प्रश्नाक्षरोंमें चतुर्थ वर्गके अक्षरोंकी अधिकता हो तो साधारण लाभ; घ भ व आद्य प्रश्नाक्षर हों तो अल्प लाभ, सम्मान प्राप्ति एवं यशोलाभ, झ और ह आद्य प्रश्नाक्षर हों या प्रश्नाक्षरोंमें इन वर्णों-की अधिकता हो तो धनहानि, अपमान और पदच्युति आदि अनिष्टकारी फल कहना चाहिए। जय-विजयके प्रश्नमें चतुर्थ वर्गके आद्य प्रश्नाक्षरोंके होनेपर विजय लाभ, समस्त प्रश्नाक्षरोंमें चतुर्थ वर्गके पाँच अक्षरोंके होनेपर ससम्मान विजयलाभ; तीन या सात अक्षरोंके होनेपर विजय और छह, आठ और दस अक्षरोंके होनेपर पराजय कहनी चाहिए। यदि आद्य प्रश्नाक्षर झ ढ औ ह हों तो निश्चय पराजय; भ व ई हों तो जय और घ आद्य प्रश्नाक्षर हो तो सन्धि फल कहना चाहिए।

यदि पृच्छकके प्रश्नाक्षरोंमें आद्य वर्ण पंचम वर्गके अक्षर हों तथा समस्त प्रश्नाक्षरोंमें पंचम वर्गके अक्षरोंकी अधिकता हो तो चोरीके प्रश्नमें चोरी गया द्रव्य एक वर्षके भीतर अवश्य मिल जाता है तथा चोरका सम्यक् पता भी लग जाता है। जब ङ ञ न आद्य प्रश्नाक्षर होते हैं उस समय चोरीकी वस्तुका पता एक माह-में लग जाता है, लेकिन जब ण ञ ऊ प्रश्नाक्षर होते हैं उस समय चोरी गयी वस्तुका पता नहीं लगता है; हाँ, कुछ वर्षोंके पश्चात् उस वस्तुके सम्बन्धमें समाचार अवश्य मिल जाता है। आलिंगितकालमें जब प्रश्नाक्षरोंमें पंचम वर्गके वर्णोंकी अधिकता आवे तो चोरीके प्रश्नमें पृच्छकके घरमें ही चोरीकी चीजको समझना चाहिए। अभिधूमित कालके प्रश्नमें आद्यक्षर म न के होनेपर चोरीकी वस्तुका पता शीघ्र लग जानेका फल बताना चाहिए। यहाँ इतना और स्मरण रखना होगा कि दग्ध कालमें किया गया प्रश्न सदा निरर्थक या विपरीत फल देनेवाला होता है; अतः दग्ध कालमें पंचम वर्गके वर्णोंके अधिक होनेपर भी चोरी की गयी वस्तुका अभाव—अप्राप्ति फल ज्ञात करना चाहिए। सन्तानप्राप्तिके प्रश्नमें जब आद्य वर्ण पंचम वर्गके—उ ऊ ङ ञ ण न म अं अः हों तो विलम्बसे सन्तान लाभ समझना चाहिए। यदि आलिंगित कालमें सन्तानप्राप्तिका प्रश्न किया हो और आद्य प्रश्नाक्षर अः न म हों तो निश्चित रूपसे पुत्रप्राप्ति; तथा आद्य अक्षर उ ऊ हों तो कन्या प्राप्तिका फल बताना चाहिए। अभिधूमित कालमें यदि यही सन्तान प्राप्तिका प्रश्न किया गया हो तो जप, तप आदि शुभ कार्योंके करनेपर सन्तान-प्राप्ति एवं दग्ध कालमें यदि प्रश्न किया हो तो सन्तानके अभावका फल बतलाना चाहिए। लाभालाभके प्रश्नमें आद्य प्रश्नाक्षर पंचम वर्गके वर्ण हों या पंचम वर्गके

वर्णोंकी प्रश्नाक्षरोंके वर्णोंमें संख्या अधिक हो तो लाभाभाव; यदि आलिंगित कालमें प्रश्न किया गया हो और आद्य प्रश्नाक्षर म न ण हों तो स्वर्णमुद्राओंका लाभ कहना चाहिए। आलिंगित कालके प्रश्नमें प्रथम वर्गके तीन वर्ण और पंचम वर्गके पाँच वर्ण हों तो जमीनके नीचेसे धनलाभ; द्वितीय वर्गके चार वर्ण, तृतीय वर्गके तीन वर्ण और पंचम वर्णके छः वर्ण हों तो स्त्रीलाभ, सम्मानप्राप्ति; प्रथम वर्गके दो वर्ण, चतुर्थ वर्गके सात वर्ण और पंचम वर्णके आठ वर्ण हों तो यशोलाभ एवं चतुर्थ वर्गके चार वर्ण और पंचम वर्ग के चारसे अधिक वर्ण हों तो धन-कुटुम्ब हानि, शारीरिक कष्ट, कलह आदि अनिष्ट फल कहना चाहिए। जय-पराजयके प्रश्नमें आद्य प्रश्नाक्षर उ ऊ ङ ञ ण न म अं अः वर्ण हों तो विजयप्राप्ति तथा समस्त प्रश्नाक्षरोंमें पंचम वर्गके वर्णोंकी अधिकता हो तो साधारणतः विजय तथा आद्य प्रश्नाक्षर अं अः मात्रा वाले हों तो पराजय फल समझना चाहिए। रोगनिवृत्तिके प्रश्नमें आलिंगित कालमें पंचम वर्गके वर्णोंकी संख्या प्रश्नश्रेणीमें अधिक हो तो जल्द रोगनिवृत्ति; चतुर्थ वर्गके वर्णोंकी संख्या अधिक हो तो विलम्बसे रोग-निवृत्ति और ण ङ आद्य प्रश्नाक्षर हों तो प्रयत्न करनेपर एक वर्षमें रोगनिवृत्तिका फल बतलाना चाहिए। जब पृच्छकके प्रश्नाक्षरोंमें आद्य वर्ण पंचमवर्गका हो तो रोगनिवृत्तिके प्रश्नमें डॉक्टरी इलाज करनेसे जल्दी लाभ होता है। अभिधूमित कालके प्रश्नमें रोग-आरोग्य विचार करनेके लिए प्रत्येक वर्गके वर्णोंको प्रश्नाक्षरोंमें-से अलग-अलग लिख लेना चाहिए। पुनः द्वितीय वर्गको मात्राओंकी संख्याको चतुर्थ वर्गकी मात्राओंकी संख्यासे गुणा कर पृथक् गुणनफलको लिख लेना चाहिए। पश्चात् प्रथम, तृतीय और पंचम वर्गकी व्यंजन संख्याओंको परस्पर गुणा कर गुणनफलको दो स्थानोंमें रखना चाहिए। प्रथम स्थानमें पूर्व स्थापित गुणनफलसे भाग देकर लब्धिको द्वितीय स्थानके गुणनफलमें जोड़ देना चाहिए। पश्चात् जो योगफल आवे उसमें समस्त प्रश्नाक्षरोंकी मात्रासंख्यासे भाग देनेसे सम शेषमें निश्चय रोगनिवृत्ति और विषम शेषमें मृत्यु फल कहना चाहिए। यहाँ इतनी और विशेषता है कि सम लब्धि और सम शेषमें जल्दी अल्प कष्टमें ही रोगनिवृत्ति; विषम लब्धि और सम शेषमें कुछ विलम्बसे बीमारी भोगनेके बाद रोगनिवृत्ति; सम लब्धि और विषम शेषमें अधिक कष्ट भोगनेके उपरान्त रोगनिवृत्ति एवं विषम लब्धि और विषम शेषमें मृत्युप्राप्ति कहनो चाहिए।

मासपरीक्षा विचार

अथ दिनमाससंवत्सरपरीक्षां वक्ष्यामः—तत्र अ ए क[1] (का) फाल्गुनः, च[2] ट (चटौ) चैत्रः, तपौ कार्तिकः, यशौ [3]मार्गशीर्षः, आ ऐ ख छ ठ थ फ र षाः माघः, इ ओ ग ज ड दाः वैशाखः, द ब ल साः ज्येष्ठः, ई औ घ झ ढा

---

१. अ ए कः—ता० मू०। २. चटः—ता० मू०, चटौ—क० मू०। ३. मार्गशिरः—क० मू० अग्रहायणः—ता० मू०।

आषाढः, ध भ व हाः श्रावणः, उ ऊ ङ ञ णाः भाद्रपदः, न म अं अः आश्वियुजाः[1] (युक्) [आ ई ख छ ठाः पौषः] ।

अर्थ—दिन, मास और संवत्सरकी परीक्षाको कहते हैं। इन दिनादिकी परीक्षामें सर्व-प्रथम मासपरीक्षाका विचार किया जाता है। यदि प्रश्नाक्षर अ ए क हों तो फाल्गुन, च ट हों तो चैत्र, त प हों तो कार्तिक, य श हों तो अगहन, आ ऐ ख छ ठ थ फ र ष हों तो माघ, इ ओ ग ज ड द हों तो वैशाख, द ब ल स हों तो ज्येष्ठ; ई औ घ झ ढ हों तो आषाढ़, ध भ व ह हों तो श्रावण, उ ऊ ङ ञ ण हों तो भाद्रपद, आ ई ख छ ठ हों तो पौष, एवं न म अं अः हों तो आश्विन-क्वार मास समझना चाहिए। अभिप्राय यह है कि अ ए क अक्षर फाल्गुन संज्ञक, च ट चैत्र संज्ञक, त प कार्तिक संज्ञक, य श मार्गशीर्ष संज्ञक, आ ऐ ख छ ठ थ फ र ष माघ संज्ञक, इ ओ ग ज ड वैशाख संज्ञक, द ब ल स ज्येष्ठ संज्ञक, इ औ घ झ ढ आषाढ़ संज्ञक, ध भ व ह श्रावण संज्ञक, उ ऊ ङ ञ ण भाद्रपद संज्ञक, नाम अं अः आश्विन संज्ञक और आ ई ख छ ठ पौष संज्ञक हैं।

माससंज्ञाबोधकचक्र

मास नाम	अक्षरों का विवरण	अर्हच्चूडामणि-सारोक्त संज्ञाएँ
फाल्गुन	अ ए क	अ ए क
माघ	आ ऐ ख छ ठ थ फ र ष	थ फ र ष
पौष	आ ई ख छ ठ	आ ई ख छ ठ
अगहन	य श	य श
कार्तिक	त प	त प
क्वार	न म अं अः	अं अः अनुस्वार विसर्ग
भाद्रपद	उ ऊ ङ ञ ण	उ ऊ ङ ञ ण न
श्रावण	ध भ व ह	ध भ व ह
आषाढ़	ई औ घ झ ढ	ई औ घ झ ढ
ज्येष्ठ	द ब ल स	द ब ल स
वैशाख	इ ओ ग ज ड द	ग ज ड
चैत्र	च ट	च ट

विवेचन—आचार्यने जो मास संज्ञक अक्षर बतलाये हैं उनका उपयोग नष्ट-जातक, कार्यसिद्धि, नष्ट वस्तुकी प्राप्ति, पथिक आगमन, लाभालाभ, जयपराजय एवं अन्य समयसूचक प्रश्नोंके फल अवगत करनेके लिए करना चाहिए। यदि पृच्छकके आद्य प्रश्नाक्षर अ ए क हों या समस्त प्रश्नाक्षरोंमें ये तीन अक्षर हों तो कार्य सिद्धिके

---

१. "होइ चटेहिं चित्तो वैसाहो होइ गजडेहिं वण्णेहिं। जिट्ठोवि दबलसेहिं ई औघझढेहिं आसाढ़ो॥ णहु होइ दभवहेहिं सरिरिउ सरङञणेहिं भजवउए। बिंदुविसग्गा असेसय पद्ममवण्णेहिं आसिण तु॥ तहतप कत्तिकमासो कहितु पढमेहिं दोहि वण्णेहिं। यशावण्णेहि वि दोहि मिग्रसर णामो अ मासो अ॥ आईखछठेहिं सोऽथ करषवण्णेहिं होइ तहा माहो॥ फग्गुणमासो ससिमुणि सरसहिं तहकवारेण॥"—अ० चू० सा० गा० ६६–७२।

प्रश्नमें फाल्गुन मासमें कार्यसिद्धि कहनी चाहिए। इसी प्रकार नष्ट वस्तुकी प्राप्ति भी फाल्गुन मासमें उक्त प्रश्नाक्षरोंके होनेपर कहनी चाहिए।

इन मास संज्ञाओंका सबसे बड़ा उपयोग नष्टजातक बनानेके लिए करना चाहिए। जिन लोगोंकी जन्मपत्री खो गयी है या जिनकी जन्मपत्री नहीं है, उनकी जन्मपत्री इस दिन, मास, संवत्सर परीक्षापर-से बनायी जा सकती है। यों तो ज्योतिष-शास्त्रमें अनेक गणितके नियम प्रचलित हैं जिनपर-से जातककी जन्मपत्री बनायी जाती है। पर प्रस्तुत प्रकरणमें आचार्यने केवल प्रश्नाक्षरोंपर-से बिना अपने गणित क्रियाके ही जन्ममास, जन्मतिथि और जन्मदिन निकाला है। यदि पृच्छक स्वस्थ मनसे अपने इष्टदेवकी आराधना कर प्रश्न करे तो उसके प्रश्नाक्षरोंका विश्लेषण कर विचार करना चाहिए। आद्य प्रश्नाक्षर अ ए क हों तो पृच्छकका जन्म फाल्गुन मासमें, च ट हों तो चैत्र मासमें, त प हों तो कार्त्तिक मासमें, य श हों तो मार्गशिर मासमें, थ फ र ष हों तो माघ मासमें, ग ज ड हों तो वैशाख मासमें, द ब ल स हों तो ज्येष्ठ मासमें, ई औ घ झ ढ हों तो आषाढ़ मासमें, ध भ व ह हों तो श्रावण मासमें, उ ऊ ङ ञ ण न हों तो भाद्रपदमें, अनुस्वार और विसर्गयुक्त आद्य प्रश्नाक्षर हो तो क्वार मासमें एवं आ ई ख छ ठ हों तो पौष मासमें समझना चाहिए। परन्तु यहाँ इतना स्मरण रखना होगा कि प्रश्नाक्षरोंका ग्रहण करते समय आलिंगितादि पूर्वोक्त समयका ऊहापोह साथ-साथ करना है, बिना समयका विचार किये प्रश्नाक्षरोंका फल सम्यक् नहीं घटता है। आलिंगित और अभिधूमित समयके प्रश्न तो सार्थक निकलते हैं। लेकिन दग्ध समयके प्रश्न प्रायः निरर्थक होते हैं, अतएव दग्ध समयमें नष्टजातकका विचार नहीं करना चाहिए। आचार्यने उपर्युक्त प्रकरणमें वर्ग विभाजनकी प्रणालीपर जो संज्ञाएँ निश्चित की हैं, उनसे दग्ध समयका निषेध अर्थात् निकल आता है। यों तो नष्टजातकके मासका निर्णय करनेकी और भी अनेक प्रक्रिया हैं, जिनमें गणितके आधारपर-से नष्टजातकका विचार किया गया है। एक स्थानपर बताया है कि प्रश्नकी आलिंगित मात्राओंको प्रश्नकी दग्ध मात्राओंसे गुणनफलमें प्रश्नकी अभिधूमित मात्राओंसे गुणा कर १२ का भाग देना चाहिए। एकादि शेषमें क्रमशः चैत्रादि मासोंको समझना चाहिए। तात्पर्य यह है कि प्रश्न की $\frac{\text{आलि०} \times \text{अभि०} \times \text{दग्ध मा०}}{१२}$ = एकादि शेष मास आते हैं।

पक्षका विचार

अ ए क च ट त प य शाः शुक्लपक्षः, आ ऐ ख छ ठ थ फ र षाः कृष्णपक्षः, इ ओ[1] ग ज ड द ब ल साः शुक्लपक्षः, चतुर्थवर्गोऽपि[2] ई औ घ झ ढ ध भ व हाः कृष्णपक्षः, पञ्चमवर्गोभयपक्षाभ्यामेकान्तरितभेदेन ज्ञातव्यः[3]।

---

१. 'ओ' इति पाठो नास्ति—क० मू०। २. चतुर्थवर्गः कृष्णपक्षः—क० मू०। ३. के० प्र० र० पृ० ११।

अर्थ—अ ए क च ट त प य श ये वर्ग शुक्लपक्षसंज्ञक, आ ऐ ख छ ठ थ फ र ष ये वर्ण कृष्णपक्ष संज्ञक, इ ओ ग ज ड द व ल स ये वर्ण शुक्लपक्ष संज्ञक, ई औ घ झ ढ भ व ह ये वर्ण कृष्णपक्ष संज्ञक और पंचम वर्ग आधा शुक्लपक्ष संज्ञक और आधा कृष्णपक्ष संज्ञक होता है। अभिप्राय यह है कि उ ऊ ङ ञ ण न म ये वर्ण शुक्लपक्ष संज्ञक और अं अः ये वर्ण कृष्णपक्ष संज्ञक होते हैं।

आचार्यका भाव यह है कि यदि आद्य प्रश्नाक्षर या समस्त प्रश्नाक्षरोंमें प्रथम वर्गके वर्ण अधिक हों—अ ए क च ट त प य श अधिक हों तो शुक्लपक्ष, द्वितीय वर्गके वर्ण—आ ऐ ख छ ठ थ फ र ष अधिक हों तो कृष्णपक्ष, तृतीय वर्गके वर्ण—इ ओ ग ज ड द व ल स अधिक हों तो शुक्लपक्ष, चतुर्थ वर्गके वर्ण—ई औ घ झ ढ ध भ व ह अधिक हों तो कृष्णपक्ष, पंचम वर्गके—उ ऊ ङ ञ ण न म ये वर्ण अधिक हों तो शुक्लपक्ष एवं पंचम वर्गके—अं अः—अनुस्वार और विसर्ग हों तो कृष्णपक्ष समझना चाहिए।

पक्षसंज्ञाबोधक चक्र

केवल ज्ञान-प्रश्न चूड़ा-मणिका मत	अ ए क च ट त प य श	आ ऐ ख छ ठ थ फ र ष	इ ओ ग ज ड द व ल स	ई औ घ झ ढ ध भ व ह	उ ऊ ङ ञ ण न म	अं अः
केरल मत	अ क च ट त	आ ऐ·ए ख छ ठ थ फ र प	इ ग ज ड द ब ल स	ई औ घ झ ढ ध भ व ह	ऊ न म	प य श ओ अं अः
स्वरशास्त्र-का मत	अ ई	आ ई	उ ए	ऊ ऐ	अं औ	औ अः
	शुक्लपक्ष	कृष्णपक्ष	शुक्लपक्ष	कृष्णपक्ष	शुक्लपक्ष	कृष्णपक्ष

विवेचन—नष्ट वस्तु किस पक्षमें प्राप्त होगी ? यह जाननेके लिए कोई व्यक्ति प्रश्न करे तो आद्य प्रश्नाक्षर अ ए क च ट त प य श होनेसे शुक्लपक्षमें, आ ऐ ख छ ठ थ फ र ष होनेसे कृष्णपक्षमें, इ ओ ग ज ड द ब ल स होनेसे शुक्लपक्षमें, ई औ घ झ ढ ध भ व ह होनेसे कृष्णपक्षमें, उ ऊ ङ ञ ण न म होनेसे शुक्लपक्षमें और अं अः होनेसे कृष्णपक्षमें पृच्छककी नष्ट वस्तुकी प्राप्ति कहनी चाहिए। स्वर शास्त्रका मत है कि यदि प्रश्नाक्षरोंकी आद्य मात्राएँ अ इ हों तो शुक्लपक्षमें, आ ई हों तो कृष्णपक्षमें, उ ए हों तो शुक्लपक्षमें, ऊ ऐ हों तो कृष्णपक्षमें, अं ओ हों तो शुक्लपक्षमें एवं औ अः हों तो कृष्णपक्षमें वस्तुकी प्राप्ति समझनी चाहिए। नष्ट जन्मपत्री बनानेके लिए यदि प्रश्न हो तो प्रथम उपर्युक्त विधिसे मास ज्ञान कर पक्षका विचार करना चाहिए। यदि नष्टजातकके प्रश्नमें प्रश्नाक्षरोंकी आद्य मात्रा अ इ हों तो शुक्लपक्षका जन्म, आ ई हों तो कृष्णपक्षका जन्म; उ ए हों तो शुक्लपक्षका जन्म, ऊ ऐ हों तो कृष्णपक्षका जन्म, अं ओ हों तो शुक्लपक्षका जन्म और औ अः हों तो कृष्णपक्षका जन्म जातकका कहना चाहिए।

१—पृच्छकके समस्त प्रश्नाक्षरोंमें-से आलिंगित, अभिधूमित और दग्ध स्वर एवं व्यंजनोंको पृथक्-पृथक् कर लिख लेना चाहिए। पश्चात् आलिंगित और दग्ध वर्णोंकी संख्याको परस्पर गुणा कर अभिधूमित वर्ण संख्याको आगत गुणनफलमें जोड़ देना चाहिए। अनन्तर उस योगफलमें दोका भाग देनेसे एक शेषमें शुक्लपक्ष और शून्य या दो शेषमें कृष्णपक्ष अवगत करना चाहिए।

२—प्रश्नाक्षरोंमें-से द्वितीय और चतुर्थ वर्गके अक्षरोंको पृथक् कर दोनों संख्याओं-का परस्पर गुणा कर लेना चाहिए। पश्चात् इस गुणनफलमें प्रश्नाक्षरोंमें रहनेवाले प्रथम और पंचम वर्गके वर्णोंकी संख्याका जोड़ देना चाहिए और इस योगफलमें-से तृतीय वर्गके वर्णोंकी संख्याको घटा देना चाहिए। पश्चात् जो शेष बचे उसमें दो का भाग देनेपर एक शेषमें शुक्लपक्ष और शून्य या दो शेषमें कृष्णपक्ष समझना चाहिए।

३—प्रश्नाक्षरोंमें रहनेवाली सिर्फ़ आलिंगित मात्राओंको तीनसे गुणा कर, गुणन-फलमें अभिधूमित और दग्ध मात्राओंकी संख्याको जोड़ देनेपर जो योगफल हो, उसमें दो का भाग देनेपर एक शेषमें शुक्लपक्ष और शून्य या दो शेषमें कृष्णपक्ष समझना चाहिए।

४—अधराक्षर प्रश्नवर्ण हों तो कृष्णपक्ष और उत्तराक्षर प्रश्नवर्ण हों तो शुक्ल-पक्ष ज्ञात करना चाहिए।

तिथिविचार

अथ तिथयः—अ इ ए शुक्लपक्षप्रतिपत्। क २, च ३, ट ४, त ५, प ६, य ७, श ८, ग ९, ज १०, ड ११, द १२, ब १३, ल १४, स १५ इति शुक्लपक्षः। अं पञ्चम्यादि, अः त्रयोदश्याम्, अवर्गे ग्रामं कवर्गे ग्रामबाह्यं चवर्गे गव्यूतिमात्रम्, टवर्गे ६, तवर्गे १२, पवर्गे[1] १५, यवर्गे ४८, शवर्गे ९६, ङ ञ ण न म वर्गे १९२। एतदेवं[2] दिनमाससंवत्सराणां दृष्टप्रमाणमिति सर्वेषामेव गुणानां स एव कालो द्रष्टव्यः।

अर्थ—अब तिथिविचार कहते हैं—अ इ ए शुक्लपक्षके प्रतिपदा संज्ञक, क वर्ण शुक्लपक्षका द्वितीया संज्ञक, च वर्ण शुक्लपक्षका तृतीया संज्ञक, ट वर्ण शुक्लपक्षका चतुर्थी संज्ञक, त वर्ण शुक्लपक्षका पंचमी संज्ञक, प वर्ण शुक्लपक्षका षष्ठी संज्ञक, य वर्ण शुक्लपक्षका सप्तमी संज्ञक, श वर्ण शुक्लपक्षका अष्टमी संज्ञक, ग वर्ण शुक्लपक्षका नौमी संज्ञक, ज वर्ण शुक्लपक्षका दशमी संज्ञक, ड वर्ण शुक्लपक्षका एकादशी संज्ञक, द वर्ण शुक्लपक्षका द्वादशी संज्ञक, .व वर्ण शुक्लपक्षका त्रयोदशी संज्ञक, ल वर्ण शुक्लपक्ष का चतुर्दशी संज्ञक एवं स वर्ण पूर्णिमा संज्ञक है। इस प्रकार शुक्लपक्षकी तिथियोंका निरूपण किया गया है।

---

१. पवर्गे २५—क० मू०। २. तदेव—क० मू०।

अं वर्ण कृष्णपक्षकी पंचमीका बोधक और अः कृष्णपक्षकी त्रयोदशीका बोधक है। ख वर्ण कृष्णपक्षकी प्रतिपदाका बोधक, छ वर्ण कृष्णपक्षकी द्वितीयाका बोधक, ठ वर्ण कृष्णपक्षकी तृतीयाका बोधक, फ वर्ण कृष्णपक्षकी चतुर्थीका बोधक, र वर्ण कृष्णपक्षकी षष्ठीका बोधक, प वर्ण कृष्णपक्षकी सप्तमीका बोधक, घ वर्ण कृष्णपक्षकी अष्टमीका बोधक, झ वर्ण कृष्णपक्षकी नौमीका बोधक, ढ वर्ण कृष्णपक्षकी दशमीका बोधक, ध वर्ण कृष्णपक्षकी एकादशीका बोधक, भ वर्ण कृष्णपक्षकी द्वादशीका बोधक, व वर्ण कृष्णपक्षकी चतुर्दशीका बोधक और ह वर्ण अमावास्याका बोधक है।

प्रश्नाक्षर अवर्ग—अ आ इ ई उ ऊ हों तो गाँवमें वस्तु, कवर्ग—क ख ग घ हों तो गाँवसे बाहर जंगलादिमें वस्तु, चवर्ग—च छ ज झ हों तो दो कोशकी दूरीपर वस्तु, ट वर्ग—ट ठ ड ढ हों तो बारह कोशकी दूरीपर वस्तु, तवर्ग—त थ द ध हों तो २४ कोशकी दूरीपर वस्तु, पवर्ग—प फ ब भ हों तो ३० कोशकी दूरीपर वस्तु, य वर्ग—य र ल व हों तो ९६ कोशकी दूरीपर वस्तु, श वर्ग—श ष स ह हों तो १९२ कोशकी दूरीपर वस्तु और ङ ञ ण न म हों तो ३८४ कोशकी दूरीपर वस्तु समझनी चाहिए। इस प्रकार दिन, मास, संवत्सर और स्थान प्रमाण कहा है, इसे सब प्रकारके प्रश्नोंमें घटा लेना चाहिए।

विवेचन—आचार्यने उपर्युक्त प्रकरणमें जो स्थान प्रमाण बतलाया है उसका प्रयोजन चोरी की गयी वस्तुकी स्थितिका पता लगानेके लिए है। चोरीके प्रश्नमें जब प्रश्नाक्षर अ आ इ ई उ ऊ हों तो चोरीकी वस्तु गाँवके भीतर और क ख ग घ प्रश्नाक्षर हों तो गाँवके बाहर वस्तुकी स्थिति समझनी चाहिए। च छ ज झ प्रश्नाक्षरोंके होनेपर दो कोशकी दूरीपर गाँवसे बाहर, ट ठ ड ढ प्रश्नाक्षरोंके होनेपर १२ कोशकी दूरीपर, त थ द ध प्रश्नाक्षरोंके होनेपर २४ कोशकी दूरीपर, प फ ब भ प्रश्नाक्षरोंके होनेपर ५० कोशकी दूरीपर, य र ल व प्रश्नाक्षरोंके होनेपर ९६ कोशकी दूरीपर, श ष स ह के होनेपर १९२ कोशकी दूरीपर एवं ङ ञ ण न म प्रश्नाक्षरोंके होनेपर ३८४ कोशकी दूरीपर वस्तुकी स्थिति अवगत करनी चाहिए। परदेशमें गये व्यक्तिकी दूरी ज्ञात करनेके प्रश्नमें भी उपर्युक्त प्रश्नविधिसे विचार किया जाता है।

नष्ट जन्मपत्री बनानेके लिए केवल तिथि विचार ही उपयोगी है। जैनाचार्यने गणित क्रियाके अवलम्बनके बिना ही इस विषय का सम्यक् प्रतिपादन किया है।

वर्णोंकी गव्यूति संज्ञाका कथन

अ आ १; इ ई २; उ ऊ ३; ए ऐ ४; ओ औ ५; अं अः ६; यावत्तत्राक्षराणि तावद्योज्यम्। केवलिप्रश्ने दृश्यन्ते ताश्चवर्गे स्वरे ता संख्या यावदन्त्य¹-

---

१. यावद्वर्णाः—क० मू०।

वर्णसंयुक्ताक्षराणि दृश्यन्ते तदेव संख्यां व्याख्यास्यामः—अ क च ट त प य शादयोऽवर्गे ग्रामम्; कवर्गे ग्रामबाह्यम्ः द्विगव्यूतिः; [1]चवर्गे ४ गव्यूतिः; टवर्गे ६ गव्यूतिः; तवर्गे १२ गव्यूतिः; पवर्गे २४ [2]गव्यूतिः; यवर्गे ४८ गव्यूतिः; शवर्गे ९६ गव्यूतिः; ङ ञ ण न माः १०० गव्यूतिः। या गव्यूतिस्तदेव दिनमासवर्ष-संख्यास्वरसंयोगेऽस्ति तथा[3] सा वर्गस्य पूर्वोक्तक्रमेण क च ट त प य शादीनां विनिर्दिशेत्।

अर्थ—अ आ इन उभय वर्णोंकी एक संख्या; इ ई इन दोनों वर्णोंकी दो संख्या; उ ऊ इन दोनों वर्णोंकी तीन संख्या; ए ऐ इन दोनों वर्णोंको चार संख्या, ओ औ इन दोनों वर्णोंकी पाँच संख्या एवं अं अः इन दोनों वर्णोंकी छः संख्या निर्धारित की गयी है। जहाँ जितने अक्षर हों, वहाँ उतनी संख्या ज्ञात कर लेनी चाहिए। केवल-ज्ञानमें जो स्वर संख्या और स्वर व्यंजन संयुक्त संख्या देखी गयो है, यहाँ उसीका व्याख्यान किया जाता है।

अ क च ट त प य शादि वर्गोंमें—अ वर्ग प्रश्नाक्षरमें गाँवमें; कवर्गमें ग्राम वाह्य दो गव्यूति[4] मात्र; चवर्गमें ४ गव्यूति, टवर्गमें ६ गव्यूति; तवर्गमें १२ गव्यूति; पवर्गमें २४ गव्यूति; यवर्ग में ४८ गव्यूति; शवर्गमें ९६ गव्यूति और ङ ञ ण न म में १०० गव्यूति समझना चाहिए। जिस वर्गकी जो गव्यूति संख्या बतलायी गयी है वही उसकी दिन, मास, वर्ष संख्या स्वरोंके संयुक्त होनेपर भी मानी जाती है। तथा पहले वतायी हुई विधिसे क च ट त प य शादि वर्गोंकी संख्याका निर्देश करना चाहिए।

विवेचन—यों तो आचार्यने पहले भी तिथियोंकी संज्ञाओंके साथ वर्णोंकी गव्यूति संख्या कही है, पर वहाँपर उसका अभिप्राय वस्तुकी दूरी निकालनेका है और जो ऊपर वर्णोंकी गव्यूति बतायी है उसका रहस्य दिन, मास, वर्ष संख्या निकालनेका है। अभिप्राय यह है कि पहली गव्यूति संज्ञा-द्वारा स्थान दूरी निकाली गयी है और इसके द्वारा समय सम्बन्धी दूरी—कालावधिका निर्देश किया गया है अतएव यहाँ गव्यूति शब्दका अर्थ कोश न लेकर समयकी संख्याका बोधक द्विगुनी राशि लेना चाहिए। बृहज्ज्योतिपार्णवके पंचम अव्यायके रत्न प्रकरणमें गव्यूति शब्द सामान्य संख्या वाचक तथा जैन प्रश्नशास्त्रमें दो संख्याका वाचक आया है। अतएव यहाँपर जिस वर्गकी जितनी गव्यूति बतलायी गयी है, उसकी दूनी संख्या ग्रहण करनी चाहिए। ऊपर जो स्वरोंकी संख्या कही है, उसमें भी गव्यूति संख्या ही समझनी चाहिए। अतः अ = १, आ = २, इ = ३, ई = ४, उ = ५, ऊ = ६, ए = ७, ऐ = ८, ओ = ९, औ = १०, अं = ११, अः = १२ है। तात्पर्य यह है कि यदि किसीका प्रश्न यह हो कि अमुक

---

१. चवर्गे त्रिगव्यूतिः—क० मू०। २. पवर्गे २८ गव्यूतिः—क० मू०। ३. तदा—क० मू०। ४. "गोयूतिः, क्रोशद्वये, क्रोशे च"—श० म० नि० पृ० १४१। "गव्यूतिः संख्या-वाचकः"—बृ० ज्यो० अ० केरल प्रकरण।

कार्य कब पूरा होगा ? तो इस प्रकारके प्रश्नमें यदि प्रश्नाक्षरोंका आद्य वर्ण अ हो तो एक दिन या एक मास अथवा एक वर्षमें; आ हो तो दो दिन या दो माह अथवा दो बर्षोमें; इ हो तो तीन दिन या तीन माह अथवा तीन वर्षोमें; ई हो तो चार दिन या चार मास अथवा चार वर्षोमें; उ हो तो पाँच दिन या पाँच मास अथवा पाँच वर्षोमें; ऊ हो तो छः दिन या छः मास अथवा छः वर्षोमें; ए हो तो सात दिन या सात मास अथवा सात वर्षोमें; ऐ हो तो आठ दिन या आठ अथवा मास आठ वर्षोमें; ओ हो तो नौ दिन या नौ मास अथवा नौ वर्षोमें; औ हो तो दस दिन या दस मास अथवा दस वर्षोमें; अं हो तो ग्यारह दिन या ग्यारह मास अथवा ग्यारह वर्षोमें एवं अः हो तो बारह दिन या बारह मास अथवा बारह वर्षोमें कार्य पूरा होता है । समयमर्यादासे सम्वन्ध रखनेवाले जितने प्रश्न हैं, उन सबकी अवधि उपर्युक्त ढंगसे ही ज्ञात करनी चाहिए । इसी प्रकार स्वर संयुक्त क ख ग घ—का कि की कु कू के कै को कौ कं कः ; खा खि खी खु खू खे खै खो खौ खं खः ; ग गा गि गि गु गू गे गै गो गौ गं गः ; घ घा घि घी घु घू घे घै घो घौ घं घः—प्रश्नाक्षरोंके होनेपर गाँवसे वाहर चार कोशकी दूरीपर पृच्छककी वस्तु एवं चार दिन या चार मास अथवा चार वर्षोंके भीतर उस कार्यकी सिद्धि कहनी चाहिए । च छ ज झ स्वर संयुक्त प्रश्नाक्षरों—चा चि ची चु चू चे चै चो चौ चं चः ; छ छा छि छी छु छू छे छै छो छौ छं छः ; ज जा जि जी जु जू जे जै जो जौ जं जः ; झ झा झि झी झु झू झे झै झो झौ झं झः—के होनेपर आठ दिन या आठ मास अथवा आठ वर्षोमें कार्य होता है । ट ठ ड ढ स्वर संयुक्त प्रश्नाक्षरों—ट टा टि टी टु टू टे टै टो टौ टं टः ; ठ ठा ठि ठी ठु ठू ठे ठै ठो ठौ ठं ठः ; ड डा डि डी डु डू डे डै डो डौ डं डः ; ढ ढा ढि ढी ढु ढू ढे ढै ढो ढौ ढं ढः—के होनेपर बारह दिन या बारह मास अथवा बारह वर्षोमें कार्य सिद्ध होता है । इसी प्रकार आगे भी स्वर संयोगकी प्रक्रिया समझ लेनी चाहिए । जव नष्टजातकका प्रश्न हो उस समय इस स्वर-व्यंजन संयुक्त प्रक्रियापर-से जातककी गत आयु निकालनो चाहिए, पश्चात् पूर्वोक्त विधिसे जन्ममास, जन्मदिन, जन्मपक्ष और जन्म संवत् जान कर आगेवाली विधिपर-से इष्ट काल और लग्नका साधन कर नष्ट जन्मपत्री वना लेनी चाहिए ।

इस गव्यूति संख्यापर-से जय-पराजयका समय बड़ी आसानीसे निकाला जा सकेगा, क्योंकि पृच्छकके प्रश्नाक्षरोंपर-से जय-पराजयकी व्यवस्थाका विचार कर पुनः उपर्युक्त विधिसे समय अवधिका निर्देश करना चाहिए । सुख-दुःख, रोग-नीरोग, हानि-लाभ एवं समयके शुभाशुभत्वके निरूपणके लिए भी उपर्युक्त दिन, मास और संवत्सर संख्याकी व्यवस्था परमोपयोगी है । अभिप्राय यह है समस्त कार्योंकी समय मर्यादाके कथनमें उपर्युक्त व्यवस्थाका अवलम्बन लेना चाहिए ।

गादि शब्दोंके स्वर संयोगका विचार

अथ गादीनां स्वरसंयोगमाह—ग गा २, गि गी ३, गु गू ४, गे गै ५, गो गौ

६, गं गः ७। अथ खादीनां स्वरसंयोगमाह–ख खा ३, खि खी ४, खु खू ५, खे खै ६, खो खौ ७, खं खः ८। घादीनां चैवमेव–घ घा ४, घि घी ५, घु घू ६, घे घै ७, घो घौ ८, घं घः ९। ङ ङा ५, ङि ङी ६, ङु ङू ७, ङे ङै ८, ङो ङौ ९, ङं ङः १०। क का १, कि की २, कु कू ३, के कै ४, को कौ ५, कं कः ६। ककारादीनां[1] या संख्या डकारस्य सा संख्या। क च ट त प य शादीनां या संख्या ठकारस्य सा संख्या ज्ञेया[2]। चकारस्य छ ठ थ फ र षादीनां च या संख्या यकारस्य संयोगे घ झ ढ ध भादीनां सा संख्या। थ संयोगे जकारादीनां [सा संख्या] ङ ञ ण न मादीनां च या संख्या। तत्र गृहीत्वाऽधराक्ष[3]राणि च द्वितीयस्थानादौ राशौ निरीक्षयेत्। या यस्य संख्या निश्चिता तस्मै[4] तस्यां दिशि मध्ये विनियोजयेत्। सम्मितां द्विगुणीकृत्य दशभिर्गुणयेत्[5]। सैषा[6] काल-संख्या विनिर्दिशेत्।

अर्थ—गादि वर्णोंके स्वरयोगको कहते हैं—ग गा इन वर्णोंकी दो संख्या; गि गी इन वर्णोंकी तीन संख्या; गु गू इन वर्णोंकी चार संख्या; गे गै इन वर्णोंकी पाँच संख्या; गो गौ इन वर्णोंकी छः संख्या और गं गः इन वर्णोंकी सात संख्या है।

अब खादि वर्णोंके स्वरसंयोगको कहते हैं—ख खा इन वर्णोंकी तीन संख्या; खि खी इन वर्णोंकी चार संख्या; खु खू इन वर्णोंकी पाँच संख्या; खे खै इन वर्णोंकी छः संख्या; खो खौ इन वर्णोंकी सात और खं खः इन वर्णोंकी आठ संख्या होती है।

घादि वर्णोंकी संख्याका क्रम भी इस प्रकार अवगत करना चाहिए—घ घा इन वर्णोंकी चार संख्या; घि घी इन वर्णोंकी पाँच संख्या; घु घू इन वर्णोंकी छह संख्या; घे घै इन वर्णोंकी सात संख्या; घो घौ इन वर्णोंकी आठ संख्या एवं घं घः इन वर्णोंकी नौ संख्या है।

ङ ङा इन वर्णोंकी पाँच संख्या; ङि ङी इन वर्णोंकी छः संख्या; ङु ङू इन वर्णोंकी सात संख्या; ङे ङै इन वर्णोंकी आठ संख्या; ङो ङौ इन वर्णोंकी नौ संख्या और ङं ङः इन वर्णोंकी दस संख्या है।

क का इन वर्णोंकी एक संख्या; कि की इन वर्णोंकी दो संख्या; कु कू इन वर्णोंकी तीन संख्या; के कै इन वर्णोंकी चार संख्या; को कौ इन वर्णोंकी पाँच संख्या और कं कः इन वर्णोंकी छः संख्या है। क का, कि की आदि की जो संख्या है ड डा, डि डी आदि की भी वही संख्या है अर्थात् ड डा इन वर्णोंकी एक संख्या, डि डी इन वर्णोंकी दो संख्या, डु डू इन वर्णोंकी तीन संख्या, डे डै इन वर्णोंकी चार संख्या, डो डौ इन वर्णोंकी पाँच संख्या और डं डः इन वर्णोंकी छः संख्या है। क च ट त प य शादि वर्णोंकी जो संख्या है, ठकारको वही संख्या है अर्थात् ठ ठा इन वर्णोंकी दो संख्या, ठि ठी इन

---

१. के कादीनां–ता० मू०। २. ज्ञेया इति पाठो नास्ति–ता० मू०। ३. अधराक्षराः–क० मू० ४. तस्यै–तस्य दिशि मध्ये–ता० मू०। ५. गुणयेच्च–ता० मू०। ६. एषा–क० मू०।

वर्णोंकी चार संख्या, ठु ठू इन वर्णोंकी छः संख्या, ठे ठै इन वर्णोंकी बारह संख्या, ठो ठौ इन वर्णोंकी चौबीस संख्या और ठं ठः इन वर्णोंकी अड़तालीस संख्या होती है। चकारकी और छ ठ थ फ र प इन वर्णोंकी जो संख्या है, यकारके संयोग होनेपर घ झ ढ ध भ की वही संख्या होती है। ङ ञ ण न म की जो संख्या है थ संयुक्त जकारकी वही संख्या होती है अर्थात् थ ज की संख्या १०० है।

प्रश्नाक्षरोंको ग्रहण कर द्वितीय स्थानमें राशिका निरीक्षण करना चाहिए। जिस वर्णकी जो संख्या निश्चित की गयी है उसको उसकी दिशामें लिख देना चाहिए। समस्त संख्याओंको जोड़कर योगफलको दूना कर दससे गुणा करना चाहिए। गुणा करनेसे जो गुणनफल आवे वही काल संख्या समझनी चाहिए।

विवेचन—आचार्यने उपर्युक्त प्रकरणमें समयमर्यादा निकालनेकी एक निश्चित प्रक्रिया बतलायी है; इसमें प्रश्नके सभी वर्णोंका उपयोग हो जाता है तथा सभी वर्णोंकी संख्यापर-से एक निश्चित संख्याकी निष्पत्ति होती है। यदि इस प्रक्रियाके अनुसार समयमर्यादा निकाली जाय तो निश्चित समयसंख्या दिनोंमें अवगत करनी चाहिए। जहाँ उलझनका सवाल हो वहाँ भले ही इस संख्याको मासोंमें ज्ञात करे। इस समय संख्याका उपयोग प्रायः सभी प्रकारके प्रश्नोंके निर्णयमें होता है। इसीलिए आचार्यने समस्त संयुक्त, असंयुक्त वर्णोंकी संख्याएँ पृथक्-पृथक् निश्चित की हैं। अतएव समस्त प्रश्नाक्षरोंकी संख्याको एक स्थानमें जोड़कर रख लेना चाहिए, पश्चात् इस योगफलको दूना कर दससे गुणा करे और गुणनफल प्रमाण समयसंख्या समझे।

किसी भी प्रश्नके समयकी संख्याको ज्ञात करनेका एक नियम यह भी है कि स्वर और व्यंजनोंकी संख्याको पृथक्-पृथक् निकालकर योग कर ले। यहाँ संख्याका क्रम निम्न प्रकार अवगत करे—अ = १, आ = २, इ = ३, ई = ४, उ = ५, ऊ = ६, ए = ७, ऐ = ८, ओ = ९, औ = १०, अं = ११, अः = १२, क = १३, ख = १४, ग = १५, घ = १६, च = १७, छ = १८, ज = १९, झ = २०, ट = २१, ठ = २२, ड = २३, ढ = २४, त = २५, थ = २६, द = २७, ध = २८, प = २९, फ = ३०, ब = ३१, भ = ३२, य = ३३, र = ३४, ल = ३५, व = ३६, श = ३७, ष = ३८, स = ३९, ह = ४०, ङ ञ ण न म = १००।

प्रश्नके स्वर और व्यंजनोंकी संख्याके योगमें २० से गुणा करे और गुणनफलमें व्यंजन संख्याका आधा जोड़ दे तो दिनात्मक समय संख्या आ जायगी।

उदाहरण—जैसे मोहनने अपने कार्यसिद्धिकी समयअवधि पूछी है। यहाँ मोहनसे प्रश्नवाक्य पूछा तो उसने 'कैलास पर्वत' कहा। यहाँपर मोहनके प्रश्नवाक्यमें स्वर और व्यंजनोंका विश्लेषण किया तो निम्न रूप हुआ—

क् + ऐ + ल् + आ + स् + अ + प् + अ + र् + व् + अ + त् + अ इस विश्लेपण में क् + ल् + स् + प् + र् + व् + त् व्यंजन हैं और ऐ + आ + अ + अ + अ + अ स्वर

है। उपर्युक्त संख्या विधिसे स्वर और व्यंजनोंकी संख्या निकाली तो—

१३ + ३५ + ३९ + २९ + ३६ + ३४ + २५ = २११ व्यंजन संख्याका योग।

८ + २ + १ + १ + १ + १ = १४ स्वर संख्याका योग।

२११ + १४ = २२५ योगफल; २२५ × २० = ४५००।

२११ ÷ २ = १०५½ = व्यंजनसंख्याका आधा।

४५०० + १०५½ = ४६०५½ दिन अर्थात् १२ वर्ष ९ महीना १५ दिनके भीतर वह कार्य अवश्य सिद्ध होगा।

सीधे-सादे प्रश्नोंकी जो जल्दी ही हल होनेवाले हों उनकी समय संख्या निकालनेके लिए स्वर और व्यंजन संख्याको परस्पर गुणा कर ३० का भाग देनेपर दिनात्मक समयमें-से स्वर संख्याको घटानेपर कालावधिकी दिनात्मक संख्या आती है। उदाहरण—प्रश्नवाक्य पहलेका ही है, इसकी स्वर संख्या १४ और व्यंजन संख्या २११ है, इन दोनोंको गुणा किया—

१४ × २११ = २९५४ ÷ ३० = ९८ – १४ = ८४ दिन अर्थात् दो महीना चौबीस दिनमें कार्य सिद्ध होगा। इसी प्रकार ज्योतिष शास्त्रमें आलिंगित, अभिधूमित और दग्ध समयमें किये गये प्रश्नोंकी समय संख्या निकालनेकी भिन्न-भिन्न प्रणालियाँ हैं, जिनपर-से विभिन्न प्रश्नोंकी समय-संख्या विभिन्न आती है। वृहज्ज्योतिषार्णवमें समय-संख्या निकालनेकी अंक विधि एक प्रश्नपर-से बतायी है। उसमें कहा गया है कि पृच्छकसे कोई अंक पूछकर उसमें उसी अंकका चौथाई हिस्सा जोड़कर तीनका भाग देनेपर समय-संख्या निकल आती है। पर यहाँ इतना स्मरण रखना होगा कि यह समय छोटे-मोटे प्रश्नोंके उत्तरके लिए ही उपयोगी हो सकता है, बड़े प्रश्नोंके लिए नहीं।

उपर्युक्त समयसूचक प्रकरणसे नष्टजातकका इष्टकाल भी सिद्ध किया जा सकता हैं। इसके साधनकी प्रक्रिया यह है कि समस्त प्रश्नाक्षरोंका उक्त विधिसे जो कालमान आवेगा वह पलात्मक इष्टकाल होगा। इसमें ६० का भाग देनेसे घट्यात्मक होगा तथा घटी स्थानमें ६० से अधिक होनेपर इसमें भी ६० का भाग देनेसे जो शेष बचेगा, वही घट्यात्मक जन्मसमयका इष्टकाल होगा। प्रथम आचार्य-द्वारा प्रतिपादित प्रक्रियासे इष्टकाल साधनका उदाहरण दिया जाता है—

प्रश्नवाक्य यहाँ भी 'कैलास पर्वत' ही है। इसकी कालसंख्या उक्त विधिसे बनायी तो ४ + ४८ + ९६ + २४ + ४८ + ४८ + १२ = २८० × २ = ५६० इसको १० से गुणा किया तो—५६० × १० = ५६०० पलात्मक इष्टकाल हुआ।

५६०० ÷ ६० = ९३ घटी २० पल। यहाँ घटी स्थानमें ६० से अधिक है अतः ६० का भाग देकर शेष मात्र ३३ घटी ग्रहण किया। इसलिए यहाँ इष्टकाल ३३ घटी २० पल माना जायगा।

अन्य ग्रन्थान्तरोंमें प्रतिपादित कालसाधनके नियमोंपर-से भी इष्टकालका साधन किया जा सकता है। पहले जो संख्यामान प्रतिपादक वर्णों-द्वारा इसी प्रश्नका ४६०५½

काल मान आया है, इसीको यहाँ पलात्मक इष्टकाल मान लिया जायगा अतः ४६०५$\frac{१}{२}$ ÷ ६० = ७४ घटी ४५$\frac{१}{२}$ पल; घटीस्थानमें पुनः ६० का भाग दिया तो ७६ ÷ ६० = १ लब्धि और शेष १६ आया, अतएव १६ घटी ४५$\frac{१}{२}$ पल इष्टकाल माना जायगा। इस प्रकार किसी भी व्यक्तिके प्रश्नाक्षरोंको ग्रहण कर इस काल सावन नियम द्वारा जन्मसमयका इष्टकाल लाया जा सकता है। मास, पक्ष, तिथि और इष्टकालके ज्ञात हो जानेपर लग्नसाधनके नियम द्वारा लग्न लाकर जन्मकुण्डली बना लेनी चाहिए।

ग्रह और राशियोंका कथन

अष्टसु वर्गेषु राहुपर्यन्ताः[1] अष्टग्रहाः, ङ ञ ण न मेषु केतुग्रहश्च।[2] अकारादिद्वादश-मात्राः[3] स्युर्द्वादशराशयः। एकारादयस्ते च मासाः, ये च तानि लग्नानि। यान्यक्षराणि तानि नक्षत्राणि [तान्यंशानि] भवन्ति। ककारादिहकारान्तमश्विन्यादिनक्षत्राणि क्षिपेत्। ङ ञ ण न मान् वर्जयित्वा उत्तराक्षरेषु अश्विन्याद्याः,[4] अधराक्षरेषु [5]धनिष्ठाद्याः। एष्वेकान्तरितनक्षत्रं विचारयेत्। अधराक्षरं संसाधयेत्। अथ राशिषूत्तराधरं उत्तराधरनक्षत्रं च[6] निर्दिशेत्। इति नष्टजातकम्।[7]

अर्थ—अष्टवर्गोंमें राहुपर्यन्त आठ ग्रह होते हैं और ङ ञ ण न म इन वर्णोंमें केतु ग्रह होता है। अकारादि १२ स्वर द्वादश राशि संज्ञक होते हैं। एकारादिक बारह महीनेके वर्ण कहे गये हैं, वे ही द्वादश लग्न संज्ञक होते हैं। प्रश्नमें जितने अक्षर होते हैं उतने ही लग्नके अंश समझने चाहिए।

क अक्षरसे लेकर हकार पर्यन्त—क ख ग घ च छ ज झ ट ठ ड ढ त थ द ध प फ ब भ य र ल व श ष स ह ये २८ अक्षर क्रमशः अश्विन्यादि २८ नक्षत्र संज्ञक हैं। ङ ञ ण न म इनको छोड़कर उत्तराक्षरों—क ग ङ च ज ञ ट ड ण त द न प ब म य ल श स की अश्विन्यादि संज्ञा और अधराक्षरों—ख घ छ झ ठ ढ थ ध फ भ र व ष ह की धनिष्ठादि संज्ञा होती है। यहाँ एकान्तरित रूपसे नक्षत्रोंका विचार कर अधराक्षरोंको सिद्ध करना चाहिए। उत्तराधर राशियोंमें उत्तराधर नक्षत्रोंका निरूपण करना चाहिए। इस प्रकार नष्टजातककी विधि अवगत करनी चाहिए।

विवेचन—अ आ इ ई उ ऊ ऋ ॠ ऌ ॡ ए ऐ ओ औ अं अः इन प्रश्नाक्षरोंका स्वामी सूर्य; क ख ग घ ङ इन वर्णोंका चन्द्रमा; च छ ज झ ञ इन वर्णोंका मंगल; ट ठ ड ढ ण इन वर्णोंका बुध; त थ द ध न इन वर्णोंका गुरु; प फ ब भ म

---

१ ग्रहान् क्षिपेत्–क० मू०। २ केतवे–क० मू०। ३ द्वादशमात्रासु द्वादश राशयः–क० मू०। ४ अश्विन्यादौ–क० मू०। ५ धनिष्ठादौ–क० मू०। ६ वापि तस्याधराधराणां नक्षत्रं–क० मू०। ७ तुलना–च० ज्यो० पृ० ९३। के० प्र० र० पृ० ११३-११४।

इन वर्णोंका शुक्र; य र ल व इन वर्णोंका शनि, श ष स ह इन वर्णोंका राहु और ङ ञ ण न म इन अनुनासिक वर्णोंका केतु है। अ वर्ण प्रश्नका आद्यक्षर हो तो जातककी मेषराशि, आ प्रश्नका आद्यक्षर हो तो वृषराशि, इ प्रश्नका आद्यक्षर हो तो मिथुन राशि, ई प्रश्नका आद्यक्षर हो तो कर्क राशि, उ हो तो सिंह राशि, ऊ आद्य प्रश्नाक्षर हो तो कन्या राशि, ए आद्य प्रश्नाक्षर हो तो तुला राशि, ऐ आद्य प्रश्नाक्षर हो तो वृश्चिक राशि, ओ आद्य प्रश्नाक्षर हो तो धनु राशि; औ आद्य प्रश्नाक्षर हो तो मकर राशि, अं प्रश्नाक्षरोंका आद्य वर्ण हो तो कुम्भ राशि और अः आद्य प्रश्नाक्षर हो तो मीन राशि जन्मसमयकी—जन्मराशि समझनी चाहिए। यहाँ जो वर्ण जिस राशिके लिए कहे गये हैं उनकी मात्राएँ भी लेनी चाहिए। एकारादि जो मास संज्ञक अक्षर हैं, वे ही मेषादि द्वादश लग्न संज्ञक होते हैं—अ ए क इन वर्णोंकी मेष लग्न संज्ञा, च ट इन वर्णोंकी वृष लग्न संज्ञा, त प इन वर्णोंकी मिथुन लग्न संज्ञा, य श इन वर्णोंकी कर्क लग्न संज्ञा, आ ई ख छ ठ इन वर्णों की सिंह लग्न संज्ञा, थ फ र ष इन वर्णोंकी कन्या लग्न संज्ञा, ग ज ड इन वर्णोंकी तुला लग्न संज्ञा, द व ल स इन वर्णोंकी वृश्चिक लग्न संज्ञा, ई औ घ झ ढ इन वर्णोंकी धनु लग्न संज्ञा, ध भ व ह इन वर्णोंकी मकर लग्न संज्ञा, उ ऊ ङ ञ ण इन वर्णोंकी कुम्भ लग्न-संज्ञा एवं अं अः—अनुस्वार और विसर्गकी मीन लग्न संज्ञा हैं।[1]

एक अनुभूत लग्नानयनका नियम यह है कि जो ग्रह जिन अक्षरोंका स्वामी बताया गया है, प्रश्नके उन वर्णोंमें उसी ग्रहकी राशि-लग्न होती है। इसका विवेचन इस प्रकार है कि अ आ इ ई उ ऊ ऋ ॠ लृ ॡ ए ऐ ओ औ अं अः, इन वर्णोंका स्वामी सूर्य बताया है और सूर्यकी राशि सिंह होती है, अतः उपर्युक्त प्रश्नाक्षरोंके होने-पर सिंह लग्न जातककी अवगत करनी चाहिए। इसी प्रकार क ख ग घ ङ इन वर्णोंका स्वामी मतान्तरमें मंगल बताया है अतः मेष और वृश्चिक इन दोनोंमें-से कोई लग्न समझनी चाहिए। यदि वर्गका सम अक्षर प्रश्नाक्षरोंका आद्य वर्ण हो तो सम राशि संज्ञक लग्न और विषम प्रश्नाक्षर आद्य वर्ण हो तो विषम राशि लग्न होती है। तात्पर्य यह है कि क ग ङ इन आद्य प्रश्नाक्षरोंमें मेष लग्न, छ झ इन आद्य प्रश्नाक्षरोंमें वृष लग्न, ट ड ण इन आद्य प्रश्नाक्षरोंमें मिथुन लग्न, य र ल व श ष स ह इन प्रश्नाक्षरोंमें कर्क लग्न, अ आ इ ई उ ऊ ऋ ॠ लृ ॡ ए ऐ ओ औ अं अः इन आद्य प्रश्नाक्षरोंमें सिंह लग्न, ठ ढ इन वर्णोंकी कन्या लग्न, च ज ञ इन वर्णोंकी तुला लग्न, ख घ इन वर्णोंकी वृश्चिक लग्न, त द इन वर्णोंकी धनु लग्न, फ भ इन वर्णोंकी मकर लग्न, प ब इन वर्णोंकी कुम्भ लग्न एवं थ ध इन वर्णोंकी मीन लग्न होती है[2]।

नष्टजातक बनानेकी व्यवस्थित विधि

सर्व प्रथम पृच्छकके प्रश्नाक्षरोंको लिखकर, उनके स्वर और व्यंजन पृथक् कर अंक संख्या अलग-अलग बना ले। पश्चात् स्वर संख्या और व्यंजन संख्याका परस्पर गुणा कर उस गुणनफलमें नामाक्षरोंकी संख्याको जोड़ दे। अनन्तर संवत्सर, मास, पक्ष,

१. च० ज्यो० पृ० ३४। २. च० ज्यो० पृ० ३४।

दिन, तिथि, नक्षत्र, लग्न आदिके साधनके लिए अपने-अपने ध्रुवांक और क्षेपक जोड़कर अपनी राशि संख्याका भाग देनेपर अर्थात् संवत्सरके लिए ६० का, मासके लिए १२ का, तिथिके लिए १५ का, नक्षत्रके लिए २७ का, योगके लिए २७ का, लग्नके लिए १२ का एवं ग्रहोंके आनयनके लिए ९ का भाग देना चाहिए। इस प्रकार नष्टजातकका जन्मपत्र बनाया जाता है।

स्वरवर्णांक चक्र

अ	आ	इ	ई	उ	ऊ	ऋ	ॠ	ऌ	ॡ	ए	ऐ	ओ	औ	अं	अः
१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६
क	ख	ग	घ	ङ	च	छ	ज	झ	ञ	ट	ठ	ड	ढ	ण	त
१	२	३	४	५	६	७	८	९	०	१	२	३	४	५	६
थ	द	ध	न	प	फ	ब	भ	म	य	र	ल	व	श	ष	स
७	८	९	०	१	२	३	४	५	१	२	३	४	५	६	७
ह	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०
८	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

संवत्सर, मास, तिथि आदिके ध्रुव-क्षेपांक

संवत्सर	मास	तिथि	वार	नक्षत्र	योग	लग्न	संज्ञाएँ
३२	८	१०	७	७	२०	२१	ध्रुवांक
१०८	५६	६०	५८	७३	५८	५७	क्षेपांक
०	५३	५३	१०६	१०६	१०६	१०६	वर्गांक

ग्रहोंके ध्रुव-क्षेपांक

सूर्य	चं०	भौ०	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	राहु	ग्रह
३०	१६	२१	३२	२३	२४	२५	३६	ध्रुवांक
१०३	०	३३	४०	६	५३	३	७७	क्षेपांक
५१	५३	५३	५३	५३	५३	५३	५३	वर्गांक

उदाहरण—पृच्छकसे प्रश्नवाक्य पूछा तो उसने 'कैलासपर्वत' कहा। इसका विश्लेषण किया तो—क् + ऐ + ल् + आ + स् + अ + प् + अ + र् + व् + अ + त् + अ

हुआ। इस विश्लेषणमें स्वर और व्यंजनोंकी संख्याएँ पृथक्-पृथक् ग्रहण कीं तो १ + ३ + ७ + १ + २ + ४ + ६ = २४ व्यंजन संख्या, १२ + २ + १ + १ + १ + १ = १८ स्वर संख्या, इन स्वर और व्यंजन संख्याओंका परस्पर गुणा किया तो २४ × १८ = ४३२ प्रश्नांक हुआ। इसमें नामाक्षर जोड़ते हैं—पृच्छकका नाम मनोहरलाल है—अतः नाम वर्णोंकी ६ संख्या भी प्रश्नांकोंमें जोड़ी तो ४३२ + ६ = ४३८ पिण्डांक हुआ। इसमें जन्म संवत् निकालनेके लिए संवत्सरका ध्रुवांक ३२ जोड़ा तो ४३८ + ३२ = ४७० हुआ। इसमें संवत्सरका क्षेपांक जोड़ा तो ४७० + १०८ = ५७८ पिण्ड हुआ। इसमें ६० का भाग दिया तो ५७८ ÷ ६० = ९ लब्धि और ३८ शेष अर्थात् ३८ वाँ संवत्सर क्रोधी हुआ। अतः जातकका जन्म क्रोधी संवत्सरमें समझना चाहिए। संवत्सरों की गणना प्रभवसे की जाती है।

संवत्सरबोधक सारणी

१ प्रभव	१३ प्रमाथी	२५ खर	३७ शोभन	४९ राक्षस
२ विभव	१४ विक्रम	२६ नंदन	३८ क्रोधी	५० नल
३ शुक्ल	१५ वृष	२७ विजय	३९ विश्वा वसु	५१ पिंगल
४ प्रमोद	१६ चित्र भानु	२८ जय	४० पराभव	५२ कालयुक्त
५ प्रजापति	१७ सुभानु	२९ मन्मथ	४१ प्लवंग	५३ सिद्धार्थी
६ अंगिरा	१८ तारण	३० दुर्मुख	४२ कीलक	५४ रौद्र
७ श्रीमुख	१९ पार्थिव	३१ हेम लंब	४३ सौम्य	५५ दुर्मति
८ भरण	२० व्यय	३२ विलंबी	४४ साधारण	५६ दुंदुभि
९ युवा	२१ सर्वजित्	३३ विकारी	४५ विरोधकृत्	५७ रुधिरोद्गारी
१० धाता	२२ सर्वधारी	३४ शार्वरी	४६ परिधावी	५८ रक्ताक्षी
११ ईश्वर	२३ विरोधी	३५ प्लव	४७ प्रमादी	५९ क्रोधन
१२ वहु धान्य	२४ विकृति	३६ शुभकृत्	४८ आनंद	६० क्षय

पिण्डांक ४३८ में मासानयनके लिए उसका ध्रुवांक, क्षेपांक और वर्गांक जोड़ा तो ४३८ + ८ + ५६ + ५३ = ५५५ मास पिण्ड हुआ, इसमें १२ का भाग दिया तो ५५५ ÷ १२ = ४६ लब्धि, ३ शेष रहा है। मासोंकी गणना मार्गशीर्षसे ली जाती है अतः गणना करनेपर तीसरा मास माघ हुआ। इसलिए जातकका जन्म माघ मासमें हुआ कहना चाहिए।

पक्ष विचारके लिए यदि प्रश्नाक्षरोंमें समसंख्यक मात्राएँ हों तो शुक्लपक्ष और विषमसंख्यक मात्राएँ हों तो कृष्ण पक्ष समझना चाहिए। प्रस्तुत उदाहरणमें ६ मात्राएँ हैं, अतः समसंख्यक मात्राएँ होनेके कारण शुक्लपक्षका जन्म माना जायगा।

तिथ्यानयनके लिए पिण्डांक ४३८ में तिथिके ध्रुवांक, क्षेपांक और वर्गांक जोड़े तो ४३८ + १० + ६० + ५३ = ५६१ पिण्ड हुआ, इसमें १५ का भाग दिया तो ५६१ ÷ १५ = ३७ लब्धि, ६ शेष, यहाँ प्रतिपदासे गणना की तो षष्ठी तिथि आयी।

नक्षत्रानयनके पिण्डांकमें नक्षत्रके ध्रुवांक, क्षेपांक, वर्गांक जोड़े तो ४३८ + ७ + ७३ + १०६ = ६२४ पिण्ड, ६२४ ÷ २७ = २३ लब्धि, ३ शेष, कृत्तिकादिसे नक्षत्र गणना की तो ३री संख्या मृगशिर नक्षत्रकी आयी, अतः मृगशिर जन्मनक्षत्र हुआ।

नक्षत्रनामावली

१ कृत्तिका	८ मघा	१५ अनुराधा	२२ शतभिषा
२ रोहिणी	९ पूर्वाफाल्गुनी	१६ ज्येष्ठा	२३ पूर्वभाद्रपद
३ मृगशिरा	१० उत्तराफाल्गुनी	१७ मूल	२४ उत्तराभाद्रपद
४ आर्द्रा	११ हस्त	१८ पूर्वाषाढ़ा	२५ रेवती
५ पुनर्वसु	१२ चित्रा	१९ उत्तराषाढ़ा	२६ अश्विनी
६ पुष्य	१३ स्वाति	२० श्रवण	२७ भरणी
७ आश्लेषा	१४ विशाखा	२१ धनिष्ठा	

वारानयनके लिए—४३८ पिण्डमें + ७ ध्रुवांक + ५८ क्षेपांक + १०६ वर्गांक = ४३८ + ७ + ५८ + १०६ = ६०९ ÷ २७ = २२ लब्धि, ५ शेष, ५वाँ वार गुरु-वार हुआ।

योगनामावली

१ विष्कम्भ	८ धृति	१५ वज्र	२२ साध्य
२ प्रीति	९ शूल	१६ सिद्धि	२३ शुभ
३ आयुष्मान्	१० गण्ड	१७ व्यतीपात	२४ शुक्ल
४ सौभाग्य	११ वृद्धि	१८ वरीयान्	२५ ब्रह्म
५ शोभन	१२ ध्रुव	१९ परिघ	२६ ऐन्द्र
६ अतिगण्ड	१३ व्याघात	२० शिव	२७ वैधृति
७ सुकर्मा	१४ हर्षण	२१ सिद्ध	

योगानयन—४३८ + २० + ५८ + १०६ = ६२२ ÷ २७ = २३ लब्धि, १ शेष पहला योग विष्कम्भ हुआ।

लग्नानयनके लिए प्रक्रिया

४३८ पिण्डांक + २१ ध्रुवांक + ५७ क्षेपांक + १०६ वर्गांक = ४३८ + २१ + ५७ + १०६ = ६२२ ÷ १२ = ५१ लब्धि, शेष १०, मेषादि गणना की तो १०वीं लग्न मकर हुई, यहाँ कुल स्वर-व्यंजन संख्या प्रश्नाक्षरोंकी १३ है, अतः मकर लग्नके १३ अंश लग्न राशिके माने जायेंगे।

ग्रहानयन

सूर्यानयन—४३८ पिण्डांक + ३० सूर्य ध्रुवांक + १०३ सूर्य क्षेपांक + ५१ वर्गांक + ४३८ + ३० + १०३ + ५१ = ६२२ ÷ १२ = ५२ लब्धि, १० शेष, अतः मकर राशिका सूर्य है। यहाँ इतना और स्मरण रखना होगा कि मास संख्या और सूर्य राशिकी समताके लिए माससंख्यामें एक जोड़ना या घटाना होता है।

चन्द्रानयन—४३८ + १६ + ० + ५३ = ५०७ ÷ १२ = ४२ लब्धि, ३ शेष, मेषसे गणना करनेपर तीसरी संख्या मिथुनकी हुई अतः मिथुन राशिका चन्द्रमा है।

मंगलानयन—४३८ + २१ + ३३ + ५३ = ५४५ ÷ १२ = ४५ लब्धि, ५ शेष, यहाँ पाँचवीं संख्या सिंह राशिकी हुई।

बुधानयन—४३८ + ३० + ४० + ५३ = ५६१ ÷ १२ = ४६ लब्धि, ९ शेष। यहाँ ९वीं संख्या धनु राशिकी हुई।

गुरु-आनयन—४३८ + २३ + ६ + ५३ = ५२० ÷ १२ = ४३ लब्धि, ४ शेष, चौथी संख्या कर्क राशिकी है अतः गुरु कर्क राशिका हुआ।

शुक्रानयन—४३८ + ३० + ५३ + ५३ = ५७४ ÷ १२ = ४७ लब्धि, १० शेष, दसवीं संख्या मकर राशिकी है अतः शुक्र मकर राशिका हुआ।

शन्यानयन—४३८ + २५ + ३ + ५३ = ५१९ ÷ १२ = ४३ लब्धि, ३ शेष, तीसरी राशि मिथुन है अतः शनि मिथुनका है।

राहु-आनयन—४३८ + ३६ + ७७ + ५३ = ६०४ ÷ १२ = ५० लब्धि, ४ शेष चौथी राशि कर्क है अतः राहु कर्कका हुआ। राहुकी राशिमें ६ राशि जोड़नेसे केतुकी राशि आती है अतः यहाँ केतु मकर राशिका है।

नष्ट जन्मपत्रिका स्वरूप

जन्म संवत् क्रोधी, शुभ मास माघ मास, शुक्लपक्ष षष्ठी तिथि, गुरुवारको विष्कुम्भ योगमें जन्म हुआ है। जातकका जन्मलग्न ९। १३ है, जन्मकुण्डली निम्न प्रकार है—

जन्मकुण्डली चक्र

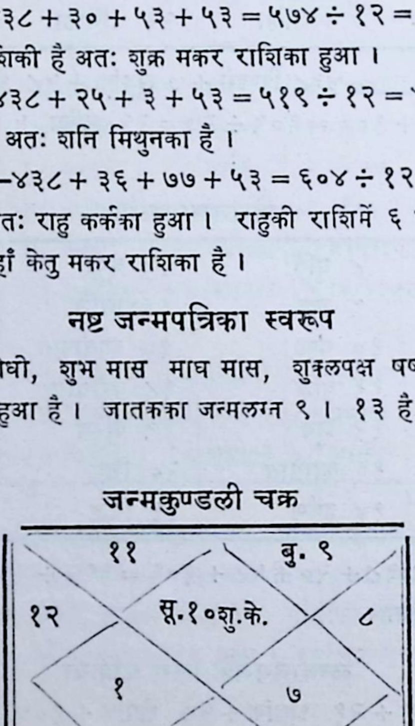

विशेष—नष्ट विधिसे बनायी गयी जन्मकुण्डलीका फल जातक ग्रन्थोंके आधारसे कहना चाहिए। तथा पहले जो मास, पक्ष, दिन और इष्टकालका आनयन किया है उस इष्टकालपर-से गणित-द्वारा लग्नका साधन कर उसी समयके ग्रह लाकर गणितसे नष्ट जन्मपत्री बनायी जा सकती है। इस इष्टकालकी विधिपर-से जन्मकुण्डलीके समस्त गणित-को कर लेना चाहिए।

गमनागमनप्रश्नविचार

अथ गमनागमनमाह—आ ई ऐ औ दीर्घस्वरसंयुक्तानि प्रश्नाक्षराणि भवन्ति, तदा गमनं भवत्येव। उत्तराक्षरेषु उत्तरस्वरसंयुक्तेषु अ इ ए ओ एव-मादिष्वागमनमादिशेत्। उत्तराक्षरेषु नास्ति गमनम्। यत्र प्रश्ने द्विपादाक्षराणि भवन्ति ड ग क ख अन्तर्दीर्घस्वरसंयोगे[1] अनभिहतश्च[2] गमनहेत्वर्थः। इति गमनागमनम्[3]।

अर्थ—गमनागमन प्रश्नको कहते हैं—आ ई ऐ औ इन दीर्घ स्वरोंसे युक्त प्रश्नाक्षर हों तो पृच्छकका गमन होता है। यदि उत्तराक्षरों—क ग ङ च ज ञ ट ड ण त द न प ब म य ल श स में उत्तर स्वर अ इ ए ओ संयुक्त हों तो पृच्छक जिस परदेशीके सम्बन्धमें प्रश्न करता है, वह अवश्य आता है। यदि पृच्छकके प्रश्नाक्षर उत्तर संज्ञक हों तो गमन नहीं होता है। जहाँ प्रश्नमें द्विपादसंज्ञक अ ए क च ट त प य श वर्ण, ड ग क ख तथा य र ल व ये वर्ण दीर्घ मात्राओं से युक्त हों एवं अनभिहत संज्ञक वर्ण प्रश्नाक्षर हों वहाँ गमन करनेमें कारण होते हैं अर्थात् उपर्युक्त प्रश्नाक्षरोंके होनेपर गमन होता है। इस प्रकार गमनागमन प्रकरण समाप्त हुआ।

विवेचन—इस प्रकरणमें आचार्यने पथिकके आगमन एवं गमनके प्रश्नका विचार किया है। यदि प्रश्नाक्षरोंका आद्य वर्ण दीर्घ मात्रासे युक्त हो तो पृच्छकका गमन कहना चाहिए। क ग च ज ट ड त द न प ब म य ल श स इन वर्णोंमें-से ह्रस्व मात्रा युक्त कोई वर्ण आद्य प्रश्नाक्षर हो तो पथिकका आगमन बतलाना चाहिए। यदि प्रश्नाक्षरोंमें आद्य प्रश्नाक्षर द्विपाद संज्ञक हो और द्वितीय प्रश्नाक्षर चतुष्पाद संज्ञक हो तो सवारी द्वारा गमन कहना चाहिए। यदि आद्य प्रश्नाक्षर द्विपाद संज्ञक और द्वितीय प्रश्नाक्षर अपाद संज्ञक हो तो बिना सवारीके पैदल गमन बतलाना चाहिए। यदि प्रश्नाक्षरोंमें आद्य वर्ण अधर मात्रा वाला हो तो शीघ्र गमन और उत्तर मात्रा वाला हो तो गमनाभाव कहना चाहिए।

पथिकागमनके प्रश्नमें जितने व्यंजन हों उनकी संख्याको द्विगुणित कर मात्रा संख्याकी त्रिगुणित राशिमें जोड़ दे और जो योगफल हो उसमें दो का भाग दे, एक शेष

---

१. अन्तःदीर्घस्वरसंयोगः–क० मू०। २. अभिहत–क० मू०। ३. के० प्र० र० पृ० ६१। बृहज्ज्योतिषार्णव, अ० ५।

रहे तो शीघ्र आगमन और शून्य शेषमें विलम्बसे आगमन कहना चाहिए ।

प्रश्नशास्त्रके ग्रन्थान्तरोंमें कहा गया है कि यदि प्रश्नलग्नसे चौथे या दसवें स्थानमें शुभ ग्रह हों तो गमनाभाव और पाप ग्रह हों तो अवश्य गमन होता है ।

आगमनके प्रश्नमें यदि प्रश्नकालकी कुण्डलीमें २।५।८।११ स्थानोंमें ग्रह हों तो विदेश गये हुए पुरुषका शीघ्र आगमन होता है । २।५।११ इन स्थानोंमें चन्द्रमा स्थित हो तो सुखपूर्वक पथिकका आगमन होता है । प्रश्नकुण्डलीके आठवें भागमें स्थित चन्द्रमा पथिकके रोगी होनेकी सूचना देता है । यदि प्रश्नलग्नसे सप्तम भावमें चन्द्रमा हो तो पथिकको मार्गमें आता हुआ कहना चाहिए । प्रश्नकालमें चर राशियों-मेष, कर्क, तुला और मकरमें-से कोई राशि लग्न हो और चन्द्रमा चतुर्थमें बैठा हो तो विदेशी किसी निश्चित स्थानपर स्थित है, ऐसा फल समझना चाहिए ।

यदि लग्नका स्वामी लग्न स्थानमें स्थित हो या दसवें स्थानमें स्थित हो अथवा ४।७ इन भावोंमें स्थित हो और लग्न स्थानके ऊपर उसकी दृष्टि हो तो प्रवासी सुखपूर्वक परदेशमें रहता हुआ वापस आता है । यदि लग्नेश ९।३।८।२ इन स्थानोंमें हो तो परदेशी रास्तेमें आता हुआ समझना चाहिए । लग्न चर हो, चन्द्रमा चर राशिपर और सौम्य ग्रह—चन्द्र, बुध, गुरु, शुक्र १।३।४।५।६।१० में स्थित हों और भौम वक्र गति वाला हो तो परदेशी थोड़े ही समयमें लौट आता है । २।३।५।६।७ इन स्थानोंमें रहने वाले ग्रह वक्र गति हों, गुरु १।४।७।१० स्थानोंमें हो और शुक्र, नवम, पंचम स्थानमें हो तो विदेशी शीघ्र आता है । शुक्र और गुरु लग्नमें हों तो आनेवालेकी चोरी होती है । बृहस्पति अपनी उच्च राशिपर हो अथवा दसवें स्थानमें हो तो परदेश में गये व्यक्तिको अधिक धन लाभ कहना चाहिए । यदि शुक्र, बुध, चन्द्रमा दसवें स्थानमें स्थित हों तो परदेशी सुख पूर्वक धन, यश और सम्मानको प्राप्त कर कुछ दिनोंमें लौटता है । यदि सप्तम स्थानका स्वामी प्रश्नकुण्डलीमें लग्नमें हो और लग्नेश सप्तम स्थानमें स्थित हो तो प्रवासी जल्दी वापस आता है ।[1]

यदि प्रश्नकालमें स्थिर लग्न हो और चन्द्रमा स्थिर राशिमें स्थित हो तथा मन्दगति वाले ग्रह केन्द्र—१।४।७।१० स्थानोंमें स्थित हों, लग्न और लग्नेश दृष्टिहीन हों तो इस प्रकारकी प्रश्न स्थितिमें परदेशीका आगमन नहीं होता है । मंगल दसवें स्थानमें स्थित हो तथा वक्रगति वाले ग्रहोंके साथ इत्थशाल[2] करता हो और चन्द्रमा सौम्य ग्रहोंसे अदृष्ट हो तो प्रवासी जीवित नहीं लौटता । तथा सौम्यग्रह—चन्द्रमा, बुध, गुरु, शुक्र ६।८।१२ इन भावोंमें स्थित हों और निर्बल पापग्रहोंसे दृष्ट हों और चन्द्रमा एवं सूर्य पाप ग्रहोंसे दृष्ट हों तो दूर स्थित प्रवासीकी मृत्यु कहनी चाहिए । यदि पृष्ठोदय मेष, वृष, कर्क, धनु और मकर राशियाँ पाप ग्रहसे युक्त हों एवं १।४।५।६।७।८।९।१० इन स्थानोंमें पाप ग्रह हों तथा शुभ ग्रहोंकी दृष्टि इन स्थानोंपर न हो तो प्रवासीकी

---

१. प्र० वै० पृ० ७०-७१ । २. शीघ्र गति वाला ग्रह पीछे और मन्दगति वाला ग्रह आगे हो तो इत्थशाल होता है ।

मृत्यु कहनी चाहिए। सूर्य प्रश्नकुण्डलीके नौवें भावमें स्थित हो तो प्रवासीको रोग पीड़ा; बुध इसी स्थानमें हो तथा शुभग्रहोंकी दृष्टि हो तो सम्मानप्राप्ति; मंगल इसी भावमें शुभ ग्रहोंसे अदृष्ट हो तो संकट; गुरु इसी भावमें लग्नेश या दशमेश होकर बैठा हो तो अर्थप्राप्ति और शनि इसी भावमें अष्टमेश होकर स्थित हो तो नाना प्रकारके कष्ट प्रवासी-को कहने चाहिए। यदि प्रश्नकालमें कर्क, वृश्चिक, कुम्भ और मीन लग्न हों, लग्नेश पापग्रहोंके साथ हो और चन्द्रमा चर राशिमें स्थित हो तो विदेशी आनेका विचार करने-पर भी नहीं आ सकता है, हाँ वह सुखपूर्वक कुछ समयतक वहाँ रह जानेके बाद आता है। लग्न द्विस्वभाव हो और चन्द्रमा चर राशिमें हो तो शत्रु आते हुए प्रवासीको बीचमें रोक कर कष्ट देता है। लग्न स्थानसे जितने स्थानमें बली ग्रह स्थित हों उतने ही मासमें प्रवासी लौट आता है। यदि बलवान् ग्रह चर राशिमें स्थित हों तो एक महीनेमें, स्थिर राशिमें हों तो तीन महीनेमें और द्विस्वभाव राशिमें स्थित हों तो दो महीनेमें प्रवासी वापस आता है। लग्नसे चन्द्रमा जितनो दूरपर हो उतने ही दिनोंमें लौटनेका दिन कहना चाहिए।

लाभालाभप्रश्नविचार

अथ लाभालाभमाह—प्रश्ने सङ्कटविकटमात्रासंयुक्तोत्तराक्षरेषु बहुलाभः। विकटमात्रासंयुक्तोत्तराक्षरेष्वल्पलाभः। सङ्कटमात्रासंयुक्तोत्तराक्षरे-ष्वल्पलाभः, कष्टसाध्यश्च। जीवाक्षरेषु जीवलाभो धातुलाभश्च। मूलाक्षरेषु मूललाभः। इति पूर्वं कथयित्वा पुनः संख्यां विनिर्दिशेत्।

अर्थ—अथ लाभालाभका विचार करते हैं। प्रश्नमें संकटविकट मात्राओंसे युक्त संयुक्त उत्तराक्षर हों तो बहुत लाभ होता है। विकट मात्रा—आ ई ऐ औ मात्राओंसे संयुक्त उत्तराक्षर—क ग ङ च ज ञ ट ड ण त द न प ब म य ल श स हों तो इस प्रकारके प्रश्नमें पृच्छकको अल्प लाभ होता है। संकट—अ इ ए ओ मात्राओंसे संयुक्त

१. "सारिउ सद्दिवाअर सराइ वग्गाण पंचमा वण्णा। डड्ढा वियड संकड अहराहर असुह णामाइ॥ उ ऊ अं अः एते पंचमषष्ठिका एकादशमद्वादशमाश्चत्वारः स्वराः तथा ङ ञ ण न मा इति वर्गाणां पञ्चमा वर्णाः दग्धाः विकटसंकटा अधरा अशुभनामकाश्च भवन्ति॥" —अ० चू० सा० गा० ४। २. "कुचुजुगवसुदिससरआ वीय चउत्थाइं वग्गवण्णाइं। अहिधूमिआइं मज्झा ते उण अहराइं वियडाइ॥ आ ई ऐ औ द्वितीयचतुर्थाष्टमदशमाश्च-त्वारः स्वराः तथा खछठथफरषाः घझढधभवहाः, ऐते द्वितीयचतुर्थवर्गाणां चतुर्दशवर्णाः अभिधूमिताः मध्यास्तथा उत्तराधरा विकटाश्च भवन्तीति॥"—अ० चू० सा० गा० ३। ३। "पढमं तईयसत्तम रधसर पढम तईयवग्गवण्णाइं। आलिंगियाहिं सुहया उत्तरसंकडअ णामाईं॥ आ इ ए ओ एते प्रथमसप्तमनवमाश्चत्वारः तथा क च ट त प य शा ग ज ड द ब ल सा एते प्रथमतृतीयचतुर्दशवर्णाश्च आलिंगिताः, सुभगाः, उत्तराः संकटनामकाश्च भवन्तीति"—अ० चू० सा० गा० २।

उत्तराक्षर प्रश्नके हों तो अल्प लाभ और कष्टसे उसकी प्राप्ति होती है। जीवाक्षर प्रश्नाक्षर—अ आ इ ए ओ अः क ख ग घ च छ ज झ ट ठ ड ढ य श ह हो तो जीव-लाभ और धातुलाभ होता है। मूलाक्षर--ई ऐ औ ङ ञ ण न म ल र ष प्रश्नाक्षर हों तो मूल लाभ होता है। इस प्रकार पहले जीव, मूल और धातुका लाभ कह कर लाभकी संख्या निश्चित करनी चाहिए। संख्या लानेकी प्रक्रिया समयावधिकी विधिके अनुसार ज्ञात करनी चाहिए। तात्पर्य यह है कि उ ऊ अं अः इन मात्राओंसे संयुक्त क ग च ज ट ड त द न प ब म य ल श वर्णोंमें-से कोई भी वर्ण आद्य प्रश्नाक्षर हो तो पृच्छकको अत्यधिक लाभ होता है, आ ई ऐ औ इन मात्राओंसे संयुक्त पूर्वोक्त अक्षरोंमें-से कोई अक्षर आद्य प्रश्नाक्षर हो तो अल्पलाभ एवं अ इ ए ओ इन मात्राओंसे संयुक्त पूर्व वर्णोंमें-से कोई वर्ण आद्य प्रश्नाक्षर हो तो पृच्छकको कष्टसे अल्पलाभ होता है।

विवेचन—लाभालाभके प्रश्नका विचार ज्योतिषशास्त्रमें दो प्रकारसे किया है—प्रथम प्रश्नाक्षरपर-से और द्वितीय प्रश्नलग्नसे। प्रश्नाक्षरवाले सिद्धान्तके सम्बन्धमें 'समयावधि' के प्रकरणोंमें काफी लिखा जा चुका है। यहाँपर प्रश्नलग्नवाले सिद्धान्तका ही प्रतिपादन किया जाता है—

भुवनदीपक[1] नामक ग्रन्थमें आचार्य पद्मप्रभसूरिने लाभालाभका रहस्य बतलाते हुए लिखा है कि प्रथमलग्नका स्वामी लेनेवाला और ग्यारहवें स्थानका स्वामी देनेवाला होता है, जब प्रश्नकुण्डलीमें लग्नेश और एकादशेश दोनों ग्रह एक साथ हों तथा चन्द्रमा ग्यारहवें स्थानको देखता हो तो लाभका पूर्ण योग समझना चाहिए। उपर्युक्त दोनों स्थान—लग्न और एकादश तथा उक्त दोनों स्थानोंके स्वामी—लग्नेश और एकादशेश इन चारोंकी विभिन्न परिस्थितियोंसे लाभालाभका निरूपण करना चाहिए।

लग्नेश, चन्द्रमा और द्वितीयेश ये तीनों एक साथ १।२।५।९ इन स्थानोंमें प्रश्नकुण्डलीमें हों तो शीघ्र सहस्रों रुपयोंका लाभ पृच्छकको होता है। चन्द्रमा, बुध, गुरु और शुक्र पूर्ण बली हों २।११।९।५।१।४।७ १० इन स्थानोंमें स्थित हों या अपनी उच्च राशिको प्राप्त हों और पापग्रहरहित हों तो पृच्छकको शीघ्र ही बहुत लाभ होता है। शुक्र अपनी उच्च राशिपर स्थित हुआ लग्नमें बैठा हो या चौथे अथवा पाँचवें भावमें बैठा हो और शुभ ग्रहोंसे दृष्ट या युत हो तो गाँव, नगर, मकान और पृथ्वी आदि-का लाभ होता है। यदि लग्नका स्वामी अपनी उच्च राशिपर हो या लग्न स्थानमें हो और कर्म-दसवें स्थानका स्वामी लग्नको देखता हो तो पृच्छकको राजासे[2] धन लाभ होता है। यदि कर्म-दसवें भावका स्वामी पाप ग्रहोंके द्वारा देखा जाय तो स्वल्पलाभ राजासे होता है। चन्द्रमा, लग्नेश और द्वितीयेश इन तीनोंका कंबूल[3] योग हो तो प्रचुर

---

१. भू० दी० श्लो० ८०–८१। २. प्र० वै० पृ० १३–१४। २. लग्नेश और कार्येश इन दोनोंका इत्थशाल हो तथा इन दोनोंमें-से किसी एकके साथ चन्द्रमा इत्थशाल करता हो तो कम्बूल योग होता है–ता० नी० पृ० ७६।

धनका लाभ होता है। धन स्थान—द्वितीय भावका स्वामी अपने घर या उच्च राशिमें बैठा हो तो प्रचुर द्रव्यका लाभ होता है। धनेश शत्रुराशि या नीच राशिमें स्थित हो तो लाभाभाव समझना चाहिए। यदि प्रश्नकुण्डलीमें लग्नका स्वामी लग्नमें, धनका स्वामी धन स्थानमें और लाभेश लाभ स्थानमें हो तो रत्न, सोना, चाँदी और आभूषणोंका लाभ होता है। लग्नेश अपनी उच्च राशिका हो या लग्न स्थानमें स्थित हो तथा लाभेश भी लग्न स्थानमें हो अथवा लग्नेश और लाभेश दोनों लाभ स्थानमें हों तो पृच्छकको द्रव्यका लाभ करानेवाला योग होता है। लग्नेश और धनेश लग्न स्थानमें हों, वृहस्पति-को चन्द्रमा देखता हो तथा वृहस्पति बली हो तो पूछनेवाले व्यक्तिको अधिक लाभ करनेवाला योग समझना चाहिए। धनेश और वृहस्पति ये दोनों शुक्र और बुधसे युक्त हों तो अधिक धन मिलता है।

गुरु, बुध और शुक्र ये तीनों प्रश्नकुण्डलीमें नीचके हों तथा पाप ग्रहोंसे युत या दृष्ट हों तथा १।२।५।९। १० इन स्थानोंको छोड़कर अन्य स्थानोंमें ये ग्रह स्थित हों तो धनका नाश होता है। इस प्रकारके प्रश्नवाला व्यक्ति व्यापारमें अपरिमित धनका नाश करता है। यदि लग्नेश शत्रुराशिमें हो या नीचस्थ हो तथा धनेश नीचस्थ होकर छठवें स्थानमें स्थित हो तो धनक्षति होती है।

शुभाशुभप्रश्नविचार

अथ शुभाशुभमाह—अभिधूमितमात्रायां संयुक्ताक्षरे दीर्घायुः। प्रश्नेऽ-[1]भिघातितेषु दीर्घमरणमादिशेत्। सङ्कटमात्रासंयुक्ताधराक्षरेषु रोगो भवति। दीर्घस्वरसंयुक्तोत्तराक्षरेषु दीर्घरोगो भवति। अधोमात्रासंयुक्तोत्तराक्षरेषु देवता-क्रान्तस्य मृत्युर्भवति। अधरोत्तरेषु धात्वक्षरेषु अभिधूमितस्वरसंयुक्तेषु स्त्रीभ्यो [2]मृत्युर्भवति। [3]एते स्वरसंयुक्तेषु[4]....।

अर्थ—शुभाशुभ प्रकरणको कहते हैं। प्रश्नाक्षरोंमें आद्य प्रश्न वर्ण अभिधूमित मात्रासे संयुक्त व्यंजन हो तो दीर्घायु होती है। प्रश्नमें आद्य प्रश्नाक्षर अभिघातित वर्ण हो तो कुछ समयके बाद मृत्यु; संकट मात्राओं—अ इ ए ओ से युक्त अधराक्षरों—ख छ घ झ ठ ढ थ ध फ भ र व ष ह में से कोई वर्ण आद्य प्रश्नाक्षर हो तो पृच्छकको रोग होता है। आ ई ऐ औ इन मात्राओंसे युक्त उत्तराक्षरों—क ग ङ च ज ञ ट ड ण त द न प ब म य ल श स में-से कोई वर्ण आद्य प्रश्नाक्षर हो तो लम्बी बीमारी—बहुत समय तक कष्ट देनेवाला रोग होता है। अधोमात्राओं—आ ई ऐ औ से संयुक्त उत्तरा-क्षर—क ग ङ च ज ञ ट ड ण त द न प ब म य ल श स में से कोई वर्ण आद्य

---

१. प्रश्ने दशाभिघातितेषु–क० मू०। २. स्त्रीभ्यो मृत्युर्भवति–तपत इत्यर्थः।–क० मू०। ३. एते ह्रस्वस्वरसंयुक्तेषु...। इत्त मुन्दे अल्प इल्ल...क० मू०। ४.बृहज्ज्योतिषार्णवस्य चन्द्रोन्मीलन-प्रकरणं तथा चन्द्रोन्मीलनप्रश्नस्य द्वादशतमं प्रकरणं च द्रष्टव्यम्।

प्रश्नाक्षर हो तो देवके द्वारा पीड़ित होने—भूत, प्रेत द्वारा आविष्ट होनेसे मृत्यु होती है। अधरोत्तर धात्वक्षरोंमें—त थ द ध प फ ब भ व स इन वर्णोंमें अभिधूमित—आ ई ऐ औ स्वरोंके संयुक्त होनेपर स्त्रियोंसे मृत्यु होती है। ह्रस्व स्वर संयुक्त दग्ध प्रश्नाक्षर हों तो शत्रुओंके द्वारा या शस्त्रघातसे मरण होता है।

विवेचन—आचार्यने इस शुभाशुभ प्रकरणमें पृच्छककी आयुका विचार किया है। प्रश्नाक्षरवाले सिद्धान्तके अनुसार प्रश्नश्रेणीमें आद्य वर्ण आलिंगित मात्रा हो तो रोगीका रोग यत्नसाध्य, अभिधूमित मात्रा हो तो कष्टसाध्य एवं दग्ध मात्रा हो तो मृत्यु फल कहना चाहिए। पृच्छकके प्रश्नाक्षरोंमें आद्य वर्ण आ ई ऐ औ इन मात्राओंसे संयुक्त संयुक्ताक्षर हो तो पृच्छककी दीर्घायु कहनी चाहिए। यदि आद्य प्रश्नवर्ण क्या, च्या, छ्या, ज्या, झ्या, ट्या, ठ्या, ड्या, ढ्या, त्या, थ्या, द्या, ध्या, न्या, प्या, फ्या, ब्या, भ्या, म्या, न्या, ल्या, व्या, श्या, ष्या, स्या, और ह्या, इनमें-से कोई हो तो दीर्घायु, च्वि, क्वि, ख्वि, ग्वि, घ्वि, छ्वि, ज्वि, झ्वि, ट्वि, ठ्वि, ड्वि, ढ्वि, त्वि, थ्वि, द्वि, ध्वि, न्वि, प्वि, फ्वि, ब्वि, भ्वि, म्वि, य्वि, न्वि, ल्वि, व्वि, श्वि, ष्वि, स्वि और ह्वि इन वर्णोंमें-से कोई भी वर्ण हो तो प्रश्नकालके बाद ५९, ४९ या ६९ वर्ष आयु कहनी चाहिए। यदि किसीका प्रश्न ऐसा हो कि मेरी कुल आयु कितनी है तो प्रश्नाक्षरोंकी व्यंजन संख्या और स्वर संख्याको परस्पर गुणाकर २ का भाग देनेपर आयुके वर्ष आते हैं।

रोगी व्यक्तिकी रोगावधि पूर्वोक्त समय अवधिके नियमोंसे भी निकाली जा सकती है। तथा निम्न गणित नियमोंसे भी प्रश्नाक्षरोंपर-से रोग—आरोग्यका निश्चय किया जा सकता है।

१—प्रश्नश्रेणीकी वर्ण और मात्रा संख्याको जोड़कर, जो योगफल आवे उसमें एक और जोड़ना चाहिए, इस योगको दोसे गुणाकर तीनका भाग दे, एकादि शेषमें क्रमशः रोगनिवृत्ति, व्याधिवृद्धि और मरण—एक शेषमें रोगनिवृत्ति, दो शेषमें व्याधि-वृद्धि और तीन शेपमें मरण कहना चाहिए। जैसे रामदासकी प्रश्नवर्णसंख्या ८ है—अतः ८ + १ = ९ × २ = १८ ÷ ३ = ६ लब्धि, शेष ०। अतः मरण फल ज्ञात करना चाहिए।

२—प्रश्नश्रेणीकी अभिधूमित और आलिंगित मात्राओंकी संख्याका परस्पर गुणाकर, इस गुणनफलमें दग्ध मात्राओंकी संख्या जोड़ देनी चाहिए। फिर योगफलको तीनसे गुणा कर चारसे विभाजित करना चाहिए। एक शेषमें रोगनिवृत्ति, दो शेषमें रोगवृद्धि, तीन शेपमें मृत्यु और शून्य शेषमें कुछ दिनों तक कष्ट पानेके पश्चात् रोग दूर होता है।

३—पूर्वोक्त समयावधि सूचक अंक संख्याके अनुसार स्वर और व्यंजनोंकी संख्या पृथक्-पृथक् लाकर दोनोंको जोड़ देना चाहिए। इस योगफलमें पृच्छकके नामाक्षरोंको तिगुना कर जोड़ दे, पश्चात् आगत योगफलमें पाँचका भाग दे। एक शेषमें

विलम्बसे रोगनिवृत्ति, दो शेषमें जल्दी रोगनिवृत्ति, तीन शेषमें मृत्यु तुल्य कष्ट, चार शेषमें मृत्यु या तत्तुल्य कष्ट और शून्य शेषमें मृत्यु फल होता है।

प्रश्नकुण्डलीवाले सिद्धान्तके अनुसार प्रश्नलग्नमें[1] पाप ग्रहों=सूर्य, मंगल, शनि और क्षीण चन्द्रमाकी राशि हो और अष्टम भाव पाप ग्रहसे युक्त या दृष्ट हो तथा दो पाप ग्रहोंके मध्यवर्ती या पाप ग्रहोंसे युक्त चन्द्रमा अष्टम भावमें हो तो रोगीका शीघ्र मरण होता है। यदि प्रश्नकुण्डलीमें सभी पापग्रह लग्नसे १२वें स्थानमें हों और चन्द्रमा अष्टम स्थानमें हो अथवा पापग्रह सप्तम भावमें हों और चन्द्रमा लग्नमें हो या पापग्रह अष्टम भावमें हों और चन्द्रमा छठवें स्थानमें हो तो रोगीका शीघ्र मरण होता है। चन्द्रमा लग्नमें हो और सूर्य सप्तममें हो तो रोगीका मरण शीघ्र होता है। चन्द्रयुक्त मंगल मेष या वृश्चिक राशिके २३ अंश से लेकर २७ अंश तक स्थित हो तो रोगीका निश्चय मरण होता है। यदि प्रश्न-लग्नसे सप्तम भाव शुभग्रह युक्त हो तो रोगीको शुभ और पापग्रह युक्त हो तो रोगीको अशुभ होता है। यदि सप्तम भावमें शुभ और अशुभ दोनों ही प्रकारके ग्रह मिश्रित हों तो कुछ समय तक बीमारीका कष्ट होनेके बाद रोगी अच्छा हो जाता है। प्रश्नकुण्डलीके अष्टम भावमें यदि सूर्य या मंगल हो तो रोगीको रक्त और पित्त जनित रोग होता है। यदि अष्टममें बुध हो तो सन्निपात रोग होता है। यदि राहु युक्त रवि षष्ठ भावमें हो तो कुष्ठ और राहु युक्त रवि अष्टम भावमें हो तो महा कष्ट होता है।

यदि लग्नेश निर्बल हो, अष्टमेश बलवान् हो, और चन्द्रमा छठवें या आठवें स्थानमें हो तो रोगीकी मृत्यु होती है। लग्नेश यदि उदित हो और अष्टमेश दुर्बल हो एवं एकादशेश बलवान् हो तो रोगी चिरंजीवी होता है। यदि प्रश्नकुण्डलीके अष्टम स्थानमें राहु हो तो भूत, पिशाच, जादू-टोना, नजर आदिसे रोग उत्पन्न होता है। शनि लग्न या अष्टम स्थानमें हो तो केवल भूत; पिशाचसे रोग उत्पन्न होता है।

प्रश्नलग्नमें क्रूरग्रह हों तो आयुर्वेदके इलाजसे रोग दूर नहीं होता है, बल्कि जैसे-जैसे उपचार किया जाता है, वैसे-वैसे रोग बढ़ता है। यदि प्रश्नलग्नमें बलवान् शुभ ग्रह हों तो इलाजसे रोग जल्द दूर होता है। प्रश्नकुण्डलीके सातवें भावमें पाप ग्रह हों तो वैद्यकके इलाजसे हानि और शुभ ग्रह हों तो डाक्टरी इलाजसे लाभ समझना चाहिए। प्रश्नलग्नसे दसवें भावमें शुभ ग्रह हों तो इलाज, पथ्य आदि उपचारोंसे रोगनिवृत्ति एवं अशुभ ग्रह हों तो उपचार आदिसे रोगवृद्धि अवगत करनी चाहिए। शुभ ग्रहके साथ अथवा लग्नस्वामीके साथ चन्द्रमा इत्थशाल[2] योग करता हो और शुभ ग्रहोंसे युक्त होकर केन्द्रमें स्थित हो तो रोगीका रोग जल्द अच्छा होता है। केन्द्रमें लग्नेश या चन्द्रमा हो और ये दोनों शुभ ग्रहोंसे युक्त और दृष्ट हों तो शीघ्र रोगनिवृत्ति और पाप ग्रहोंसे युक्त या दृष्ट हों तो विलम्बसे रोगनिवृत्ति होती है। प्रश्नलग्न चर या द्विस्वभाव हो, लग्नेश

१. प्र० भू० वि० पृ० ५३-५४। २. ता० नी० पृ० ६५।

और चन्द्रमा शुभ ग्रहोंसे युक्त होकर अपनी राशि या १।४।१० भावोंमें स्थित हों तो रोग यत्न करनेपर दूर होता है। लग्नमें कोई ग्रह वक्री हो तो रोग यत्न करनेपर दूर होता है, लग्नमें अष्टमेश हो तथा चन्द्रमा और लग्नेश आठवें भावमें हों तो रोगीकी मृत्यु कहनो चाहिए। लग्नेश और अष्टमेशका इत्थशाल योग हो या ये ग्रह पाप ग्रहोंसे देखे जाते हों तो रोगीकी मृत्यु होती है। लग्नेश चतुर्थ भावमें न हो, चन्द्रमा छठवें भावमें हो और चन्द्रमा सप्तमेशके साथ इत्थशाल योग करता हो अथवा सप्तमेश छठवें घरमें तो निश्चयसे रोगीकी मृत्यु होती है। लग्नेश और चन्द्रमाका अशुभ ग्रहके साथ इत्थशाल हो या लग्नेश और चन्द्रमा ४।८।६ में स्थित हों एवं पाप ग्रहोंसे युक्त या दृष्ट हो तो रोग नाशक, ६।८।१० इन भावोंमें पाप ग्रह हों और चन्द्रमा अष्टम स्थानमें स्थित हों तो रोगीकी मृत्यु होती है। लग्न, सप्तम और अष्टम इन स्थानोंमें पाप ग्रह हों और शुभ ग्रह निर्बल हों, चन्द्रमा चतुर्थ, अष्टम स्थानमें हो एवं चन्द्रमाके पासके दोनों स्थानोंमें पाप ग्रह हों तो रोगीकी मृत्यु होती है।

चवर्गपञ्चाधिकार

गर्ग :–आलिङ्गितेषूत्तराक्षरेषूत्तरस्वरयुक्तेषु यवर्गं प्राप्नोति। सिंहावलोकनक्रमेणावर्गे [क्रमेण चवर्गे] ऽभिघातिते कवर्गं प्राप्नोति। मण्डूकप्लवनक्रमेण [1]कवर्गेऽभिधूमिते पवर्गं प्राप्नोति। अश्वमोहितक्रमेण चवर्गे दग्धे पवर्गं प्राप्नोति। गजविलोकितक्रमेण चवर्गमालिङ्गिते उत्तराक्षरे उत्तरस्वरसंयुक्तेऽवर्गं प्राप्नोति। सिंहदृशानुक्रमेण[2] चवर्गे दग्धे अवर्गं भेकप्लुत्या प्राप्नोति[3]। इति [4]चवर्गपञ्चाधिकारम्।

अर्थ—गर्गाचार्य-द्वारा कहे गये वर्गानयनके नियमको बताते हैं। आलिंगित उत्तराक्षराक्षर उत्तर स्वर संयुक्त होनेपर प्रश्नका चवर्ग यवर्गको प्राप्त हो जाता है। सिंहावलोकन क्रमसे चवर्गके अभिघातित होनेपर प्रश्नका चवर्ग कवर्गको प्राप्त हो जाता है। मण्डूकप्लवनक्रमसे चवर्गके अभिधूमित होनेपर प्रश्नका चवर्ग पवर्गको प्राप्त होता है। अश्वमोहित क्रमसे चवर्गके दग्ध होनेपर प्रश्नका चवर्ग पवर्गको प्राप्त हो जाता है। गजविलोकन क्रमसे आलिंगितमें उत्तरस्वरसंयुक्त उत्तराक्षर प्रश्न वर्णोंके होनेपर चवर्ग अवर्गको प्राप्त हो जाता है। सिंहदृष्टि अनुक्रमसे चवर्गके दग्ध होनेपर भेकप्लवन सिद्धान्त-द्वारा चवर्ग अवर्गको प्राप्त हो जाता है। सिंहदृष्टि अनुक्रमसे चवर्गके दग्ध होनेपर भेकप्लवन सिद्धान्त द्वारा चवर्ग अवर्गको प्राप्त हो जाता है। इस प्रकार प्रश्नका चवर्ग पाँचों वर्गोंको प्राप्त होता है। तात्पर्य यह है कि प्रश्नका प्रत्येक वर्ग विशेष-विशेष नियमोंके द्वारा पाँचों वर्गोंको प्राप्त हो जाता है। इस प्रकार चवर्गका पंचवर्गाधिकार पूर्ण हुआ।

---

१. चवर्गेऽभिधूमिते पवर्गं प्राप्नोति–क० मू०। २. अनुक्रमेण इति पाठो नास्ति–क० मू०। ३. प्राप्नोति–इति पाठो नास्ति–ता० मू०। ४. बृ० ज्यो० ४। २८३, २८६-८८।

विवेचन—आचार्यने मूकप्रश्न, मुष्टिकाप्रश्न, लूकाप्रश्न आदिके लिए उपयोगी वर्गनिष्कासनका नियम ऊपर गर्गाचार्य-द्वारा प्रतिपादित लिखा है। इस नियमका भाव यह है कि मनमें चिन्तित या मुट्ठीकी वस्तुका नाम किस वर्गके अक्षरोंका है। यह निश्चित है कि प्रश्नाक्षर जिस वर्गके होते हैं, वस्तुका नाम उस वर्गके अक्षरपर नहीं होता है। प्रत्येक प्रश्नमें सिंहावलोकन, गजावलोकन, नद्यावर्त, मण्डूकप्लवन, अश्व-मोहितक्रम ये पाँच प्रकारके सिद्धान्त वर्गाक्षरोंके परिवर्तनमें काम करते हैं। चन्द्रोन्मीलन प्रश्नशास्त्रमें आठ प्रकारके परिवर्तन सम्बन्धी सिद्धान्तोंका निरूपण किया है। यहाँ उपर्युक्त पाँचों सिद्धान्तोंका स्वरूप दिया जाता है।

१—सिंहावलोकन क्रम—अकारादि बारह स्वरोंके अंक-स्थापन कर तथा ककारादि तैंतीस व्यंजनोंके अंक स्थापित कर चक्र बना लेना। पश्चात् अधर प्रश्न हो तो आद्यवर्णकी व्यंजन संख्याको ५ से गुणाकर मात्रांक संख्यामें जोड़ दे और योग फलमें आठका भाग लेनेपर एकादि शेषमें अवर्ग, कवर्ग, चवर्ग, टवर्ग, तवर्ग, पवर्ग, यवर्ग और शवर्ग समझना चाहिए। यदि उत्तर प्रश्न हो तो मात्रांक संख्याको ११ से गुणाकर व्यंजन संख्यामें जोड़ दे और उसमें १० और जोड़कर आठसे भाग दे तथा एकादि शेषमें अवर्णादि ज्ञात करे। संयुक्त वेलामें पृच्छक जिस दिशामें मुख करके बैठे उसके पीछेकी दिशाका अंक दिक्चक्रमें देखकर उस अंकसे प्रश्नाक्षर संख्याको गुणाकर तीनसे भाग देना; एक शेषमें जीवचिन्ता; दो में धातुचिन्ता और शून्य या तीन शेषमें मूलचिन्ता समझनी चाहिए। पुनः लब्धको पिण्डमें मिलाकर दो से भाग लेना। एक शेषमें सुखदायक और शून्य या दो शेषमें दुःखदायक समझना चाहिए।

सिंहावलोकन दिक्चक्र

ई० श २१	पू० अ० २८	आ० क२७
उ० य २२	श्री०	च० २६ द०
वा० प२३	त० २४ प०	ट० २५ नै०

सिंहावलोकन स्वर व्यंजनांक चक्र

अ १	आ २	इ ३	ई ४	उ ५	ऊ ६	ए ७	ऐ ८	ओ ९	औ १०	अं ११	अः १२
क १	ख २	ग ३	घ ४	ङ ५	च ६	छ ७	ज ८	झ ९	ञ १०	ट ११	ठ १२
ड १३	ढ १४	ण १५	त १६	थ १७	द १८	ध १९	न २०	प २१	फ २२	ब २३	भ २४
म २५	य २६	र २७	ल २८	व २९	श ३०	ष ३१	स ३२	ह ३३	० ०	० ०	० ०

उदाहरण—पृच्छकका प्रश्नवाक्य 'कैलास पर्वत' है, यहाँ प्रश्नवाक्य 'क' उत्तराक्षरसे प्रारम्भ होता है, अतः प्रश्नवाक्यका विश्लेषण किया तो क् + ऐ + ल + आ + स् + अ + प् + अ + र् + व् + अ + त् + अ = ऐ + आ + अ + अ + अ + अ स्वर; क् + ल् + स् + प् + र् + व् + त् व्यंजन—सिंहावलोकनके अंक चक्रानुसार मात्रांक = ८ + २ + १ + १ + १ + १ = १४, व्यंजनांक = १ + २८ + ३२ + २१ + २७ + २९

+ १६ = १५४ । १४ × ११ = १५४ + १५४ = ३०८ + १० = ३१८ ÷ ८ = ३९ लब्धि, ६ शेष रहा । अतः य वर्गका प्रश्न माना जायगा ।

२—गजविलोकन चक्र—अकारादि बारह स्वरोंके चारको आदि कर यथाक्रमसे अंक जानना, क वर्गका पाँच आदि कर, च वर्गका छः आदि कर, ट वर्गका सात आदि कर, त वर्गका आठ आदि कर, प वर्गका नौ आदि कर और य वर्गका दस आदि कर अंकसंख्या लिख लेनी चाहिए । संयुक्तवेलामें पृच्छक जिस दिशामें मुख करके बैठा हो उसके पीछेकी दिशाका अंक दिक्चक्रमें देखकर लिख लेना, पश्चात् प्रश्नाक्षर संज्ञासे गुणा कर तीनका भाग देना चाहिए, एक शेषमें जीव चिन्ता, दो शेषमें धातुचिन्ता और शून्य शेषमें मूलचिन्ता कहनी चाहिए । पुनः लब्धिको पिण्डमें मिलाकर दो से भाग देना चाहिए तथा एक शेषमें लाभ और शून्य शेषमें अलाभ फल होता है । पश्चात् फिरसे लब्धिको पिण्डमें जोड़कर दोका भाग देनेसे एक शेषमें सुख और शून्य शेषमें दुःख फल होता है ।

दिक्चक्र-गजावलोकन

ई० श ११	पू० अ० ४	अ० क० ५
उ० य १०	संयुक्त वेला प्रश्न	द० च० ६
वाय० प ९	प० त० ८	नै० ट ७

गजावलोकन स्वर-व्यंजनांक चक्र

अ ४	आ ५	इ ६	ई ७	उ ८	ऊ ९	ए १०	ऐ ११	ओ १२	औ १३	अं १४	अः १५
क ५	ख ६	ग ७	घ ८	ङ ९	च ६	छ ७	ज ८	झ ९	ञ १०	ट ७	ठ ८
ड ९	ढ १०	ण ११	त ८	थ ९	द १०	ध ११	न १२	प ९	फ १०	ब ११	भ १२
म १३	य १०	र ११	ल १२	व १३	श १४	ष १५	स १६	ह १७	० ०	० ०	० ०

उदाहरण—संयुक्तवेलाका प्रश्नवाक्य 'कैलास पर्वत' है । पृच्छकने पूर्व दिशाकी ओर मुख कर प्रश्न किया है अतः उसके पीछेकी दिशा पश्चिमका दिगंक ८ ग्रहण किया । प्रश्नाक्षरोंकी स्वर व्यंजनांक संख्याको दिगंकसे गुणा करना है अतः प्रश्नवाक्यके विश्लेषणानुसार—क् + ऐ + ल् + आ + स् + अ + प् + अ + र् + व् + अ + त् + अ = ५ + १२ + १६ + ९ + ११ + १३ + ८ = ७४ व्यंजनांक; ११ + ५ + ४ + ४ + ४ + ४ = ३२ स्वरांक = ३२ + ७४ = १०६ प्रश्नांक, १०६ × ८ = ८४८ पिण्डांक, ८४८ ÷ ३ = २८२ लब्धि, २ शेष, धातुचिन्ताका प्रश्न हुआ । ८४८ + २८२ = ११३० ÷ २ = ५६५ लब्धि, शेष ० । अतः हानि इसका फल कहना चाहिए । पुनः पिण्डांकमें लब्धिको जोड़ा तो—८४८ + ५६५ = १४१३ ÷ २ = ७०६ लब्धि, शेष १ । अतः सुख फल समझना चाहिए ।

३—नद्यावर्त चक्र—अवर्गादिके एक-एक वृद्धिक्रमसे अंक स्थापन कर स्वर-व्यंजनांक स्थापित कर लेना चाहिए । अधर वर्ण प्रश्नाक्षर हों तो व्यंजन और स्वर

संख्याका योग कर आठसे भाग देनेपर एकादि शेषमें क्रमशः अ वर्ग, क वर्ग, च वर्ग, ट वर्ग, त वर्ग, प वर्ग, य वर्ग और श वर्ग ग्रहण करने चाहिए।

उत्तर वर्ण प्रश्नाक्षर हों तो स्वर और व्यंजनांककी संख्याको १३ से गुणाकर १२ जोड़ देनेपर प्रश्नपिण्डांक हो जाता है। इस प्रश्नपिण्डांकमें ८ से भाग देनेपर एकादि शेषमें क्रमशः अवर्गादि समझने चाहिए। पश्चात् लब्धिको प्रश्नपिण्डमें जोड़कर ५ का भाग देनेपर शेष नामका प्रथम वर्ण जानना।

नद्यावर्त चक्र

अ	आ	इ	ई	उ	ऊ	ए	ऐ	ओ	औ	अं	अः
१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२
क	ख	ग	घ	ङ	च	छ	ज	झ	ञ	ट	ठ
१	२	३	४	५	१	२	३	४	५	१	२
ड	ढ	ण	त	थ	द	ध	न	प	फ	ब	भ
३	४	५	१	२	३	४	५	१	२	३	४
म	य	र	ल	व	श	ष	स	ह	०	०	०
५	१	२	३	४	१	२	३	४	०	०	०

उदाहरण—प्रश्नाक्षर मोहनके 'कैलास पर्वत' है। इसका विश्लेषण किया तो क् + ऐ + ल् + आ + स् + अ + प् + अ + र् + व् + अ + त् + अ = क् + ल् + स् + प् र् + व् + त् व्यंजनाक्षर, ऐ + आ + अ + अ + अ + अ स्वराक्षर, २ + ३ + ३ + १ + २ + ४ + १ = १६ व्यंजनांक, ८ + २ + १ + १ + १ + १ = १४ स्वरांक, १६ + १४ = ३०, ३० ÷ ८ = ३ लब्धि, ६ शेष = प वर्गका नाम समझना चाहिए।

जब प्रश्नाक्षर कैलास पर्वत रखे जाते हैं तो उत्तर प्रश्नाक्षर होनेके कारण स्वरव्यंजन संख्या २९ को १३ से गुणा किया तो २९ × १३ = ३७७ × १२ = ३८९ प्रश्नपिण्डांक हुआ। ३८९ ÷ ८ = ४८ लब्धि, ५ शेष। त वर्गका नाम कहना चाहिए।

४—मण्डूकप्लवन चक्र—अकारादि स्वरोंकी एकादि संख्या और ककारादि व्यंजनोंकी दो आदि संख्या वर्गवृद्धिके क्रमसे स्थापित कर लेनी चाहिए। प्रश्नवाक्यके समस्त स्वर व्यंजनोंकी संख्याको ११ से गुणाकर १० जोड़ना चाहिए। इस योगफलका नाम प्रश्नपिण्ड समझना चाहिए। प्रश्नपिण्डमें आठसे भाग देनेपर एकादि शेषमें विलोम क्रमसे वर्गाक्षर होते हैं अर्थात् एक शेषमें श वर्ग, दो शेषमें य वर्ग, तीन शेषमें प वर्ग, चार शेषमें त वर्ग, पाँच शेषमें ट वर्ग, छः शेषमें च वर्ग, सात शेषमें क वर्ग और

१. बृ० ज्यो० ४।२६२–६३।

शून्य या आठ शेषमें अ वर्ग होता है। पुनः लब्धिको पिण्डमें जोड़कर पाँचका भाग देनेपर एकादि शेषमें विलोम क्रमसे वर्गका ज्ञान करना चाहिए।

मण्डूकप्लवन दिक्चक्र

ई० श० ३२००	पू० अ० २५	आग्ने० क० ५०
उ० य० १६००	श्री०	द० च० १००
वाय० प० ८००	प० त० ४००	नै० ट० २००

मण्डूकप्लवन स्वर-व्यंजनांकबोधक चक्र

अ	आ	इ	ई	उ	ऊ	ए	ऐ	ओ	औ	अं	अः
१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२
क	ख	ग	घ	ङ	च	छ	ज	झ	ञ	ट	ठ
२	३	४	५	६	३	४	५	६	७	४	५
ड	ढ	ण	त	थ	द	ध	न	प	फ	ब	भ
६	७	८	५	६	७	८	९	६	७	८	९
म	य	र	ल	व	श	ष	स	ह	०	०	०
१०	७	८	९	१०	८	९	१०	११	०	०	०

उदाहरण—मोहनका प्रश्नवाक्य—'कैलास पर्वत' है, इसका विश्लेषण किया तो क् + ऐ + ल् + आ + स् + अ + प् + अ + र् + व् + अ + त् + अ = क् + ल् + स् + प् + र् + व् + त् व्यंजनाक्षर; ऐ + आ + अ + अ + अ + अ स्वराक्षर।

२ + ९ + १० + ६ + ८ + १० + ५ = ५० व्यंजनांक, ८ + २ + १ + १ + १ + १ = १४ स्वरांक,

५० + १४ = ६४ प्रश्नाक्षरांक,

६४ × ११ = ७०४ + १० = ७१४ प्रश्नपिण्डांक, ७१४ ÷ ८ = ८९ लब्ध, २ शेष, विलोमक्रमसे शेषांकमें वर्ग संख्याकी गणना की तो 'य वर्ग आया।' पुनः ७१४ + ८९ = ८०३ ÷ ५ = १६० लब्ध, ३ शेष, यहाँ भी विलोमक्रमसे गणना की तो प वर्ग आया।

५ अश्वमोहितचक्र—अकारादि स्वरोंके द्विगुणित अंक और ककारादि व्यंजनोंके अंक पूर्ववत् स्थापित कर चक्र बना लेना चाहिए। यदि प्रश्नवाक्यका आद्य वर्ग अधर—ख घ छ झ ठ ढ थ ध फ भ र व ष ह में से कोई अक्षर हो तो प्रश्नाक्षरोंकी स्वर व्यंजन संख्याको एकत्रित कर आठका भाग देनेपर एकादि शेषमें अवर्गादि समझने चाहिए। यदि उत्तराक्षरों—क ग ङ च ज ञ ट ड ण त द न प ब म य ल श स में से कोई भी वर्ण प्रश्नाक्षरोंका आद्य वर्ण हो तो प्रश्नाक्षरोंके स्वर व्यंजनकी अंक संख्याको पन्द्रहसे गुणा कर चौदह जोड़कर आठका भाग देनेपर एकादि शेषमें अवर्गादि होते हैं। पश्चात् लब्धको पिण्डमें जोड़कर पुनः पाँचका भाग देनेपर एकादि शेषमें वर्गके प्रथमादि वर्ण होते हैं।

---

१. बृ० ज्यो० अ० ४ श्लो० ४। २६०-६१।

अश्वमोहितका दिक्चक्र

ई० श १९	पू०अ०२६	आग्ने० क० २५
उ० य २०	श्री०	द० च २४
वाय०प२१	प०त० २९	नै० ट २३

अश्वमोहितका स्वर-व्यंजनांक चक्र

अ	आ	इ	ई	उ	ऊ	ए	ऐ	ओ	औ	अं	अः
२	४	६	८	१०	१२	१४	१६	१८	२०	२२	२४
क	ख	ग	घ	ङ	च	छ	ज	झ	ञ	ट	ठ
१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२
ड	ढ	ण	त	थ	द	ध	न	प	फ	व	भ
१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४
म	य	र	ल	व	श	ष	स	ह	०	०	०
२५	२६	२७	२८	२९	३०	३१	३२	३३	०	०	०

उदाहरण—मोहनका प्रश्नवाक्य 'कैलास पर्वत' है। यहाँ प्रश्नवाक्यका आद्य वर्ण उत्तर संज्ञक वर्ण है अतः निम्न क्रिया करनी होगी—१ + २८ + ३२ + २१ + २७ + २९ + १६ = १५४ व्यंजनांक संख्या; १६ + ४ + २ + २ + २ + २ = २८ स्वरांक संख्या, १५४ + २८ = १८२ स्वर व्यंजनांक संख्याका योग, १८२ × १५ = २७३० + १४ = २७४४ ÷ ८ = ३४३ लब्ध, ० शेष। यहाँ शवर्गका प्रश्न माना जायगा। पश्चात् २७४४ + ३४३ = ३०८३ ÷ ५ = ६१६ लब्ध, ३ शेष; यहाँपर वर्गका तृतीय अक्षर प्रश्नका होगा।

नरपतिजयचर्यामें अश्वचक्रका निरूपण करते हुए बताया है कि एक घोड़ेकी मूर्त्ति बनाकर, उसके मुख आदि विभिन्न अंगोंपर पृच्छकके प्रश्नाक्षरानुसार अट्ठाईस नक्षत्रोंको क्रमसे स्थापित कर देना चाहिए। प्रश्नाक्षरगत नक्षत्रको आदिका दो नक्षत्र मुखमें रखकर पश्चात् चक्षुद्वय, कर्णद्वय, मस्तक, पूँछ और दोनों पैर इन आठ अंगोंमें आगे सोलह नक्षत्र क्रमशः स्थापन करे। पश्चात् पेटमें पाँच और पीठमें भी पाँच नक्षत्रोंका स्थापन करे। सूर्यकी स्थितिके अनुसार इस चक्रका फल समझे। यदि अश्वके मुखमें सूर्य नक्षत्र हो तो विजय, लाभ और सुख होता है। शनि नक्षत्र यदि अश्वचक्रके कान, पूँछ, पैर या पीठमें रहे तो दुःख, हानि और पराजय होता है। यदि उपर्युक्त स्थानोंमें सूर्य नक्षत्र रहे तो वस्त्रादिका लाभ होता है।

आचार्य-द्वारा कथित प्रकरणका तात्पर्य यह है कि यदि प्रश्नाक्षर आलिंगित समयमें उत्तराक्षर उत्तर स्वरसंयुक्त हों तो चवर्गके होनेपर भी चवर्ग यवर्गको प्राप्त हो जाता है अर्थात् जिस वस्तुके सम्बन्धमें प्रश्न है उसका नाम यवर्गके अक्षरोंमें समझना चाहिए। पूर्वोक्त सिंहावलोकन क्रमसे अभिघातित चवर्गके होनेपर चवर्ग कवर्गको प्राप्त होता है। अर्थात् उक्त प्रश्नस्थितिमें वस्तुका नाम कवर्गके अक्षरोंमें समझना चाहिए। मण्डूकप्लवन क्रमसे जब अभिधूमित चवर्ग प्रश्नाक्षर—वर्गाक्षर आवें उस समय वह पवर्गको प्राप्त हो जाता है। अश्वमोहित क्रमसे जब दग्ध प्रश्नाक्षरोंमें चवर्ग आवे उस समय

१. न० ज० पृ० २०२।

वह पवर्गको प्राप्त हो जाता है। सिंहावलोकन क्रमसे चवर्गके प्राप्त होनेपर मण्डूक-प्लवन रीतिसे अवर्गको प्राप्त हो जाता है। गजावलोकन क्रमसे उत्तराक्षर उत्तर स्वर-संयुक्त प्रश्नाक्षरोंके होनेपर चवर्ग अवर्गको प्राप्त हो जाता है। इस प्रकार चवर्ग विभिन्न प्रश्नस्थितियोंके अनुसार विभिन्न वर्गोंको प्राप्त होता है। इस प्राप्तिका प्रधान लक्ष्य वर्गाक्षरोंका निष्कासन है।

तवर्गचक्रका विचार

तवर्गे आलिङ्गिते यवर्गं नद्यावर्तक्रमेण प्राप्नोति। तवर्गेऽभिधूमिते शवर्गं शशदृशा[1](सिंहदृशा)नुक्रमेण प्राप्नोति। तवर्गे दग्धेऽवर्गं जनं[2](गज) विलोकितक्रमेण प्राप्नोति। तवर्गे आलिङ्गिते उत्तराक्षरे उत्तरस्वरसंयुक्ते चवर्गं सिंहदृ[3]शानु[4]क्रमेण प्राप्नोति। तवर्गेऽभिघातिते टवर्गं भेकप्लुत्या[5] प्राप्नोति। इति तवर्गचक्रम्।

अर्थ—आलिंगित तवर्गके प्रश्नाक्षर होनेपर तवर्ग नद्यावर्त क्रमसे यवर्गको प्राप्त होता है। अभिधूमित तवर्गके प्रश्नाक्षर होनेपर सिंहावलोकन क्रमसे तवर्ग शवर्ग-को प्राप्त होता है। दग्ध प्रश्नाक्षरोंमें तवर्गके होनेपर गजविलोकित क्रमसे प्रश्नका तवर्ग अवर्गको प्राप्त होता है। उत्तराक्षरों—क ग ङ च ज ञ ट ड ण त द न प ब म य ल व श स ह के उत्तर स्वरसंयुक्त होनेपर आलिंगित कालके प्रश्नमें तवर्ग सिंहावलोकन क्रमसे चवर्गको प्राप्त होता है। अभिघातित तवर्गके प्रश्नाक्षर होनेपर मण्डूकप्लवन गतिसे तवर्ग टवर्गको प्राप्त होता है।

विवेचन—आचार्यने उपर्युक्त प्रकरणमें तवर्गके परिवर्तनका विचार किया है। चोरी गयी वस्तु, मुट्ठीमें रखी गयी वस्तु एवं मनमें चिन्तित वस्तुके नामको ज्ञात करनेके लिए तवर्गके चक्रका विचार किया है। क्योंकि प्रश्नवाक्यकी किस प्रकारकी स्थितिमें तवर्ग परिवर्तित होकर किस अवस्थाको प्राप्त होता है तथा उस अवस्थाके अनुसार तवर्गका कौन-सा वर्ग मानना पड़ेगा—आदि विचार उपर्युक्त प्रकरणमें विद्यमान हैं। इसका विशेष विवेचन पहले किया जा चुका है। गर्गाचार्यने नद्यावर्त, सिंहावलोकन, गजावलोकन, अश्वमोहित और मण्डूकप्लवन आदि चक्रोंके गणितको न लिखकर केवल प्रश्नाक्षरोंपर-से ही किस प्रकारके प्रश्नमें किस दृष्टिसे कौन-सा वर्ग आता है, इसका कथन किया है। पहले जो नद्यावर्त आदिका गणित दिया गया है, उससे भी प्रामाणिक ढंगसे वर्गका नाम निकाला जा सकता है।

---

१. शशाङ्कदृशा–क० मू०। शशाकारिदृशा–ता० मू०। २. गज–क० मू०। ३. शशकारिदृशा –ता० मू०। ४. अनुक्रमेण प्राप्नोति–इति पाठो नास्ति–क० मू०। ५. मण्डूक-प्लवनगत्या–ता० मू०।

[1]यवर्ग चक्र

यवर्गे आलिङ्गितेऽवर्गं नद्यावर्तक्रमेण प्राप्नोति। यवर्गेऽभिधूमिते कवर्ग-मश्वमोहितक्रमेण[2] प्राप्नोति[3]। यवर्गेऽभिघातिते शवर्गं [4]भेकप्लुत्या प्राप्नोति। [5]इति यवर्गचक्रम्।

अर्थ—आलिंगित प्रश्नाक्षरोंके होनेपर प्रश्नका यवर्ग नद्यावर्तक्रमसे अवर्गको प्राप्त होता है। अभिधूमित प्रश्नाक्षरोंके होनेपर प्रश्नका यवर्ग अश्वमोहित क्रमसे कवर्ग-को प्राप्त होता है। अभिघातित प्रश्नाक्षरोंके होनेपर प्रश्नका यवर्ग मण्डूकप्लवन गतिसे शवर्गको प्राप्त होता है। इस प्रकार यवर्ग चक्रका वर्णन समझना चाहिए।

कवर्गचक्रविचार

[6]कवर्गे आलिङ्गिते टवर्गमश्वप्लुत्याऽभिधूमिते दग्धेऽभिघातिते च चीन-प्लुतिं (चीनगत्या तवर्गं) [7]प्राप्नोति। इति कवर्गचक्रम्[8]।

अर्थ—आलिंगित प्रश्नाक्षरोंके होनेपर प्रश्नका कवर्ग अश्वगति-अश्वमोहित क्रमसे टवर्गको प्राप्त होता है। अभिधूमित, दग्ध और अभिघातित प्रश्नाक्षरोंके होनेपर प्रश्नका कवर्ग मण्डूकप्लवन गतिसे तवर्गको प्राप्त होता है। इस प्रकार कवर्गका वर्णन हुआ।

विवेचन—उपर्युक्त कवर्ग चक्रके ग्रन्थान्तरोंमें कई रूप पाये जाते हैं। एक स्थानपर[9] बताया गया है कि आलिंगित समयका प्रश्न होनेपर आलिंगित ही प्रश्नाक्षरों-के होनेपर प्रश्नका कवर्ग अश्वमोहित क्रमसे टवर्गको प्राप्त होता है। अभिधूमित वेलाके प्रश्नमें आलिंगित और संयुक्त प्रश्नाक्षरोंके होनेपर प्रश्नका कवर्ग गजावलोकन क्रमसे अवर्गको प्राप्त होता है। दग्धवेलाके प्रश्नमें असंयुक्त और संयुक्त प्रश्नाक्षरोंके होनेपर सिंहावलोकन क्रमसे प्रश्नका कवर्ग तवर्गको प्राप्त होता है। अधर प्रश्नवर्णोंके होनेपर प्रश्नका कवर्ग नद्यावर्त क्रमसे चवर्गको प्राप्त होता है। उत्तर प्रश्नाक्षरोंके होनेपर प्रश्न-का कवर्ग मण्डूकप्लवन गतिसे यवर्गको प्राप्त होता है।

टवर्गचक्रविचार

[10]टवर्गे आलिङ्गिते नद्यावर्तेन[11], टवर्गेऽभिधूमितेऽश्वगत्या, टवर्गे आलि-ङ्गिते उत्तराक्षरे उत्तरस्वरसंयुक्ते कवर्गं प्राप्नोति। टवर्गेऽभिधूमिते तवर्गं भेकक्रमेण[12] प्राप्नोति। इति टवर्गचक्रम्[13]।

---

१. यवर्गं चक्रं—ता० मू०। २. अश्वमोहितक्रमः—क० मू०। ३. प्राप्नोतीति पाठो नास्ति—क० मू०। ४. मण्डूकप्लवनगत्या—ता० मू०। ५. इति यवर्गचक्रम्—ता० मू०। ६. कवर्गे आलिङ्गिते, उन्नद्धनकेऽभिधूमितेवं, अश्वगत्याके दग्धे अभिघातित चीनगति-इति कवर्ग-चक्रम्—क० मू०। ७. प्राप्नोतीति पाठो नास्ति—ता० मू०। ८. कवर्गचक्रम्—ता० मू०। ९. बृहज्ज्योतिषार्णवग्रन्थस्य चतुर्थोऽध्यायः द्रष्टव्यः। १०. टे आलिङ्गिते पन्नाद्येन टेऽभिधूमिते-ऽश्वगत्या टे आलिङ्गिते उत्तराक्षरे उत्तरस्वरसंयुक्ते क टेऽभिघातिते नं भेकक्रमेण। इति टवर्गचक्रम्-क० मू०। ११. पन्नाद्येन-ता० मू०। १२. मण्डूकगत्या-ता० मू०। १३. टवर्ग-चक्रम्-ता० मू०।

अर्थ—आलिंगित प्रश्नाक्षरोंके होनेपर प्रश्नका टवर्ग नद्यावर्त क्रमसे कवर्गको प्राप्त होता है। अभिधूमित प्रश्नाक्षरोंके होनेपर अश्वमोहित क्रमसे प्रश्नका टवर्ग कवर्गको प्राप्त होता है। आलिंगित प्रश्नमें उत्तराक्षरोंके उत्तर स्वरसंयुक्त होनेपर प्रश्नका टवर्ग कवर्गको प्राप्त होता है। अभिधूमित प्रश्नके होनेपर प्रश्नका टवर्ग मण्डूकप्लवन गतिसे तवर्गको प्राप्त होता है। इस प्रकार टवर्गका वर्णन हुआ।

विवेचन—ग्रन्थान्तरोंमें बताया गया है कि आलिंगित वेलाके प्रश्नमें उत्तरवर्णके प्रश्नाक्षरोंके होनेपर प्रश्नका आद्य वर्ण टवर्ग नद्यावर्त क्रमसे कवर्गको प्राप्त होता है। अभिधूमित वेलाके प्रश्नमें अधर वर्ण प्रश्नाक्षरोंके होनेपर प्रश्नका आद्य टवर्ग कवर्गको प्राप्त होता है। दग्ध वेलाके प्रश्नमें अधरोत्तर प्रश्नाक्षरोंके होनेपर प्रश्नका आद्य टवर्ग चवर्गको प्राप्त हो जाता है। संयुक्त प्रश्नाक्षरोंके होनेपर प्रश्नका आद्य टवर्ग सिंहावलोकन क्रमसे तवर्गको प्राप्त होता है। असंयुक्त प्रश्नाक्षरोंके होनेपर आद्य टवर्ग गजावलोकन क्रमसे पवर्गको प्राप्त होता है। अभिघातित प्रश्नाक्षरोंके होनेपर आद्य टवर्ग अश्वमोहित क्रमसे शवर्गको प्राप्त होता है। मण्डूकप्लवन गतिसे तवर्गके अभिघातित होनेपर प्रश्नका टवर्ग यवर्गको प्राप्त होता है। टवर्गके अनभिहत होनेपर टवर्ग चवर्गको प्राप्त होता है। प्रथमश्रेणीमें टवर्गके दग्ध होनेपर टवर्ग पवर्गको, आलिंगित होनेपर टवर्ग अवर्गको, अभिधूमित होनेपर टवर्ग तवर्गको एवं अधरोत्तर स्वरसंयुक्त अभिधूमित होनेपर टवर्ग शवर्गको प्राप्त होता है।

पवर्गचक्रविचार

पवर्गे आलिङ्गिते[1] शवर्गं नद्यावर्तक्रमेण, प[2]वर्गेऽभिधूमिते अम् अश्वगत्या, [3]पवर्गे दग्धे [4]कवर्गं गजदृशा, प[5]वर्गे आलिङ्गिते उत्तराक्षरे उत्तरस्वरसंयुक्ते ट[6]वर्गं सिंहदृशा, प[7]वर्गेऽभिधूमिते यं मण्डूकप्लुत्या[8] [9]प्राप्नोति। इति पवर्गचक्रम्[10]।

अर्थ—आलिंगित प्रश्नाक्षरोंके होनेपर प्रश्नका पवर्ग नद्यावर्त क्रमसे शवर्गको प्राप्त होता है। पवर्गके अभिधूमित होनेपर प्रश्नका पवर्ग अश्वगतिसे अवर्गको प्राप्त होता है। पवर्गके दग्ध होनेपर गजावलोकन क्रमसे प्रश्नका पवर्ग कवर्गको प्राप्त होता है। पवर्गके आलिंगित होनेपर प्रश्नाक्षरोंके उत्तराक्षर उत्तर स्वरसंयुक्त होनेपर सिंहावलोकन क्रमसे पवर्ग टवर्गको प्राप्त होता है। पवर्गके अभिघातित होनेपर मण्डूकप्लवन गतिसे पवर्ग यवर्गको प्राप्त होता है। इस प्रकार पवर्ग चक्रका वर्णन हुआ।

विवेचन—ज्योतिषशास्त्रमें पवर्गके चक्रका स्वरूप बताया गया है कि आलिंगित वेलाके प्रश्नमें आद्य प्रश्नाक्षर पवर्गके होनेपर नद्यावर्त चक्रकी दृष्टिसे पवर्ग शवर्गको

---

१. पे आलिङ्गिते शन्नाद्येन—क० मू०। २. पेऽभिधूमिते—क० मू०। ३. पे—क० मू०। ४. कं—क० मू०। ५. पे—क० मू०। ६. टं—क० मू०। ७. पे—क० मू०। ८. मण्डूकप्लवनगत्या—क० मू०। ९. प्राप्नोतीति पाठो नास्ति—ता० मू०। १०. पवर्णचक्रम्—ता० मू०।

प्राप्त हो जाता है अर्थात् पवर्गके प्रश्नाक्षरोंमें वस्तुका नाम शवर्गका समझना चाहिए। अभिधूमित वेलाके प्रश्नमें पवर्ग अश्वमोहितसे अवर्गको प्राप्त होता है अर्थात् उक्त स्थितिमें वस्तुका नास अवर्गके अक्षरोंमें अवगत करना चाहिए। दग्धवेलाका प्रश्न होनेपर सिंहावलोकन क्रमसे पवर्ग कवर्गको प्राप्त होता है—वस्तुका नाम क ख ग घ ङ इन वर्णोंसे प्रारम्भ होनेवाला होता है। उत्तर प्रश्नाक्षरोंके होनेपर पवर्ग नद्यावर्त क्रमसे चवर्गको प्राप्त होता है—वस्तुका नाम च छ ज झ ञ इन वर्णोंसे प्रारम्भ होनेवाला समझना चाहिए। अधर प्रश्नवर्णोंके होनेपर मण्डूकप्लवन गतिसे पवर्ग तवर्गको प्राप्त होता है—वस्तुका नाम त थ द ध न इन वर्णोंसे प्रारम्भ होनेवाला समझना चाहिए। अधरोत्तर प्रश्नवर्णोंके होनेपर पवर्ग सिंहदृष्टिसे यवर्गको प्राप्त होता है—वस्तुका नाम य र ल व इन वर्णोंसे प्रारम्भ होनेवाला समझना चाहिए। उत्तराधर प्रश्न वर्णोंके होनेपर प्रश्नका आद्य पवर्ग गजावलोकन क्रमसे अपने ही वर्गको—पवर्गको प्राप्त होता है—वस्तुका नाम प फ ब भ म इन वर्णोंसे प्रारम्भ होनेवाला समझना चाहिए। उत्तर स्वर-संयुक्त अधर वर्णोंके प्रश्नाक्षर होनेपर पवर्ग नद्यावर्त क्रमसे शवर्गको प्राप्त होता है—वस्तुका नाम श ष स ह इन वर्णोंसे प्रारम्भ होनेवाला समझना चाहिए। अधर स्वरसंयुक्त उत्तरवर्णोंके प्रश्नाक्षर होनेपर पवर्ग पन्नगगतिसे चवर्गको प्राप्त होता है—वस्तुका नाम च छ ज झ ञ इन वर्णोंसे प्रारम्भ होनेवाला समझना चाहिए। अधरोत्तर स्वरसंयुक्त उत्तर वर्णोंके होनेपर आद्य प्रश्नाक्षर पवर्ग अश्वमोहित क्रमसे अवर्गको प्राप्त होता है। असंयुक्त और संयुक्त प्रश्नाक्षरोंके होनेपर प्रश्नका आद्य पवर्ग गजगतिसे कवर्गको प्राप्त होता है। अभिहत प्रश्नके होनेपर नद्यावर्त क्रमसे टवर्गको, अनभिहत प्रश्नाक्षरोंके होनेपर मण्डूकगतिसे पवर्ग तवर्गको, दग्ध प्रश्नके होनेपर सिंहदृशा गतिसे पवर्ग यवर्गको और आलिंगित प्रश्नके होनेपर पवर्ग अश्वगतिसे शवर्गको प्राप्त होता है। जिस समय पवर्ग जिस वर्गको प्राप्त होता है, उस समय वस्तुका नाम उसी वर्गके अक्षरोंपर समझना चाहिए।

शवर्गचक्रविचार

शे आलिङ्गिते[1] कं[2] [नद्यावर्तेन] शेऽभिधूमिते[3] चं[4] शे दग्धे[5] टं गजगत्या, शे आलिङ्गिते उत्तराक्षरे उत्तरस्वरसंयुक्ते [सिंहदृशा] [6]पं शेऽभिघातिते[7] [8]अं मण्डूकप्लुत्या प्राप्नोति। इति शवर्गचक्रम्[9]।

अर्थ—प्रश्नका आद्य वर्ण आलिंगित शवर्गका होनेपर नद्यावर्त क्रमसे शवर्ग कवर्गको प्राप्त होता है। अभिधूमित शवर्गका होनेपर अश्वमोहित क्रमसे चवर्गको प्राप्त होता है। दग्ध शवर्गका होनेपर गजगतिसे टवर्गको शवर्ग प्राप्त करता है। आलिंगित शवर्गके उत्तराक्षर उत्तरस्वर संयुक्त होनेपर सिंहावलोकन क्रमसे प्रश्नका शवर्ग पवर्गको

१. शेऽऽलिङ्गते कं नांशेन—क० मू०। २. कवर्ग–ता० मू०। ३. शेऽभिधूमिते चं अश्वगत्या–क० मू०। ४. चवर्ग–ता० मू०। ५. टवर्ग–ता० मू०। ६. पवर्ग–ता० मू०। ७. शवर्गेऽभिघातिते–क० मू०। ८. अवर्ग–ता० मू०। ९. शवर्णचक्रम्–ता० मू०।

प्राप्त होता है। शवर्गके अभिघातित होनेपर मण्डूकप्लवन गतिसे प्रश्नका आद्य शवर्ग अवर्गको प्राप्त होता है। इस प्रकार शवर्गचक्रका वर्णन हुआ।

विवेचन—शवर्ग चक्रका वर्णन करते हुए बताया गया है कि आलिंगित वेलाके प्रश्नमें प्रश्नाक्षरोंका आद्य वर्ग शवर्ग नद्यावर्त अश्वमोहित क्रमसे कवर्गको प्राप्त होता है। अभिधूमित वेला के प्रश्नमें प्रश्नाक्षरोंका आद्य वर्ग शवर्ग अश्वमोहित क्रमसे चवर्गको प्राप्त होता है। दग्ध वेलाके प्रश्नमें प्रश्नाक्षरोंका आद्य वर्ग शवर्ग गजगतिसे टवर्गको प्राप्त होता है। उत्तराक्षर उत्तर स्वरसंयुक्त प्रश्नवर्णोंके होनेपर प्रश्नका आद्य वर्ग शवर्ग सिंह-दृष्टिकी गतिसे पवर्गको प्राप्त होता है। शवर्गके अभिघातित प्रश्नके होनेपर प्रश्नका आद्य शवर्ग मण्डूकप्लवन गतिसे अवर्गको प्राप्त होता है। उत्तर वर्णोंके प्रश्नाक्षरोंमें प्रश्नका आद्य शवर्ग टवर्गको प्राप्त होता है। अधर मात्रासंयुक्त उत्तर वर्णोंके प्रश्नाक्षर होनेपर गजगतिसे प्रश्नका आद्य शवर्ग तवर्गको प्राप्त होता है। अधरोत्तर मात्रासंयुक्त उत्तर वर्णोंके प्रश्नाक्षर होनेपर प्रश्नका आद्य शवर्ग सिंहावलोकन क्रमसे कवर्गको प्राप्त होता है। उत्तर मात्रासंयुक्त अधर वर्णोंके प्रश्नाक्षर होनेपर प्रश्नका आद्य शवर्ग गज-गतिसे अवर्गको प्राप्त होता है। अधर मात्रासंयुक्त अधर वर्णोंके प्रश्नाक्षर होनेपर नद्या-वर्त क्रमसे शवर्ग पवर्गको प्राप्त होता है। अधरोत्तर मात्रासंयुक्त अधर वर्णोंके प्रश्नाक्षर होनेपर प्रश्नका आद्य शवर्ग अश्वमोहित क्रमसे यवर्गको प्राप्त होता है। अधरोत्तराधर मात्रासंयुक्त अधरवर्णोंके प्रश्नाक्षर होनेपर शवर्ग मण्डूकप्लवन गतिसे अपने वर्ग—शवर्ग को प्राप्त होता है। अभिहत प्रश्नाक्षरोंके होनेपर प्रश्नका आद्य शवर्ग गजगतिसे कवर्गको प्राप्त होता है। अनभिहत प्रश्नाक्षरोंके होनेपर प्रश्नका आद्य शवर्ग सिंहावलोकन क्रमसे चवर्गको प्राप्त होता है। संयुक्त प्रश्नाक्षरोंके होनेपर प्रश्नका आद्य शवर्ग अश्वमोहित क्रमसे टवर्गको प्राप्त होता है। असंयुक्त और दग्ध प्रश्नवर्णोंके होनेपर मण्डूकप्लवन गति-से शवर्ग कवर्गको प्राप्त होता है।

ग्रन्थकारोक्त शवर्ग चक्र

अधरोत्तर[1]क्रमेण द्रष्टव्यम्। अभिहतेऽवर्गे उत्तराक्षरे पवर्गम्, अधराक्षरे टवर्गमनभिहतेऽवर्गे[2]मुत्तराक्षरेऽधराक्षरेऽधरस्वरसंयुक्ते वा स्ववर्गं प्राप्नोति। अन-भिहते[3] चवर्गे उत्तराक्षरेऽधरस्वरसंयुक्ते वा स्ववर्गं प्राप्नोति। अनभिहते[4] (अभिहते) चवर्गे उत्तराक्षरे चवर्गम्, अधराक्षरेऽवर्गम्, अनभिहते पवर्गे उत्तराक्षरेऽधराक्षरेऽधरस्वरसंयुक्ते वा स्ववर्गं प्राप्नोति। अनभिहते 'शं'[5] उत्तरा-क्षरे अधराक्षरे वाऽधरस्वरसंयुक्ते चवर्गं प्राप्नोति, द्वयोः सिंहावलोकनक्रमेण पश्यन्तः[6]। शवर्गश्च मण्डूकप्लुत्या [स्ववर्गं] प्राप्नोति। इति शवर्गचक्रम्।

---

१. अधरा अधरोत्तरक्रमेण द्रष्टव्याः–क० मू०। २. अवर्गे–क० मू०। ३. अनभिहते–प्यतिवर्गे उत्तराक्षरे पवर्गं, कवर्गे उत्तराक्षरे शवर्गं, अधराक्षरे स्ववर्गं प्राप्नोति। ४. अभिहिते चवर्गे उत्तराक्षरे अधरस्वसंयुक्ते वा स्ववर्गं प्राप्नोति–क० मू०। ५. शवर्गे–ता० मू०। ६. पश्यतः–क० मू०। तुलना–बृ० ज्यो० ४।२६४–३०८।

अर्थ—अधरोत्तर क्रमसे शवर्गका विचार करना चाहिए। अभिहत अवर्ग उत्तराक्षरोंमें शवर्ग पवर्गको प्राप्त होता है। अधराक्षर प्रश्नवर्णोंके होनेपर टवर्गको प्राप्त होता है। अनभिहत अवर्ग उत्तराक्षर, अधराक्षर या अधर स्वरसंयुक्त वर्णोंके होनेपर स्ववर्गको प्राप्त होता है। अनभिहत चवर्ग उत्तराक्षरमें या अधर स्वरसंयुक्त उत्तराक्षर प्रश्नमें शवर्ग स्ववर्गको प्राप्त होता है। अभिहत उत्तराक्षर प्रश्न के होनेपर चवर्गको, अधराक्षरमें अवर्गको प्राप्त होता है। अनभिहत पवर्गमें उत्तराक्षर या अधराक्षर अथवा अधर स्वरसंयुक्त उत्तराक्षर प्रश्नमें शवर्ग स्ववर्गको प्राप्त होता है। अनभिहत शवर्ग उत्तराक्षरमें या अधराक्षरमें या अधर स्वरसंयुक्त उत्तराक्षरमें सिंहावलोकन क्रमसे शवर्ग चवर्गको प्राप्त होता है। शवर्ग मण्डूकप्लवन गतिसे स्ववर्गको प्राप्त होता है। इस प्रकार शवर्गचक्र पूर्ण हुआ।

विवेचन—यदि प्रश्नाक्षरोंका आद्य वर्ण अभिहत संज्ञक हो तो शवर्ग पवर्गको प्राप्त होता है अर्थात् प फ ब भ म इन वर्णोंसे प्रारम्भ होनेवाला वस्तुका नाम होता है। अधराक्षधर प्रश्नवर्णोंके होनेपर प्रश्नका आद्य वर्ग शवर्ग टवर्गको प्राप्त हो जाता है। ट ठ ड ढ ण इन वर्णोंसे प्रारम्भ होनेवाला वस्तुका नाम समझना चाहिए। अनभिहत प्रश्नाक्षरोंके होनेपर प्रश्नका आद्य शवर्ग स्ववर्गको प्राप्त होता है—श ष स ह इन वर्णोंसे प्रारम्भ होनेवाला वस्तुका नाम होता है। अवर्गके प्रश्नाक्षरोंमें प्रश्नका आद्य शवर्ग स्ववर्गको प्राप्त होता है। अधराक्षर प्रश्नवर्णोंके होनेपर तथा अधर स्वरसंयुक्त अधराक्षरोंके होनेपर प्रश्नका आद्य शवर्ग स्ववर्गको प्राप्त होता है। अभिहत प्रश्नमें प्रश्नका आद्य शवर्ग स्ववर्गको प्राप्त करता है। चवर्ग उत्तराक्षर या अधर स्वरसंयुक्त उत्तराक्षरोंके होनेपर प्रश्नका आद्य शवर्ग या प्रश्नका आद्य चवर्ग स्ववर्गको प्राप्त होता है। उत्तराधर मात्राओंसे संयुक्त उत्तराक्षर प्रश्नवर्णोंके होनेपर प्रश्नका आद्य शवर्ग स्ववर्गको प्राप्त होता है। गुणोत्तर मात्राओंसे संयुक्त अधराधर प्रश्नवर्णोंके होनेपर सिंहावलोकन क्रमसे शवर्ग स्ववर्गको प्राप्त करता है। अनभिहत, पवर्ग, उत्तराक्षर, अधराक्षर और अधर स्वरसंयुक्त उत्तराक्षरोंके होनेपर प्रश्नका आद्य शवर्ग या प्रश्नका आद्य पवर्ग स्ववर्गको प्राप्त होता है। गजावलोकन क्रमसे आलिंगित वेलाके प्रश्नमें अभिहत पवर्गके प्रश्नाक्षर होनेपर प्रश्नका आद्य पवर्ग या शवर्ग स्ववर्गको प्राप्त होता है। नद्यावर्त क्रमसे आलिंगित वेलाके प्रश्नमें अभिहत टवर्गके प्रश्नाक्षर होनेपर प्रश्नका आद्य शवर्ग स्ववर्गको प्राप्त होता है। अश्वमोहित क्रमसे आलिंगित वेलाके प्रश्नमें अभिहत कवर्ग या चवर्ग अथवा शवर्गके होनेपर प्रश्नका आद्य शवर्ग स्ववर्गको प्राप्त होता है। मण्डूकप्लवन गतिसे आलिंगित वेलाके प्रश्नमें अभिहत तवर्ग या पवर्गके होनेपर प्रश्नका आद्य तवर्ग, पवर्ग या शवर्ग स्ववर्गको प्राप्त होता है। अभिधूमित वेलाके प्रश्नमें अनभिहत चवर्ग या शवर्गके प्रश्नाक्षर होनेपर प्रश्नका आद्य चवर्ग या शवर्ग स्ववर्गको प्राप्त होता है। गजावलोकन क्रमसे अभिधूमित वेलाके प्रश्नमें प्रश्नका आद्य कवर्ग अवर्ग या शवर्ग स्ववर्गको प्राप्त होते हैं। अभिधूमित वेलाके प्रश्नमें नद्यावर्त क्रमसे प्रश्नका आद्य

आलिंगित चवर्ग और टवर्ग अपने-अपनेको प्राप्त होते हैं। दग्ध वेलाके प्रश्नमें प्रश्नके आद्य पवर्ग, यवर्ग और तवर्ग सिंहावलोकन क्रमसे स्ववर्गको प्राप्त होते हैं। यहाँ इतना और स्मरण रखना होगा कि इस समयके प्रश्नमें प्रश्नका आद्य शवर्ग चवर्गको प्राप्त होता है। अभिहत उत्तराक्षर प्रश्नवर्णोंके होनेपर प्रश्नका आद्य शवर्ग या चवर्ग सिंहावलोकन क्रमसे स्ववर्गको प्राप्त होते हैं। मण्डूकप्लवन गतिसे प्रश्नका आद्य शवर्ग स्ववर्गको प्राप्त होता है। उत्तराधर संयुक्त आलिंगित प्रश्नवर्णोंके होनेपर सिंहदृष्टिसे शवर्ग टवर्ग या यवर्ग अथवा स्ववर्गको प्राप्त होते हैं।

वर्ग-नाम निकालनेका सुगम नियम

अधर प्रश्न हो तो निम्न चिन्तामणि चक्रके अनुसार स्वर व्यंजनांक संख्याको योग कर ३० से गुणा करना; गुणनफलमें २९ जोड़कर आठसे भाग देनेपर शेष अवर्गादि जानना और उत्तर प्रश्न हो तो स्वर-व्यंजनांक संख्याका योग कर ६० से गुणाकर, गुणनफलमें ५९ जोड़नेपर प्रश्न-पिण्ड होता है। इस प्रश्न-पिण्डमें आठका भाग देनेपर शेष नामके प्रथमाक्षरका वर्ण होता है।

चिन्तामणिचक्र

अ ११२	आ १४१	इ १६८	ई १२६	उ २२४	ऊ २५२'	ए २८०	ऐ ३०८	ओ ३३६	औ ३६४	अं ३८२	अः ४१०
क १५५	ख १८६	ग २१७	घ २४८	ङ २७८	च १६८	छ १९६	ज २२४	झ २५२	ञ २८०	ट २१७	ठ २५०
ड २८३	ढ ३१६	ण ३४८	त २२४	थ २५६	द २८८	ध ३०८	न ३३६	प २८५	फ ३१०	ब ३३५	भ ३६०
म ३८५	य २८०	र ३०८	ल ३३६	व ३६४	श ३४३	ष ३८२	स ४३२	ह ४६४	क्ष ५०५	० ०	० ०

उदाहरण—मोहनका प्रश्नवाक्य 'सुमेरु पर्वत' है। यहाँ प्रश्नवाक्यका आद्यक्षर उत्तर वर्णसंज्ञक है, अतः प्रश्न उत्तरसंज्ञक माना जायगा। इसका विश्लेषण किया तो—

स् + उ + म् + ए + र् + उ + प् + अ + र् + व् + अ + त् + अ = स् + म् + र् + प् + र् + व् + त् = व्यंजनाक्षर; उ + ए + उ + अ + अ + अ = स्वराक्षर;

४३२ + ३८५ + ३०८ + २८५ + ३०८ + ३६४ + २२४ = २३०६ व्यंजनांक संख्या; २२४ + २८० + २२४ + ११२ + ११२ + ११२ = १०६४ स्वरांक संख्या; २३०६ + १०६४ = ३३७० प्रश्नाक्षरांक संख्या।

३३७० × ६० = २०२२०० + ५९ = २०२२५९ ÷ ८ = २५२८२ लब्ध, ३ शेष; चवर्ग हुआ अतः वस्तुके नामका प्रथमाक्षर चवर्गसे प्रारम्भ होनेवाला समझना चाहिए। पुनः २५२८२ + २०२२५९ = २२७५४१ ÷ ५ = ४५५०८ लब्ध, शेष १;

अतः चवर्गका प्रथमाक्षर नामका होना चाहिए। एकादि शेषमें वर्गके एकादि वर्ण ग्रहण किये जाते हैं। इसलिए प्रस्तुत प्रश्नमें चवर्गका प्रथम अक्षर—च से वस्तुका नाम प्रारम्भ होता है।

नाम निकालनेके लिए सर्ववर्गांकानयन चक्र

क	७	का	७	कि	८	की	८	कु	९	कू	९	के	१०	कै	१०	को	११	कौ	११	कं	१२	कः	१२
ख	८	खा	८	खि	९	खी	९	खु	१०	खू	१०	खे	११	खै	११	खो	१२	खौ	१२	खं	१३	खः	१३
ग	९	गा	९	गि	१०	गी	१०	गु	११	गू	११	गे	१२	गै	१२	गो	१३	गौ	१३	गं	१४	गः	१४
घ	१०	घा	१०	घि	११	घी	११	घु	१२	घू	१२	घे	१३	घै	१३	घो	१४	घौ	१४	घं	१५	घः	१५
ङ	११	ङा	११	ङि	१२	ङी	१२	ङु	१३	ङू	१३	ङे	१४	ङै	१४	ङो	१५	ङौ	१५	ङं	१६	ङः	१६
च	६	चा	६	चि	७	ची	७	चु	८	चू	८	चे	९	चै	९	चो	१०	चौ	१०	चं	११	चः	११
छ	७	छा	७	छि	८	छी	८	छु	९	छू	९	छे	१०	छै	१०	छो	११	छौ	११	छं	१२	छः	१२
ज	८	जा	८	जि	९	जी	९	जु	१०	जू	१०	जे	११	जै	११	जो	१२	जौ	१२	जं	१३	जः	१३
झ	९	झा	९	झि	१०	झी	१०	झु	११	झू	११	झे	१२	झै	१२	झो	१३	झौ	१३	झं	१४	झः	१४
ञ	१०	ञा	१०	ञि	११	ञी	११	ञु	१२	ञू	१२	ञे	१३	ञै	१३	ञो	१४	ञौ	१४	ञं	१५	ञः	१५
ट	५	टा	५	टि	६	टी	६	टु	७	टू	७	टे	८	टै	८	टो	९	टौ	९	टं	१०	टः	१०
ठ	६	ठा	६	ठि	७	ठी	७	ठु	८	ठू	८	ठे	९	ठै	९	ठो	१०	ठौ	१०	ठं	११	ठः	११
ड	७	डा	७	डि	८	डी	८	डु	९	डू	९	डे	१०	डै	१०	डो	११	डौ	११	डं	१२	डः	१२
ढ	८	ढा	८	ढि	९	ढी	९	ढु	१०	ढू	१०	ढे	११	ढै	११	ढो	१२	ढौ	१२	ढं	१३	ढः	१३
ण	९	णा	९	णि	१०	णी	१०	णु	११	णू	११	णे	१२	णै	१२	णो	१३	णौ	१३	णं	१४	णः	१४
त	४	ता	४	ति	५	ती	५	तु	६	तू	६	ते	७	तै	७	तो	८	तौ	८	तं	९	तः	९
थ	५	था	५	थि	६	थी	६	थु	७	थू	७	थे	८	थै	८	थो	९	थौ	९	थं	१०	थः	१०
द	६	दा	६	दि	७	दी	७	दु	८	दू	८	दे	९	दै	९	दो	१०	दौ	१०	दं	११	दः	११
ध	७	धा	७	धि	८	धी	८	धु	९	धू	९	धे	१०	धै	१०	धो	११	धौ	११	धं	१२	धः	१२
न	८	ना	८	नि	९	नी	९	नु	१०	नू	१०	ने	११	नै	११	नो	१२	नौ	१२	नं	१३	नः	१३
प	३	पा	३	पि	४	पी	४	पु	५	पू	५	पे	६	पै	६	पो	७	पौ	७	पं	८	पः	८
फ	४	फा	४	फि	५	फी	५	फु	६	फू	६	फे	७	फै	७	फो	८	फौ	८	फ	९	फः	९
ब	५	बा	५	बि	६	बी	६	बु	७	बू	७	बे	८	बै	८	बो	९	बौ	९	बं	१०	बः	१०
भ	६	भा	६	भि	७	भी	७	भु	८	भू	८	भे	९	भै	९	भो	१०	भौ	१०	भं	११	भः	११
म	७	मा	७	मि	८	मी	८	मु	९	मू	९	मे	१०	मै	१०	मा	११	मौ	११	मं	१२	मः	१२
य	२	या	२	यि	३	यी	३	यु	४	यू	४	ये	५	यै	५	यो	६	यौ	६	यं	७	यः	७
र	३	रा	३	र	४	री	४	रु	५	रू	५	रे	६	रै	६	रो	७	रौ	७	रं	८	रः	८
ल	४	ला	४	लि	५	ली	५	लु	६	लू	६	ले	७	लै	७	लो	८	लौ	८	लं	९	लः	९
व	५	वा	५	वि	६	वी	६	वु	७	वू	७	वे	८	वै	८	वो	९	वौ	९	वं	१०	वः	१०
श	१	शा	१	शि	२	शी	२	शु	३	शू	३	शे	४	शै	४	शो	५	शौ	५	शं	६	शः	६
ष	२	षा	२	षि	३	षी	३	षु	४	षू	४	षे	५	षै	५	षो	६	षौ	६	षं	७	षः	७
स	३	सा	३	सि	४	सी	४	सु	५	सू	५	से	६	सै	६	सो	७	सौ	७	सं	८	सः	८
ह	४	हा	४	हि	५	ही	५	हु	६	हू	६	हे	७	है	७	हो	८	हौ	८	हं	९	हः	९

प्रश्नाक्षरोंकी स्वर-व्यंजनांक संख्यामें-से आलिंगित प्रश्न हो तो एक कम करनेसे, अभिधूमित हो तो दो कम करनेसे और दग्ध हो तो तीन कम करनेसे प्रश्नपिण्ड संख्यामें ८ का भाग देनेसे आठ अर्थात् शून्य शेषमें अवर्ग, सात शेषमें कवर्ग, छः शेषमें चवर्ग, पाँच शेषमें टवर्ग, चार शेषमें तवर्ग, तीन शेषमें पवर्ग, दो शेषमें यवर्ग, एवं एक शेषमें शवर्ग होता है। वर्गका आनयन कर लेनेके पश्चात् अक्षरानयनको निम्न सिद्धान्तसे कहना चाहिए।

प्रश्नश्रेणी-प्रश्नाक्षरोंमें प्रथमाक्षर आलिंगित स्वरसंयुक्त हो तो जिस वर्गका प्रश्न है उसी वर्गका प्रथमाक्षर जानना। अधराक्षर अधर स्वरसंयुक्त हों तो उस वर्गका दूसरा अक्षर नामाक्षर होता है। उत्तराधर वर्ण दग्ध स्वरसंयुक्त हों तो उस वर्गका तीसरा अक्षर, उत्तर वर्ण अधर स्वरसंयुक्त हों तो उस वर्गका प्रथम अक्षर नामाक्षर, प्रश्नमें अभिघाताक्षर नामाक्षर हों तो उस वर्गका पाँचवाँ अक्षर नामाक्षर, अभिहत प्रश्न हो तो उस वर्गका चौथा अक्षर नामाक्षर, अनभिहत प्रश्न हो तो उस वर्गका तीसरा अक्षर नामाक्षर, असंयुक्त प्रश्न हो तो उस वर्गका दूसरा अक्षर नामाक्षर एवं संयुक्त प्रश्न हो तो उस वर्गका प्रथम अक्षर नामाक्षर होता है।

नामाक्षर लानेकी गणित विधि यह है कि पूर्वोक्त विधिसे सर्ववर्गांकानयनमें जो प्रश्नपिण्ड आया है, उसमें वर्गांकानयनकी लब्धिको जोड़कर पाँचका भाग देनेपर एकादि शेषमें उस वर्गका प्रथम, द्वितीय, तृतीय, चतुर्थ और पंचम वर्ण होता है।

उदाहरण—मोहनका प्रश्नवाक्य 'सुमेरु पर्वत' है। यहाँ प्रश्नवाक्यके प्रारम्भमें उकारकी मात्रा है अतः यह दग्ध प्रश्न माना जायगा। प्रश्नवाक्यका विश्लेषण निम्न प्रकार हुकार हुआ—

स् + उ + म् + ए + र् + उ + प् + अ + र् + व् + अ + त् + अ = स् + म् + र् प् + र् + व् + त् = व्यंजनाक्षर

उ + ए + उ + अ + अ + अ = स्वराक्षर या मात्राएँ। सर्ववर्गांकानयनके लिए विश्लेषण—

सु + मे + रु + प + र्व + त

५ + १० + ५ + ३ + ३ + ५ + ४ = ३५ प्रश्नांक संख्या। यहाँ दग्ध प्रश्न होनेसे तीन घटाया तो—३५ − ३ = ३२ प्रश्नपिण्डांक संख्या, ३२ ÷ ८ = ४ लब्ध, शेष ०, अतः अवर्गका प्रश्न है—

३२ + ४ = ३६ ÷ ५ = ७ लब्ध, १ शेष यहाँपर आया। अतः आ से प्रारम्भ होनेवाला नाम समझना चाहिए।

चिन्तामणि चक्र और सर्ववर्गानयन चक्र इन दोनोंके द्वारा किसी भी वस्तुका नाम जाना जा सकता है। चिन्तामणि चक्र अनुभूत है, इसके द्वारा सम्यक् गणित क्रिया करनेपर वस्तु या चोरका नाम यथार्थ निकलता है।

आचार्यने बिना गणित क्रियाके केवल आलिंगित, अभिधूमित और दग्ध इन तीन प्रकारके प्रश्नोंके अनुसार बताया है कि प्रत्येक वर्ग पाँचों वर्गोंमें भ्रमण करता हुआ किसी निश्चित वर्गको प्राप्त होता है। वस्तु या व्यक्तिका नाम भी उसी वर्गके नामपर होता है।

गाथा—

जो पढमो सो मरओ, जो मरओ सो होइ अत्ति आ।
अत्तिल्लेसा पढमो डातण्णामं णत्थि सन्देहो ॥

इति केवलज्ञानप्रश्नचूडामणिः समाप्तः ॥

■

परिशिष्ट [१]

नक्षत्रोंके नाम

अश्विनी, भरणी, कृत्तिका, रोहिणी, मृगशिरा, आर्द्रा, पुनर्वसु, पुष्य, आश्लेषा, मघा, पूर्वाफाल्गुनी, उत्तराफाल्गुनी, हस्त, चित्रा, स्वाति, विशाखा, अनुराधा, ज्येष्ठा, मूल, पूर्वाषाढ़ा, उत्तराषाढ़ा, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, पूर्वाभाद्रपद, उत्तराभाद्रपद और रेवती ये २७ नक्षत्र हैं। धनिष्ठा से रेवती तक पाँच नक्षत्रोंमें पंचक माना जाता है। अश्विनी, रेवती, आश्लेषा, ज्येष्ठा और मूल इन पाँच नक्षत्रोंमें जन्मे बालकको मूल दोष माना जाता है। कोई-कोई मघा नक्षत्रको भी मूलमें परिगणित करते हैं।

योगोंके नाम

विष्कम्भ, प्रीति, आयुष्मान्, सौभाग्य, शोभन, अतिगण्ड, सुकर्मा, धृति, शूल, गण्ड, वृद्धि, ध्रुव, व्याघात, हर्षण, वज्र, सिद्धि, व्यतीपात, वरीयान्, परिघ, शिव, सिद्ध, साध्य, शुभ, शुक्ल, ब्रह्म, ऐन्द्र और वैधृति।

करणोंके नाम

बव, बालव, कौलव, तैतिल, गर, वणिज, विष्टि, शकुनी, चतुष्पद, नाग, किंस्तुघ्न।

समस्त शुभ कार्योंमें त्याज्य

जन्मनक्षत्र, जन्ममास, जन्मतिथि, व्यतीपातयोग, भद्रा, वैधृतियोग, अमावास्या, क्षयतिथि, वृद्धितिथि, क्षयमास, अधिकमास, कुलिक, अर्द्धयाम, महापात, विष्कम्भ योग और वज्र योगके प्रारम्भकी तीन-तीन घटिकाएँ, परिघ योगका पूर्वार्ध, शूलयोगके पाँच दण्ड, गण्ड और अतिगण्ड की छः-छः घटिकाएँ एवं व्याघातयोगकी नौ घटिकाएँ समस्त शुभ कार्योंमें त्याज्य हैं।

सीमन्तोन्नयनमुहूर्त्त

बृहस्पति, रवि और मंगलवारमें; मृगशिर, पुष्य, मूल, श्रवण, पुनर्वसु और हस्त नक्षत्रमें, चतुर्थी, नवमी, चतुर्दशी, अमावस्या, द्वादशी, षष्ठी और अष्टमी को छोड़कर अन्य तिथियोंमें; मासेश्वरके बली रहते, गर्भाधानसे आठवें या छठवें मासमें, केन्द्र त्रिकोणमें (१।४।७।१०।५।९) शुभ ग्रहोंके रहते, ग्यारहवें, छठवें, तीसरे स्थानमें क्रूर ग्रहोंके रहते हुए, पुरुषसंज्ञक ग्रहोंके लग्न अथवा नवांशमें रहनेपर सीमन्तोन्नयन कर्म श्रेष्ठ

है। किसी-किसी आचार्यके मतसे उत्तराषाढ़ा, उत्तराभाद्रपद, उत्तराफाल्गुनी, रोहिणी और रेवती नक्षत्रमें और चन्द्रमा, बुध, गुरु और शुक्र इन-इन वारोंमें सीमन्तोन्नयन करना शुभ है।

तिथि, नक्षत्र, वार, योग और करण प्रत्येक दिनके प्रत्येक पंचांगमें लिखे रहते हैं, अतः पंचांग देखकर प्रत्येक मुहूर्त्त निकाल लेना चाहिए।

सीमन्तोन्नयनमुहूर्त्त चक्र

नक्षत्र	मृ० पु० मू० श्र० पुन० ह० उषा० उभा० उफा० रो० रे०
वार	गु० सू० मं०
तिथि	१। २। ३। ५। ७। १०। ११। १३।

पुंसवनमुहूर्त्त

श्रवण, रोहिणी और पुष्य नक्षत्रमें, शुभ ग्रहोंके दिनमें, गर्भाधानसे तीसरे मासमें, शुभ ग्रहोंसे दृष्ट, युत वा शुभ ग्रह सम्बन्धी लग्नमें और लग्नसे आठवें स्थानमें किसी ग्रह-के न रहते, दोपहरके पूर्व पुंसवन करना चाहिए, इसमें सीमन्तोन्नयनके नक्षत्र भी लिये गये हैं।

पुंसवनमुहूर्त्त चक्र

नक्षत्र	श्र० रो० पु० उत्तम नक्षत्र हैं मृ० पुन० ह० रे० मू० उषा० उभा० उफा० मध्यम नक्षत्र हैं
वार	मं० शु० सू० बृ०
तिथि	२।३।५।७।१०।११।१२।१३
लग्न	पुंसंज्ञक लग्नमें, लग्नसे १।४।५।७।९।१० इन स्थानोंमें शुभ ग्रह हों तथा चन्द्रमा १।६।८।१२ इन स्थानोंमें न हो और पापग्रह ३। ६।११ में हों

जातकर्म और नामकर्मका मुहूर्त

यदि किसी कारणवश जन्मकालमें जातकर्म नहीं किया गया हो तो अष्टमी, चतुर्दशी, अमावस्या, पौर्णमासी, सूर्यसंक्रान्ति तथा चतुर्थी और नवमी छोड़कर अन्य तिथियोंमें, व्यतीपातादि दोषरहित शुभ ग्रहोंके दिनोंमें, जन्मकालसे ग्यारहवें या बारहवें

दिनमें, मृगशिर, रेवती, चित्रा, अनुराधा, तीनों उत्तरा, रोहिणी, हस्त, अश्विनी, पुष्य, अभिजित, स्वाती, पुनर्वसु, श्रवण, धनिष्ठा और शतभिष नक्षत्रमें जातकर्म और नामकर्म करने चाहिए। जैन मान्यताके अनुसार नामकर्म ४५ दिन तक किया जा सकता है।

जातकर्म और नामकर्म मुहूर्त्त चक्र

नक्षत्र	श० मृ० रे० चि० अनु० उषा० उभा० उफा० रो० ह० अश्वि० पु० अभि० स्वा० पुन० श्र० ध०
वार	सो० बु० वृ० शु०
तिथि	१।२।३।५।७।१०।११।१३।
शुभलग्न	२।५।८।११
लग्नशुद्धि	लग्नसे १।५।७।९।१० इन स्थानोंमें शुभ ग्रह उत्तम हैं। ३।६।११ इन स्थानोंमें पापग्रह शुभ हैं। ८।१२ में कोई भी ग्रह नहीं होना चाहिए।

स्तनपान मुहूर्त्त

अश्विनी, रोहिणी, पुष्य, पुनर्वसु, उत्तराफाल्गुनी, हस्त, चित्रा, अनु०, मूल, उत्तराषाढ़ा, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिष, उत्तराभाद्रपद और रेवती इन नक्षत्रोंमें शुभ वार और शुभ लग्नमें स्तनपान करना शुभ है।

स्तनपानमुहूर्त्त चक्र

नक्षत्र	अ० रो० पु० पुन० उफा० ह० चि० अनु० उषा० मू० ध० श० उभा० रे०
वार	शु० बु० सो० गु०

सूतिकास्नानमुहूर्त्त

रेवती, तीनों उत्तरा, रोहिणी, मृगशिर, हस्त, स्वाती, अश्विनी और अनुराधा नक्षत्रमें, रवि, मंगल और गुरुवारमें प्रसूता स्त्रीको स्नान कराना शुभ है। आर्द्रा, पुनर्वसु, पुष्य, श्रवण, मघा, भरणी, विशाखा, कृत्तिका, मूल और चित्रा नक्षत्रमें; बुध और शनिवारमें, अष्टमी, षष्ठी, द्वादशी, चतुर्थी, नवमी और चतुर्दशी तिथिमें प्रसूता स्त्रीको स्नान नहीं करना चाहिए।

सूतिकास्नानमुहूर्त्त चक्र

नक्षत्र	रे० उभा० उषा० उफा० रो० मू० ह० स्वा० अश्वि० अनु०
वार	सू० मं० गु०
तिथि	१।२।३।५।७।१०।११।१३
लग्नशुद्धि	पंचममें कोई ग्रह न हो १।४।७।१० में शुभग्रह हो

दोलारोहणमुहूर्त्त

रेवती, मृगशिर, चित्रा, अनुराधा, हस्त, अश्विनी, पुष्य, अभिजित, तीनों उत्तरा और रोहिणी नक्षत्रमें तथा चन्द्र, बुध, बृहस्पति और शुक्रवारमें पहले पहल बालकको पालनेपर चढ़ाना शुभ है।

दोलारोहणमुहूर्त्त चक्र

नक्षत्र	रे० मृ० चि० अनु० ह० अश्वि० पु० अभि० उभा० उषा० उफा० रो०
वार	सो० बु० गु० शु०
तिथि	१।२।३।५।७।१०।११।१२।१३

भूम्युपवेशनमुहूर्त्त

मंगलके बली होनेपर, नवमी, चौथ, चतुर्दशीको छोड़कर अन्य तिथियोंमें, तीनों उत्तरा, रोहिणी, मृगशिर, ज्येष्ठा, अनुराधा, हस्त, अश्विनी और पुष्य नक्षत्रमें बालकको भूमिमें बैठाना चाहिए।

भूम्युपवेशनमुहूर्त्त चक्र

नक्षत्र	उषा० उभा० उफा० रो० मृ० ज्ये० अनु० अश्वि० ह० पु० अभि०
वार	सो० बु० गु० शु०
तिथि	१।२।३।५।७।११।१२।१३

बालकको बाहर निकालनेका मुहूर्त्त

अश्विनी, मृगशिर, पुनर्वसु, पुष्य, हस्त, अनुराधा, श्रवण, धनिष्ठा और रेवती नक्षत्रमें, षष्ठी, अष्टमी, द्वादशी, प्रतिपदा, पूर्णिमा, अमावस्या और रिक्ताको छोड़कर शेष तिथियोंमें बालकको घरसे बाहर निकालना शुभ है।

शिशुनिष्क्रमणमुहूर्त्त चक्र

नक्षत्र	अश्वि० मृ० पुन० पु० ह० अनु० श्र० ध० रे० और मतान्तरसे उषा० उभा० उफा० श० मू० रो०
तिथि	

अन्नप्राशन मुहूर्त्त

चतुर्थी, नवमी, चतुर्दशी, प्रतिपदा, षष्ठी, एकादशी, अष्टमी, अमावस्या और द्वादशी तिथिको छोड़कर अन्य तिथियोंमें, जन्मराशि अथवा जन्मलग्नसे आठवीं राशि, आठवाँ नवांश, मीन, मेष और वृश्चिकको छोड़कर अन्य लग्नमें, तीनों उत्तरा, रोहिणी, मृगशिर, रेवती, चित्रा, अनुराधा, हस्त, अश्विनी, पुष्य, अभिजित, स्वाती, पुनर्वसु, श्रवण, धनिष्ठा और शतभिष नक्षत्रमें छठवें माससे लेकर सम मासमें अर्थात् छठवें, आठवें, दसवें इत्यादि मासोंमें बालकोंका और पाँचवें माससे लेकर विषम मासोंमें, अर्थात् पाँचवें, सातवें, नवें इत्यादि मासोंमें कन्याओंका अन्नप्राशन शुभ होता है। परन्तु अन्नप्राशन शुक्लपक्षमें दोपहरके पूर्व करना चाहिए।

अन्नप्राशनके लिए लग्नशुद्धि

लग्नसे पहले, चौथे, सातवें और तीसरे स्थानमें शुभ ग्रह हों, दशवें स्थानमें कोई ग्रह न हो, तृतीय, षष्ठ और एकादश स्थानमें पापग्रह हों और लग्न, आठवें और छठवें स्थानको छोड़ अन्य स्थानोंमें चन्द्रमा स्थित हो ऐसी लग्नमें अन्नप्राशन शुभ होता है।

अन्नप्राशनमुहूर्त्त चक्र

नक्षत्र	रो० उभा० उषा० उफा० रे० चि० अनु० ह० पु० अश्वि० अभि० पुन० स्वा० श्र० ध० श०
वार	सो० बु० बृ० शु०
तिथि	२।३।५।७।१०।१३।१५
लग्न	२।३।४।५।६।७।९।१०।११
लग्नशुद्धि	शुभग्रह १।४।७।९।५।२ में, पापग्रह ३।६।११ इन स्थानोंमें, चन्द्रमा ४।६।८।१२ इनमें न हो।

शिशुताम्बूलभक्षणमुहूर्त्त

मंगल और शनैश्चरको छोड़ कर अन्य दिनोंमें, तीनों उत्तरा, रोहिणी, मृगशिर, रेवती, चित्रा, अनुराधा, हस्त, अश्विनी, पुष्य, श्रवण, मूल, पुनर्वसु, ज्येष्ठा, स्वाती और धनिष्ठा नक्षत्रमें मिथुन, मकर, कन्या, कुम्भ, वृष और मीन लग्नमें चौथे, सातवें, दशवें, पाँचवें, नवें और लग्न स्थानमें शुभ ग्रहोंके रहते छठवें, ग्यारहवें और तीसरे स्थानमें पापग्रहोंके रहते बालकका ताम्बूल भक्षण शुभ होता है।

शिशु ताम्बूलभक्षणमुहूर्त्त चक्र

नक्षत्र	उषा० उभा० उफा० रो० मृ० रे० चि० अनु० ह० अश्वि० पु० श्र० मू० पुन० ज्ये० स्वा० ध०
वार	बु० गु० शु० सो० सू०
लग्न	३।१०।६।११।२।१२
लग्नशुद्धि	शुभग्रह १।४।७।१०।५।९ में, पापग्रह २।६।११ में शुभ होते हैं।

कर्णवेधमुहूर्त्त

चैत्र, पौष, आषाढ़ शुक्ल एकादशीसे कार्तिक शुक्ल एकादशी तक, जन्ममास, रिक्ता तिथि (४।९।१४) सम वर्ष और जन्मताराको छोड़कर जन्मसे छठवें, सातवें, आठवें महीनेमें अथवा बारहवें या सोलहवें दिन, बुध, गुरु, शुक्र, सोमवारमें और श्रवण, धनिष्ठा, पुनर्वसु, मृगशिर, रेवती, चित्रा, अनुराधा, हस्त, अश्विनी और पुष्य नक्षत्रमें बालकका कर्णवेध शुभ होता है।

कर्णवेधमुहूर्त्तचक्र

नक्षत्र	श्र० ध० पुन० मृ० रे० चि० अनु० ह० अश्वि० पु०
वार	सो० बु० बृ० शु०
तिथि	१।२।३।५।६।७।१०।११।१२।१३।१५
लग्न	२।३।४।६।७।९।१२
लग्नशुद्धि	शुभग्रह १।३।४।५।७।९।१०।११ इन स्थानोंमें पाप ग्रह ३।६।११ इन स्थानोंमें शुभ होते हैं। अष्टममें कोई ग्रह न हो। यदि गुरु लग्नमें हो तो विशेष उत्तम होता है।

चूडाकर्म (मुण्डन) का मुहूर्त्त

जन्मसे तीसरे, पाँचवें, सातवें, इत्यादि विषम वर्षोंमें अष्टमी, द्वादशी, चतुर्थी, नवमी, चतुर्दशी, प्रतिपदा, षष्ठी, अमावस्या, पूर्णमासी और सूर्यसंक्रान्तिको छोड़ कर अन्य तिथियोंमें, चैत्र महीनेको छोड़ उत्तरायणमें बुध, चन्द्र, शुक्र और बृहस्पतिवारमें शुभ ग्रहोंके लग्न अथवा नवांशमें, जिसका मुण्डन कराना हो उसके जन्मलग्न अथवा जन्मराशिसे आठवीं राशिको छोड़कर अन्य ग्रहोंके न रहते, ज्येष्ठा, मृगशिर, रेवती, चित्रा, स्वाती, पुनर्वसु, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिष, हस्त, अश्विनी और पुष्य नक्षत्रमें, लग्नसे तृतीय, एकादश और षष्ठ स्थानमें पापग्रहोंके रहते मुण्डन कराना शुभ है ।

मुण्डनमुहूर्त्तचक्र

नक्षत्र	ज्ये० मृ० रे० चि० ह० अश्वि० पु० अभि० स्वा० पुन० श्र० ध० श०
वार	सो० बु० बृ० शु०
तिथि	२।३।५।७।१०।११।१२
लग्न	२।३।४।६।७।९।१२
लग्नशुद्धि	शुभ ग्रह १।२।४।५।७।९।१० स्थानोंमें शुभ होते हैं, पापग्रह ३।६।११ में शुभ हैं । अष्टममें कोई ग्रह न हो ।

अक्षरारम्भ मुहूर्त्त

जन्मसे पाँचवें वर्षमें, एकादशी, द्वादशी, दशमी, द्वितीया, षष्ठी, पंचमी और तृतीया तिथिमें, उत्तरायणमें, हस्त, अश्विनी, पुष्य, श्रवण, स्वाती, रेवती, पुनर्वसु, आर्द्रा, चित्रा और अनुराधा नक्षत्रमें, मेष, मकर, तुला और कर्कको छोड़ कर अन्य लग्नमें बालकको अक्षरारम्भ कराना शुभ है ।

अक्षरारम्भमुहूर्त्तचक्र

नक्षत्र	ह० अश्वि० पु० श्र० स्वा० रे० पुन० चि० अनु०
वार	सो० बु० शु० श०
तिथि	२।३।५।६।१०।११।१२
लग्न	२।३।६।१२। इन लग्नोंमें परन्तु अष्टममें कोई ग्रह न हो

विद्यारम्भमुहूर्त्त

मृगशिर, आर्द्रा, पुनर्वसु, हस्त, चित्रा, स्वाती, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिष, अश्विनी, मूल, इन तीनों पूर्वा (पूर्वाभाद्रपद, पूर्वाषाढ़ा, पूर्वाफाल्गुनी) पुष्य, आश्लेषा, इन नक्षत्रोंमें रवि, गुरु, शुक्र इन वारोंमें, षष्ठी, पंचमी, तृतीया, एकादशी, द्वादशी, दशमी, द्वितीया इन तिथियोंमें और लग्नसे नवमें, पाँचवें, पहिले, चौथे, सातवें, दशवें स्थानमें शुभ ग्रहोंके रहनेपर विद्यारम्भ कराना शुभ है। किसी-किसी आचार्यके मतसे तीनों उत्तरा, रेवती, और अनुराधामें भी विद्यारम्भ शुभ कहा गया है।

विद्यारम्भमुहूर्त्तचक्र

नक्षत्र	मृ० आ० पुन० ह० चि० स्वा० श्र० ध० श० अश्वि० मू० पूभा० पूषा० पूफा० पु० आश्ले०
वार	सू० गु० शु०
तिथि	५।६।३।११।१२।१०।२

यज्ञोपवीतमुहूर्त्त

हस्त, अश्विनी, पुष्य, तीनों उत्तरा, रोहिणी, आश्लेषा, स्वाती, पुनर्वसु, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिष, मूल, मृगशिर, रेवती, चित्रा, अनुराधा, तीनों पूर्वा और आर्द्रा नक्षत्र में रवि, बुध, शुक्र और सोमवारमें, द्वितीया, तृतीया, पंचमी, एकादशी और दशमीमें यज्ञोपवीत धारण करना शुभ है।

यज्ञोपवीतमुहूर्त्तचक्र

नक्षत्र	ह० अश्वि० पु० उफा० उषा० उभा० रो० आश्ले० स्वा० पुन० श्र० ध० श० मू० रे० चि० अनु० पूफा० पूषा० पूभा० आ०
वार	सू० बु० शु० सो० गु०
तिथि	शुक्ल पक्ष में २।३।५।१०।११।१२। कृष्ण पक्ष में १।२।३।५।
लग्नशुद्धि	लग्नेश ६।८ स्थानोंमें न हो, शुभग्रह १।४।७।५।९।१० स्थानों में शुभ होते हैं, पापग्रह ३।६।११। में शुभ होते हैं, परन्तु १।४।८ में पापग्रह शुभ नहीं होते हैं।

वाग्दानमुहूर्त्त

उत्तराषाढ़ा, स्वाती, श्रवण, तीनों पूर्वा, अनुराधा, धनिष्ठा, कृत्तिका, रोहिणी, रेवती, मूल, मृगशिर, मघा, हस्त, उत्तराफाल्गुनी और उत्तराभाद्रपद नक्षत्रमें वाग्दान करना शुभ है।

विवाहमुहूर्त्त

मूल, अनुराधा, मृगशिर, रेवती, हस्त, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ़ा, उत्तराभाद्रपद, स्वाती, मघा, रोहिणी, इन नक्षत्रोंमें और ज्येष्ठ, माघ, फाल्गुन, वैशाख, मार्गशीर्ष, आषाढ़ इन महीनोंमें विवाह करना शुभ है। विवाहका सामान्य दिन पंचांगमें लिखा रहता है। अतः पंचांगके दिनको लेकर उस दिन वर-कन्याके लिए यह विचार करना—कन्याके लिए गुरुबल, वरके लिए सूर्यबल, दोनोंके लिए चन्द्रबल देख लेना चाहिए।

गुरुबलविचार

बृहस्पति कन्याकी राशिसे नवम, पंचम, एकादश, द्वितीय और सप्तम राशिमें शुभ दशम, तृतीय, षष्ठ और प्रथम राशिमें दान देनेसे शुभ और चतुर्थ, अष्टम, द्वादश राशि में अशुभ होता है।

सूर्यबलविचार

सूर्य वरकी राशिसे तृतीय, षष्ठ, दशम, एकादश, द्वितीय और सप्तम राशिमें शुभ प्रथम, द्वितीय, पंचम, सप्तम, नवम, राशिमें दान देनेसे शुभ और चतुर्थ अष्टम, द्वादश, राशिमें अशुभ होता है।

चन्द्रबलविचार

चन्द्रमा वर और कन्याकी राशिसे तीसरा, छठवाँ, सातवाँ, दशवाँ, ग्यारहवाँ शुभ, पहिला, दूसरा, पाचवाँ, नौवाँ, दान देनेसे शुभ और चौथा, आठवाँ, बारहवाँ अशुभ होता है।

विवाहमें अन्धादि लग्न

दिनमें तुला और वृश्चिक राशिमें तुला और मकर बधिर हैं तथा दिनमें सिंह मेष, वृष और रात्रिमें कन्या, मिथुन, कर्क अन्धसंज्ञक हैं। दिनमें कुम्भ और रात्रिमें मीन ये दो लग्न पंगु होते हैं। किसी-किसी आचार्यके मतसे धन, तुला, वृश्चिक ये अपराह्णमें बधिर हैं, मिथुन, कर्क, कन्या ये लग्न रात्रिमें अन्धे हैं सिंह, मेष, वृष, लग्न दिनमें अन्धे हैं और मकर, कुम्भ, मीन ये लग्न प्रातःकाल तथा सायंकालमें कुबड़े होते हैं।

अन्धादि लग्नोंका फल

यदि विवाह बधिर लग्नमें हो तो वर कन्या दरिद्र, दिवान्ध लग्नमें हो तो कन्या विधवा, रात्र्यन्ध लग्नमें हो तो सन्ततिमरण और पंगु हो तो धननाश होता है।

लग्नशुद्धि

लग्नसे बारहवें शनि, दसवें मंगल, तीसरे शुक्र, लग्नमें चन्द्रमा और क्रूर ग्रह अच्छे नहीं होते। लग्नेश और सौम्य ग्रह आठवेंमें अच्छे नहीं होते हैं और सातवेंमें कोई भी ग्रह शुभ नहीं होता है।

ग्रहोंका बल

प्रथम, चौथे, पाँचवें, नवें और दसवें स्थानमें स्थित बृहस्पति सब दोषोंको नष्ट करता है। सूर्य ग्यारहवें स्थानमें स्थित तथा चन्द्रमा वर्गोत्तम लग्नमें स्थित नवांश दोष-को नष्ट करता है। बुध लग्न, चौथे, पाँचवें, नवें और दसवें स्थानमें हो तो सौ दोषोंको दूर करता है। यदि शुक्र इन्हीं स्थानोंमें हो तो दो सौ दोषोंको दूर करता है। यदि इन्हीं स्थानोंमें बृहस्पति स्थित हो तो एक लाख दोषोंको नाश करता है। लग्नका स्वामी अथवा नवांशका स्वामी आदि लग्न, चौथे, दशवें, ग्यारहवें स्थानमें स्थित हो तो अनेक दोषोंको शीघ्र ही भस्म कर देता है।

वधूप्रवेशमुहूर्त्त

विवाहके दिनसे १६ दिनके भीतर नव, सात, पाँच दिनमें वधूप्रवेश शुभ है। यदि किसी कारणसे १६ दिनके भीतर वधूप्रवेश न हो तो विषम मास, विषम दिन और विषम वर्षमें वधूप्रवेश करना चाहिए।

तीनों उत्तरा (उत्तराभाद्रपद, उत्तराफाल्गुनी और उत्तराषाढा) रोहिणी, अश्विनी, पुष्य, हस्त, चित्रा, अनुराधा, रेवती, मृगशिर, श्रवण, धनिष्ठा, मूल, मघा और स्वाती नक्षत्रमें रिक्ता (४।९।१४) छोड़ शुभ तिथियोंमें और रवि, मंगल, बुध छोड़ शेष वारोंमें वधूप्रवेश करना शुभ है।

वधूप्रवेशमुहूर्त्तचक्र

नक्षत्र	उषा० उफा० उभा० रो० अश्वि० ह० पु० मृ० रे० चि० अनु० श्र० ध० मू० म० स्वा०
वार	सो० गु० शु० श०
तिथि	१।२।३।५।७।८।१०।११।१२।१३।१५
लग्न	२।३।५।६।८।९।११।१२

द्विरागमन मुहूर्त्त

विषम (१।३।५।७) वर्षों में कुम्भ, वृश्चिक, मेष राशियोंके सूर्यमें, गुरु, शुक्र चन्द्र, इन वारोंमें, मिथुन, मीन, कन्या, तुला, वृष इन लग्नोंमें और अश्विनी, पुष्य, हस्त, उत्तराषाढ़ा, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराभाद्रपद, रोहिणी, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिष, पुनर्वसु, स्वाती, मूल, मृगशिर, रेवती, चित्रा, अनुराधा, इन नक्षत्रोंमें द्विरागमन शुभ है।

द्विरागमनमुहूर्त्तचक्र

समय	१।३।५।७।९ इन वर्षोंमें कुं० वृ० मे० के सूर्यमें
नक्षत्र	अश्वि० पु० ह० उषा० उभा० उफा० रो० श्र० ध० श० पुन० स्वा० मू० मृ० रे० चि० अनु०
वार	बु० बृ० शु० सो०
तिथि	१।२।३।५।७।१०।११।१२।१३।१५
लग्न	२।३।६।७।१२
लग्नशुद्धि	लग्नसे १।२।३।५।७।१०।११ स्थानोंमें शुभग्रह और ३।६।११ में पापग्रह शुभ होते हैं ।

यात्रामुहूर्त्त

रेवती, श्रवण, हस्त, पुष्य, अश्विनी, पुनर्वसु, ज्येष्ठा, अनुरावा, धनिष्ठा और मृगशिर नक्षत्रमें यात्रा करना शुभ है ।

सब दिशाओंमें यात्राके लिए नक्षत्र

हस्त, पुष्य, अश्विनी, अनुराधा ये नक्षत्र चारों दिशाओंकी यात्रामें शुभ होते हैं। परन्तु मंगल, बुध और शुक्रवारको दक्षिण नहीं जाना चाहिए ।

वार शूल और नक्षत्र शूल

ज्येष्ठा नक्षत्र, सोमवार और शनिवारको पूर्व, पूर्वभाद्रपद नक्षत्र और गुरुवारको दक्षिण, शुक्रवार और रोहिणी नक्षत्रको पश्चिम और मंगल तथा बुधवारको उत्तराफाल्गुनी नक्षत्रमें उत्तर दिशाको नहीं जाना चाहिए । यात्रामें चन्द्रमाका विचार अवश्य करना चाहिए । दिशाओंमें चन्द्रमाका वास निम्नप्रकारसे जानना चाहिए ।

चन्द्रवासविचार

मेष, सिंह और धन राशिका चन्द्रमा पूर्व दिशामें; वृष, कन्या और मकर राशिका चन्द्रमा दक्षिण दिशामें; तुला, मिथुन और कुम्भ राशिका चन्द्रमा पश्चिम दिशामें; कर्क वृश्चिक और मीनका चन्द्रमा उत्तर दिशामें वास करता है ।

चन्द्रफल

सम्मुख चन्द्रमा धन लाभ करनेवाला, दक्षिण चन्द्रमा सुख सम्पत्ति देनेवाला, पृष्ठ

चन्द्रमा शोक ताप देनेवाला और वाम चन्द्रमा धन नाश करनेवाला होता है।

यात्रामुहूर्त्तचक्र

नक्षत्र	अश्वि० पुन० अनु० मृ० पु० रे० ह० श्र० ध० ये उत्तम हैं। रो० उषा० उभा० उफा० पूषा० पूभा० ज्ये० मू० श० ये मध्यम हैं। भ० कृ० आ० आश्ले० म० चि० स्वा० वि० ये निन्द्य हैं।
तिथि	२।३।५।७।१०।११।१३।

चन्द्रवासचक्र

पूर्व	पश्चिम	दक्षिण	उत्तर
मेष	मिथुन	वृष	कर्क
सिंह	तुला	कन्या	वृश्चिक
धन	कुम्भ	मकर	मीन

समयशूलचक्र

पूर्व	प्रातःकाल
पश्चिम	सायंकाल
दक्षिण	मध्याह्नकाल
उत्तर	अर्धरात्रि

दिक्शूलचक्र

पूर्व	दक्षिण	पश्चिम	उत्तर
चं० श०	बृ०	सू० शु०	मं० बु०

योगिनीचक्र

पू०	आ०	द०	नै०	प०	वा०	उ०	ई०	दिशा
९।१	३।११	१३।५	१२।४	१४।६	१५।७	१०।२	३०।८	तिथि

गृहनिर्माणमुहूर्त्त

मृगशिर, पुष्य, अनुराधा, धनिष्ठा, शतभिषा, चित्रा, हस्त, स्वाती, रोहिणी, रेवती, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ़ा, उत्तराभाद्रपद, इन नक्षत्रोंमें, चन्द्र, बुध, गुरु, शुक्र, शनि इन वारोंमें और द्वितीया, तृतीया, पंचमी, सप्तमी, दशमी, एकादशी, त्रयोदशी इन तिथियोंमें गृहारम्भ श्रेष्ठ होता है।

गृहारम्भमुहूर्त्तचक्र

नक्षत्र	मृ० पु० अनु० उफा० उभा० उषा० ध० श० चि० ह० स्वा० रो० रे०
वार	चं० बु० बृ० शु० श०
तिथि	२।३।५।७।१०।११।१३
मास	वै० श्रा० भा० पौ० फा०
लग्न	२।३।५।६।८।९।११।१२
लग्नशुद्धि	शुभग्रह लग्नसे १।४।७।१०।५।९ इन स्थानोंमें एवं पापग्रह ३।६।११ इन स्थानोंमें शुभ होते हैं। ८।१२ स्थानमें कोई भी ग्रह नहीं होना चाहिए।

नूतनगृहप्रवेशमुहूर्त्त

उत्तराभाद्रपद, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ़ा, रोहिणी, मृगशिरा, चित्रा, अनुराधा, रेवती इन नक्षत्रोंमें, चन्द्र, बुध, गुरु, शुक्र, शनि वारोंमें और द्वितीया, तृतीया, पंचमी, षष्ठी, सप्तमी, दशमी, एकादशी, द्वादशी, त्रयोदशी इन तिथियोंमें गृहप्रवेश करना शुभ है।

नूतनगृहप्रवेशमुहूर्त्तचक्र

नक्षत्र	उभा० उषा० उफा० रो० मृ० चि० अनु० रे०
वार	चं० बु० गु० शु० श०
तिथि	२।३।५।६।७।१०।११।१२।१३
लग्न	२।५।८।११ उत्तम हैं। ३।६।९।१२ मध्यम हैं।
लग्नशुद्धि	लग्नसे १।२।३।५।७।९।१०।११ इन स्थानोंमें शुभग्रह शुभ होते हैं। ३।६।११ इन स्थानोंमें पापग्रह शुभ होते हैं। ४।८ इन स्थानोंमें कोई ग्रह नहीं होना चाहिए।

जीर्णगृहप्रवेशमुहूर्त्त

शतभिष, पुष्य, स्वाती, धनिष्ठा, चित्रा, अनुराधा, मृगशिर, रेवती, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ़ा, उत्तराभाद्रपद, रोहिणी इन नक्षत्रोंमें चन्द्र, बुध, गुरु, शुक्र, शनि इन वारोंमें और द्वितीया, तृतीया, पंचमी, षष्ठी, सप्तमी, दशमी, एकादशी, द्वादशी, त्रयोदशी इन तिथियोंमें जीर्णगृहप्रवेश करना शुभ है।

जीर्णगृहप्रवेशमुहूर्त्तचक्र

नक्षत्र	श० पु० स्वा० ध० च० मृ० अनु० रे० उभा० उफा० उषा० रो०
वार	चं० बु० बृ० शु० श०
तिथि	२।३।५।६।१०।११।१२।१३
मास	का० मार्ग० श्रा० भा० फा० वै० ज्य०

शान्तिक और पौष्टिक कार्यका मुहूर्त्त

अश्विनी, पुष्य, हस्त, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ़ा, उत्तराभाद्रपद, रोहिणी, रेवती, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिष, पुनर्वसु, स्वाती, अनुराधा, मघा इन नक्षत्रोंमें; रिक्ता (४।९।१४) अष्टमी, पूर्णमासी, अमावस्या इन तिथियोंको छोड़ अन्य तिथियोंमें और रवि, मंगल, शनि इन वारोंको छोड़ शेष वारोंमें शान्तिक और पौष्टिक कार्य करना शुभ है।

शान्तिक और पौष्टिक कार्य मुहूर्त्तचक्र

नक्षत्र	अ० पु० ह० उषा० उफा० उभा० रो० रे० श्र० ध० श० पुन० स्वा० अनु० म०
वार	चं० बु० गु० शु०
तिथि	२।३।५।७।१०।११।१२।१३

कुँआ खुदवानेका मुहूर्त्त

हस्त, अनुराधा, रेवती, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ़ा, उत्तराभाद्रपद, धनिष्ठा, शतभिष, मघा, रोहिणी, पुष्य, मृगशिर, पूर्वाषाढ़ा इन नक्षत्रोंमें, बुध, गुरु, शुक्र इन वारोंमें और रिक्ता (४।९।१४) छोड़ सभी तिथियोंमें शुभ होता है।

कुँआ बनवानेके मुहूर्त्तका चक्र

नक्षत्र	ह० अनु० रे० उफा० उषा० उभा० ध० श० म० रो० पु० मृ० पूषा०
वार	बु० गु० शु०
तिथि	२।३।५।७।१०।११।१२।१३।१५

दुकान करनेका मुहूर्त्त

रोहिणी, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ़ा, उत्तराभाद्रपद, हस्त, पुष्य, चित्रा, रेवती, अनुराधा, मृगशिर, अश्विनी इन नक्षत्रोंमें तथा शुक्र, बुध, गुरु, सोम, इन वारोंमें और रिक्ता, अमावस्या छोड़ शेष तिथियोंमें दुकान करना शुभ है।

दुकान करनेके मुहूर्त्तका चक्र

नक्षत्र	रो० उषा० उभा० उफा० ह० पु० चि० रे० अनु० मृ० अश्वि०
वार	शु० बु० गु० सो०
तिथि	२।३।५।७।१०।१२।१३

बड़े-बड़े व्यापार करनेका मुहूर्त्त

हस्त, पुष्य, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराभाद्रपद, उत्तराषाढ़ा, चित्रा इन नक्षत्रोंमें शुक्र, बुध, गुरु इन वारोंमें और द्वितीया, तृतीया, पंचमी, सप्तमी, एकादशी, त्रयोदशी, इन तिथियोंमें बड़े-बड़े व्यापार सम्बन्धी कारोबार करना शुभ है।

बड़े-बड़े व्यापारिक कार्य करनेके मुहूर्त्तका चक्र

नक्षत्र	ह० पु० उफा० उभा० उषा० चि०
वार	बु० गु० शु०
तिथि	२।३।५।७।११।१३

वस्त्र तथा आभूषण ग्रहण करनेका मुहूर्त्त

रेवती, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ़ा, उत्तराभाद्रपद, रोहिणी, अश्विनी, हस्त, चित्रा, स्वाती, विशाखा, अनुराधा, धनिष्ठा, पुष्य, और पुनर्वसु नक्षत्रमें; सोम, मंगल, शनि इन दिनोंको छोड़ शेष दिनोंमें और रिक्ताको छोड़ शेष तिथियोंमें नवीन वस्त्र तथा आभूषण धारण करना शुभ है।

वस्त्र और भूषण धारण करनेके मुहूर्त्तका चक्र

नक्षत्र	रे० उफा० उषा० उभा० रो० अश्वि० ह० चि० स्वा० वि० अनु० ध० पु० पुन०
वार	बु० गु० शु० र०
तिथि	२।३।५।७।८।१०।११।१२।१३।१५

जेवर बनवानेका मुहूर्त्त

रेवती, अश्विनी, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिष, मृगशिर, पुनर्वसु, अनुराधा, हस्त, चित्रा, उत्तराभाद्रपद, उत्तराषाढ़ा, उत्तराफाल्गुनी, स्वाती, रोहिणी और त्रिपुष्कर योगका नक्षत्र, तथा शुभ वारोंमें जेवर बनवाना शुभ है।

जेवर बनवानेके मुहूर्त्तका चक्र

नक्षत्र	रे० अश्वि० श्र० ध० श० मृ० पु० पुन० अनु० ह० चि० उफा० उषा० उभा० स्वा० रो०
वार	सो० बु० गु० शु०
तिथि	२।३।५।७।८।१०।११।१२।१३।१५

नमक बनानेका मुहूर्त्त

भरणी, रोहिणी, श्रवण इन नक्षत्रोंमें शनिवारको नमक बनाना शुभ है।

नमक बनानेके मुहूर्त्तका चक्र

नक्षत्र	भ० रो० श्र० मतान्तर से अश्वि० पु० ह०
वार	श० मतान्तरसे र० मं० बु०
तिथि	१।२।३।४।५।७।८।९।१०।११।१३

राजा या मन्त्रीसे मिलनेका मुहूर्त्त

श्रवण, धनिष्ठा, उत्तराषाढ़ा, उत्तराभाद्रपद, उत्तराफाल्गुनी, मृगशिर, पुष्य, अनुराधा, रोहिणी, रेवती, अश्विनी, चित्रा, स्वाती इन नक्षत्रोंमें और रवि, सोम, बुध, गुरु, शुक्र इन वारोंमें राजा या मन्त्रीसे मिलना शुभ है।

राजासे मिलनेके मुहूर्त्तका चक्र

नक्षत्र	श्र० ध० उषा० उभा० उफा० मृ० पु० अनु० रो० रे० अश्वि० चि० स्वा०
वार	र० सो० बु० गु० शु०
तिथि	२।३।५।७।११।१३

बगीचा लगाने का मुहूर्त्त

शतभिष, विशाखा, मूल, रेवती, चित्रा, अनुराधा, मृगशिर, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ़ा, उत्तराभाद्रपद, रोहिणी, हस्त, अश्विनी, पुष्य इन नक्षत्रोंमें तथा शुक्र, सोम, बुध, गुरु इन वारोंमें बगीचा लगाना शुभ है।

बगीचा लगानेके मुहूर्त्तका चक्र

मास	वै० श्रा० मार्ग० का० फा०
नक्षत्र	श० वि० मू० रे० चि० अनु० मृ० उषा० उभा० उफा० रो० ह० अश्वि० पु०
वार	सो० बु० गु० शु०
तिथि	२।३।५।७।१०।११।१२।१३।१५

हथियार बनानेका मुहूर्त्त

कृत्तिका, विशाखा इन नक्षत्रोंमें तथा मंगल, रवि, शनि इन वारोंमें और शुभ ग्रहोंके लग्नोंमें शस्त्र निर्माण करना शुभ होता है।

हथियार बनानेके मुहूर्त्तका चक्र

नक्षत्र	कृ० वि०
वार	मं० र० श०

हथियार धारण करनेका मुहूर्त्त

पुनर्वसु, पुष्य, हस्त, चित्रा, रोहिणी, मृगशिर, विशाखा, अनुराधा, ज्येष्ठा, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराभाद्रपद, उत्तराषाढ़ा, रेवती, अश्विनो इन नक्षत्रोंमें; रवि, शुक्र, गुरु, इन वारोंमें और रिक्ता (४।९।१४) छोड़ शेष तिथियोंमें हथियार धारण करना शुभ है।

हथियार धारण करनेके मुहूर्त्त

नक्षत्र	पुन० पु० ह० चि० रो० मृ० वि० अनु० ज्ये० उफा० उषा० उभा० रे० अश्वि०
वार	र० शु० गु०
तिथि	२।३।५।६।७।८।९।१०।११।१२।१३।१५

रोगमुक्त होनेपर स्नान करनेका मुहूर्त्त

उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ़ा, उत्तराभाद्रपद, रोहिणी, आश्लेषा, पुनर्वसु, स्वाती, मघा, रेवती इन नक्षत्रों को छोड़ शेष नक्षत्रोंमें रवि, मंगल, गुरु इन वारोंमें और रिक्तादि तिथियोंमें रोगीको स्नान कराना शुभ है।

रोगीको स्नान करानेके मुहूर्त्तका चक्र

नक्षत्र	अ० भ० कृ० मृ० आ० पु० पुन० पूफा० पूभा० पूषा० श्र० ध० श० ह० चि० वि० अनु० ज्ये० मू०
वार	र० मं० गु०
तिथि	४।९।१४।३।५।७।१०।११
लग्न	१।४।७।१०
लग्नशुद्धि	चन्द्रमा निर्वल हो १।४।७।१०।९।५।२ इन स्थानों में पापग्रह हो।

कारीगरी सीखनेका मुहूर्त्त

उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ़ा, उत्तराभाद्रपद, रोहिणी, स्वाती, पुनर्वसु, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिष, हस्त, अश्विनी, पुष्य, अभिजित, मृगशिर, रेवती, चित्रा, अनुराधा; इन नक्षत्रोंमें शुभ वार और शुभ तिथियोंमें कारीगरी सीखना शुभ होता है।

कारीगरी सीखनेके मुहूर्त्तका चक्र

नक्षत्र	उफा० उभा० उषा० रो० स्वा० पुन० श्र० ध० श० ह० अश्वि० पु० अभि० मृ० रे० चि० अनु०
वार	सो० बु० गु० शु०
तिथि	२।३।५।७।८।१०।१२।१३।१५

पुल बनानेका मुहूर्त्त

उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ़ा, उत्तराभाद्रपद, रोहिणी, स्वाती, मृगशिर इन नक्षत्रोंमें, गुरु, शनि, रवि इन वारोंमें और स्थिर लग्नोंमें पुल बनाना शुभ है ।

पुल बनानेके मुहूर्त्तका चक्र

नक्षत्र	उफा० उपा० उभा० रो० स्वा० मृ०
वार	गु० श० र०
तिथि	शुक्लपक्ष में २।३।५।७।१०।११।१३
लग्न	२।५।८।११

खटिया बनवानेका मुहूर्त्त

रोहिणी, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराभाद्रपद, उत्तराषाढ़ा, हस्त, पुष्य, पुनर्वसु, अनुराधा, अश्विनी इन नक्षत्रोंमें शुभ वार और शुभ योगके होनेपर खटिया बनाना शुभ होता है ।

खटिया निर्माण मुहूर्त्त चक्र

नक्षत्र	रो० उषा० उभा० उफा० ह० पु० पुन० अनु० अश्वि०
वार	सो० बु० गु० शु० मतान्तर से र०
तिथि	२।३।५।७।१०।११।१३

कर्ज लेनेका मुहूर्त्त

स्वाती, पुनर्वसु, विशाखा, पुष्य, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिष, अश्विनी, मृगशिर, रेवती, चित्रा, अनुराधा इन नक्षत्रोंमें ऋण लेना शुभ है । हस्त नक्षत्र, वृद्धियोग, रविवार इनका त्याग अवश्य करना चाहिए ।

ऋण लेनेके मुहूर्त्तका चक्र

नक्षत्र	स्वा० पुन० वि० पु० श्र० ध० श० अश्वि० मृ० रे० चि० अनु०
वार	सो० गु० शु० बु०
तिथि	२।३।४।५।७।९।१०।११।१२।१३।१५
लग्न	१।४।७।१०
लग्न शुद्धि	५।८।९ इन स्थानोंमें ग्रह अवश्य हों

वर्षारम्भ में हल चलाने का मुहूर्त्त

मूल, विशाखा, मघा, स्वाती, पुनर्वसु, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिष, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराभाद्रपद, उत्तराषाढ़ा, रोहिणी, मृगशिर, रेवती, चित्रा, अनुराधा, हस्त, अश्विनी, पुष्य, अभिजित इन नक्षत्रों में हल चलाना शुभ है

हल चलानेके मुहूर्त्तका चक्र

नक्षत्र	मू० वि० म० स्वा० पुन० श्र० ध० श० उफा० उभा० उषा० रो० मृ० रे० चि० अनु० ह० अश्वि० पु० अभि०
वार	सो० मं० बु० गु० शु०
तिथि	२।३।५।७।१०।११।१२।१३।१५
लग्न	२।३।६।८।९।१२

बीज बोनेका मुहूर्त्त

मूल, मघा, स्वाती, धनिष्ठा, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराभाद्रपद, उत्तराषाढ़ा, रोहिणी, मृगशिर, रेवती, चित्रा, अनुराधा, हस्त, अश्विनी, पुष्य इन नक्षत्रों में बीज बोना शुभ है।

बीज बोनेके मुहूर्त्तका चक्र

नक्षत्र	मू० म० स्वा० ध० उफा० उभा० उषा० रो० मृ० रे० चि० अनु० ह० अश्वि० पु०
वार	सो० बु० गु० शु०
तिथि	२।३।५।७।१०।११।१२।१३।१५

फसल काटनेका मुहूर्त्त

पूर्वाभाद्रपद, हस्त, कृत्तिका, धनिष्ठा, श्रवण, मृगशिर, स्वाती, मघा, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराभाद्रपद, उत्तराषाढ़ा, पूर्वाषाढ़ा, भरणी, चित्रा, पुष्य, मूल, ज्येष्ठा, आर्द्रा, आश्लेषा इन नक्षत्रों में सोम, बुध, गुरु, शुक्र, रवि इन वारों में, स्थिर लग्नों में तथा शुभ तिथियों में फसल काटना शुभ है ।

फसल काटनेके मुहूर्त्तका चक्र

नक्षत्र	पूफा० ह० कृ० ध० श्र० मृ० स्वा० म० उफा० उभा० उषा० पूषा० भ० चि० पु० मू० ज्ये० आ० आश्ले०
वार	र० सो० बु० गु० शु०
तिथि	२।३।५।७।६।८।१०।११।१२।१३।१५
लग्न	२।५।८।११

नौकरी करनेका मुहूर्त्त

हस्त, चित्रा, अनुराधा, रेवती, अश्विनी, मृगशिर, पुष्य इन नक्षत्रों में बुध, गुरु, शुक्र, रवि इन वारों में और शुभ तिथियों में नौकरी करना शुभ है ।

नौकरी करनेके मुहूर्त्तका चक्र

नक्षत्र	ह० चि० अनु० रे० अश्वि० मृ० पु०
वार	बु० गु० शु० र०
तिथि	२।३।५।७।१०।११।१३

मुकद्दमा दायर करनेका मुहूर्त्त

ज्येष्ठा, आर्द्रा, भरणी, पूर्वाषाढ़ा, पूर्वाभाद्रपद, पूर्वाफाल्गुनी, मूल, आश्लेषा, मघा इन नक्षत्रों में, तृतीया, अष्टमी, त्रयोदशी, पंचमी, दशमी, पूर्णमासी इन तिथियों में और रवि, बुध, गुरु, शुक्र इन वारों में मुकद्दमा दायर करना शुभ है ।

मुकद्दमा दायर करनेके मुहूर्त्तका चक्र

नक्षत्र	ज्ये० आ० भ० पूषा० पूभा० पूफा० मू० आश्ले० म०
वार	र० बु० गु० शु०
तिथि	३।५।८।१०।१३।१५
लग्न	३।६।७।८।११
लग्नशुद्धि	सूर्य, बुध, गुरु, शुक्र, चन्द्र, ये ग्रह १।४।७।१० इन स्थानों में और पापग्रह ३।६।११ इन स्थानों में शुभ होते हैं; परन्तु अष्टम में कोई ग्रह नहीं होना चाहिए।

जूता पहननेका मुहूर्त्त

चित्रा, उत्तराफाल्गुनी, पूर्वाभाद्रपद, पूर्वाषाढ़ा, अनुराधा, ज्येष्ठा, आश्लेषा, मघा, मृगशिर, विशाखा, कृत्तिका, मूल, रेवती इन नक्षत्रों में और बुध, शनि, रवि इन वारों में जूता पहनना शुभ होता है।

जूता पहननेके मुहूर्त्तका चक्र

नक्षत्र	चि० उ० फा० पूषा० पूभा० अनु० ज्ये० आश्ले० म० मृ० वि० कृ० मू० रे०
वार	बु० श० र०

औषध बनानेका मुहूर्त्त

हस्त, अश्विनी, पुष्य, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिष, मूल, पुनर्वसु, स्वाती, मृगशिर, चित्रा, रेवती, अनुराधा इन नक्षत्रोंमें और रवि, सोम, बुध, गुरु, शुक्र, इन वारोंमें औषध निर्माण करना शुभ है।

औषध बनानेके मुहूर्त्तका चक्र

नक्षत्र	ह० अश्वि० पु० श्र० ध० श० मू० पुन० स्वा० मृ० चि० रे० अनु०
वार	र० सो० बु० गु० शु०
तिथि	२।५।७।८।१०।११।१३।१५
लग्न	१।२।४।५।७।८।१०।११

मन्त्रसिद्ध करनेका मुहूर्त्त

उत्तराफाल्गुनी, हस्त, अश्विनी, श्रवण, विशाखा, मृगशिर इन नक्षत्रोंमें रवि, सोम, बुध, गुरु, शुक्र इन वारोंमें और द्वितीया, तृतीया, पंचमी, सप्तमी, दशमी, एकादशी, त्रयोदशी, पूर्णिमा इन तिथियोंमें मन्त्र सिद्ध करना शुभ होता है।

मन्त्र सिद्ध करनेके मुहूर्त्तका चक्र

नक्षत्र	उफा० ह० अश्वि० श्र० वि० मृ०
वार	र० सो० बु० गु० शु०
तिथि	२।३।५।७।१०।११।१३।१५

सर्वारम्भ मुहूर्त्त

लग्नसे बारहवाँ और आठवाँ स्थान शुद्ध हो अर्थात् कोई ग्रह नहीं हो तथा जन्म लग्न व जन्म राशिसे तीसरा, छठवाँ, दशवाँ, ग्यारहवाँ लग्न हो और शुभ ग्रहों की दृष्टि हो तथा शुभ ग्रह युक्त हो, चन्द्रमा जन्म लग्न व जन्म राशिसे तीसरे, छठवें, दशवें, ग्यारहवें स्थानमें हो तो सभी कार्य प्रारम्भ करना शुभ होता है।

मन्दिर निर्माणका मुहूर्त्त

मूल, आश्लेषा, विशाखा, कृत्तिका, पूर्वभाद्रपद, पूर्वाषाढ़ा, पूर्वाफाल्गुनी, भरणी, मघा इन नक्षत्रोंमें तथा मंगल और बुधवारको मन्दिरके लिए नींव खुदवाना शुभ है। नींव खुदवाते समय राहु[1]के मुखका त्याग करना आवश्यक है अर्थात् राहुके पृष्ठभागसे नींव खुदवाना चाहिए।

पुनर्वसु, पुष्य, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराभाद्रपद, उत्तराषाढ़ा, मृगशिर, श्रवण, अश्विनी, चित्रा, विशाखा, आर्द्रा, हस्त, रोहिणी और धनिष्ठा इन नक्षत्रोंमें, द्वितीया, तृतीया, पंचमी, सप्तमी, एकादशी, त्रयोदशी इन तिथियोंमें एवं रवि, सोम, बुध, गुरु और शुक्र इन वारोंमें नींव भरना तथा जिनालय निर्माणका कुल कार्य आरम्भ करना श्रेष्ठ है।

१. राहुकी दिशाका ज्ञान—धनु, वृश्चिक, मकरके सूर्यमें पूर्व दिशामें, कुम्भ, मीन, मेषके सूर्यमें दक्षिण दिशामें, वृष, मिथुन, कर्कके सूर्यमें पश्चिम दिशा में एवं सिंह, कन्या, तुलाके सूर्यमें उत्तर दिशामें राहुका मुख रहता है। सूर्यकी राशि पंचांगमें लिखी रहती है।

प्रतिमा निर्माणके लिए मुहूर्त्त

पुष्य, रोहिणी, श्रवण, चित्रा, धनिष्ठा, आर्द्रा, अश्विनी, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ़ा, हस्त, मृगशिर, रेवती और अनुराधा इन नक्षत्रोंमें, सोम, गुरु, शुक्र और बुध इन वारोंमें एवं द्वितीया, तृतीया, पंचमी, सप्तमी, एकादशी और त्रयोदशी इन तिथियोंमें प्रतिमा बनवाना शुभ है।

प्रतिष्ठाका मुहूर्त्त

अश्विनी, मृगशिर, रोहिणी, पुनर्वसु, पुष्य, हस्त, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराभाद्रपद, उत्तराषाढ़ा, चित्रा, श्रवण, धनिष्ठा और स्वाति इन नक्षत्रोंमें, सोम, बुध, गुरु और शुक्र इन वारोंमें एवं कृष्णपक्षकी प्रतिपदा, द्वितीया और पंचमी तथा शुक्लपक्षकी प्रतिपदा, द्वितीया, पंचमी, दशमी, त्रयोदशी और पूर्णिमा इन तिथियोंमें प्रतिष्ठा करना शुभ है। प्रतिष्ठा के लिए वृष, सिंह, वृश्चिक और कुम्भ ये लग्न श्रेष्ठ हैं। लग्न स्थानसे अष्टममें पापग्रह अनिष्टकारक होते हैं। प्रतिष्ठा करनेवालेकी राशिसे चन्द्रमाकी राशि प्रतिष्ठाके दिन १।४।८।१२वीं न हो तथा प्रतिष्ठाकी लग्न भी उस राशिसे ८वीं न हो।

होमाहुतिका मुहूर्त्त

शुक्लपक्षकी प्रतिपदासे लेकर अभीष्ट तिथि तक गिननेसे जितनी संख्या हो, उसमें एक और जोड़े। फिर रविवारसे लेकर इष्टवार तक गिननेसे जितनी संख्या हो उसको भी उसीमें जोड़े। जो संख्या आवे उसमें चार का भाग दे। यदि तीन या शून्य शेष रहे तो अग्निका वास पृथ्वीमें होता है, यह होम करनेवालेके लिए उत्तम होता है। और यदि एक शेष रहे तो अग्निका वास आकाशमें होता है, इसका फल प्राणोंको नाश करनेवाला कहा गया है। दो शेषमें अग्निका वास पाताल में होता है, इसका फल अर्थ नाशक बताया गया है। इस प्रकार अग्नि वास देखकर होम करना चाहिए।

परिशिष्ट [२]

जन्मपत्री बनानेकी विधि

जन्मपत्रीका सारा गणित इष्टकाल पर चलता है, अतः पहले इष्टकाल बनानेके नियम दिये जाते हैं।

सूर्योदयसे लेकर जन्मसमय तकके कालको इष्टकाल कहते हैं। इसके बनानेके लिए निम्न पाँच नियम हैं—

१—सूर्योदयसे लेकर १२ बजे दिनके भीतरका जन्म हो तो जन्मसमय और सूर्योदय कालका अन्तर कर शेष को ढाई गुना ($२\frac{१}{२}$) करनेसे घटयादिरूप इष्टकाल होता है।

उदाहरण—वि० सं० २००३ फाल्गुन सुदी ७ गुरुवारको प्रातःकाल ९।३० पर किसी का जन्म हुआ है। इस नियमके अनुसार इष्टकाल बनाया तो—

९ । ३० जन्म समयमें-से
६ । १६ सूर्योदय—पंचांगमें लिखा है
३ । १४ इसे ढाई गुना किया तो

$३ + \frac{१४}{६०} = \frac{९७}{३०}; \frac{९७}{३०} \times \frac{५}{२} = \frac{९७}{१२} = ८\frac{१}{१२} \times \frac{६०}{१} = ८।५$ अर्थात् ८ घटी ५ पल इष्टकाल हुआ।

२—१२ बजे दिनसे लेकर सूर्यास्तके अन्दरका जन्म हो तो जन्म समय और सूर्यास्तकालका अन्तर कर शेषको ढाई गुना कर दिनमानमें घटा देनेसे इष्टकाल होता है।

उदाहरण—वि० सं० २००३ फाल्गुनसुदी ७ गुरुवारको २।३० दिनका जन्म है।

अतः ५ । ४४ सूर्यास्तमें से
२ । ३० जन्मसमयको घटाया
३ । १४ इसका सजातीय रूप $३ + \frac{१४}{६०} = \frac{९७}{३०} \times \frac{५}{२} = \frac{९७}{१२} =$ ८।५ हुआ।
२८ । ३८ दिनमानमें
८ । ५ आगत फलको घटाया
२० । ३३ अर्थात् २० घटी ३३ पल इष्टकाल हुआ।

३—सूर्यास्तसे लेकर १२ बजे रातके भीतरका जन्म हो तो जन्मसमय और सूर्यास्त कालका अन्तर कर शेषको ढाई गुना कर दिनमानमें जोड़ देनेसे इष्टकाल होता है। उदाहरण वि० सं० २००३ फाल्गुनसुदी ७ गुरुवारको रातके १० बज कर ३० मिनट पर जन्म हुआ है।

अतः १० । ३० जन्म समयमें से
५ । ४४ सूर्यास्तको घटाया
४ । ४६ इसका सजातीय रूप किया तो $४ + \frac{४६}{६०} = \frac{१४३}{३०} \times \frac{५}{२} = \frac{१४३}{१२} =$ ११।५५ अर्थात् ११ घटी ५५ पल
२८ । ३८ दिनमानमें
११ । ५५ आगत फलको जोड़ा
४० । ३३ इष्टकाल हुआ।

४—रातके १२ बजेके बाद और सूर्योदयके पहलेका जन्म हो तो जन्मसमय और सूर्योदय कालका अन्तर कर शेषको ढाई गुना कर ६० घटीमें घटानेसे इष्टकाल होता है।

उदाहरण—सं० २००३ फाल्गुन सुदी ७ गुरुवारको रातके ४।३० पर जन्म हुआ है।

अतः ६ । १६ सूर्योदय कालमें से
४ । ३० जन्म समयको घटाया
१ । ४६ इसका सजातीय रूप किया $१ + \frac{४६}{६०} = \frac{५३}{३०} \times \frac{५}{२} = \frac{५३}{१२} = ४।२५$

६० । ० में से
४ । २५ आगत फलको घटाया
५५ । ३५ इष्टकाल हुआ।

५—सूर्योदयसे लेकर जन्मसमय तक जितना घण्टा, मिनटात्मक काल हो, उसे ढाई गुना ($२\frac{१}{२}$) कर देने पर इष्टकाल होता है।

उदाहरण—सं० २००३ फाल्गुन सुदी ७ गुरुवारको दोपहरके ४।४८ पर जन्म हुआ है। अतः सूर्योदयसे लेकर जन्म समय तक १० घण्टा ४२ मिनट हुआ, इसका ढाई गुना किया तो २६ घटी ४५ पल इष्टकाल हुआ।

विशेष—विश्वपंचांगसे या लेखककी "भारतीय ज्योतिष" नामक पुस्तकके आधारसे देशान्तर और वेलान्तर संस्कार कर इष्ट स्थानीय इष्टकाल बना लेना चाहिए। जो उपर्युक्त क्रियाओंको नहीं कर सकते हैं, उन्हें पहलेवाले नियमोंके आधारपर-से इष्टकाल बना लेना चाहिए, किन्तु यह इष्टकाल स्थूल होगा।

भयात और भभोग साधन

यदि इष्टकालसे जन्म नक्षत्रके घटी, पल कम हों तो जन्मनक्षत्र गत और आगामी नक्षत्र जन्मनक्षत्र कहलाता है तथा जन्मनक्षत्रके घटी, पल इष्टकालके घटी, पलोंसे अधिक हों तो जन्मनक्षत्रके पहलेका नक्षत्र गत और जन्मनक्षत्र ही वर्तमान या जन्मनक्षत्र कहलाता है। गत नक्षत्रके घटी, पलोंको ६० में से घटाकर जो आवे उसे दो जगह रखना चाहिए, एक स्थान पर इष्टकालको जोड़ देनेसे भयात और दूसरे स्थान पर जन्म नक्षत्रको जोड़ देनेपर भभोग होता है।

उदाहरण—इष्टकाल ५५।३५ है, जन्मनक्षत्र कृत्तिका ५१।५ है। यहाँ इष्टकालके घटी, पल, कृत्तिका जन्मनक्षत्रके घटी, पलोंसे अधिक हैं, अतः कृत्तिका गत और रोहिणी जन्म नक्षत्र कहलायेगा।

६०।०
५१।५ गत नक्षत्रको घटाया
८।५५ इसे दो स्थानोंमें रखा

८।५५।	८।५५
५५।३५ इष्टकाल जोड़ा	५६।२५ रोहिणी नक्षत्र जोड़ा
४।३० भयात [यहाँ ६० का भाग देकर शेष ग्रहण किया है]	६५।२० भभोग रोहिणी

भभोग ६६ घटी तक आ सकता है, इससे अधिक होने पर ६० का भाग देकर लब्ध छोड़ दिया जायगा, कहीं-कहीं भयात में ६३-६४ घटी तक ग्रहण किया जाता है।

जन्मनक्षत्रका चरण निकालनेकी विधि

भभोगमें ४ का भाग देनेसे एक चरणके घटी, पल आते हैं। इन घटी पलोंका भयातमें भाग देनेसे जन्मनक्षत्रका चरण आता है।

उदाहरण—६५।२० भभोगमें ÷ ४ = १६।२० एक चरणके घटी पल। ४।३० भयातमें ÷ १६।२० यहाँ भाग नहीं गया, अतः प्रथम चरण माना जायगा। इसलिए रोहिणीके नक्षत्रके प्रथम चरणका जन्म है। शतपदचक्रमें रोहिणी नक्षत्रके चारों चरणके अक्षर दिये हैं, इस बालकका नाम उनमें-से प्रथम अक्षरपर माना जायगा, अतः 'ओ' अक्षर राशिका नाम होगा।

जन्मलग्न निकालनेकी सुगम विधि

जिस दिनका लग्न बनाना हो उस दिनके सूर्यके राशि और अंश पचांगमें देखकर लिख लेने चाहिए। आगे दी गयी लग्नसारणीमें राशिका कोष्ठक बायीं ओर तथा अंश-का कोष्ठक ऊपरी भागमें है। सूर्यके जो राशि, अंश लिखे हैं उनका फल लग्नसारणीमें—सूर्यकी राशिके सामने और अंशके नीचे जो अंक संख्या मिले उसे इष्टकालमें जोड़ दे; वही योग या इसके लगभग सारणीके जिस कोष्ठकमें हो उसके बायीं ओर राशिका अंक और ऊपर अंशका अंक होगा। ये लग्नके राशि, अंश आयेंगे। त्रैराशिक द्वारा कला, विकलाका प्रमाण भी निकाला जा सकता है।

उदाहरण—सं० २००३ फाल्गुन सुदी ७ गुरुवारको २३।१३ इष्टकालका लग्न निकालना है। इस दिन सूर्य १० राशि १५ अंश १७ कला ३० विकला लिखा है। लग्नसारणीमें १० राशिके सामने और १५ अंशके नीचे ५७।१७।१७ अंक मिले। इन अंकोंको इष्टकालमें जोड़ दिया।

५७।१७।१७ सारणीके अंकोंमें
२३।१३।० इष्टकाल जोड़ा

२०।३०।१७ अन्तिम संख्यामें ६० का भाग देने पर जो लब्ध आता है उसे छोड़ देते हैं।

इस योगको पुनः लग्नसारणीमें देखा तो उक्त योगफल कहीं नहीं मिला, किन्तु इसके आसन्न २०।२६।३ अंक ३ राशिके सामने और १६ अंशके नीचे मिले; अतः लग्न ३।१६ माना जायगा।

लग्नसारणी

	०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९
	२	२	३	३	३	३	३	३	३	३	४	४	४	४	४	४	४	५	५	५	५	५	५	५	६	६	६	६	६	६
मे० ०	५०	५७	५	१३	२०	२८	३६	४४	५२	५९	७	१५	२३	३१	३९	४७	५५	४	१२	२०	२९	३७	४५	५४	२	११	१९	२८	३७	४६
	९	४७	२५	५	४८	३२	१८	६	०	४८	४२	३९	४७	३९	४१	४९	५७	९	२३	३९	१	२१	५८	३५	४६	२०	५८	३८	२२	९
	६	७	७	७	७	७	७	७	८	८	८	८	८	८	९	९	९	९	९	९	१०	१०	१०	१०	१०	१०	११	११	११	११
वृ० १	५४	३	१२	२१	३०	३९	४९	५८	७	१७	२६	३५	४५	५४	४	१४	२४	३३	४३	५३	३	४३	१३	३४	४४	५४	४	१५	२५	३६
	५९	५२	४९	४७	५२	५९	११	२४	४०	१	२५	४३	२४	५९	३७	१९	४	५३	४६	४२	४३	४५	५१	०	१४	३०	४९	१३	३९	९
	११	११	१२	१२	१२	१२	१२	१३	१३	१३	१३	१३	१३	१४	१४	१४	१४	१४	१५	१५	१५	१५	१५	१६	१६	१६	१६	१६	१६	१७
मि० २	४६	५७	७	१८	२९	४०	५१	१	१२	२३	३४	४५	५६	८	१९	३०	४१	५२	४	१५	२६	३८	४९	०	१२	२३	३५	४६	५८	९
	४१	१६	५५	३७	४२	९	१९	५१	४७	४५	४५	४८	५२	०	९	२०	३२	४९	५	२४	४४	६	२९	५३	१७	४५	१३	४२	११	४२
	१७	१७	१७	१७	१८	१८	१८	१८	१८	१९	१९	१९	१९	१९	२०	२०	२०	२०	२०	२१	२१	२१	२१	२१	२१	२२	२२	२२	२२	२२
क० ३	२१	३२	४४	५५	७	१८	३०	४२	५३	५	१६	२८	३९	५१	२	१४	२६	३७	४९	०	१२	२३	३५	४६	५८	९	२०	३२	४३	५५
	१३	४४	१६	४९	२२	५६	२९	३	३८	११	४४	२०	५२	२५	५८	३०	३	३७	६	३७	८	३७	१७	३५	४	३०	६	२२	४७	११
	२३	२३	२३	२३	२३	२४	२४	२४	२४	२४	२४	२५	२५	२५	२५	२५	१६	२६	२६	२६	२६	२७	२७	२७	२७	२७	२७	२८	२८	२८
सिं० ४	६	१७	२९	४०	५१	३	१४	२५	३७	४८	५९	१०	२२	३३	४४	५५	७	१८	२९	४०	५१	२	१३	२४	३६	४७	५८	९	२०	३१
	३४	५७	२७	३९	५९	१९	३९	५५	१२	२८	४४	५८	१२	२५	३८	४९	०	१०	२५	३६	४९	५१	५३	५९	६	१२	१७	२२	२७	३२
	२८	२८	२९	२९	२९	२९	२९	३०	३०	३०	३०	३०	३०	३१	३१	३१	३१	३१	३२	३२	३२	३२	३२	३२	३३	३३	३३	३३	३३	३४
क० ५	४२	५३	४	१५	२६	३७	४८	०	११	२२	३३	४४	५५	६	१७	२८	३९	५०	१	१२	२३	३५	४६	५७	९	१९	३०	४१	५२	४
	३६	४०	४६	४७	५०	५९	५७	०	५३	१	८	१३	४	२०	२४	२८	३३	३७	४३	४८	५४	०	७	१९	१०	२६	३५	४१	५९	११

	०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९
	३४	३४	३४	३४	३५	३५	३५	३५	३५	३५	३६	३६	३६	३६	३६	३७	३७	३७	३७	३७	३८	३८	३८	३८	३८	३८	३९	३९	३९	३९
तु० ६	१५	२६	३७	४९	०	११	२२	३४	४५	५६	८	१९	३०	४२	५३	४	१६	२७	३९	५०	१	१३	२४	३६	४७	५९	१०	२२	३३	४५
	२२	३४	४८	२	१६	३१	४६	५	४१	२१	६	२०	३३	३	२५	४९	१३	३८	३	३०	५६	२५	४३	२३	५२	२३	५४	२५	५७	२९
	३९	४०	४०	४०	४०	४०	४१	४१	४१	४१	४१	४२	४२	४२	४२	४२	४३	४३	४३	४३	४३	४३	४४	४४	४४	४४	४४	४५	४५	४५
वृ० ७	५७	८	२०	३१	४३	५४	६	१७	२९	४१	५२	४	१५	२७	३८	५०	१	१३	२४	३६	४७	५९	१०	२१	३३	४४	५५	७	१८	२९
	२	३५	८	४०	१६	४९	२२	५६	३१	४	३८	११	४३	१६	४७	१८	४९	१८	४७	१५	४३	७	३१	५४	१६	३६	५४	१३	३६	३९
	४५	४५	४६	४६	४६	४६	४६	४६	४७	४७	४७	४७	४७	४८	४८	४८	४८	४८	४८	४९	४९	४९	४९	४९	४९	५०	५०	५०	५०	५०
ध० ८	४०	५२	३	१४	२५	३६	४७	५८	८	१९	३०	४१	५२	२	१३	२३	३४	४४	५५	५	१५	२५	३६	४६	५६	६	१६	२६	३५	४५
	५१	०	७	१२	१५	१५	१३	८	४१	५१	१८	२३	४	४४	१९	५१	२१	४७	१०	२९	४६	५९	९	४५	१७	१८	१४	६	५५	४१
	५०	५१	५१	५१	५१	५१	५१	५२	५२	५२	५२	२२	५२	५२	५३	५३	५३	५३	५३	५३	५३	५४	५४	५४	५४	५४	५४	५४	५५	५५
म० ९	५५	५	१४	२४	३३	४२	५२	१	१०	२०	२९	३८	४७	५६	५	१३	२२	३१	४०	४८	५७	५	१४	२२	३०	३९	४७	५५	४	१२
	२२	१	३६	१७	३५	५९	१९	३६	४९	१	८	१३	११	८	१	५१	३८	२२	२	३९	१४	४५	२	३८	५९	२०	३७	५१	३	५१
	५५	५५	५५	५५	५५	५६	५६	५६	५६	५६	५६	५६	५६	५७	५७	५७	५:	५७	५७	५७	५७	५८	५८	·८	१८	५८	५८	५८	५८	५९
कु० १०	२०	२८	३६	४४	५२	०	७	१५	२३	३१	३९	४६	५४	२	९	१७	२४	३२	३९	४८	५५	२	९	१७	२४	३२	३९	४६	५४	१
	१७	२१	१३	२१	१८	१२	५३	५४	४२	२८	१२	५४	३४	१३	५०	१७	५९	३२	५८	२८	४९	३३	५४	१९	४४	७	२४	५१	२	३२
	५९	५९	५९	५९	५९	५९	५९	०	०	०	०	०	०	०	०	०	१	१	१	१	१	१	१	१	२	२	२	२	२	२
मी० ११	८	१६	२३	३०	३८	४५	५२	०	७	१४	२१	२९	३६	४३	५१	५८	५	१३	२०	२७	३५	४२	५०	५७	४	११	२०	२७	३५	४२
	५२	११	१७	४८	६	१९	४२	०	१८	४०	५४	१२	४३	४९	८	२८	५८	९	३१	५३	१६	४०	५	२७	११	३२	२	२८	०	३४

जन्मपत्री लिखनेकी विधि

श्रीमानस्मानवतु भगवान् पार्श्वनाथः प्रियं वो
श्रेयो लक्ष्म्या क्षितिपतिगणैः सादरं स्तूयमानः ।
भर्तुर्यस्य स्मरणकरणात्तेऽपि सर्वे विवस्वन्,
मुख्याः खेटा ददतु कुशलं सर्वदा देहभाजाम् ॥
आदित्याद्या ग्रहास्सर्वे सनक्षत्राः सराशयः ।
सर्वान् कामान् प्रयच्छन्तु यस्यैषा जन्मपत्रिका ॥

अथ श्रीमन्नृपतिविक्रमार्कराज्यात् २००३ शुभसंवत्सरे शालिवाहनशाके १८६८ श्रीवीरनिर्वाण २४७३ संवत्सरे मासानां मासोत्तमे मासे शुभे फाल्गुनमासे शुक्लपक्षे सप्तम्यां तिथौ गुरुवासरे[1] विश्वपंचागानुसारेण घटयादयः ४७।३९ कृत्तिकानामनक्षत्रे घटयादयः ५१।५ ऐन्द्रनामयोगे घटयादयः १५।५६ पूर्वदले गरनामकरणे घटयादयः २०।१ परदले बवनामकरणे घटयादयः ४७।३९ अत्र सूर्योदया[2]दिष्टं घटयादयः २३।१३ कुम्भार्कगतांशाः[3] १५, भोग्यांशाः १४ एवं पुण्यतिथौ पञ्चाङ्गशुद्धौ शुभग्रहनिरीक्षित-कल्याणवत्यां वेलायां इन्दौरनगरे दिनप्रमाणं घटयादयः २८।४३ रात्रिप्रमाणं घटयादयः ३१।१७ उभयप्रमाणं ६०।०.........वंशोद्भवानां...जैनाम्नाये.........गोत्रे श्रीमान् ....तत्पुत्रः श्रीमान्.........तत्पुत्रः श्री..............अस्य पाणिगृहीतभार्यायां दक्षिणकुक्षौ पुत्ररत्नमजीजनत् । अत्रावकहोड़ाचक्रानुसारेण भयातः[4] घटयादयः ४।३०, भभोगः घटयादयः, ६५।२० तेन रोहिणीनक्षत्रस्य प्रथमचरणे ओकाराक्षरे जातत्वात् ओछेलाल इति राशिनाम प्रतिष्ठितं स च जिनधर्मप्रसादाद्दीर्घायुर्भवतु । अत्र लग्नमानं ३।१६ कर्कलग्ने जन्म—

जन्मकुण्डलीचक्रम्

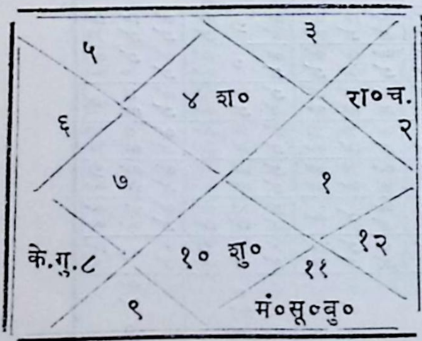

चन्द्रकुण्डलीचक्रम्

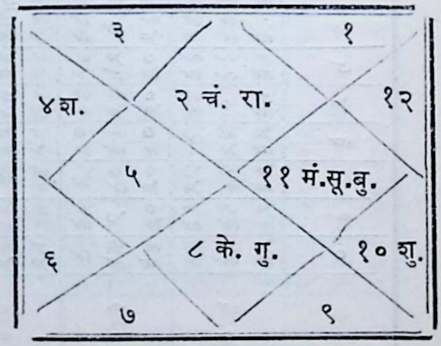

१. जिस पंचागके घटी, पल लिखते हों, उसका नाम दे देना चाहिए। प्रत्येक दिनके तिथ्यादि के घटी, पल प्रत्येक पंचांगमें लिखे रहते हैं। २. जितना जन्मसमयका इष्टकाल आया हो, वह लिखना है। ३. जन्मदिनके सूर्यके अंश गत, और उन्हें २९ में से घटानेपर भोग्यांश आते हैं। ४. जो पहले भयात आया है, उसीको लिखना।

विवेचन—जन्मकुण्डली चक्र लिखनेकी पद्धति यह है कि जो लग्न आता है उसे पहले रखकर उससे आगे गणना कर १२ कोठोंमें १२ राशियोंको रख देना चाहिए तथा पंचांगमें जो-जो ग्रह जिस-जिस राशिके हों उन्हें उस-उस राशिमें रख देनेपर जन्मकुण्डली चक्र बन जाता है। चन्द्रकुण्डलीकी विधि यह है कि चन्द्रमाकी राशिको लग्न स्थानमें स्थापित कर क्रमशः १२ राशियोंको लिख देना चाहिए, फिर जो-जो ग्रह जिस-जिस राशिके हों उन्हें उस-उस राशिमें स्थापित कर देनेपर चन्द्रकुण्डली चक्र बन जाता है।

जन्मकुण्डली और चन्द्रकुण्डली चक्रके बनानेके पश्चात् चमत्कारचिन्तामणि[1] या मानसागरीसे नौ ग्रहोंका फल लिखना चाहिए। फल लिखनेकी विधि यह है कि जो ग्रह जिस-जिस स्थानमें हों, उसका फल उस-उस स्थानके अनुसार लिख देना चाहिए। जैसे प्रस्तुत उदाहरण कुण्डलीमें सूर्य लग्नसे आठवें स्थानमें हैं, अतः आठवें भावका सूर्यका फल लिखा जायगा, इस प्रकार समस्त ग्रहोंका फल लिखनेके पश्चात् सामान्य दर्जेकी कुण्डली बनानेके लिए विंशोत्तरी दशा, अन्तर्दशा और उसका फल लिखना चाहिए। अच्छी कुण्डली बनानेके लिए केशवीयजातक पद्धति, जातकपारिजात, नीलकण्ठी, मानसागरी और भारतीय ज्योतिष प्रभृति ग्रन्थोंका अध्ययन करना चाहिए।

विंशोत्तरी दशा निकालनेकी विधि

इस दशामें परमायु १२० वर्ष मानकर ग्रहोंका विभाजन किया गया है। सूर्यकी दशा ६ वर्ष, चन्द्रमाकी १० वर्ष, भौमकी ७ वर्ष, राहुकी १८ वर्ष, गुरुकी १६ वर्ष, शनिकी १९ वर्ष, बुधकी १७ वर्ष, केतुकी ७ वर्ष, और शुक्रकी २० वर्ष की दशा बतायी गयी है।

जन्मनक्षत्रानुसार विंशोत्तरीदशाबोधक चक्र

सूर्य	चन्द्र	भौम	राहु	गुरु	शनि	बुध	केतु	शुक्र	ग्रह
६	१०	७	१८	१६	१९	१७	७	२०	वर्ष
कृ० उ.फा. उ.षा.	रो० ह० श्र०	मृ० चि० ध०	आ० स्वा० श०	पुन० वि० पू.भा.	पु० अनु० उ.भा.	आश्ले. ज्ये० रे०	म० मू० अश्वि.	भ० पू.फा. पू.षा.	नक्षत्र

१. चमत्कारचिन्तामणिमें प्रत्येक ग्रहके द्वादश भावोंका फल दिया है। जैसे सूर्य लग्नमें हो तो क्या फल, धन स्थानमें हो तो क्या फल इत्यादि। इसी प्रकार नौ ग्रहोंके फल दिये हैं।

इस चक्रका तात्पर्य यह है कि कृत्तिका, उत्तराफाल्गुनी और उत्तराषाढ़ामें जन्म होनेसे सूर्यकी, रोहिणी, हस्त और श्रवणमें जन्म होनेसे चन्द्रमाकी; मृगशिर, चित्रा और घनिष्ठामें जन्म होनेसे मंगलकी दशामें जन्म हुआ माना जाता है। इसी प्रकार आगे भी चक्रको समझना चाहिए।

दशा ज्ञात करनेकी एक सुगम विधि यह है कि कृत्तिका नक्षत्रसे लेकर जन्मनक्षत्र तक गिनकर जितनी संख्या हो उसमें ९का भाग देनेसे एकादि शेषमें क्रमशः सू०, चं०, भौ०, रा०, गु०, श०, बु०, के०, शु० की दशा होती है।

दशासाधन

भयात और भभोगको पलात्मक बनाकर जन्मनक्षत्रके अनुसार जिस ग्रहकी दशा हो, उसके वर्षोंसे पलात्मक भयातको गुणाकर पलात्मक भभोगका भाग देनेसे जो लब्ध आये, वह वर्ष और शेषको १२ से गुणाकर पलात्मक भभोगका भाग देनेसे लब्ध मास; शेषको पुनः ३० से गुणाकर पलात्मक भभोगका भाग देनेसे लब्ध दिन; शेषको ६० से गुणाकर भाजक—पलात्मक, भभोगका भाग देनेसे लब्ध घटी और शेषको पुनः ६० से गुणाकर भाजकका भाग देनेपर लब्ध पल आते हैं। ये वर्ष, मास, घटी, पल उस ग्रहसे भुक्त कहलाते हैं, इन्हें ग्रहकी दशामें से घटानेपर भोग्य वर्षादि आते हैं।

विंशोत्तरीदशाका चक्र बनानेकी विधि

दशा चक्र बनानेकी विधि यह है कि पहले जिस ग्रहकी भोग्य दशा जितनी आयी है, उसको रखकर क्रमशः सब ग्रहोंके वर्षादिको स्थापित कर देना चाहिए। इन ग्रह वर्षोंके नीचे एक कोष्ठक—खाना संवत्के लिए तथा इसके नीचे एक खाना जन्म-कालीन राश्यादि लिखनेके लिए रहेगा। नीचेके खानेके सूर्य राश्यादिकी भोग्य दशाके मासादिमें जोड़ देना चाहिए और इस योगफलको नीचेके खानेके अगले कोष्ठकमें रखना चाहिए; मध्यवाले कोष्ठकके संवत्को ग्रहोंके वर्षोंमें जोड़कर आगे रखना चाहिए।

विंशोत्तरी दशाका उदाहरण

प्रस्तुत उदाहरणमें रोहिणी नक्षत्रका जन्म है, अतः चन्द्रमाकी दशामें जन्म हुआ माना जायगा।

भयात	भभोग
४ ।३०	६५।२०
६०	६०
२४० + ३०	३९०० + २०
२७० पलात्मक भयात	३९२० पलात्मक भभोग

२७० × १० ग्रह दशा चन्द्रमा के वर्षों से गुणा किया

२७०० ÷ ३९२० पलात्मक भभोग का भाग दिया

३९२०)२७००(०
०
२७०० × १२

३९२०)३२४००(८ मास
३१३६०
१०४० × ३० = ३१२०० ÷ ३९२० =

३९२०)३१२००(७ दिन
२७४४०
३७६०

३७६० × ६० = २२५६०० ÷ ३९२० =

३९२०)२२५६००(५७ घटी
१९६००
२९६००
२७४४०
२१६० × ६० = १२९६००

३९२०)१२९६००(३३
११७६०
१२०००
११७६०

०।८।७।५७।३३ भुक्त वर्षादि

चन्द्रमाकी कुल दशा १० वर्षकी होती है, अतः दशामें-से भुक्त वर्षादिको घटाया—

१०।०। ०। ०। ०
०।८। ७।५७।३३
९।३।२२। २।२७ भोग्य चन्द्र दशा वर्षादि

विंशोत्तरीदशा (जन्मपत्रीमें लिखनेको विधि)

श्रीवीरजिनेश्वरगौतमगणधरसंवादे विंशोत्तरीदशायां चन्द्रदशायाः भुक्तवर्षादयः ०।८।७।५७।३३ भोग्यवर्षादयः ९।३।२२।२।२७

विंशोत्तरीदशा चक्र

चं०	भौ०	रा०	गु०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	ग्रह
९	७	१८	१६	१९	१७	७	२०	६	वर्ष
३	०	०	०	०	०	०	०	०	मास
२२	०	०	०	०	०	०	०	०	दिन
२	०	०	०	०	०	०	०	०	घटी
२७	०	०	०	०	०	०	०	०	पल
संवत्	संवत्	संवत्	संवत्	संवत्	संवत्	संवत्	संवत्	संवत्	संवत्
२००३	२०१३	२०२०	२०३८	२०५४	२०७३	२०८०			
सूर्य	सूर्य	सूर्य	सूर्य	सूर्य	सूर्य	सूर्य	सूर्य	सूर्य	सूर्य
१०	२	२	२	२	२	२	२	२	२
१५	७	७	७	७	७	७	७	७	७
१७	१९	१९	१९	१९	१९	१९	१९	१९	१९
१०	३७	३७	३७	३७	३७	३७	३७	३७	३७

नोट—विकलाको दशाके पलोंमें, कलाको घटियोंमें, अंशोंको दिनोंमें और राशिको महीनोंमें जोड़ा गया है। जो वर्ष हासिल आयगा उसे ऊपर संकेत चिह्न लगाकर जोड़ देंगे।

अन्तर्दशाविचार

विंशोत्तरीकी अन्तर्दशा निकालनेके लिए उसके समयचक्र दिये जाते हैं, आगे इन्हीं चक्रोंपर-से अन्तर्दशा लिखी जायगी।

सूर्यान्तर चक्र

सू०	चं०	भौ०	रा०	गु०	श०	बु०	के०	शु०	ग्र०
०	०	०	०	०	०	०	०	१	वर्ष
३	६	४	१०	९	११	१०	४	०	मास
१८	०	६	२४	१८	१२	६	६	०	दिन

चन्द्रान्तर चक्र

चं०	भौ.	रा.	गु०	श०	बु	के०	शु०	सू०	ग्र०
०	०	१	१	१	१	०	१	०	व.
१०	७	६	४	७	५	७	८	६	मा.
०	०	०	०	०	०	०	०	०	दि.

भौमान्तर चक्र

भौ.	रा.	गु०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	चं०	ग्र०
०	१	०	१	०	०	१	०	०	व.
४	०	११	१	११	४	२	४	७	मा.
२७	१८	६	९	२७	२७	०	६	०	दि.

राह्वन्तर चक्र

रा.	गु.	श.	बु.	के.	शु.	सू.	चं.	भौ.	ग्र.
२	२	२	२	१	३	०	१	१	व.
८	४	१०	६	०	०	१०	६	०	मा.
१२	२४	६	१८	१८	०	२४	०	१८	दि.

गुर्वन्तर चक्र

गु.	श.	बु.	के.	शु.	सू.	चं.	भौ.	रा.	ग्र.
२	२	२	०	२	०	१	०	२	व.
१	६	३	११	८	९	४	११	४	मा.
१८	१२	६	६	०	१८	०	६	२४	दि.

शन्यन्तर चक्र

श.	बु.	के.	शु.	सू.	चं.	भौ.	रा.	गु.	ग्र.
३	२	१	३	०	१	१	२	२	व.
०	८	१	२	११	७	१	१०	६	मा.
३	९	९	०	१२	०	९	६	१२	दि.

बुधान्तर चक्र

बु.	के.	शु.	सू.	चं.	भौ.	रा.	गु.	श.	ग्र.
२	०	२	०	१	०	२	२	२	व.
४	११	१०	१०	५	११	६	३	८	मा.
२७	२७	०	६	०	२७	१८	६	९	दि.

केत्वन्तर चक्र

के.	शु.	सू.	चं.	भौ.	रा.	गु.	श.	बु.	ग्र.
०	१	०	०	०	१	०	१	०	व
४	२	४	७	४	०	११	१	११	मा.
२७	०	६	०	२७	१८	६	९	२७	दि.

शुक्रान्तर चक्र

शु.	सू.	चं.	भौ.	रा.	गु.	श.	बु.	के.	ग्र.
३	१	१	१	३	२	३	२	१	व.
४	०	८	२	०	८	२	१०	२	मा.
०	०	०	०	०	०	०	०	०	दि.

जन्मपत्रीमें अन्तर्दशा लिखनेकी विधि

जन्मपत्रीमें अन्तर्दशा लिखनेकी प्रक्रिया यह है कि सबसे पहले जिस ग्रहकी महादशा आती है, उसीकी अन्तर्दशा लिखी जाती है। जिस ग्रहकी अन्तर्दशा लिखनी हो, विंशोत्तरीके समान पहले खानेमें उसके वर्षादिवाले चक्रको, मध्यके खानेमें संवत् और अन्तिम खानेमें सूर्यके राशि, अंशको लिख लेना चाहिए। पश्चात् सूर्यके राशि और अंशको दशाके मास और दिनमें जोड़ना चाहिए। दिनसंख्यामें ३० से अधिक होनेपर ३० का भाग देकर लब्धको माससंख्यामें जोड़ देना चाहिए और माससंख्यामें १२ से अधिक होनेपर १२ का भाग देकर लब्धको वर्षमें जोड़ देना चाहिए। नीचे और ऊपरके खानोंको जोड़नेके अनन्तर मध्यवालेमें संवत्के वर्षोंको जोड़कर रखना चाहिए।

जिस ग्रहकी विंशोत्तरी दशा आयी है उसका अन्तर निकालनेके लिए उसके भुक्त वर्षोंको अन्तर्दशाके ग्रहोंके वर्षोंमें-से घटाकर तब अन्तर्दशा लिखनी चाहिए।

अन्तर्दशाका उदाहरण

प्रस्तुत उदाहरणमें विंशोत्तरी दशा चन्द्रकी आयी और इसके भुक्त वर्षादि ०।८।७ हैं। चन्द्रान्तर चक्रमें पहला अन्तर चन्द्रमाका १० माह है, अतः इसे इसमें से घटाया—

१० । ०
 ८ । ७
―――――
१ । २३ चन्द्रान्तर—

चद्रान्तर्दशा चक्र (जन्मपत्रीका)

चं०	भौ०	रा०	गु०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	ग्र०
० १ २३	० ७ ०	१ ६ ०	१ ४ ०	१ ७ ०	१ ५ ०	० ७ ०	१ ८ ०	० ६ ०	व० मा० दिन
संवत्	संवत्	संवत्	संवत्	संवत्	संवत्	संवत्	संवत्	संवत्	संवत्
२००३	२००४	२००४	२००६	२००७	२००९	२०१०	२०११	२०१२	२०१३
सूर्य	सूर्य	सूर्य	सूर्य	सूर्य	सूर्य	सूर्य	सूर्य	सूर्य	सूर्य
१० १५	० ८	७ ८	१ ८	५ ८	० ८	५ ८	० ८	८ ८	२ ८

भौमान्तर्दशा चक्र (जन्मपत्रीका)

भौ०	रा०	गु०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	चं	ग्र०
० ४ २७	१ ० १८	० ११ ६	१ १ ९	० ११ २७	० ४ २७	१ २ ०	० ४ ६	० ७ ०	व० मा० दिन
संवत्	संवत्	संवत्	संवत्	संवत्	संवत्	संवत्	संवत्	संवत्	संवत्
२०१३	२०१३	२०१४	२०१५	२०१६	२०१७	२०१८	२०१९	२०१९	२०२०
सूर्य	सूर्य	सूर्य	सूर्य	सूर्य	सूर्य	सूर्य	सूर्य	सूर्य	सूर्य
२ ८	७ ५	७ २३	६ २९	८ ८	८ ५	१ २	३ २	७ ८	२ ८

इसी प्रकार समस्त ग्रहोंकी अन्तर्दशा जन्मपत्रीमें लिखी जाती है।

विंशोत्तरीदशा और अन्तर्दशाका प्रयोजन

विंशोत्तरी महादशा और अन्तर्दशाकी जन्मपत्रीमें बड़ी आवश्यकता रहती है, इसके बिना कार्यके शुभाशुभ समयका ज्ञान नहीं हो सकता है। जैसे प्रस्तुत उदाहरणमें जातक का जन्म चन्द्रमाकी महादशामें हुआ है और यह संवत् २०१३ के मिथुन राशिके सूर्यके आठवें अंश तक रहेगी। चन्द्रमाकी महादशामें प्रथम माह २३ दिन तक चन्द्रमाकी ही अन्तर्दशा है, आगे चन्द्रमाकी महादशामें मंगल, राहु, गुरु, शनि, बुध, केतु, शुक्र और सूर्यकी अन्तर्दशाएँ हैं। सूर्यके राशि अंश पंचांगमें देखना चाहिए। दशाका फल विशेष रूपसे जानना हो तो दशाफलदर्पण नामक ग्रन्थ देखना चाहिए। सामान्य फल आगे फलादेश प्रकरणमें हैं।

जन्मपत्री देखनेकी संक्षिप्त विधि

जन्मपत्रीमें लग्न स्थानको प्रथम मान कर द्वादश स्थान होते हैं, जो भाव कहलाते हैं। इनके नाम ये हैं—तनु, धन, सहज, सुहृद्, पुत्र, शत्रु, कलत्र, आयु, धर्म, कर्म, आय और व्यय। इन बारह भावोंमें बारह राशियाँ और नवों ग्रह रहते हैं। ग्रह और राशियोंके स्वरूपके अनुसार इन भावोंका फल होता है।

राशियोंके नाम-मेष, वृष, मिथुन, कर्क, सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक, धनु, मकर, कुम्भ, मीन।

राशियोंके स्वामी या राशीश—मेष, वृश्चिकका स्वामी मंगल; वृष, तुलाका स्वामी शुक्र; मिथुन, कन्याका स्वामी बुध; कर्कका स्वामी चन्द्रमा; सिंहका स्वामी सूर्य; धनु, मीनका बृहस्पति और मकर, कुम्भका स्वामी शनि होता है।

ग्रहोंकी उच्च राशियाँ—सूर्य मेष राशिमें, चन्द्रमा वृषमें, मंगल मकरमें, बुध कन्यामें, बृहस्पति कर्कमें, शुक्र मीनमें, शनि तुलामें उच्चका होता है।

ग्रहोंका शत्रुता-मित्रताबोधक चक्र

ग्रह	सूर्य	चन्द्र	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि
मित्र	चं०मं०गु०	र०बु०	र०चं०गु०	र०शु०	चं०मं०र०	बु०श०	शु०बु०
सम	बु०	मं.गु.श.शु.	शु० श०	मं०गु०श०	श०	मं०गु०	गु०
शत्रु	शु० श०	×	बु०	चं०	शु० बु०	र०चं०	र०चं०मं०

ग्रहोंका स्वरूप

सूर्य—पूर्व दिशाका स्वामी, रक्तवर्ण, पुरुष, पित्तप्रकृति और पापग्रह है। सूर्य, आत्मा, राजभाव, आरोग्यता, राज्य और देवालयका सूचक तथा पितृकारक है। पिताके सम्बन्धमें सूर्यसे विचार किया जाता है। नेत्र, कलेजा, स्नायु और मेरुदण्डपर प्रभाव पड़ता है। लग्नसे सप्तममें बली और मकरसे ६ राशि पर्यन्त चेष्टाबली होता है।

चन्द्रमा—पश्चिमोत्तर दिशाका स्वामी, स्त्री, श्वेतवर्ण, वातश्लेष्मा प्रकृति और जलग्रह है। यह माता, चित्तवृत्ति, शारीरिक पुष्टि, राजानुग्रह, सम्पत्ति और चतुर्थ स्थान का कारक है। चतुर्थ स्थानमें बली और मकरसे छः राशिमें इसका चेष्टाबल होता है। सूर्यके साथ रहनेसे निष्फल होता है। नेत्र, मस्तिष्क, उदर और मूत्रस्थलीका विचार चन्द्रमासे किया जाता है।

मंगल—दक्षिण दिशाका स्वामी, पित्त प्रकृति, रक्तवर्ण, अग्नितत्त्व है। यह स्वभावतः पापग्रह है, धैर्य तथा पराक्रमका स्वामी है। तीसरे और छठवें स्थानमें बली और द्वितीय स्थानमें निष्फल होता है। दसवें स्थानमें दिग्बली और चन्द्रमाके साथ रहनेसे चेष्टाबली होता है।

बुध—उत्तर दिशाका स्वामी, नपुंसक, त्रिदोष, श्यामवर्ण और पृथ्वी तत्त्व है। यह पापग्रहों—सू० मं० श० रा० के० साथ रहनेसे अशुभ और शेष ग्रहोंके साथ रहनेसे शुभ होता है। इससे जिह्वा, कण्ठ और तालुका विचार किया जाता है।

गुरु—पूर्वोत्तर दिशाका स्वामी, पुरुष और पीतवर्ण है। यह लग्नमें बली और चन्द्रमाके साथ रहनेसे चेष्टाबली होता है। सन्तान और विद्याका विचार इससे होता है।

शुक्र—दक्षिण पूर्वका स्वामी, स्त्री और रक्तगौर वर्ण है। इसके प्रभावसे जातक का रंग गेहुआँ होता है। दिनमें जन्म होने पर शुक्रसे माताका भी विचार किया जाता है।

शनि—पश्चिम दिशाका स्वामी, नपुंसक, वातश्लेष्मिक प्रकृति और कृष्णवर्ण है। सप्तम स्थानमें बली होता है, वक्र और चन्द्रमाके साथ रहने पर चेष्टाबली होता है।

राहु—दक्षिण दिशाका स्वामी, कृष्णवर्ण और क्रूर ग्रह है।

केतु—कृष्ण वर्ण और क्रूर ग्रह है। इससे चर्मरोग, हाथ, पाँवका विचार किया जाता है।

विशेष—यद्यपि बृहस्पति और शुक्र दोनों शुभ ग्रह हैं, पर शुक्रसे सांसारिक और व्यावहारिक सुखोंका तथा गुरुसे पारलौकिक एवं आध्यात्मिक सुखोंका विचार करते हैं। शुक्रके प्रभावसे व्यक्ति स्वार्थी और गुरुके प्रभावसे परमार्थी होता है।

शनि और मंगल दोनों ही पापग्रह हैं, पर शनिका अन्तिम परिणाम सुखद होता है, यह दुर्भाग्य और यन्त्रणाके फेरमें डाल कर व्यक्तिको शुद्ध कर देता है। परन्तु मंगल उत्तेजना देने वाला, उमंग और तृष्णासे परिपूर्ण कर देनेके कारण सर्वदा दुःखदायक है।

ग्रहोंके बलाबलका विचार

ग्रहोंके छः प्रकारके बल बताये गये हैं, स्थानबल, दिग्बल, कालबल, नैसर्गिकबल, चेष्टाबल और दृग्बल।

स्थानबल—जो ग्रह उच्च, स्वगृही, मित्रगृहो, मूलत्रिकोणस्थ, स्वनवांशस्थ अथवा द्रेष्काणस्थ होता है, वह स्थानबली होता है।

दिग्बल—बुध और गुरु लग्नमें रहनेसे, शुक्र एवं चन्द्रमा चतुर्थमें रहनेसे, शनि सप्तममें रहनेसे एवं सूर्य और मंगल दशम स्थानमें रहनेसे दिग्बली होते हैं।

कालबल—रातमें जन्म होने पर चन्द्र, शनि और मंगल तथा दिनमें जन्म होने पर सूर्य, बुध और शुक्र कालबली होते हैं।

नैसर्गिक बल—शनि, मंगल, बुध, गुरु, शुक्र, चन्द्र और सूर्य उत्तरोत्तर बली होते हैं।

चेष्टाबल—मकरसे मिथुन पर्यन्त किसी भी राशिमें रहनेसे सूर्य और चन्द्रमा एवं चन्द्रमाके साथ रहनेसे मंगल, बुध, गुरु, शुक्र और शनि चेष्टाबली होते हैं।

दृग्बल—शुभ ग्रहोंसे दृष्ट ग्रह दृग्बली होते हैं।

बलवान् ग्रह अपने स्वभावके अनुसार जिस भावमें रहता है, उस भावका फल देता है। पाठकोंको ग्रहस्वभाव और राशिस्वभावका समन्वय कर फल कहना चाहिए।

राशि-स्वरूप

मेष—पुरुष, चरसंज्ञक, अग्नितत्त्व, पूर्वदिशाकी स्वामिनी, पृष्ठोदय, रक्त-पीत वर्ण, क्षत्रिय और उग्रप्रकृति है। इस राशि वालोंका स्वभाव साहसी, अभिमानी और मित्रों पर कृपा रखने वाला होता है। इससे मस्तकका विचार करते हैं।

वृष—स्त्री, स्थिरसंज्ञक, शीतलस्वभाव, दक्षिण दिशाकी स्वामिनी, वैश्य, विषमोदयी और श्वेत वर्ण है। इसका प्राकृतिक स्वभाव स्वार्थी, समझ-बूझकर काम करने वाला और सांसारिक कार्योंमें दक्ष होता है। मुख और कपोलोंका विचार इससे होता है।

मिथुन—पश्चिम दिशाकी स्वामिनी, हरितवर्ण, शूद्र, पुरुष, द्विस्वभाव और उष्ण है। इसका प्राकृतिक स्वभाव अध्ययनशील और शिल्पी है। इससे कन्धे और बाहुओंका विचार होता है।

कर्क—चर, स्त्री, सौम्य और कफ प्रकृति, उत्तर दिशाकी स्वामिनी, लाल और गौर वर्ण है। इसका प्राकृतिक स्वभाव सांसारिक उन्नतिमें प्रयत्नशीलता, लज्जा, कार्यस्थैर्य और समयानुयायिताका सूचक है। इससे वक्षस्थल और गुर्देका विचार करते हैं।

सिंह—पुरुष, स्थिर, पित्तप्रकृति, क्षत्रिय और पूर्वदिशाकी स्वामिनी है। इसका प्राकृतिक स्वभाव मेष-जैसा है, पर तो भी स्वातन्त्र्य प्रेम और उदारता विशेष रूपसे वर्तमान हैं। इससे हृदयका विचार किया जाता है।

कन्या—पिंगलवर्ण, स्त्री, द्विस्वभाव, वायु-शीत प्रकृति, दक्षिणदिशाकी स्वामिनी है। इसका प्राकृतिक स्वभाव मिथुन जैसा है, पर अपनी उन्नति और मान पर पूर्ण ध्यान रखनेकी इच्छाका सूचक है। इससे पेटका विचार किया जाता है।

तुला—पुरुष, चर, वायु, श्याम, शूद्र और पश्चिम दिशाकी स्वामिनी है। इसका प्राकृतिक स्वभाव विचारशील, ज्ञानप्रिय, कार्यज्ञ और राजनीतिज्ञ है। इससे नाभिसे नीचेके अंगोंका विचार किया जाता है।

वृश्चिक—स्थिर, शुभ्र, स्त्री, कफ, ब्राह्मण और उत्तरदिशाकी स्वामिनी है। इसका प्राकृतिक स्वभाव दम्भी, हठी, दृढ़प्रतिज्ञ, स्पष्टवादी और निर्मल चित्त है, इससे जननेन्द्रियका विचार किया जाता है।

धनु—पुरुष, कांचनवर्ण, द्विस्वभाव, क्रूर, पित्त, क्षत्रिय और पूर्व दिशाकी स्वामिनी है। इसका प्राकृतिक स्वभाव अधिकारप्रिय, करुणामय और मर्यादाका इच्छुक होता है। इससे पैरोंकी सन्धि और जंघाओंका विचार किया जाता है।

मकर—चर, स्त्री, वातप्रकृति, पिंगलवर्ण, वैश्य और दक्षिणकी स्वामिनी है। इसका प्राकृतिक स्वभाव उच्चाभिलाषी है, इससे घुटनोंका विचार किया जाता है।

कुम्भ—पुरुष, स्थिर, वायुतत्त्व, विचित्रवर्ण, शूद्र, क्रूर एवं पश्चिम दिशाकी स्वामिनी है। इसका प्राकृतिक स्वभाव विचारशील, शान्तचित्त, धर्मभीरु और नवीन बातोंका आविष्कार है। इससे पिल्लीका विचार करते हैं।

मीन—द्विस्वभाव, स्त्री, कफप्रकृति, पिंगल वर्ण, विप्र और उत्तरदिशाकी स्वामिनी है। इसका प्राकृतिक स्वभाव उत्तम, दयालु और दानशील है। इससे पैरोंका विचार किया जाता है।

ग्रहोंकी दृष्टि—अपनेसे तीसरे और दसवें स्थानको एकपाद दृष्टिसे, पाँचवें और नवेंको दोपाद दृष्टिसे, चौथे और आठवें को तीनपाद दृष्टिसे और सातवें स्थानको पूर्ण-दृष्टिसे देखते हैं। मंगल चौथे और आठवें स्थानको, शनि तीसरे और छठवें स्थानको तथा गुरु पाँचवें और नवें स्थानको पूर्णदृष्टिसे देखता है।

द्वादश भावोंके संक्षिप्त फल

प्रथम भाव या लग्न—प्रथम भावसे शरीरकी आकृति, रूप आदिका विचार किया जाता है। इस भावमें जिस प्रकारकी राशि और ग्रह होंगे जातकका शरीर और रूप भी वैसा ही होगा। शरीरकी स्थितिके सम्बन्धमें विचार करनेके लिए ग्रह और राशियोंके तत्त्व नीचे दिये जाते हैं।

ग्रहोंके स्वभाव और तत्त्व

१ सूर्य	शुष्कग्रह	अग्नितत्त्व
२ चन्द्र	जलग्रह	जलतत्त्व
३ मंगल	शुष्कग्रह	अग्नितत्त्व
४ बुध	जलग्रह	पृथ्वीतत्त्व
५ गुरु	जलग्रह	आकाश या तेजतत्त्व
६ शुक	जलग्रह	जलतत्त्व
७ शनि	शुष्कग्रह	वायुतत्त्व

राशियोंके तत्त्व तथा उनका विवरण

१ मेष	अग्नि (तत्त्व)	पादजल ($\frac{1}{4}$)	ह्रस्व (आकार)
२ वृष	पृथ्वी	अर्द्धजल ($\frac{1}{2}$)	,,
३ मिथुन	वायु	निर्जल	सम
४ कर्क	जल	पूर्णजल	,,
५ सिंह	अग्नि	निर्जल	दीर्घ
६ कन्या	पृथ्वी	निर्जल	,,
७ तुला	वायु	पादजल ($\frac{1}{4}$)	,,
८ वृश्चिक	जल	पादजल ($\frac{1}{4}$)	,,
९ धनु	अग्नि	अर्द्धजल ($\frac{1}{2}$)	सम
१० मकर	पृथ्वी	पूर्णजल	,,
११ कुम्भ	वायु	अर्द्धजल ($\frac{1}{2}$)	ह्रस्व
१२ मीन	जल	पूर्णजल	,,

उपर्युक्त संज्ञाओंपर से शारीरिक स्थिति ज्ञात करनेके नियम

१—लग्न जलराशि हो और उसमें जलग्रहकी स्थिति हो तो जातकका शरीर मोटा होगा।

२—लग्न और लग्नेश जलराशि गत होनेसे शरीर खूब मोटा होता है।

३—यदि लग्न अग्निराशि हो और अग्नि ग्रह उसमें स्थित हो तो शरीर दुबला, पर मनुष्य बली होता है।

४—अग्नि या वायुराशि लग्न हो और लग्नेश पृथ्वीराशि गत हो तो हड्डियाँ साधारणतः मजबूत होती हैं और शरीर ठोस होता है।

५—यदि अग्नि या वायुराशि लग्न हो और लग्नेश जलराशिमें हो तो शरीर स्थूल होता है।

६—लग्न वायुराशि हो और उसमें वायु ग्रह स्थित हो तो जातक दुबला, पर तीक्ष्ण बुद्धिवाला होता है।

७—लग्न पृथ्वीराशि हो और उसमें पृथ्वी ग्रह स्थित हो तो शरीर नाटा होता है।

८—पृथ्वीराशि लग्न हो और लग्नेश पृथ्वीराशि गत हो तो शरीर स्थूल और दृढ़ होता है।

९—पृथ्वीराशि लग्न हो और लग्नेश जलराशिमें हो तो शरीर साधारणतः स्थूल होता है। लग्नकी राशि ह्रस्व, दीर्घ या सम जिस प्रकार की हो उसीके अनुसार जातकके शरीरकी ऊँचाई होती है।

लग्नेश[1] और लग्न राशिके स्वरूपके अनुसार जातकके रूप—वर्णका निश्चय करना चाहिए। मेष लग्नमें लाल मिश्रित सफेद, वृषमें पीला मिश्रित सफेद, मिथुनमें गहरा लाल मिश्रित सफेद, कर्कमें नीला, सिंहमें धूसर, कन्यामें घनश्याम, तुलामें लाल मिश्रित कृष्ण, वृश्चिकमें बादामी, धनुमें पीत, मकरमें चितकबरा, कुम्भमें नील और मीनमें गौर वर्ण होता है। सूर्यसे रक्तश्याम, चन्द्रसे गौर, मंगलसे रक्तवर्ण, बुधसे दूर्वादलके समान श्यामल, गुरुसे कांचनवर्ण, शुक्रसे श्यामल, शनिसे कृष्ण, राहुसे कृष्ण और केतुसे धूमिल वर्णका जातकको समझना चाहिए। लग्न तथा लग्नेश पर पाप ग्रहकी दृष्टि होनेसे कुरूप एवं बुध, शुक्रके एक साथ कहीं भी रहनेसे गौरवर्ण न होनेपर भी जातक सुन्दर होता है।

रवि लग्नमें हो तो आँखें सुन्दर नहीं होंगी, चन्द्रमा लग्नमें हो तो गौरवर्ण होते हुए भी सुडौल नहीं होता; मंगल लग्नमें हो तो शरीर सुन्दर होता है, पर चेहरे पर सुन्दरतामें अन्तर डालने वाला कोई निशान होता है; बुध लग्नमें हो तो चमकदार साँवला रंग और कम या अधिक चेचकके दाग होते हैं; गुरु लग्नमें हो तो गौरवर्ण और

---

१. लग्न स्थानकी राशिका स्वामी।

शरीर सुडौल होता है; किन्तु कम आयुमें ही वृद्ध बना देता है, सफेद बाल जल्द होते हैं, ४५ वर्ष की आयुमें दाँत गिर जाते हैं, मेद वृद्धिमें पेट बड़ा होता है; शुक्र लग्नमें हो तो शरीर सुन्दर और आकर्षक होता है, शनि लग्नमें हो तो कुरूप एवं राहु केतुके लग्नमें रहनेसे चेहरे पर काले दाग होते हैं। शरीरके रूपका विचार करते समय ग्रहोंकी दृष्टिका अवश्य आश्रय लेना चाहिए। लग्नमें क्रूर ग्रहोंके रहनेपर भी शुभकी दृष्टि होनेसे व्यक्ति सुन्दर होता है, इसी प्रकार पापग्रहोंकी दृष्टि होनेसे सुन्दरतामें कमी आती है।

द्वितीय भाव विचार—इससे धनका विचार किया जाता है। इसका विचार द्वितीयेश[1], द्वितीय भावकी राशि और इस स्थानपर दृष्टि रखने वाले ग्रहोंके सम्बन्धसे करना चाहिए। द्वितीयेश शुभ ग्रह हो या द्वितीय भावमें शुभ ग्रहकी राशि[2] हो और उसमें शुभ ग्रह बैठा हो तथा शुभ ग्रहोंकी द्वितीय भाव पर दृष्टि हो तो व्यक्ति धनी होता है। कुछ धनी योग नीचे दिये जाते हैं—

१—भाग्येश[3] और लाभेशका योग
२—भाग्येश और दशमेशका योग
३—भाग्येश और चतुर्थेशका योग
४—भाग्येश और पंचमेशका योग
५—भाग्येश और लग्नेशका योग
६—भाग्येश और धनेशका योग
७—दशमेश और लाभेशका योग
८—दशमेश और चतुर्थेशका योग
९—दशमेश और लग्नेशका योग
१०—दशमेश और पंचमेशका योग
११—दशमेश और धनेशका योग
१२—लाभेश और धनेशका योग
१३—लाभेश और चतुर्थेशका योग
१४—लाभेश और लग्नेशका योग
१५—लाभेश और पंचमेशका योग
१६—लग्नेश और धनेशका योग
१७—लग्नेश और चतुर्थेशका योग
१८—लग्नेश और पंचमेशका योग
१९—धनेश और चतुर्थेशका योग
२०—चतुर्थेश और पंचमेशका योग

दारिद्र्य योग

१—षष्ठेश और धनेशका योग
२—षष्ठेश और लग्नेशका योग
३—षष्ठेश और चतुर्थेशका योग
४—कर्मेश और चतुर्थेशका योग
५—कर्मेश और धनेशका योग
६—व्ययेश और लग्नेशका योग
७—षष्ठेश और दशमेशका योग
८—व्ययेश और पंचमेशका योग
९—व्ययेश और सप्तमेशका योग
१०—षष्ठेश और भाग्येशका योग
११—व्ययेश और भाग्येशका योग
१२—षष्ठेश और तृतीयेशका योग
१३—व्ययेश और तृतीयेशका योग
१४—षष्ठेश और कर्मेशका योग
१५—व्ययेश और दशमेशका योग
१६—षष्ठेश और पंचमेशका योग

---

१. द्वितीय स्थानमें रहनेवाली राशिका स्वामी। २. जिन राशियोंके स्वामी शुभ ग्रह हैं, वे राशियाँ। ३. भाग्यस्थान-९ वें भावका स्वामी और लाभस्थान-११ वें भावका स्वामी, एक जगह हों।

१७—षष्ठेश और सप्तमेशका योग
१८—षष्ठेश और लाभेशका योग
१९—कर्मेश और लाभेशका योग
२०—कर्मेश और अष्टमेशका योग

धनयोग २।४।५।७ भावोंमें हों तो पूर्ण फल, ८।१२ में आधा फल, ६ वें भावमें चतुर्थांश धन और शेष भावोंमें निष्फल होते हैं।

दरिद्र योग धन स्थानमें पूर्ण फल, व्यय स्थानमें हों तो ¾ फल, दूसरे स्थानमें अर्द्ध फल और शेष स्थानोंमें निष्फल होते हैं।

प्रत्येक व्यक्तिकी जन्मपत्रीमें दोनों ही प्रकारके योग होते हैं। यदि विचार करनेसे धनी योगोंकी संख्या दरिद्र योगोंकी संख्यासे अधिक हो तो व्यक्ति धनी और धनी योगोंसे दरिद्र योगोंकी संख्या अधिक हो तो व्यक्ति दरिद्री होता है। पूर्ण फल वाले दो धनी योगोंके अधिक होनेसे सहस्राधिपति, तीनके अधिक होने पर लक्षाधिपति व्यक्ति होता है। अर्ध फल वाले योगोंका फल आधा जानना चाहिए।

तृतीय भाव विचार—इस भावसे भाई और बहनोंका विचार किया जाता है। परन्तु ग्यारहवें भावसे बड़े भाइयों और बड़ी बहनोंका तथा तीसरेसे छोटे भाइयों और छोटी बहनोंका विचार होता है। मंगल भ्रातृकारक है, भातृ-सुखके लिए निम्न योगोंका विचार करना चाहिए।

(क) तृतीय स्थानमें शुभ ग्रह रहनेसे, (ख) तृतीय भाव पर शुभ ग्रहकी दृष्टि होनेसे, (ग) तृतीयेशके बली होनेसे, (घ) तृतीय भावके दोनों ओर-द्वितीय और चतुर्थमें शुभ ग्रहोंके रहनेसे, (ङ) तृतीयेश पर शुभ ग्रहोंकी दृष्टि रहनेसे, (च) तृतीयेशके उच्च होनेसे और (छ) तृतीयेशके साथ शुभ ग्रहोंके रहनेसे भाई-बहनका सुख होता है।

तृतीयेश या मंगलके सम राशियोंमें रहनेसे कई भाई-बहनोंका सुख होता है। यदि तृतीयेश और मंगल १२ वें स्थानमें हों, उस पर पापग्रहोंकी दृष्टि हो या पापग्रह तृतीयमें हों और उसपर पापग्रहकी दृष्टि हो या तृतीयेशके आगे-पीछे पापग्रह हों या द्वितीय और चतुर्थमें पापग्रह हों तो भाई-बहनकी मृत्यु होती है। तृतीयेश या मंगल ३।६।१२ भावोंमें हों और शुभ ग्रहसे दृष्ट न हों तो भ्रातृसुख नहीं होता। तृतीयेश राहु या केतुके साथ ६।८।१२ वें भावमें हो तो भ्रातृसुखका अभाव होता है। एकादशेश पाप ग्रह हो या इस भावमें पाप ग्रह स्थित हो और शुभ ग्रहसे दृष्ट न हो तो बड़ेका सुख नहीं होता।

भ्रातृसंख्या जाननेके नियम—द्वितीय तथा तृतीय स्थानमें जितने ग्रह रहें उतने अनुज और एकादश तथा द्वादश स्थानमें जितने ग्रह हों उतने बड़े भाई होते हैं। यदि इन स्थानोंमें ग्रह न हों तो इन स्थानों पर जितने ग्रहोंकी दृष्टि हो उतने अनुज और अग्रजोंका अनुमान करना। स्वक्षेत्री ग्रहोंके रहने तथा उन स्थानों पर अपने स्वामीकी

दृष्टि[1] पड़नेसे भ्रातृसंख्यामें वृद्धि होती है। जितने ग्रह तृतीयेशके साथ हों, मंगलके साथ हों, तृतीयेश पर दृष्टि रखते हों और तृतीयस्थ हों उतनी ही भ्रातृसंख्या होती है।

लग्नेश और तृतीयेश मित्र हों अथवा शुभ स्थानोंमें एक साथ हों तो भाइयोंमें प्रेम होता है।

विशेषफल—तृतीयेश ९।१०।११ वें भावमें बली होकर स्थित हो तो जातक असाधारण उन्नति करता है। सौदा, लाटरी, मुकद्दमामें विजय तृतीय भावमें क्रूर ग्रहके रहनेपर मिलती है।

चतुर्थभावविचार—इससे मकान, पिताका सुख, मित्र आदिके सम्बन्धमें विचार करते हैं। इस स्थान पर शुभ ग्रहोंकी दृष्टि होनेसे या इस स्थानमें शुभ ग्रहोंके रहनेसे मकानका सुख होता है। चतुर्थेश पुरुष[2] ग्रह बली हो तो पिताका पूर्ण सुख और निर्बल हो तो अल्प सुख तथा चतुर्थेश स्त्रीग्रह बली हो तो माताका पूर्ण सुख और निर्बल हो तो अल्पसुख होता है। चन्द्रमा बली हो तथा लग्नेशको जितने शुभंग्रह देखते हों (किसी भी दृष्टिसे) जातकके उतने ही मित्र होते हैं। चतुर्थ स्थानपर चन्द्र, बुध और शुक्रकी दृष्टि[3] हो तो बाग-बगीचा; चतुर्थ स्थान गुरुसे युत या दृष्ट होनेसे मन्दिर; बुधसे युत या दृष्ट होनेपर रंगीन महल; मंगलसे युत या दृष्ट होनेसे पक्का मकान और शनिसे युत या दृष्ट होनेसे सीमेन्टेड मकानका सुख होता है।

विशेष योग—लग्नेश, चतुर्थेश और धनेश इन तीनों ग्रहोंमें से जितने ग्रह १।४।५।७।९।१० स्थानोंमें गये हों उतने ही मकान जातकके होते हैं। उच्च, मूलत्रिकोण और स्वक्षेत्रीमें क्रमशः तिगुने, दूने और डेढ़ गुने समझने चाहिए।

विद्यायोग—चतुर्थ और पंचम इन दोनोंके सम्बन्धसे विद्याका विचार किया जाता है तथा दशम स्थानसे विद्याजनित यशका और विश्वविद्यालयोंकी उच्च परीक्षाओंमें उत्तीर्णता प्राप्त करनेका विचार किया जाता है।

१—यदि चतुर्थस्थानमें चतुर्थेश हो अथवा शुभग्रह की दृष्टि हो या वहाँ शुभग्रह स्थित हो तो जातक विद्या-विनयी होता है। २—चन्द्रलग्न[4] एवं [5]जन्मलग्नसे पंचम स्थानका स्वामी बुध, गुरु और शुक्रके साथ १।४।५।७।९।१० स्थानोंमें-से किसीमें बैठा हो तो जातक विद्वान् होता है। बुध और गुरु एक साथ किसी भी भावमें हों तो विद्याका उत्तम योग होता है। ३—चतुर्थेश ६।८।१२ वें भावमें हो या पापग्रहके साथ हो या पापग्रहसे दृष्ट हो अथवा पापराशिगत हो तो विद्याका अभाव समझना चाहिए।

पंचम भाव विचार—पंचमेश शुभ ग्रह हो, शुभ ग्रहोंके साथ हो, शुभ ग्रहोंसे घिरा—आगेके स्थान और पीछेके स्थानमें शुभ ग्रह हों, बुध उच्चका हो, पंचममें बुध

१. किसी भी प्रकारकी दृष्टि-एकपाद, दो पाद आदि। २. ग्रहोंके स्वरूपपर-से पुरुष, स्त्री ग्रहोंका परिज्ञान करना चाहिए। ३. यहाँ पूर्ण दृष्टि ली गयी है। ४. चन्द्रकुण्डलीका लग्न। ५. जन्मकुण्डलीका लग्न।

हो, या पंचममें गुरु हो, गुरुसे पंचम भावका स्वामी १।४।५।७।९।१० वें भावमें स्थित हो तो जातक विद्वान् होता है।

सन्तानविचार—जन्मकुण्डलीके पंचम स्थानसे और चन्द्रकुण्डलीके पंचम स्थानसे सन्तानका विचार करना चाहिए। १—पंचम भाव, पंचमेश और गुरु शुभ ग्रह द्वारा दृष्ट[1] या युत होनेसे सन्तान योग होता है। २—लग्नेश पाँचवें भावमें हो और गुरु बलवान् हो तो सन्तान योग होता है। ३—बलवान् गुरु[2] लग्नेशद्वारा देखा जाता हो तो सन्तानयोग प्रबल होता है। १।४।५।७।९।१० वें स्थानोंके स्वामी शुभ ग्रह हों और पंचममें स्थित हों तथा पंचमेश ६।८।१२ वें भावमें न हो, पापयुक्त न हो तो सन्तानसुख पूर्ण होता है। ४—पंचम स्थानमें वृष, कर्क और तुलामें-से कोई राशि हो, पंचममें शुक्र या चन्द्रमा स्थित हो अथवा इनकी कोई भी दृष्टि पंचमपर हो तो बहुपुत्र योग होता है। ५—लग्न अथवा चन्द्रमासे पंचम स्थानमें शुभ ग्रह स्थित हो, पंचम भाव शुभ ग्रहसे युत या दृष्ट हो तो सन्तानयोग होता है। ६—लग्नेश और पंचमेश एक साथ हों या परस्पर एक दूसरेको देखते हों तो सन्तानयोग होता है। ७—लग्नेश, पंचमेश शुभ ग्रहके साथ १।४।७।१० स्थानोंमें हों और द्वितीयेश बली हो तो सन्तानयोग होता है। ८—लग्नेश और नवमेश दोनों सप्तमस्थ हों अथवा द्वितीयेश लग्नस्थ हो तो सन्तानयोग होता है।

स्त्रीकी कुण्डलीमें निम्न योगोंके होनेपर सन्तान नहीं होती है। १—सूर्य लग्नमें और शनि सप्तम में, २—सूर्य और शनि सप्तममें, चन्द्रमा दशम भावमें स्थित हो तथा गुरुसे दोनों ग्रह अदृष्ट हों। ३—षष्ठेश, रवि और शनि ये तीनों ग्रह षष्ठ स्थानमें हों और चन्द्रमा सप्तम स्थानमें हों तथा बुधसे अदृष्ट हो। ४—शनि, मंगल छठवें या चौथे स्थानमें हों।

१—६।८।१२ भावोंके स्वामी पंचममें हों या पंचमेश ६।८।१२ वें भावोंमें हो, पंचमेश नीच या अस्तंगत हो तो स्त्री-पुरुष दोनोंकी कुण्डलीमें सन्तानका अभाव समझना चाहिए।

२—पंचम भावमें धनु और मीन राशियोंमें-से किसीका रहना या पंचममें गुरुका रहना सन्तानके लिए बाधक है। ३—पंचमेश, द्वितीयेश निर्बल हों और पंचम स्थानपर पापग्रहकी दृष्टि हो तो सन्तानका अभाव होता है। पंचमेश जिस राशिमें हो उससे ६।८।१२ भावोंमें पापग्रहोंके रहनेसे सन्तानका अभाव होता है।

सन्तानसंख्याविचार—पंचममें जितने ग्रह हों और इस स्थानपर जितने ग्रहोंकी दृष्टि हो उतनी सन्तानसंख्या समझना। पुरुष ग्रहोंके योग और दृष्टिसे पुत्र और स्त्री ग्रहोंके योग और दृष्टिसे कन्याकी संख्याका अनुमान करना। पंचमेशकी किरण[3]

---

१. कोई भी दृष्टि हो। २. पूर्वोक्त छः प्रकारके बलोंमें-से कमसे कम दो बल जिसके हों। ३. सूर्य उच्चराशिका हो तो १०, चन्द्र हो तो ९, भौम हो तो ५, बुध हो तो ५, गुरु हो तो ७, शुक्र हो तो ८ और शनि हो तो पाँच किरणें होती हैं। उच्चबलका साधन कर किरणसंख्या निकालनी चाहिए।

संख्याके तुल्य सन्तान जानना चाहिए।

षष्ठभाव विचार--रोग और शत्रुका विचार इस भावसे करना चाहिए। छठवें स्थानमें राहु, शनि, केतु, मंगलका रहना अच्छा है, शत्रुकष्टका अभाव इन ग्रहोंके होनेसे समझना चाहिए।

सप्तम भाव विचार--इस स्थानसे विवाहका विचार प्रधानतः किया जाता है। विवाह योग निम्न हैं--

१-पापयुक्त सप्तमेश ६।८।१२ भाव में हो अथवा नीच या अस्तंगत हो तो विवाह का अभाव या विधुर होता है। २-सप्तमेश बारहवें भावमें हो तथा लग्नेश और जन्म-राशिका स्वामी सप्तममें हो तो विवाह नहीं होता। ३--षष्ठेश, अष्टमेश तथा द्वादशेश सप्तम भावमें हों, शुभ ग्रहसे युत या दृष्ट न हों अथवा सप्तमेश ६।८।१२ वें भावोंका स्वामी हो तो स्त्रीसुख नहीं होता। ४--शुक्र, चन्द्रमा एक साथ किसी भी भावमें बैठे हों तथा शनि और भौम उनसे सप्तम भावमें हों तो विवाह नहीं होता। ५--७।१२ वें भावमें दो-दो पापग्रह हों तथा पंचममें चन्द्रमा हो तो जातकका विवाह नहीं होता। ६--शनि, चन्द्रमाके सप्तममें रहनेसे विवाह नहीं होता। गुरु भी सप्तममें स्त्रीसुखका बाधक है। ७--शुक्र और बुध सप्तममें एक साथ हों तथा सप्तमपर पापग्रहोंकी दृष्टि हो तो विवाह नहीं होता, लेकिन शुभ ग्रहोंकी दृष्टि होनेसे विवाह बड़ी आयुमें होता है।

विवाह योग--सप्तम स्थानमें शुभ ग्रहके रहनेसे, सप्तमपर शुभ ग्रहोंकी दृष्टिके होनेसे तथा सप्तमेशके शुभ युत या दृष्ट होनेसे विवाह होता है।

विवाह समय--लग्नेशसे शुक्र जितना नजदीक हो उतना ही जल्दी विवाह होता है, दूर होनेसे देरीसे होता है। शुक्रकी स्थिति जिस राशिमें हो उस राशिके स्वामीकी दशा[1] या अन्तर्दशामें विवाह होता है।

अष्टम भाव विचार--इस भावसे आयुका विचार किया जाता है। अरिष्ट-योग--१-चन्द्रमा निर्बल होकर पापग्रहसे युत या दृष्ट हो तथा अष्टम स्थानमें गया हो तो बालककी मृत्यु होती है। २--यदि चारों केन्द्रस्थानोंमें (१।४।७।१०) चन्द्र, मंगल, शनि और सूर्य बैठे हों तो बालककी मृत्यु होती है। ३--लग्नमें चन्द्रमा, बारहवेंमें शनि, नौवेंमें सूर्य, आठवेंमें भौम हो तो बालकको बालारिष्ट होता है। ४--चन्द्रमा पापग्रहसे युत या दृष्ट होकर १।४।८।६।१२ भावोंमें-से किसीमें हो तो अरिष्ट होता है।

अरिष्टनिवारक--राहु, शनि और मंगल ३।६।११वें भावमें हों तो अरिष्ट दूर हो जाता है। गुरु और शुक्र १।४।७।१० वें भावमें हो तो अरिष्ट भंग होता है।

आयु साधनका सरल गणित--केन्द्रांक (१।४।७।१०वें भावोंकी राशिसंख्या), त्रिकोणांक (५।९ वें भावोंकी राशिसंख्या), केन्द्रस्थ ग्रहांक (चारों केन्द्रस्थानोंमें रहने-वाले ग्रहोंकी संख्या अर्थात् सूर्य १, चन्द्र २, भौम ३, बुध ४, गुरु ५, शुक्र ६, शनि ७, राहु ८, केतु ९) और त्रिकोणस्थ ग्रहांक (५।९ भावोंमें रहनेवाले ग्रहोंकी अंक

---

१. विंशोत्तरी दशाके क्रमसे समयका ज्ञान करना चाहिए।

संख्या) इन चारों संख्याओंको जोड़कर योगफलको १२ से गुणाकर १० का भाग देनेसे जो वर्षादि लब्ध आवे उनमें-से १२ घटा देनेपर आयुप्रमाण होता है।

लग्नायु साधन—जन्मकुण्डली में जिन-जिन स्थानों में ग्रह स्थित हों, उन-उन स्थानों में जो-जो राशि हों उन सभी ग्रहस्थ राशियों के निम्न ध्रुवांकों को जोड़ देने पर लग्नायु होती हैं। ध्रुवांक–मेष १०, वृष६, मिथुन२०, कर्क५, सिंह८, कन्या२, तुला२०, वृश्चिक६, धनु१०, मकर१४, कुम्भ३ और मीन१० ध्रुवांक संख्यावाली हैं।

केन्द्रायुसाधन–जन्मकुण्डलीके चारों केन्द्र स्थानों (१।४।७।१०) की राशियों का योग कर भौम और राहु जिस जिस राशिमें हों उनके अंकों की संख्याका योग केन्द्रांक संख्याके योगमें से घटा देने पर जो शेष बचे उसे तीनसे गुणा करने पर केन्द्रायु होती है। इस प्रकार सभी गणितोंका समन्वय कर आयु बतानी चाहिए।

नवम भावविचार—इस भाव से भाग्य और धर्म-कर्म के सम्बन्ध में विचार किया जाता है। भाग्येश (नवम का स्वामी) ६।८।१२ में स्थित हो तो भाग्य उत्तम नहीं होता। भाग्य स्थान (नौवें भाव) में लाभेश–ग्यारहवें भाव का स्वामी बैठा हो तो नौकरीका योग होता है। धनेश लाभभावमें गया हो और दशमेंशसे युत या दृष्ट हो तो भाग्यवान् होता है। नवमेश धनभावमें गया हो और दशमेशसे युत या दृष्ट हो तो व्यक्ति भाग्यवान् होता है। लाभेश नवम भावमें, धनेश लाभभावमें, नवमेश धनभावमें गया हो और दशमेंशसे युत या दृष्ट हो तो महा भाग्यवान् योग होता है। नवम भाव गुरु और शुक्रसे युत या दृष्ट हो या भाग्येश गुरु, शुक्र से युत हो या लग्नेश और धनेश पंचम भावमें गये हों अथवा लग्नेश नवम भावमें और नवमेश लग्नमें गया हो तो भाग्यवान् होता है।

भाग्योदय काल—सप्तमेश या शुक्र ३।६।१०।११ या ७ वें भाव में हो तो विवाह के बाद भाग्योदय होता है। भाग्येश रवि हो तो २२ वें वर्षमें, चन्द्र हो तो २४ वें वर्षमें, मंगल हो तो २८ वें वर्षमें, बुध हो तो ३२ वें वर्षमें, गुरु हो तो १६ वें वर्षमें, शुक्र हो तो २५ वें वर्षमें, शनि हो तो ३६ वें वर्षमें और राहु या केतु हो तो ४२ वें वर्षमें भाग्योदय होता है।

दशम भाव विचार—दशम भाव पर शुभ ग्रहों की दृष्टि हो तो मनुष्य व्यापारी होता है। दशममें बुध हो, दशमेश और लग्नेश एक राशिमें हो, लग्नेश दशम भावमें गया हो, दशमेश १।४।५।७।९।१० में तथा शुभ ग्रहोंसे दृष्ट हो और दशमेश अपनी राशिमें हो तो जातक व्यापारी होता है।

एकादशभावविचार—लाभ[1] स्थानमें शुभ ग्रह हों तो न्यायमार्गसे धन और पाप ग्रह हों तो अन्याय मार्ग से धन आता है। लाभ भाव पर शुभ ग्रहों की दृष्टि

---

१. ग्यारहवाँ भाव।

हो तो लाभ और पाप ग्रहों की दृष्टि हो तो हानि होता है। लाभेश १।४।५।७।९।१० भावोंमें हो तो बहुत लाभ होता है।

ससुरालसे धनलाभ—सप्तम और चतुर्थ स्थानका स्वामी एक ही ग्रह हो, यह सप्तम या चतुर्थ में हो तो ससुराल से धन मिलता है।

अकस्मात् धनलाभ योग–द्वितीयेश और चतुर्थेश शुभ ग्रहके साथ नवम भावमें शुभ राशि गत होकर स्थित हो तो भूमिसे धन मिलता है। लग्नेश द्वितीय भावमें हो और द्वितीयेश एकादशस्थ हो तो धन लॉटरी या सट्टेसे मिलता है।

द्वादश भाव विचार—बारहवें भावमें शुभ ग्रह हो तो सन्मार्गमें धन व्यय होता है और पापग्रह हों तो कुमार्गमें धन खर्च होता है। बलवान् और शुभ ग्रहके द्वादशमें रहनेसे अधिक व्यय होता है। क्रूर ग्रह द्वादशमें रहने पर रोग उत्पन्न होते हैं।

विंशोत्तरी दशाका फल

व्यक्तिके शुभाशुभ समयका परिज्ञान दशासे ही किया जाता है। जिस समय जिस ग्रह की दशा रहती है उस समय उसीके शुभाशुभानुसार व्यक्तिको फल मिलता है।

दशाफलके नियम

लग्नेशकी दशामें शारीरिक सुख और धनागम; धनेशकी दशामें धनलाभ पर शारीरिक कष्ट, यदि धनेश पाप ग्रह हो तो मृत्यु भी हो जाती है। तृतीयेश की दशामें रोग, चिन्ता और साधारण आमदनी, चतुर्थेश की दशामें मकाननिर्माण, सवारी सुख, शारीरिक सुख, लाभेश और चतुर्थेश दोनों दशम या चतुर्थमें हो तो चतुर्थेश की दशामें मिल या बड़ा कारोबार, विद्यालाभ; पंचमेश की दशामें विद्या, धन, सन्तान, सम्मान, यशका लाभ और माताको कष्ट; षष्ठेशकी दशामें शत्रुभय, रोगवृद्धि सन्तानको कष्ट; सप्तमेश की दशामें स्त्रीको पीड़ा, अष्टमेशकी दशामें रोग, पापग्रह होने पर मृत्यु, अष्टमेश पापग्रह होकर द्वितीयमें बैठा हो तो निश्चय मृत्यु; नवमेश की दशामें सुख, भाग्योदय, तीर्थयात्रा, धर्मवृद्धि, दशमेश की दशामें राजाश्रय, सुखोदय, लाभ, सम्मानप्राप्ति; एकादशेश की दशामें धनागम, पिता की मृत्यु और द्वादशेश की दशामें धनहानि, शारीरिक कष्ट, मानसिक चिन्ताएँ होती हैं।

अन्तर्दशा फल—पापग्रह की महादशामें पापग्रह की अन्तर्दशा धनहानि, कष्ट और शत्रुपीड़ाकारक होती है। २–जिस ग्रह की महादशा हो उससे छठवें या आठवें स्थानमें स्थित ग्रहों की अन्तर्दशा स्थानच्युति, भयानक रोग, मृत्युतुल्य कष्टदायक होती है। ३–शुभग्रहों की महादशामें शुभ ग्रहों की अन्तर्दशा श्रेष्ठ, शुभ ग्रहों की महादशामें पाप ग्रहों की अन्तर्दशा हानिकारक होती है। ४–शनिमें चन्द्रमा और चन्द्रमामें शनि की अन्तर्दशा आर्थिक कष्टदायक होती है। ५–मंगलमें शनि और शनिमें मंगल की अन्तर्दशा रोगकारक होती है। ६–द्वितीयेश, तृतीयेश, षष्ठेश, अष्टमेश और द्वादशेश की अन्तर्दशा अशुभ होती है। ■

परिशिष्ट [३]

मेलापक विचार

वर-कन्याकी कुण्डलीका मिलान करनेके लिए दोनोंके ग्रहोंका मिलान करना चाहिए। यदि जन्म-कुण्डलीमें १।४।७।८।१२ वें भावमें मंगल, शनि, राहु और केतु हो तो पति या पत्नीनाशक योग होता है। कन्याकी जन्मपत्रीमें होनेसे पतिनाशक और वर-की जन्मपत्रीमें होने से पत्नीनाशक है। उक्त स्थानोंमें मंगलके होनेसे मंगला या मंगली योग होता है। मंगल पुरुषका मंगली स्त्रीसे सम्बन्ध करना श्रेष्ठ माना जाता है।

वरकी कुण्डलीमें लग्न और शुक्रसे १।४।७।८।१२ वें भावोंमें तथा कन्याकी कुण्डलीमें लग्न और चन्द्रमासे १।४।७।८।१२ वें भावोंमें पापग्रहों—मं० श० रा० के० का रहना अनिष्टकारी माना जाता है। जिसकी कुण्डलीमें उक्त स्थानोंमें पापग्रह अधिक हों उसीकी कुण्डली तगड़ी मानी जाती है।

वरकी कुण्डलीमें लग्नसे छठवें स्थानमें मंगल, सातवेंमें राहु और आठवेंमें शनि हो तो स्त्रीहन्ता योग होता है। इसी प्रकार कन्याकी कुण्डलीमें उपर्युक्त योग हो तो पतिहन्ता योग होता है। कन्याकी कुण्डलीमें ७वाँ और ८वाँ स्थान विशेष रूपसे तथा वरकी कुण्डलीमें ७ वाँ स्थान देखना चाहिए। इन स्थानोंमें पापग्रहोंके रहनेसे अथवा पापग्रहोंकी दृष्टि होनेसे अशुभ माना जाता है। यदि दोनोंकी कुण्डलीमें उक्त स्थानोंमें अशुभ ग्रह हों तो सम्बन्ध किया जा सकता है।

वैधव्य योग—कन्याकी कुण्डलीमें सप्तम स्थानमें गया हुआ मंगल पापग्रहोंसे दृष्ट हो तो बालविधवा योग होता है। राहु बारहवें स्थानमें हो तो पतिसुखका अभाव होता है। अष्टमेश सातवें भावमें और सप्तमेश आठवें भावमें हो तो वैधव्य योग होता है। छठवें और आठवें भावोंके स्वामी छठवें या बारहवें भावमें पापग्रहोंसे दृष्ट हो तो वैधव्य योग होता है।

सन्तान विचार—२।५।६।८ इन राशियोंमें चन्द्रमा हो तो अल्प सन्तान, शनि और रवि ये दोनों आठवें भावमें गये हों तो वन्ध्यायोग होता है। पंचम स्थानमें धनु और मीन राशिका रहना सन्तानमें बाधक है। सप्तम और पंचम स्थानमें गुरुका रहना भी अच्छा नहीं होता है।

गुणमिलान

आगे दिये गये गुणैक्यबोधक चक्रमें वर और कन्याके जन्मनक्षत्रके अनुसार गुणों-का मिलान करना चाहिए। कुल गुण ३६ होते हैं, यदि १८ गुणोंसे अधिक गुण मिले

तो सम्बन्ध किया जा सकता है। पर्याप्त गुण मिलनेपर भी नाड़ी दोष और भकूट दोषका विचार करना चाहिए।

भकूटविचार

कन्याकी राशिसे वरकी राशि तक तथा वरकी राशिसे कन्याकी राशि तक गणना कर लेनी चाहिए। यदि गिननेसे दोनोंकी राशियां परस्परमें ६वीं और ८वीं हों तो मृत्यु, ९वीं और ५वीं हो तो सन्तानहानि तथा २री और १२वीं हो तो निर्धनता फल होता है।

उदाहरण—वरकी राशि जन्मपत्रीके हिसाबसे मिथुन है और कन्याकी तुला है। वरकी राशि मिथुनसे कन्याकी राशि तुला तक गणना करें तो ५वीं संख्या हुई और कन्याकी तुला राशिसे वरकी मिथुन राशि तक गणना की तो ९वीं संख्या आयी, अतः परस्परमें राशि-संख्या नवम पंचम होनेसे भकूट दोष माना जायगा।

नाड़ीविचार

आगे दिये गये शतपदचक्रमें सभी नक्षत्रोंके वश्य, वर्ण, योनि, गण, नाड़ी, राशि आदि अंकित हैं। अतः वर और कन्याके जन्मनक्षत्रके अनुसार नाड़ी देखकर विचार करना चाहिए। दोनोंकी भिन्न-भिन्न नाड़ी होना आवश्यक है। एक नाड़ी होने से दोष माना जाता है, अतः एक नाड़ीकी शादी त्याज्य है। हाँ, वर कन्याके राशीशोंमें मित्रता हो तो नाड़ीदोष नहीं होता।

उदाहरण—वरका कृत्तिका नक्षत्र है और कन्याका आश्लेषा। शतपदचक्रके अनुसार दोनोंकी अन्त्य नाड़ी है, अतः सदोष है।

गुण मिलाने का उदाहरण—वरका आर्द्रा नक्षत्रके चतुर्थ चरणका जन्म है और कन्याका अश्विनी नक्षत्रके प्रथम चरणका जन्म है। गुणैक्यबोधक चक्रमें वरके नक्षत्र ऊपर और कन्याके नक्षत्र नीचे दिये हैं, अतः इस चक्रमें १७ गुण मिले। यह संख्या १८ से कम है, अतः सम्बन्ध ठीक नहीं माना जायगा। ग्रहोंके ठीक मिलने पर तथा राशियोंके स्वामियोंमें मित्रता होने पर यह सम्बन्ध किया जा सकता है।

■

सहायक ग्रन्थ-सूची

अकलंकसंहिता—अकलंकदेव कृत, हस्तलिखित, श्री जैन सिद्धान्त भवन, आरा
अथर्वज्योतिष—सुधाकर-सोमाकर भाष्य सहित, मास्टर खेलाड़ी लाल एण्ड सन्स, काशी
अद्भुततरंगिणी—नवलकिशोर प्रेस, लखनऊ
अद्भुतसागर—बल्लाल सेन विरचित, प्रभाकरी यन्त्रालय, काशी
अद्वैतसिद्धि—गवर्नमेण्ट संस्कृत लाइब्रेरी मैसूर
अनन्तफलदर्पण—हस्तलिखित, मुनीश्वरानन्द पुस्तकालय आरा
अर्घकाण्ड—दुर्गदेव, हस्त लिखित
अर्घप्रकाश—निर्णयसागर प्रेस बम्बई
अर्हच्चूड़ामणिसार—भद्रबाहु स्वामी कृत, महावीर ग्रन्थमाला धुलियान
आचारांग सूत्र—आगमोदय समिति
आयज्ञानतिलक संस्कृत टीका—भट्टवोसरि कृत, हस्त लिखित, श्री जैनसिद्धान्तभवन, आरा
आयसद्भावप्रकरण—मल्लिषेण कृत, हस्त लिखित, पं० शंकर लाल शर्मा, कोसीकला मथुरा
आरम्भसिद्धि—हेमहंसगणि टीका सहित, श्री लब्धिसूरीश्वर जैन ग्रन्थमाला छाणी (बड़ोदरा)
आर्यभटीय—व्रजभूषण दास एण्ड सन्स, बनारस
आर्यसिद्धान्त— ,, ,, ,,
उत्तरकालामृत—अँग्रेजी अनुवाद—वेंगलोर
ऋग्वेद ज्योतिष—सोमाकर सुधाकर भाष्य,
एवरी डे एस्ट्रोलोजी—वी० ए० के० ऐयर तारापोरेवाला सन्स एण्ड को०, बम्बई
एस्ट्रोनॉमी इन ए नटशेल—गैरट पी० सर्विस विरचित ,, ,, ,,
एस्ट्रोनॉमी—टौमस हीथ एस्ट्रोनॉमर एडिनवरो विरचित ,, ,, ,,
एस्ट्रोनॉमी—टेट्स विरचित ,, ,, ,,
करणकुतूहल—
करणप्रकाश—सुधाकर वासना सहित, चौखम्बा संस्कृत सीरिज, काशी
कालजातक—हस्तलिखित
केरलप्रश्नरत्न—वेंकटेश्वर स्टीम प्रेस बम्बई
केरलप्रश्नसंग्रह— ,, ,, ,,
केवलज्ञानहोरा—चन्द्रसेन मुनि विरचित, हस्त लि०, जैन सिद्धान्त भवन, आरा

खण्डकखाद्य—ब्रह्मगुप्त रचित, कलकत्ता विश्वविद्यालय
खेटकौतुक—सुखसागर ज्ञान प्रचारक सभा, लोहावट (मारवाड़)
गणकतरंगिणी—पद्माकर द्विवेदी, गवर्नमेण्ट संस्कृत कालेज, काशी
गणितसारसंग्रह—महावीराचार्य रचित
गर्गमनोरमा—वेंकटेश्वर प्रेस, बम्बई
गर्गमनोरमा—सीताराम कृत टीका, मास्टर खेलाड़ीलाल एण्ड सन्स काशी
गोलपरिभाषा—सीताराम कृत, मास्टर खेलाड़ीलाल एण्ड सन्स काशी
गौरीजातक—हस्त लिखित, वराहमिहिर पुस्तकालय पटना
ग्रहकौमुदी—मास्टर खेलाड़ीलाल एण्ड सन्स काशी
ग्रहलाघव—सुधामंजरी टीका, मास्टर खेलाड़ीलाल एण्ड सन्स काशी
ग्रहलाघव—सुधाकर टीका सहित
चन्द्रार्क ज्योतिष—नवलकिशोर प्रेस लखनऊ
चन्द्रोन्मीलनप्रश्न—हस्त लिखित, श्री जैन सिद्धान्त भवन, आरा
चन्द्रोन्मीलनप्रश्न—बृहद्ज्योतिषार्णवके अन्तर्गत
चमत्कारचिन्तामणि—भावप्रबोधिनी टीका, चौखम्बा संस्कृत सीरिज, काशी
छान्दोग्योपनिषद्—निर्णय सागर प्रेस बम्बई
जातकतत्त्व—महादेव शर्मा कृत, चन्द्रकान्त पाठक भुवनेश्वरी यन्त्रालय रतलाम
जातकपद्धति—केशवीय, वामनाचार्य संशोधन सहित, मेडीकल हाल प्रेस काशी
जातकपारिजात—परिमल टीका, चौखम्बा संस्कृत सीरिज काशी
जातकाभरण—ढुंढिराज, किशनलाल द्वारिका प्रसाद, बम्बई भूषण प्रेस मथुरा
जातकक्रोड़पत्र—शशिकान्त झा, मुजफ्फरपुर
ज्योतिर्गणितकौमुदी—रजनीकान्त शास्त्री रचित, वेंकटेश्वर प्रेस, बम्बई
ज्योतिषतत्त्वविवेकनिबन्ध—वेंकटेश्वर प्रेस, बम्बई
ज्योतिर्विवेकरत्नाकर—कर्मवीर प्रेस, जबलपुर
ज्योतिषसार—हस्त लिखित, नया मन्दिर, दिल्ली
ज्योतिषसारसंग्रह—भगवानदास टीका सहित, नरसिंह प्रेस २०१ हरिसन रोड कलकत्ता
ज्योतिषश्यामसंग्रह—खेमराज श्री कृष्णदास वेंकटेश्वर प्रेस बम्बई
ज्योतिषसिद्धान्तसारसंग्रह—नवलकिशोर प्रेस लखनऊ
ज्योतिष सागर— ,, ,,
ज्योतिषसिद्धान्तसार— ,, ,,
ज्ञानप्रदीपिका—श्री जैन सिद्धान्त भवन, आरा
तत्त्वार्थसूत्र—पन्नालाल बाकलीवाल टीका
ताजिकनीलकण्ठी—सीताराम टीका—मास्टर खेलाड़ीलाल एण्ड सन्स काशी
ताजिकनीलकण्ठी—शक्तिधर टीका, नवल किशोर प्रेस लखनऊ

ताजिकनीलकण्ठी—खेमराज श्री कृष्णदास वेंकटेश्वर प्रेस बम्बई
तिथि चिन्तामणि— ,, ,, ,,
दशाफलदर्पण—महादेव पाठक, भुवनेश्वरी प्रेस रतलाम
दैवज्ञकामधेनु—व्रजभूषणदास एण्ड सन्स काशी
दैवज्ञवल्लभ—चौखम्बा संस्कृत सीरिज काशी
नरपतिजयचर्या—निर्णय सागर प्रेस बम्बई
नारचन्द्रज्योतिष—हस्तलिखित, श्री जैन सिद्धान्त भवन, आरा
नारचन्द्रज्योतिषप्रकाश—रतीलाल-प्राणभुवनदास चूड़ीवाला, हीरापुर, सूरत
निमित्तशास्त्र—ऋषिपुत्र, सोलापुर
पंचांगतत्त्व—निर्णयसागर प्रेस, बम्बई
पंचसिद्धान्तिका—डा० थीवो तथा सुधाकर टीका
पंचांगफल—हस्तलिखित, ताड़पत्रीय श्री जैन सिद्धान्त भवन, आरा
पाशाकेवली—सकलकीर्त्ति विरचित, हस्तलिखित, श्री जैन सिद्धान्त भवन आरा
प्रश्नकुतूहल—वेंकटेश्वर प्रेस बम्बई
प्रश्नकौमुदी—वेंकटेश्वर प्रेस, बम्बई
प्रश्नचिन्तामणि—वेंकटेश्वर प्रेस बम्बई
प्रश्ननारदीय—बम्बई भूषण प्रेस मथुरा
प्रश्नप्रदीप—हस्तलिखित, वराहमिहिर पुस्तकालय पटना
प्रश्न वैष्णव—वेंकटेश्वर प्रेस बम्बई
प्रश्नसिद्धान्त— ,,
प्रश्नसिन्धु—नारायण प्रसाद मुकुन्दराम टीका स०, मनोरंजन प्रेस बम्बई
बृहद्ज्योतिषार्णव— ,, ,, ,,
बृहज्जातक—मास्टर खेलाड़ीलाल एण्ड सन्स काशी
बृहत्पाराशरी, सीताराम टीका—मास्टर खेलाड़ीलाल एण्ड सन्स काशी
बृहत्संहिता भट्टोत्पली—दी० जे० लाजरस् कम्पनी काशी
ब्रह्मसिद्धान्त—ब्रजभूषणदास एण्ड सन्स काशी
भविष्यज्ञानज्योतिष—तिलकविजय रचित, कटरा खुशालराय देहली
भावप्रकरण—विमलगणि विरचित, सुखसागरज्ञान प्रचारक सभा लोहावट (मारवाड़)
भावकुतूहल—ब्रजवल्लभ हरिप्रसाद कालबादेवी रोड, रामबाड़ी बम्बई
भावनिर्णय—नवलकिशोर प्रेस लखनऊ
भुवनदीपक—पद्मप्रभसूरि कृत, वेंकटेश्वर प्रेस बम्बई
मण्डलप्रकरण—मुनि चतुरविजय कृत, आत्मानन्द जैन सभा, भावनगर
मानसागरी पद्धति—निर्णयसागर प्रेस बम्बई
मानसागरी पद्धति—चौखम्बा संस्कृत सीरिज काशी

मुहूर्त्त चिन्तामणि—पीयूषधारा टीका
मुहूर्त्त चिन्तामणि—मिताक्षरा टीका
मुहूर्त्त मार्त्तण्ड—चौखम्बा संस्कृत सीरिज काशी
मुहूर्त्त दर्पण—नेमिचन्द्र शास्त्री, श्री जैन बालाविश्राम आरा
मुहूर्त्त संग्रह—नवल किशोर प्रेस लखनऊ
मुहूर्त्त सिन्धु—नवलकिशोर प्रेस लखनऊ
मुहूर्त्तगणपति—चौखम्बा संस्कृत सीरिज काशी
यन्त्रराज—महेन्द्र गुरु विरचित, निर्णयसागर प्रेस बम्बई
यवनजातक या मीनराज जातक—हस्त लिखित, वराहमिहिर पुस्तकालय पटना
रिष्ट समुच्चय—दुर्ग देव, गोधा ग्रन्थमाला इन्दौर
लघुजातक—मास्टर खेलाड़ीलाल एण्ड सन्स काशी
लघुसंग्रह—महाराजदीन टीका, बैजनाथ बुक्सेलर काशी
वर्षप्रबोध—मेघविजय गणि कृत,
विद्यामाधवीय—गवर्नमेण्ट संस्कृत लाइब्रेरी मैसूर
विवाहवृन्दावन—मास्टर खेलाड़ीलाल एण्ड सन्स काशी
बैजयन्ती गणित—राधा यन्त्रालय बीजापुर
शिवस्वरोदय—नवलकिशोर प्रेस लखनऊ
समरसार—वेंकटेश्वर प्रेस बम्बई
सर्वार्थसिद्धि—रावजी सखाराम दोशी सोलापुर
सामुद्रिक शास्त्र—श्री जैन सिद्धान्त-भवन आरा
सामुद्रिकशास्त्र—हस्तलिखित, नया मन्दिर दिल्ली
सारावली—कल्याणवर्मा रचित, निर्णय सागर प्रेस बम्बई
सुगमज्योतिष—देवीदत्त जोशी कृत, मास्टर खेलाड़ीलाल एण्ड सन्स बनारस
स्वप्नप्रकाशिका—वेंकटेश्वर प्रेस बम्बई
स्वप्नविज्ञान—गिरीन्द्र शंकर कृत, किताबमहल, जीरो रोड प्रयाग
स्वप्नसार—नवलकिशोर प्रेस लखनऊ
स्वप्नफल— ,, ,, ,,
स्वप्नफल—हस्तलिखित, मुनीश्वरानन्द पुस्तकालय आरा
स्वप्नज्ञान—हस्तलिखित, वराहमिहिर पुस्तकालय पटना सोटी
हस्तविज्ञान—रतलाम
हस्तसंजीवन—मेघविजयरचित, गणेश दत्त टीका बनारस
हस्तसंजीवन—सामुद्रिक लहरी टीका, मुनिश्री मोहनलाल जैन ग्रन्थमाला इन्दौर

भारतीय ज्ञानपीठ

उद्देश्य

ज्ञान की विलुप्त, अनुपलब्ध
और अप्रकाशित सामग्री का
अनुसन्धान और प्रकाशन
तथा लोक-हितकारी
मौलिक साहित्य का निर्माण

■

संस्थापक
श्री शान्तिप्रसाद जैन

अध्यक्षा
श्रीमती रमा जैन

■

मुद्रक : सन्मति मुद्रणालय, दुर्गाकुण्ड मार्ग, वाराणसी–५